मृगनयनी

(ऐतिहासिक उपन्यास)

वृन्दावनलाल वर्मा एडवोकेट

(लेखक—मृगनयनी, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, कचनार, हंस-मयूर, टूटे काँटे, मुसाहिबजू, लगन, विराटा की पद्मिनी, सोना, संगम, प्रेम की भेंट, माधव जी सिंधिया, गढ़ कुंडार, पूर्व की ओर आदि)

मयूर प्रकाशन,

• दिल्ली • ग्वालियर • [illegible]

प्रकाशक—
ब्रजदेव शर्मा बी. ए., एल-एल बी.,
मयूर-प्रकाशन झांसी।

चतुर्थ संस्करण—१९५२

मूल्य ५)

मुद्रक—
हरिश्चन्द्रप्रसाद मिश्र 'हरीन्द्र'
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

परिचय

१९४६ के अन्त में ग्वालियर की एक सम्मानित पाठिका ने मुझसे मृगनयनी और मानसिंह तोमर के ऐतिहासिक रूमानी कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया। उन दिनों टूटे कांटे उपन्यास समाप्ति पर आ गया था। उसको समाप्त करके कुछ लिखने की वाञ्छा मन में थी ही मैंने उस कथानक की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन अवसर पाते ही आरम्भ कर दिया। जिन स्थानों का सम्बन्ध उपन्यास की मुख्य कथा से है उनका भ्रमण भी किया।

मानसिंह तोमर १४८६ से १५१६ ई० तक ग्वालियर का राजा रहा। फ़रिश्ता के इतिहास लेखक ने मानसिंह को वीर और योग्य शासक बतलाया है। अंग्रेज इतिहास लेखकों ने मानसिंह के राज्यकाल को तोमर शासन का स्वर्णयुग (Golden Age of Tomar Rule) कहा है। पन्द्रहवीं शताब्दि के अन्त और सोलहवीं के प्रारम्भ को राजनैतिक और धार्मिक दृष्टि से भारतीय इतिहास का कराल कठोर और काला युग कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। उत्तर में सिकन्दर लोदी और उसके सहयोगियों के परस्पर युद्ध तथा दोनों द्वारा घोर जनपीड़न राजस्थान में राणा कुम्भा का अपने बेटे के ही हाथ से विष द्वारा वध और उसके उपरान्त वहां की अराजकता गुजरात में महमूद बघर्रा के अपरिमित विजय और रक्तपात मालवा में ग्यासुद्दीन खिलजी और उसके उत्तराधिकारी नसीरुद्दीन की अत्याचार-प्रियता और अय्याशी दक्षिण में बहमनी सल्तनत और विजयनगर राज्य के युद्ध और बहमनी सल्तनत का पांच सल्तनतों में बिखर जाना जौनपुर बिहार और बङ्गाल में पठान सरदारों की निरन्तर नोच-खसोट और इन सबके लगभग बीच में ग्वालियर। ग्वालियर पर सिकन्दर लोदी के पिता बहलोल ने आक्रमण किये

फिर सिकन्दर ने ग्वालियर का कचूमर निकालने में कसर नहीं लगाई। सिकन्दर ग्वालियर पर पाँच बार दल के साथ आया। पाँचों बार उसको मानसिंह के सामने से लौट जाना पड़ा। उसके दरबारी इतिहास लेखकों—अखबार नवीसों—ने लिखा है कि मानसिंह ने प्रत्येक बार सोना चाँदी देने का वादा—सोना चाँदी नहीं—देकर टाला। आश्चर्य है सिकन्दर सरीखा कठोर योधा मान भी लेता था। अन्त में सिकन्दर को १५०४ में आगरे का निर्माण इसी मानसिंह तोमर को पराजित करने के लिये करना पड़ा। इसके पहले आगरा एक नगण्य सा स्थान था। तो भी सिकन्दर सफल न हो पाया। ग्वालियर पर कर टालकर नरवर पर चढ़ाई कर दी। नरवर ग्वालियर राज्य में था। यह पर दावा रामसिंह कछवाहा का था। रामसिंह ने सिकन्दर का साथ दिया। तो भी नरवर वाले ११ महीने तक लगातार युद्ध में घाटी पकड़े रहे। जब खाने को घास और पेड़ों की छाल तक अलभ्य हो गई तब उन लोगों ने आत्म-समर्पण किया। फिर सिकन्दर ने मन की जलन को नरवर स्थित मन्दिरों और मूर्तियों पर निकाली—वह छः महीने इसी उद्यम से नरवर में रहा।

ऐसे युग में इतने संकटों में भी मानसिंह हुआ। और उसने तथा उसकी रानी मृगनयनी ने जो कुछ किया उसका प्रत्यक्ष प्रमाण आज भी हमारे सामने है। ग्वालियर किले के भीतर मानमन्दिर और गूजरी महल हिन्दू वास्तु कला के अत्यन्त सुन्दर और मौलिक प्रतीक हैं, तथा ध्रुवपद और धमार की गमकें और ग्वालियर का विद्यापीठ जिसके शिष्य तानसेन थे आज भी भारत भर में प्रसिद्ध है। जिनको हम वास्तु और स्थापत्य कला कहते हैं वह क्या मानसिंह के ग्वालियर शिल्पियों की देन नहीं है? महाकवि टागोर ने ताजमहल को काल के गाल का आँसू कहा है। यदि मैं (जिसको कविता पर अंधकार का भी दावा नहीं है) मानमन्दिर और गूजरी महल को काल के होठों की मुस्कान कहूँ तो महाकवि टागोर के उस वाक्य का एक प्रकार से समर्थन ही होगा।

सन् १५२७ में बाबर ने मानमन्दिर और गूजरी महल को देखा तब उनको बने २० वर्ष हो चुके थे। तो सन् १५०७ में ये बन चुके थे। गूजरी रानी मृगनयनी के साथ मानसिंह का विवाह १४९२ के लगभग हुआ होगा। मानमन्दिर और गूजरी महल के सृजन की कल्पना को मृगनयनी से प्रेरणा मिली होगी। बैजनाथ नायक (बैजू बावरा) मानसिंह मृगनयनी के गायक थे। गूजरी टोड़ी, मंगल गूजरी इत्यादि राग इसी मृगनयनी के नाम पर बने हैं। जिन सम्मानित पाठकों ने मृगनयनी के कथानक पर उपन्यास लिखने का अनुरोध किया था उन्होंने ठीक लिखा कि मृगनयनी शौर्य और कला दोनों के लिए विख्यात थी।

मृगनयनी गूजर कुल की थी। राई गाँव की वह एक किसान कन्या। शारीरिक बल और परम सौन्दर्य के लिए वह ब्याह के पहले ही प्रसिद्ध हो गई थी। परम्परा में तो इसके विषय में यहाँ तक कहा गया है कि राजा मानसिंह राई गाँव के जङ्गल में शिकार खेलने गये तो देखा कि मृगनयनी (उपन्यास के आरम्भ की निन्नी) ने जङ्गली भैंसे को सींग पकड़कर मोड़ दिया! एक साहब ने परम विश्वास के साथ मुझको बतलाया कि राजा मानसिंह अपने महल में बैठे हुये थे नीचे देखा जङ्गली भैंसे के सींग पकड़कर मृगनयनी मरोड़ रही है और उसको मोड़ रही है!! ग्वालियर किले के भीतर जङ्गली भैंसा पहुँच गया और राई गाँव से जो ग्वालियर से पश्चिम-दक्षिण में ११ मील है मृगनयनी जङ्गली भैंसे को मोड़ने-मरोड़ने के लिये आ गई!!!

मैंने पहली परम्परा को ही मान्यता दी है। ग्वालियर गजेटियर में उसी का उल्लेख है।

फिर मैंने गूजरों में घूम-फिर कर बातें कीं। उन्होंने भी उसी का प्रवर्तन किया।

पहाड़ों में होकर साँक नदी राई गाँव के नीचे से निकली है। साँक नदी पर तिघरा का बाँध बँध गया है और राई गाँव डूब गया है। राई

के ऊपर ऊँची पहाड़ी पर स्थित उनके भाई की गढ़ी भी अब खंडहर हो गई है। परन्तु उनके भाई और लाखी के स्मारकों के खंडहर नहीं हो सकते।

गूजरात का मुहम्मद कासिम फिरिश्ता अथवा और मोहम्मद कासिम था यह फारसी की तारीख मोहम्मद फिरिश्ता में दर्ज है। ब्रिग्स साहब ने इसका अनुवाद किया है। मालवा-सुल्तान नासीरुद्दीन की पन्द्रह हजार बेगमें थीं — राज्य इसने पाया था वासनाओं की तृप्ति के लिए अपने बाप को जहर देकर। अब लगभग १ वर्ष पीछे मुगल बादशाह जहाँगीर मालवा की राजधानी माँडू गया और उसने नासीरुद्दीन के कारनामों का हाल सुना तब उसको इतना क्रोध आया कि नासीरुद्दीन की कब्र उखड़वा डाली और उसकी हड्डियों को जलवा दिया। नापाक था नापाक था वह !! जहाँगीर ने कहा था। उसकी कब्र को जहाँगीर न भी उखड़वाता तो भी आज वह बेपता बेनिशान खंडहर होती। मानसिंह और मृगनयनी की लाखी और अटल की स्मृति का खंडहर तो कभी होगा ही नहीं।

उपन्यास में आये हुये सभी चरित्र-मोटों को छोड़कर—ऐतिहासिक हैं। विजयजंगम लिङ्गायत था। ग्वालियर के किले के भीतर जैसे तैल मन्दिर (उसका नाम तेली का मन्दिर गलत है) बना उसी प्रकार कर्नाटक के विजय ग्वालियर में प्रादुर्भूत हुआ। लिङ्गायत सम्प्रदाय का वासव पुराण दक्षिण में बारहवीं शताब्दि में लिखा गया था। इस सम्प्रदाय में वर्णभेद का तिरस्कार किया गया है। श्रम—कायक—को जो महत्व और गौरव वासव ने दिया है उसको देखकर दंग रह जाना पड़ता है। संसार के किसी भी देश में उस समय श्रम और श्रमिकों को गौरव नहीं दिया गया था। इसका श्रेय लिङ्गायत सम्प्रदाय के अधिष्ठाता को ही है। साथ ही अहिंसा और सदाचार और मादक वस्तु-निरोध पर जो जोर दिया गया है, उससे जान पड़ता है जैसे अधिष्ठाता का जन्म बीसवीं शताब्दि में हुआ हो। अधिष्ठाता ब्राह्मण थे और उनकी बहिन एक क्षत्रिय नरेश को ब्याही गई थी – यह भी बारहवीं शताब्दि में।

विजयजंगम मित्रायत मानसिंह तोमर का मित्र था। मानसिंह ने इस से भी कुछ पाया तो कोई आश्चर्य नहीं।

जातपात ने भारत में रचनात्मक कार्य भी किया और आज भी शायद कुछ कर रहा हो परन्तु इसका विनाशात्मक काम भी कुछ कम नहीं हुआ है। अप्रैल सन १९५ में अभी एक घटना है। टेहरी (अल्मोड़ा) के एक गाँव में एक लुहार ने १२ वर्ष हुये दूसरी जाति की लड़की के साथ विवाह कर लिया। बारह वर्ष तक यह लुहार जातपात से बाहर रहा। अभी अब अप्रैल में गाँव की नई पंचायत ने उसको बहाल किया। फिर उन्नीसवीं सोलहवीं शताब्दी में लाखी और पटस के सिर पर क्या क्या न बीती होगी उसकी कल्पना ही की जा सकती है।

लाखी और पटस की कथा के साथ नटों का सम्बन्ध है। नटों और नरवर के प्रसंग में एक दोहा प्रचलित है —

नरवर चढ़े न बेड़नी बूँदी छपे न छींट
गुदनौटा भोजन नहीं एरच पके न ईंट।

किम्वदन्ती है कि किसी ने एक नटिनी (बेड़िनी) को नरवर किले से बाहर रस्से पर टँगे टँगे जाकर जो किले के बाहर एक पेड़ से बँधा हुआ था मिट्टी ले आने के लिये कहा और वचन दिया कि यदि मिट्टी बाहर पहुँचा दो तो नरवर का आधा राज्य दे दिया जायगा। नटिनी रस्से के सहारे किले से बाहर हो गई। जब उसी सहारे वापिस आ रही थी तब वचन देने वाले ने रस्से को काट दिया और नटिनी नीचे खड्ड में गिरकर चकनाचूर हो गई।

मैंने इस किम्वदन्ती का दूसरे प्रकार से उपयोग किया है।

मृगनयनी ने अपने ब्याह से पहले राजा मानसिंह से जो वचन लिये थे उनमें से एक यह भी था कि राजा राई गाँव से ग्वालियर किले तक साँक नदी की नहर ले आवेंगे। राजा ने यह नहर बनवाई उसके चिह्न अब भी वर्तमान हैं।

एक किम्वदन्ती है कि मानसिंह के दो सौ रानियाँ थीं। ग्वालियर क़िले के गाईड ने मुझको दूसरी किम्वदन्ती का पता दिया कि राजा मानसिंह के एट (आठ) रानियाँ थीं। मैंने गाईड के शब्दों को ज्यों का त्यों उद्धृत कर दिया है। 'एट' उन्ही का है। न लिखता तो कहते मेरा अपमान किया अंग्रेजी का एक शब्द ही बोला था उसको भी छोड़ दिया।

मैंने गाईड की कही हुई बात को ही उपन्यास में मान्यता दी है।

गाईड और गूजरों ने बतलाया कि मृगनयनी के दो पुत्र हुये थे—एक का नाम राजे दूसरे का बाले। मानसिंह के बड़ी रानी से एक पुत्र विक्रमादित्य था जो मानसिंह के पीछे राजा हुआ। गाईड और गूजरों ने बतलाया कि राजे और बाले ईर्षावश मारे जाने न से ही थे कि उन्होंने आत्मवध कर लिया। मुझको यह परम्परा मान्य नहीं है। गूजरों की ही एक दूसरी परम्परा है कि मृगनयनी ने अपने पुत्रों को राज्य न दिलवाकर विक्रमादित्य को राज्य दिलवाया। मुझको यही मान्य है।

उस बीहड़ भभकर युग में मानसिंह को तुर्क पठान आक्रमणकारियों से निरन्तर लड़ना पड़ा परन्तु उसके मन में मुसलमानों के प्रति कोई द्वेष नहीं रहा। उसने सिकन्दर के भाई जलालुद्दीन के साथ आये हुये धनक मुसलमानों को ग्वालियर में शरण और रक्षा प्रदान की और ललितकलाओं के लिये मानसिंह और मृगनयनी ने जो कुछ किया वह भारत के इतिहास में अमर रहेगा।

बोधन ब्राह्मण ऐतिहासिक व्यक्ति है। उसके मारने वालों की बर्बरता का मैंने बहुत थोड़ा वर्णन किया है। उसके कुरूप का लाघवमात्र प्रस्तुत किया है—करना पड़ा।

कथावस्तु के संग्रह में महामान्या महारानी साहब ग्वालियर मध्य भारत के मंत्रिमण्डल—विशेषत मेरे मित्र श्री श्यामलाल जी पाण्डवीय—और ग्वालियर के पुरातत्त्व विभाग ने मेरी बहुत सहायता की है मैं उनका

बहुत कृतज्ञ हूँ। ग्वालियर पुरातत्व विभाग के डाइरेक्टर डाक्टर पाटील का भी मैं आभारी हूँ जिनके सौजन्य से मुझको वे चित्र मिले जो इस उपन्यास में छापे गये हैं। उनके प्रकाशन का उन्होंने मुझको अधिकार दिया इसके लिये अनेक धन्यवाद।

पाठक चाहेंगे कि मैं तोमरों ग्वालियर और नरवर के किलों और उनके भीतर स्थित इमारतों का वर्णन परिचय में करूँ। कुछ पाठक चाहेंगे कि मैं तत्कालीन आर्थिक स्थिति समझने के लिये आँकड़े दूँ, परन्तु अनेक पाठक कहानी चाहेंगे इसलिये अब कहानी—बाकी फिर कभी।

झाँसी
१४–७–१६८

वृन्दावनलाल वर्मा

मृगनयनी

[१]

आसपास और दूर-दूर तक के गाँव उजड़ चुके थे। खेती का नाम-निशान तक न बचा था। बीच-बीच में जङ्गल भी काट डाला गया था पर कटे हुए पेड़ों की जड़ों से नई शाखें फूट निकली थीं और भूमि इन शाखों से ढक गई थी।

गाँव उजड़े और उनके बहुत से निवासी या तो आक्रमणकारियों की तलवार के घाट उतर गये या भूखों-प्यासों मर गये। जो बच वे तितर बितर हो गये। ग्वालियर पर पन्द्रहवीं शताब्दि में अनेक आक्रमण हुये। उतने ही बार गाँव निर्जन हुये। पुराने कुछ-कुछ आबाद हुये। जङ्गलों में नदियों-नालों के किनारे थोड़े से नये बसे। भस्म हो जाने और भस्म में से नये पौधों के उगने का क्रम बना रहा।

बहलोल लोदी ने फिर उसके उत्तराधिकारी सिकन्दर ने सब तरह के उपाय किये परन्तु ग्वालियर का किला हाथ न लगा। योद्धा था राजा

मानसिंह अकड़ू है, अनुभवहीन इसलिये ग्वालियर की ईंट से ईंट बजाई जायगी। गाँव मिटा दिये, धरती उजाड़ दी, ग्वालियर नगर को वीरान कर दिया फिर भी ग्वालियर के ऊंचे किले ने न तो फाटक खोले और न सर झुकाया। अन्त में कुओं में जानवरों की सड़ी-गली लाशों को डाल कर, मानसिंह उसके तोमर भाई-बन्दों और अन्य लड़ने वालों को मन ही मन गालियां देता हुआ सिकन्दर कालपी की दिशा से दिल्ली की ओर चला गया क्योंकि वहां उसके पठान भाई-बन्दों ने सर उठा लिया था।

सिकन्दर लोदी ने अपने दरबारी इतिहास-लेखक से जो अपने उसूलों का कट्टर पाबन्द अफसर था लिखवाया 'ग्वालियर को फतेह कर लिया और खिराज का वादा लेकर राजा को फ़िलहाल छोड़ दिया।

आक्रमणकारियों के चले जाने के बाद इधर-उधर बचे-खुचे तितर बितर छिपे-लुके ग्रामीण अपने निवास-स्थानों के लिये निकल पड़े। कुछ अपने पुराने स्थानों पर चौंकते चौंकते आ गये कुछ ने जङ्गल पहाड़ों में होकर बहने वाली किसी नदी का किनारा जा पकड़ा और नये सिरे से गांव बसा लिया। इन्होंने भी इतिहास को दुहराया। जो लोग मांसाहारी थे उन्होंने जङ्गल के जानवरों से पेट भरा जो निरामिष भोजी थे दुष्प्राप्य जंगली फल फूल और अपने बचे से पालतू पशुओं के दूध-दही पर प्राणों की रक्षा करने लगे। जिन्होंने आक्रमण के समय में गढ्ढों में बीज छिपाकर रख दिया था वे लौट आने पर खेती पर चिपट गये।

नदी के किनारे, गांव के पास पहाड़ियों जंगल के बीच-बीच में कुछ खेतों में गेहूं और चने के पौधे लहलहा उठे। खेत पकने पर वा रहे वे मस्ती के साथ झूमने लगे थे।

सांक नदी में पानी का प्रवाह था। अधपके धान्य की सुगन्ध देता हुआ पवन नदी के प्रवाह को भी पुचकार-पुचकार लेता था।

गांव में एक मन्दिर का खंडहर था जो अन्तिम आक्रमण के पहले ही भूचाल में गिर चुका था। परन्तु फिर-फिर लौट पड़ने वाले

ग्रामीणों ने उसकी मरम्मत की गई मूर्ति को प्रतिष्ठित किया और अब की बार गाँव वालों ने उसको मिट्टी के कोटों की ऊँचाई देकर फूस से ढक दिया। आस-पास के सभी गाँवों की पञ्चायतों का आदेश था कि ईंट-पत्थर के मकान न बनाये जावें इसलिये मिट्टी की दीवारों पर फूस छाने का चलन पड़ गया था।

ग्वालियर के पश्चिम-दक्षिण में लगभग छः कोस की दूरी पर साँक नदी के किनारे राई नाम का गाँव था। इसमें मन्दिर के साथ ही अध जले और अधटूट घरों को भी फूस से छा लिया। बाकी गाँव में खँडहल बिखरे के बिखरे पड़े रह गये। इसके कुछ निवासी पड़ोस के नगरा नामक गाँव में आ बसे थ कोई कभी कोई कभी।

फ़सल काट कर घर में या पयुर्रों में रखने की उतावली थी परन्तु अन्न अभी कहीं-कहीं हरा था। पौधों की लहर को देख कर उतावला किसान हाथ में हँसिया लिये हुए रह-रह जाता था—हरी बाल को कसे काटू ? होली बसने तक तो ठहरना ही पड़ेगा। किसान को ठहरा।

सिकन्दर चला गया था ग्वालियर के किले से राजा मानसिंह के योद्धा बाहर निकल पड़े थ और उनमें से बहुत से अपनी खेती किसानी की देख-भाल भी करने लग थ। इसलिये किसान ने भाग्य के भरोसे अपनी उतावली को रोका।

होली आ गई और सन्ध्या के मुहूर्त में जला दी गई।

[२]

पाँच दिन रङ्गपंचमी तक होली मनाने की प्रथा थी। किसी युग में एक महीने तक मनाई जाती थी। जीवन के बोझों ने एक महीने से घटाकर पाँच दिन में सीमित कर दिया। अब एक दिन भी दूभर था।

सवेरा होते ही कुछ लोगों ने हल्दी की थोड़ी सी गाँठों को बाँटकर रङ्ग तैयार किया और भीगते भीगते होली खेल ली। जिनकी गाँठ में रङ्ग नहीं था उन्होंने रास्ते की धूल बटोरी और पानी में घोली। पिछली विपदाओं को भूलकर कम से कम कुछ घण्टों के लिये मतवाले हो जाने की ठान ली। इनमें संख्या स्त्रियों की अधिक थी।

घूँघट डाले हुये घूँघट के ही भीतर अट्टहास करती हुई स्त्रियों ने एक दूसरे पर मटीला पानी और कीचड़ उछाला। नाते में जो पुरुष देवर लगते थे उनको दौड़धूप में हराया और तब गाली तथा कीचड़ से उनको सराबोर कर दिया।

गाँव की लड़कियों पर कोई पुरुष रङ्ग या कीचड़ नहीं डाल रहा था। ननद और भावज के परस्पर नाते वाली स्त्रियाँ अवश्य धूल और कीचड़ को एक दूसरे पर उछाल रही थीं। भगवान ने मुश्किलों से यह दिन दिखलाया फिर कसर क्यों लगाई जाय? रङ्ग हो तो रङ्ग—गुलाल तो थी ही नहीं—नहीं तो धूल रङ्ग और गुलाल दोनों का काम चलाने के लिये तैयार थी ही।

फिर से बसे हुये इस गाँव में एक लड़की अपनी माँ के साथ एक उजड़े हुए गाँव से कुछ दिन पहले आ गई थी। परन्तु गाँव में लड़की की तरह रहने के कारण उस पर कोई पुरुष रङ्ग या कीचड़ नहीं फेंक रहा था।

धूम मची तब लाख लखूची बची खड़ी हो जाती! एक झोंपड़े के द्वार पर टटिया की ओट में खड़ी हुई हँसती मुस्कराती हुई लड़की से मिट्टी

की लाखी-कलूटी मटकिया में मिट्टी घोले हुये दूसरी हँसती हुई लड़की ने रास्ते में दौड़ लगाते हुए कहा।

जिसको लाखी के सम्बोधन से चिनौती दी गई थी वह ईर्षा की कसक से अन्य स्त्रियों को धूल और कीचड़ में सना हुआ देखकर अपने ऊपर आक्रमण किये जाने के लिये मुस्कानों से न्योता सा दे रही थी। टटिया को धमधमा छोड़कर लाखी भीतर की ओर भागी। जिसने सम्बोधन किया था वह झपट कर भीतर धँस गई।

'ऊँ-- ऊँ---निन्नी हमारे कपड़े मैले मत करो। लाखी ने निवारण करते हुए आमन्त्रण दिया।

'बाहर निकलो बाहर तुमको सिर से पैर तक न रंग दिया और बचा न दिया तो मेरा नाम निन्नी नहीं! मटकिया वाले ने ललकारा।

अरे रे रे रे रे!!! लाखी ने हँसते हुये होठों पर--दोनों पर--दोनों हाथ रख लिए और आँखें मूंद लीं। उछल-उछल कर और अट्टहास करते हुये निन्नी ने उसको कीचड़ से सान दिया।

अब मेरी बारी है। पास पड़े हुए गोबर को झपटकर लाखी ने उठाया और निन्नी की ओर बढ़ी।

वे दोनों समवयस्क थीं---प्राय लगभग पन्द्रह सोलह वर्ष। परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की लाखी दुबली और छरेरी। निन्नी गोबर के सत्कार से डरना नहीं चाहती थी।

आओ आओ इसी की कमी रह गई है सो पोते देती हूँ।' निन्नी ने हँसते हुए कहा।

लाखी सहमी नहीं। निन्नी से जा चिपटी। निन्नी ने लाखी के गोबर वाले हाथ को प्रथम एक हाथ की मुट्ठी में पकड़ लिया और दूसरे से गोबर को छीनकर उसके माथे और एक गाल पर मल दिया।

'अरी री री! तुमने तो मेरी कलाई ही तोड़ दी। लाखी ने हँसी में से कराहा।

निन्नी ने सोचा कुछ ज्यादती हो गई। लाखी को छोड़ दिया और मुस्कराती हुई तनकर खड़ी हो गई।

बोली, 'अच्छा अच्छा बुरा न मानो। तुम मुझे लगा दो जहाँ तुम्हारा जी चाहे।'

'ऐसे नहीं। तुमको हराकर लगाऊँगी तब तो बात है।' लाखी ने गोबर वाली मुट्ठी को तानकर कहा।

निन्नी हार नहीं सकती थी परन्तु वह हारना चाहती थी। भागने के बहाने एक दो डग हटी। लाखी उस पर झपटी। निन्नी ढीली पड़ गई। लाखी ने लिपट कर उसके माथे और दोनों गालों पर गोबर पोत दिया।

'ब्याज समेत पा लिया' लाखी खिलखिलाती हुई बोली 'तुम्हारे गोरे गालों पर कैसा बैठा है! अहा हा हा!! डिठौना सा लग गया!!! अब किसी की नजर नहीं लग पावेगी!!!!'

'तुम्हारे एक गाल पर लगने से रह गया है तो तुमको किसी की डीठ लग जायगी।'

'हूँ! तो लगाओ नहीं तो अपने हाथ से लगाय लेती हूँ।'

'बाहर चलो कोई न कोई लगा देगा।'

'कोई कैसे लगा देगा? जो तुमको लगा सकता है वही तो मुझको लगा सकेगा।'

'आवने दे बाहर और पूछ बहिनें।'

'तुम्हरी है कोई नजर?'

'बड़ी ढीठ!'

दोनों हँस पड़ीं। निन्नी की बड़ी-बड़ी आँखों में बनावटी रोष और ओठों पर मुस्कान की फड़कन थी। लाखी की भी उतनी बड़ी तो नहीं परन्तु काली बड़ी आँखें थीं उनमें से हँसी झर रही थी।

'तुम्हारा ब्याह नहीं हुआ?' लाखी ने पूछा।

'हम गूजरों में बचपन में ब्याह नहीं होता' निन्नी ने उत्तर दिया और उससे प्रश्न किया 'और तुम्हारा ?'

लाखी ने नाहीं की 'हम अहीरों में भी बचपन में ब्याह बहुत कम होते हैं और फिर आये दिन की आफतों में ब्याह-स्याह की किसको सूझती है ?'

झोपड़ी के बाहर होली का हुल्लड़ मच उठा था। जिन्होंने सोचा था होली दो तीन घण्टे ही खेलेंगे उन्होंने मनमाने ही उसकी अवधि बढ़ा ली।

निन्नी ने बाहर निकल पड़ने का आग्रह किया। लाखी तो चाहती ही थी। निन्नी ने आंगन में से डबले में धूल भरी और एक पुराने घड़े में से पानी डाल कर अपने आक्रमणों के लिए सामग्री संभाली। लाखी ने थोड़ा सा गोबर हाथ में ले लिया। दोनों बाहर निकल पड़ीं।

और ले-लेकर पुरुष भाग रहे थे। मसाले हुये घूंघटों को खोल खोलकर स्त्रियां हँसती हुई कीचड़ के लड्डू बना बनाकर पुरुषों पर फेंक रही थीं। पुरुष नाच-नाचकर, किलकिला कर उन लड्डुओं को पीठ पर झेल झेल ले रहे थे।

एक स्त्री ने व्यङ्ग किया 'बड़े पुरुष बने फिरते हो पीठ दिखा रहे हो !!'

उस पुरुष ने अकड़कर कहा 'लो लो हम छाती पर तुम्हारे वार को लेंगे।' और आँखों पर हाथ रखकर सामने खड़ा हो गया। उसके मुँह पर कीचड़ गोबर और कीचड़ पुता हुआ था। पहिचान में आना कठिन था।

स्त्री ने छाती को ताक कर लड्डू फेंका। निशाना चूक गया।

'उई! उई!! उई!!! उई!!!!' पुरुष ने उसकी असफलता पर ठठोली की।

स्त्री ने दूसरा लड्डू कुछ निकट आकर फेंका। वह छाती पर जाकर बिखर गया और चिपट गया।

'और तुम रात भर जागते रहोगे ?'

'नहीं तो एक दुविधा की बात है।'

'कोई दुविधा नहीं। कमान तरकस भरे तीर और तलवार लिये जाता हूँ। तुम भी चलो। बारी बारी से जागेंगे और सोवेंगे।'

'यह ठीक है। चलो।'

वे दोनों हथियार लेकर खेत पर चले गये। रात होते ही अटल मचान पर सो गया। निन्नी बगल में तीर कमान और तलवार रक्खे हुये बैठी रही।

चन्द्रमा का उदय हो आया था अब चाँदनी छिटक चली। पास के और दूर के खेतों के रखवालों की हा-हा हू-हू सुनाई पड़ने लगी। ठण्डी हवा देने से मारकर सरसराने लगी। किसी ने अपनी मोटी चादर लपेटी और मचान के पैताने रक्खी हुई दूसरी चादर उसका उठा ली। निन्नी हा-हा हू-हू का शोर नहीं कर रही थी।

चुपचाप बैठी हुई खेत के कोनों पर आँख पसारे थी। पवन के झोंकों के कारण कभी-कभी मेड़ के छोटे-छोटे झाड़-झंकाड़े हिल जाते थे तो उसको किसी वन्य पशु के आ जाने की शंका हो जाती थी। तुरन्त कमान पर तीर चढ़ा लेती थी।

दो पहर रात गये आसपास के खेतों की हा-हा हू-हू कम हो गई और दूर के खेतों की बहुत दीख। चाँदनी ऐसी छिटक आई कि दूर का भी स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगा। जिन झाड़ों का निशा का कई बार उनको पशु होने का भ्रम हुआ था अब वे शंका का कारण न रहे। परन्तु बीच-बीच में आँख झपकने लगी। झाड़ियों के बीच में खसखसी और से आप पड़ने पर कभी सुअर और कभी जंगली भैंसा हवा के झोंके के साथ दिखलाई पड़-पड़ जाता था। वह आया वह आया और गया। मन की मानने लगता। हाथ तीर-कमान पर जाता।

यदि मैं थोड़ा सा सोलूँ ? भैया को जगाऊँ ? उसने सोचा। नहीं दिन भर के थके हैं और मैं कुछ वैसी थकी नहीं हूँ। यदि अकेली ही आई होती तो क्या इस तरह की लकड़ियाँ ले-लेकर खेत की रखवाली करती ? जब ग्वालियर को दिल्ली का सुल्तान घेरे हुये था और जङ्गल पहाड़ के किसी बड़े पेड़ पर रात काटते थे तब ये लकड़ियाँ क्यों नहीं पास थीं ? उसने अपने मन से पूछा और झटके के साथ लकड़ियों को जला दिया। अङ्गड़ाई भी आँखें मीचीं इधर-उधर देखा कि कोई जङ्गली जानवर तो नहीं आ घुसे खेत में और उस दम सावधान होकर बैठ गई। अब कदापि नींद नहीं आने पायेगी। उसने निश्चय किया। सोचा धीरे धीरे कुछ गाऊँ। दिन वाला गीत याद आ गया और वह गाने लगी—

आय परी मैं सिव के पायं...

उसको स्वयं अपने गाने का शब्द और अपना स्वर बहुत भाया। गीत समाप्त नहीं हो पाया था कि उसको लगा जैसे कोई बड़ा जानवर खेत में आ गया हो। गायन को समाप्त करके खेत के कोने-कोने को आँख से टटोलने लगी। कोरा भ्रम था उसने निर्धार किया।

खेत से थोड़ी ही दूर नदी बह रही थी। उसके एक सिरे का पानी बहता हुआ दिखलाई पड़ रहा था। चन्द्रमा की छिटकती हुई भिन्न-भिन्न भाग पड़ती थी मानो चाँदी की चादरों के भावरों पर भावरें झिलमिला रह हों। छोटी-छोटी सी आड़ी-सीधी लहरें उठ-उठ कर इन भावरों को पहन-पहन लेती थीं। सम्पूर्ण लहरों का समूह चाँदी की उन चादरों को ओढ़ लेने की होड़ सी लगा रहा था। पवन के आने-जाने वाले मन्द झोंके इन भावरों को और भी चपल कर रहे थे। लहरों की कमकम झोंकों पर नाचती-कूदती हुई मोन के पौधों की भूम पर उतर उतर पड़ रही थी। चन्द्रिका खेत के हरे पौधों की लचकती डालों को अपनी कोमल उँगलियों से खिला सा रही थी। हरी पत्तियों पर जमे हुये ओसकण चमक चमक कर बिखर-बिखर जा रहे थे। निकटवर्ती जङ्गल

के लमछाम वृक्षों के बड़े बड़े पत्तों को खरभरा-खरभराकर पवन मानों किसी दूर देश को चला जा रहा था। कभी सनसनाहट और कभी खड़खड़ाहट। इन्हीं ध्वनियों में होकर बाहर से डरे हुये सांभरों और चीतलों की कभी तीक्ष्ण और कभी मन्द पुकारें। निन्नी ने सोचा जानवर दूर हैं परन्तु उसने मन पर इस आश्वासन को टिकने नहीं दिया। भैंसे और सुअर तो चुपचाप ही आवेंगे। वह और भी सचेत हुई।

मचान ऊपर से ढका हुआ था और चारों तरफ से खुला हुआ। निन्नी ने चन्द्रमा को देखने के लिये मचान के बाहर सिर निकाला और ऊपर को चार आँखें कीं। लम्बी-लम्बी बरौनियों ने भौंहों को छू लिया। आँखें इतनी बड़ी कि उनको वास्तव में हिरन के छौने की आँख कहा जा सकता था। निन्नी ने सोचा आधी रात हो चुकी है। सिर मचान के भीतर कर लिया। भाई की ओर देखा। वह गाढ़ी नींद सो रहा था। कभी-कभी लहरें भी चढ़ बैठता था जो नदी के कगारों से टकरा जाते थे। निन्नी चाहती थी अटल निरन्तर सोता रहे क्योंकि भोर का उतना भरोसा न करके कान बहुत अधिक ध्यान के साथ लगाये हुए थी—कहीं कोई बनैला जन्तु न आ रहा हो।

पवन धीरे धीरे मन्द पड़ा। पत्तों के मर्मर विलीन हो गये। नदी की लहरों के अवगुण्ठन छोटे पड़ गये और चाँदी की चादरें सी लगने लगीं। खेत के पौधों को जैसे झपकी आ गई जैसे सो गये हों। निकट वनों पर पेड़ों की खरखराहट भी निरन्तर न रही।

एक दिशा में उन चमकती लहरों के उस पार छोटी-छोटी पहाड़ियों के ऊपर एक ऊँची पहाड़ी सिर उठा कर अविचल नेत्रों से चाँदनी को भर पा लेना चाहती थी। ऊँची पहाड़ी का शिखर सूर्य का तिलक पूजन सा जान पड़ता था। नदी के इस पार दूसरी दिशा में विशाल वृक्षों की सेना के पीछे एक ऊँचा पहाड़ खड़ा था मानो नीचे उतर आने के लिये आवाहन सा दे रहा था। बीच-बीच में जुगनो टी-टी ची-ची कर देते थी जिनसे

न तो चांदनी विचलित हो रही थी और न पर्वत के ऊँचे शिखर का ध्यान ही। निन्नी की दृष्टि कभी खेत की ऐंठती हुई बालों पर, कभी नदी की चमकती हुई चंचल ऊर्मियों पर कभी दूरवर्ती धूमिल पहाड़ पर और कभी निकटवर्ती पहाड़ के शिखर पर जा रही थी।

जहाँ भी रहूँ इस प्यारी नदी की चमकती हुई कल्लोलिनी धार को अपने पास में रक्खूँ। बाहर जाऊँ तो क्या इसको बाँधकर समेटकर नहीं ले जाया जा सकता? ऐंठती लहराती बालों का किसी कागज पर उतार लिया जाय। पहाड़ों की ऊँचाइयों को एक स्थान पर क्यों न इकट्ठा कर लूं? बड़े-बड़े पेड़ों के बन्दनवार बना लिये जायं और डालियों-पत्तों के जालों के झरोखे। उनमें से चाँदी की कड़ियों वाली लहरों को नाचता हुआ देखा जाय और फिर मांडूं—आज घरी में पिय के बसाये—लहरें चांदी और मोतियों के हार से पहने हुये इठलाती हुई नाचती रहेंगी बन्दनवार सदा हरे रहेंगे पत्तों की झिलमिलियां निरन्तर चांदनी की भीनी हुई चमक और फूलों की महक से भरी रहेंगी। उसने सोचा। साथ ही स्मरण हो आया—यदि सिकन्दर या उस सरीखा कोई आ गया तो इनको फिर रौंद डालेगा। जिस भांति जंगली पशुओं से खेती की रक्षा तीरकमान द्वारा होती है क्या उसी भांति इस नदी और उस चंचल पहाड़ की रक्षा उसी तीर कमान से नहीं हो सकती? परन्तु किसानों का यह सब सर्वनाश के लिये छोड़कर गिरि कन्दराओं की शरण लेनी पड़ती है। राजा लोग अपने जोड़ के भाई बान्धवों को किसी गढ़ में बन्द करके लड़ते लड़ते मर जाते हैं और उनकी स्त्रियां चिता में जलकर भस्म हो जाती हैं! क्या ये स्त्रियां तीर कमान चलाना नहीं जानती होंगी? क्या इनके खेत नहीं होंगे जिनकी रखवाली करने के लिए उनको मचान पर तीर कमान और तलवार लेकर बैठना पड़ता हो? उनके खेत नहीं होंगे क्योंकि रानियां तो पर्दे में मुंह छिपाये बैठी रहती हैं। सुनती तो यही आई हूँ परन्तु क्या उनके हाथ पैर इतने निकम्मे होते होंगे कि अपने ऊपर आँख और हाथ डालने वाले पुरुष को घूंसे से धरती न सुंघा सकें? कैसी

स्त्रियाँ होंगी वे । खाने को इतना और ऐसा अच्छा मिलते हुए भी मन उनके ऐसे मलिन !! चिता में जलकर मरें स्त्रियों पर हाथ डालने वाले !!! मैं तो कभी इस तरह नहीं मरने की ।

निन्नी ने सहसा दाँत मींचे ।

उसको अपने विचार पर आश्चर्य हुआ । मुस्कराई और खेत के झूमते हुये पौधों पर दृष्टि फेरती हुई नदी की ऊर्मियों का चाँदनी के साथ खेल देखने लगी ।

हवा और भी ठण्डी हो गई । पहाड़ की ऊँचाइयाँ अर्जुन के विशाल वृक्षों के बन्दनवारों बड़े-बड़े हरे पल्लवों के झरोखों इन चमकीली चँदीली लहरों और पतोखी की उन बोलियों को कैसे एक ही स्थल पर इकट्ठा किया जाय ? यह मृगनयनी मानों सोचने लगी । अच्छा बहुत सी मिट्टी को सानकर उससे नदी प्रवाह पहाड़ वृक्ष पल्लव गेहूँ चने के लहराते हुये खेत बना लिये जायंगे । मिट्टी के एक भवन में यह सब आ जायगा । और उस पतोखी की बोली ? मैं गाऊँगी — आप घरो अब— परन्तु विचार आगे न बढ़ा । नींद आई और माथा झुक गया मचान के डण्डे से धीरे से जाकर टिक गया ।

थोड़ी देर के उपरान्त उसको मालूम हुआ मानो नदी की लहरों की छमछम से पत्थर के कगारे आ टकराये हों । हड़बड़ाकर आँख खोली । देखा तो खेत के बीच में एक बड़ा सुअर बच्चों के साथ फसल का संहार कर रहा है ।

निन्नी ने तीर कमान सँभालकर आसन जमाया । साँस थामकर लक्ष्य बाँधा । तीर सट सर्र के साथ सुअर के एक बाजू को फोड़कर गर्दन के पार आधा निकल गया । सुअर हुर हुर करके वहीं चक्कर खाने लगा । बच्चे भाग गए । निन्नी ने कमान की डोर पर दूसरा तीर साध लिया था । कुछ क्षण उपरान्त सुअर समाप्त हो गया ।

अटल बोला 'ऐसा अचूक निशाना तो मैं भी नहीं ले सकता हूँ ।

"हूँ ऊँ! तुमसे ही तो सीखा है।" निन्नी ने कहा।

ऐसे नखरे निन्नी ने कई बार बर्ते थे। अटल स्वयं अच्छा निशाने बाज था परन्तु वह निन्नी को इसी तरह उत्साहित किया करता था। और फिर इतनी देर तक सोते रहने का प्रायश्चित भी तो करना था।

अटल ने अनुरोध किया 'बेटी तुम सो जाओ। मैंने जी भरकर सो लिया है।'

निन्नी यही चाहती थी। अटल रखवाली के लिये बैठ गया और निन्नी सो गई। सुअर का दूसरे जानवरों के लिये बिजूका बनने के लिए वहीं पड़ा रहने दिया।

[४]

दूसरे ही दिन दोज थी। हरे भरे बन में दोज के दिन पूजा पकवान रङ्ग गुलाल अबीर और नाच-गान वाली होली मनाई जाती थी। परन्तु राई गाँव में दोज के दिन के लिये भी सिवाय पूजा और खाने खाने के और कुछ न था पूजा पुजारी के जिम्मे और छककर खाना इस जनता की — मानो बँटवारा कर लिया हो।

पुजारी के सिवाय बाकी लोगों के लिए निन्नी का देखा हुआ अलबेला बड़ा सुघर था। जिन लोगों के मन में दोज के मनाने की चाव लीन थी वे भी धूल-धक्कड़ और गोबर कीच-बिलाव की मौज में मस्त हो गये।

दोज के दिन फिर लाखी और निन्नी की जोड़ी बन गई। पटेल और भी अधिक बहुसर्ध्येरन पर चढ़ गया। नर-नारी हँस रहे थे और भादर-कीचड़ फेंकने में कसर नहीं लगा रहे थे।

लाखी आज तो तुम्हारे सारे गोरे-सलोने शरीर को गोबर से लपेटूँगी। निन्नी ने झपट कर लाखी को पकड़ते हुये कहा।

वह उससे छिटक कर बोली 'लपेटो अपने सारे अङ्गों को तुम्हारे अङ्गों से रगड़ दूँगी तो गोबर में आधा आधा हो जायगा।

अच्छा लो लो।

हाँ होने दो। ह! ह!! ह!!! ह!!!!

ह! ह!! ह!!! ह!!!! ह!! !!

दोनों एक दूसरे से उलझ गई और देर तक उलझी रहीं। उनको इस बात की परवाह नहीं थी कि ऊपर से कमर तक उघाड़ी हो गई हैं। बाहर हल्ला को भाड़ में डालकर दोनों मगन हो गई। दोनों कीचड़ और गोबर में सन गई थीं। दोनों के माथे गालों और दूसरे अङ्गों पर गोबर की आड़ी-टेढ़ी चित्रकारी बन गई थी। दोनों एक दूसरे को देखकर बेदम हुये हँस रही थीं। दोनों ने अपने अपने वस्त्र सम्भाले।

निन्नी ने कहा 'तुम बहुत तगड़ी हो हाथ ऐसे हैं जैसे महुये की डालें पर मैं भी किसी तरह पार पाही गई। हौंस हो तो फिर आओ।

'मेरी बाहें यदि महुए के पेड़ की डालें हैं तो तुम्हारी साँप की रस्सी जैसी है। हे भगवान् कैसी कस जाती है! अच्छा अब चलो दूसरों को बुलावें।

'डर के मारे कोई भी स्त्री तुम्हारा सामना नहीं करेगी। किसी पुरुष को न डाँटो?

'अरी हिश्त! गाँव की लड़की है न। ऐसा नहीं हो सकता। तुम इस गाँव की लड़की नहीं हो हमारे भाई पर कम सा न होगी!

'वाह! बड़ी भैसी हो!! क्या कहेंगे गाँव के लोग?

'अच्छा तो कुछ और सही।

'पुजारी को बुलाना चाहिए बड़ा रसिया जान पड़ता है।

'कैसे? लगता है तुमने कुछ भाँपा है।

'जब कल नाता गा रहा हो रहा था तब वह मेरी ओर तुम्हारी तरफ बार-बार देख रहा था। कभी-कभी भींग भींगकर रीझ रीझकर।

'मेरी तरफ! मैंने नहीं परख पाया।

'परख लेती तो क्या करती?

'हाँ करती तो कुछ नहीं। बमेला पड़ा तो है नहीं जो उस पर ठौर छोड़ देती।

'आज समझना कि देखता है या नहीं तुम्हारी ओर।

'अच्छा पर अभी तो देर है। तब तक एक ओर खेल खेलें। मिट्टी के घरौंदे बनाकर एक भवन बनावें। ऊँचे पहाड़ों की दुर्गों जैसे मोल शिखर, ऊपर कँगूरे। द्वारों पर बड़े-बड़े पेड़ों के तनों जैसे खम्भे और बाहरियों पर फूल-पत्ते मोर, नीलकण्ठ और पपीहियां पत्तों के झरोखों

जैसी झिलमिली। पास में नहीं वन के जन्तु और उनके बीच से राई नदी—————।

'इतना सब बनाने के लिये तो कई बरस चाहिये।'

'अरी खिलौना ही तो है, आओ बनावें—छोटा बनायेंगी जितनी मिट्टी अपने पास है उतनी से ही।'

दोनों इस प्रकार का खिलौना बनाने पर पिल पड़ीं। घण्टे दो घण्टे इस खेल में डूबी रहीं तब तक कोई कामों का हुल्लड़ समाप्त हो गया। वे सब नदी में स्नान करने के लिये चलने को हुईं। उसके उपरान्त मन्दिर जाना था। फिर रात के शिकार की पंगत होनी थी।

अटल लाखी के आँगन में आया।

खिलौने को देखकर बोला 'ये क्या अजूबे से बनाये हैं? महलों मन्दिर बनना है।'

लाखी अटल की ओर आँख करकर निन्नी को देखती हुई मुसकराने लगी।

निन्नी ने पीठ फेरे हुये कहा 'इस को यह बनमना लेने दो पहले।'

अटल ने व्यंग किया 'ओ होहो हो! महल बना रही है मिट्टी के लोंदों का!! रहने के लिये कुछ को एक अच्छी मड़ैया तो बनालें पहले।'

निन्नी ने हठ किया 'इसको बनालूं तो वह भी बन जायगी।'

अटल लाखी को देखता जाता था और निन्नी से चलने का हठ कर रहा था। अन्त में निन्नी को मानना पड़ा। वे दोनों नहाने के लिये उसके साथ चली गईं।

नहा-धोकर गाँव के नर नारी मन्दिर पहुँचे।

पुजारी ने थोड़ा सा काम बहुत पहले ही बोल रक्खा था। सब लोगों ने राज की पूजा की—नई लाई हुई देवी की मूर्ति को प्रणाम किया। पुजारी ने घी की दो चार बूंदों से होम किया और फिर वे प्रसादरूप

लाल रङ्ग के थोड़े से छींटे सब के ऊपर छिड़के। निन्नी के ऊपर छींटे डालने में उसका हाथ झिझका। उसकी कसर को लाखी पर पूरा कर दिया। दो एक छींटे उसके गालों पर आ पड़े। पुजारी ने अपने बेसुरे गले से एक होली गाई —

डरफो ना श्याम कही मानो,
पट जैहै चुनरिया जिन तानों।
कंस राजा को राज लुगो है,
गोकुल की गुजरिया मत जानो।
डरफो ना श्याम कही मानो।

इस होली को नर-नारियों ने अलग-अलग गाया। निन्नी का मधुर कण्ठ फिर सब के ऊपर अलग रहा। गाने के समय पुजारी की आँख वैसे ही निन्नी पर जाती उसको निन्नी के हाथ में तीर-कमठा और छिदा हुआ मस्त सुअर नजर आता। 'विकट है यह लड़की' वह सोचता।

जब स्त्रियाँ नाचने लगीं और बारी-बारी से पुरुष तब पुजारी लाखी को कभी अदाओं के लिए सीख और कभी कनखियों देखता। लाखी की आँख छिप-छुपकर बरबस ही उस की ओर जा रही थी इसलिए उसने पुजारी की दृष्टि को एकाध बार ही पकड़ पाया। निन्नी अपने गायन और दूसरों के नृत्य पर इतनी ध्यान-मग्न थी कि उसने केवल कभी-कभी ही यह जानने की चेष्टा की कि पुजारी की आँख कहाँ घूम रही है। उसने पुजारी को अपनी ओर देखते हुये नहीं पाया।

गायन और नृत्य की समाप्ति पर पुजारी ने गुड़ और ज्वार के थोक से फूले प्रसाद में बाँटे।

'निन्नी के लक्ष्यवेध का करतब ग्वालियर के राजा को दिखलाया जाय'—पुजारी ने उसको प्रसाद देते हुये कहा—'तो राजा और उनके सामन्त दाँतों तले उँगली दबा लेंगे।

बिना किसी संकोच या बनावट के निन्नी बोली 'क्यों मैंने कौन सा ऐसा पहाड़ तोड़ गिराया है? मेरे हाथ से तो नाहर और अरने भैंसे एक-एक तीर से ही मार गिराये हैं।'

अटल ने निन्नी को उत्साह दिया — 'बाबाजी इसने भी नाहर और अरने भैंसे एक ही एक तीर से मार गिराये हैं। इसका काम राजा मानसिंह देखेंगे तो बड़े प्रसन्न होंगे।'

'मैं ले चलूँगा ग्वालियर-नरेश के सामने। राजा मुझको अच्छी तरह जानते हैं। ग्वालियर में बड़े-बड़े मन्दिर हैं और—' पुजारी से बात पूरी नहीं कर पाई।

निन्नी ने रूठे हुये से टोका 'मुझको नहीं जाना ग्वालियर-गुवालियर किसी राजा-वाजा के सामने।'

सब लोग हँस पड़े।

अटल ने कहा—'ग्वालियर बहुत बड़ा नगर है।'

'होगा'—वह उपेक्षा के साथ बोली—'थोड़ी सी झोपड़ियों का हमारा यह गाँव, साफ नदी और ये जङ्गल-पहाड़ बहुत अच्छे।'

पुजारी हँसा—'हाँ हाँ, ग्वालियर नगर में सुअर, रीछ, नाहर, अरने भैंसे कहाँ रक्खे हैं निन्नी के लिये!'

निन्नी इस बात के भीतर अपनी प्रशंसा को समझ करके अभिमान में फूल गई।

उसके मुँह से निकला 'लाखी, तुम भी तीर-तलवार चलाना सीख लो। मैं सिखलाऊँगी, भैया सिखलायेंगे। तुम भी जङ्गली जानवरों को मारना।'

लाखी ने अटल की बरौनियों देखा और पास खड़ी हुई स्त्रियों को देखती हुई मुसकराने लगी। स्त्रियाँ निन्नी की ओर मुँह बिचका कर हँस पड़ीं जैसे कह रही हों स्त्रियों का तीर-कमान चलाना कितना बुरा काम है!

निन्नी ने सहमकर सिर नीचा कर लिया। अटल ने लाखी की कनखीली चितवन को देख लिया था। वह किसी न किसी मिस उसको भी भरकर देख लेना चाहता था। जब वह हँसती थी उसके गालों में गड्ढे पड़ जाते थे। एक गड्ढे पर दो तीन लाल छींटे उभर उभर कर उस हँसी को रंग से रचा सा देते थे। अटल उस रचावट को देखना चाहता था परन्तु देख नहीं पा रहा था।

वे सब हँसते-हँसते वहां से चल पड़े। उस थोड़े से प्रसाद को रास्ते में ही चबाते चले जा रहे थे। एकाध बार मुड़कर लाखी ने देखा तो उसकी आँख अटल की आँख से मिल गई।

घर पहुँचकर लाखी ने सोचा यदि मैं तीर चलाना सीख लूं तो कुछ बुरा तो करूँगी ही नहीं निन्नी भी तो लड़की ही है गूजर-कन्या सीख सकती है तो अहीर-कन्या किससे कम है? मैं बहुत जल्दी सीखूंगी। निन्नी से सीखूंगी—अटल चाहे तो उससे भी। इसमें कुछ भी खोट नहीं है। सीख लेने पर मैं ग्वालियर के राजा के सामने लक्ष्यभेद भी दिखलाऊँगी। राजा तो चकित हो जायगा। निन्नी लजाती है, पर मैं नहीं लजाऊँगी। ग्वालियर देखूंगी बड़ा नगर है बड़े-बड़े चौक और चौहट्टे होंगे मन्दिर और मूर्तियां चटकदार कपड़े पहिने हुये नर-नारी।

लाखी के खेती नहीं थी। पहिले बहुत से पशु थे परन्तु आक्रमण काल में एक गाय को छोड़कर बाकी सब या तो मार डाले गये या मर गये। बाप मारा गया और सयाना भाई भी। अब माँ-बेटी गाय के दूध और दूसरों की मजदूरी पर जीवन निर्वाह कर रही थीं। माँ जंगल में से कभी-कभी कुछ फल-फूल भी ले आती थी।

लाखी निन्नी से तीर चलाना सीखने लगी। माँ उसको बहुत प्यार करती थी। सीखने में कोई अड़चन नहीं डाली। अटल ने भी सिखलाया।

बीस-पच्चीस दिन के बाद धानी पक गई और फसल काटकर घने जंगल के भीतर छिपे हुये खलियानों में रख दी गई। लोगों का अधिकांश

समय नहीं बोलने लगा। जंगली जानवरों से रक्षा आग और तीर-कमान से होती रहती थी। पुजारी भी वहीं रमने लगा। अनाज के गाहे जाने पर उसको भी मन्दिर के नाते कुछ अन्न मिलता था। बदले में वह पुराणों की गाथायें कुछ अपना नमक-मिर्च मिलाकर सुनाया करता था। रात को आग के आस-पास कभी भजन और कभी राछरे।

अनाज गाह लेने के बाद ग्वालियर के राज्य की उगाही के लिये अहदी आये और पुरानी परम्परा के अनुसार उपज का छठवां अंश ले गये। उगाही में उन्होंने कोई क्रूरता नहीं की। बाकी अनाज को किसानों ने छिपा-लुकाकर रख लिया।

लाखी और उसकी माँ को कटाई, मजदूरी में थोड़ा सा अनाज मिल गया परन्तु वह दूसरी फ़सल तक के लिये पर्याप्त न था। फ़सल कटने के उपरान्त गांव में कोई और मजदूरी नहीं थी। जीवन-यापन के लिये लाखी ने तीर-कमान के अभ्यास को और भी बढ़ा दिया परन्तु लोहे के तीर या उनके फल दुष्प्राप्य थे इसलिये बांस के तीरों की नुकीली नोकों से काम चलाया। कोई बड़ा जानवर न मार पायें तो पेट पालने के लिए चिड़िया और नदी की मछलियां ही सही।

आखेट के लिए वह निन्नी और अटल के साथ जङ्गल में जाने लगी। निन्नी एक दिन कुछ अन्तर पर एक दिशा में अलग पड़ गई केवल लाखी और अटल साथ रह गये।

अटल उसको जी भरकर देख लेना चाहता था। कई बार चाहा था परन्तु एक बार भी सफल न हुआ। वे दोनों एक पेड़ के नीचे किसी जानवर की आहट लेकर खड़े हो गये। आहट की दिशा में आंखें गड़ाकर देखने लगे।

अटल ने मुड़कर लाखी की ओर जरा सा देखा। उसने आंखों के संकेत से प्रश्न किया। अटल ने एक निश्वास को दबाया। लाखी ने फिर प्रश्नसूचक दृष्टि की। उसके सारे अंगों की एक मन्द चाल पर से

होठों की ओर आ गई थी। सिर का जरा सा झटका देकर उसको पीछे किया।

अटल ने कुछ स्थिरता के साथ उसकी ओर देखा। लाखी ने आँख नीची नहीं की।

धीरे से पूछा क्या बात है?

'क्या कहूँ? कैसे कहूँ? बक नहीं फटता।

'फिर भी?

'मैं तुमको बहुत चाहता हूँ। बहुत प्यार करता हूँ।

'मैं जानती हूँ।

लाखी ने आँखें नीची करलीं। अटल ने उसके कन्धे को एक बाँह में भर लिया।

'हम तुम एक होकर सदा साथ रहना चाहते हैं। कभी अलग नहीं होंगे। अटल ने काँपते हुए स्वर में कहा।

'कैसे हो सकता है ऐसा? हमारी तुम्हारी जात-पाँत अलग-अलग है।

'तुम मुझको चाहती हो या नहीं? पहले यह बात बतलाओ।

मैं क्या कह सकती हूँ? तुमको कैसा जान पड़ता है?

'मुझको जान पड़ता है कि हम-तुम एक हो जायेंगे।

'परन्तु जातपाँत?

'पहले हुआ है। हमारी-तुम्हारी जाति में ब्याह-सम्बन्ध हुए हैं। पुजारी बाबा पुराण की कथाओं में सुनाते रहते हैं।

मेरी माँ और तुम्हारी बहिन मान लेंगी?

'भरोसा तो है।

'और गाँव वाले? पञ्च और मुखिया?

अच्छा उन्होंने न माना तो?

'न मानो तो मैं क्या कर सकती हूँ ?

'फिर भी हम लोग एक हो सकते हैं और एक होकर रहेंगे। मैंने प्रण कर लिया है।

निन्नी कभी-कभी ठठोली कर बैठती है। वह मेरे भाव को पहिचानती नहीं है। कुछ गाँव वाले भी स्यात् जानते हों।

तुम्हारा मन पक्का है।

मेरे मन से नहीं अपने मन से पूछो।

'बस अब और कुछ नहीं पूछना है।

अटल लाखी को कुछ क्षण अपनी बाँह में कसे रहा। जिस दिशा से आहट आई थी उस दिशा से एक नर-मोर भागता हुआ आ रहा था। लाखी तुरन्त अटल की बाँह से अलग हुई। कमान पर बाँस का एक पैना तीर चढ़ाकर छोड़ दिया। मोर चीख के साथ वहीं गिर पड़ा। लाखी ने दूसरे तीर से उसकी पीड़ा को तुरन्त समाप्त कर दिया।

अटल के मुँह से निकला 'वाह ! वाह !!

इतने क्षण एक झाड़ी के पीछे से तेंदुआ छलांग कर मोर के लिए भागा। अटल ने उस पर तीर छोड़ा परन्तु वह तेंदुआ को नहीं लगा। तेंदुआ भाग गया। उन दोनों ने पेड़ की आड़ छोड़ दी। मोर के पास गये। पीछे से निन्नी आ गई। उसने मृत मोर को उठा लिया परन्तु भागते हुये तेंदुआ को नहीं देख पाया था।

अटल ने ऊँचे स्वर में कहा 'देखो निन्नी लाखी ने कैसा अच्छा निशाना लगाया है।

निन्नी ने समर्थन किया 'वह तुम्हारी गुरु निकलेगी दाऊ।

अटल हँस पड़ा। लाखी भी खिलखिला पड़ी।

अटल बोला मैंने तेंदुआ पर तीर चलाया था, पर मेरा निशाना खाली गया।

"क्योंकि तेंदुआ से तो हम लोगों का पेट भरता नहीं। इस मोर से तो दिन का काम चल जायगा।" लाखी ने कहा।

अटल अपने चूके हुये तीर को छू आया। मोर को उठाकर व सब घर की ओर चलने लगे। निन्नी के हाथ कुछ नहीं लगा था। लाखी को प्रसन्न देखकर वह कुढ़ रही थी।

"लोभी मैं होती तो तेंदुआ को यों ही न निकल जाने देती और मोर को न मारती।"

अटल ने इस व्यङ्ग के भीतर छिपी हुई कुढ़न को पहिचान लिया परन्तु उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। लाखी की प्रसन्नता में कोई कमी नहीं आई।

निन्नी कहती रही "तीर जो लगता तो और भी अच्छा होता।"

अटल ने और भी चिढ़ाया "तुम्हारा तीर तेंदुआ के पेट को छेदता हुआ सनक कर बहुतो पेड़ पर और तेंदुआ तीर को लिये हुये बस देता किसी पहाड़ की गुफा में। तेंदुआ और तीर की तपस्या का फल कभी किसी को न मिल पाता।"

'भाग तो जाता तेंदुआ तीर को चुराकर! गर्दन में न देती तो टार के साथ यहीं सो जाता!!' निन्नी ने ठिनक कर कहा।

'अच्छा अच्छा बहुत अच्छा। फिर कभी सही।' अटल बोला।

लाखी ने निन्नी को फुसलाते हुये कहा, 'पेट भरने के लिये मोर मिल गया और निशान के लिये तीर, यह क्या कम है?'

[५]

राज्य के सिपाहियों की उगाही के बाद पुजारी की उगाही सहज ही नहीं हो गई। किसानों को मन्न के दर्शन राम राम करते हुये थे इस-लिये वे मन में भिनर-भिनर कर रहे थे। पुजारी ने कहा 'शास्त्र का वचन कभी न भूलो छठवाँ भाग राजा का होता है सो तुमने दे दिया। बीसवाँ देवता का तीसवाँ ब्राह्मण का होता है। उसके देने में आनाकानी करने से यह लोक तो बिगड़ता ही परलोक से भी हाथ धो बैठोगे।

एक किसान सिसियाहट को छिपाता हुआ बोला 'फिर हम क्या खायेंगे ?

'भगवान देंगे। मैं भजन भी करूँगा।

'भजन करने पर भी सिकन्दर के सुल्तान ने इतना खून बहा दिया! इतने पर घोर बड़े बड़े जन कौशल कर दिये!!

'वाह इस मूर्ख को! इस धार नास्तिक को!! अब कोई नई विपद भी बुलाने वाला है। करता है एक मोचमाल भुगतनी पड़ती है हम सब को!

'अरे चल रे चुप! पुजारी महाराज से कैसी बात करता है!!

'सो तुम दे दो पहले। मर तो मिटा है पर बीर गड़ा गेहूँ-चने से।

'हम नहीं तो क्या तुम खरीगे मर जायेंगे ?

बार बार की होनी देखकर बड़ा अन्न सा गया। उसने पुजारी का पक्ष लिया। बोला 'वे तो अपने भाग को गाली के साथ देता। देवता और ब्राह्मण का भाग देना ही पड़ता है। न जाने कहाँ से बदली हो जायगी।

अन्त में पुजारी के बोने पर अपनी महामुनि की मुस्कान पाई। अधिकांश किसान आनाकानी करते हुये भी जानते थे कि अनिवार्य का निवारण नहीं होने का इसलिये देने के लिये अपने को विवश पा भी रहे

वे पटेल को दानवृत्ति में पगा हुआ सा देखकर हंस गये। भग्गन ने सोचा पुजारी की सहानुभूति पाये बनकर काम देगी। सब किसानों ने देवता का बीसवां और ब्राह्मण का तीसवां यानी पुजारी को कुल बारहवां हिस्सा भेंट कर दिया। सब मिलाकर अन्न का चौथा भाग किसानों के पास से निकल गया। तीन चौथाई फिर भी बचा रहा। उन्होंने मन ही मन यह कहकर सन्तोष कर लिया कि बाहर के लुटेरे सब का सब ले जाते तो गांठ में कुछ भी न बचता।

भग्गन अवसर ढूंढकर पुजारी से एकान्त में मिला। बड़ी नम्रता और भोलेपन के साथ उसने चर्चा छेड़ी।

'महाराज आपको इतना ज्ञान कहां से मिला? पोथी-पत्रे तो आपके पास थोड़े ही हैं, पर जानते आप जगत भर की बातें हैं!'

'अरे नहीं भाई। भगवान का भजन करता हूं। मैं तो भगवान के नाम के सिवाय और कुछ नहीं जानता।'

'बाबा जी आपको रामायण महाभारत और न जाने कितने शास्त्र रटे पड़े हैं। क्या हम लोग भी पढ़ सकते हैं?'

'क्यों नहीं पढ़ सकते? तुम तो क्षत्रिय हो। वेद तक पढ़ सकते हो।'

'क्या आपने वेद पढ़े हैं?'

'अरे यों ही कुछ-कुछ। कलियुग में वेदों के पढ़ने-पढ़ाने वाले रह ही कितने हैं?'

'क्या स्त्रियां पढ़ सकती हैं?'

'वेद! अरे राम राम!! स्त्रियां और शूद्र वेद नहीं पढ़ सकते।'

'वेद नहीं महाराज पुराण-भुराण।'

'कैसे हो तुम! पुराण को भुराण नहीं कहते। अनादर नहीं करना चाहिये।'

'वैसे ही कहा। क्षमा कीजियेगा। स्त्रियां पढ़ सकती हैं?'

देव ने बैजनाथ से कहा, 'भगवान की बात छ। फूलों से क्या होगा ? मैं कहता हूँ किसी फूल का, फूल न मिले तो कुछ मिट्टी का शिवलिङ्ग बनाकर और 'ॐ नम शिवाय' से अभिमन्त्रित करके कुएँ में डाल दो, कुआँ शुद्ध हो जायगा क्यों पंचायत बढ़ा रहे हो।

भगवान और फूल या मिट्टी में जैसे कोई अन्तर ही न हो ? दूसरा बोला।

'शिव की जटाओं से गंगा जो निकली है। इसलिये शिव और गंगा में अन्तर है परन्तु मैं पूछता हूँ कि शिव बड़े या गंगा बड़ी ?'

'लोक, समाज और समय के भय से छोटे बड़े और बड़े छोटे हो जाते हैं।

'क्या अनगल बात कहते हो! जो छोटा है वह छोटा ही रहेगा जो बड़ा है वह छोटा नहीं हो सकता।

'हठ करने का तो तुम्हारा स्वभाव ही है। विष्णु और शिव में विष्णु को बड़ा कहा गया है परन्तु किसी-किसी अवसर पर शिव बड़े हो गये हैं

'कभी नहीं। असम्भव। शिव के सामने विष्णु की क्या बिसात ?

'व्यर्थ झगड़ा करते हो। सब मार्ग एक ही ठौर को पहुँचाते हैं।

'बिलकुल झूठ। सब मार्ग एक ही ठौर पर ले जाते हैं तो फिर पड़ो कुएँ में, नदी में पहाड़ पर से किले पर से, पहुँचोगे अन्त में बैकुण्ठ धाम! यही न ?

'व्यर्थ का अनर्थ तुम जैसे निगुराना बातें करते हैं वैसा तो कोई नहीं कर सकता।

निगुराना बातों में ही वेदों के भाष्य लिखे हैं नहीं तो कब मरे होते चुल्लू भर पानी में तुम और नरेश के सब ब्राह्मण!

'तुम्हारे माथे में तो लड़ने-भिड़ने के लिए कीड़े कुलबुलाया करते हैं। तुम्हारी समझ में इतनी छोटी सी बात क्यों नहीं आती कि कुएँ

बासनी में घिरकर मरना और बात है भिन्न मार्गों से पूजा और आराधना करके अभीष्ट तक पहुँचना दूसरी बात। ध्यान और मन को एकाग्र करके किसी भी मार्ग को ग्रहण कर लेने से मनुष्य मोक्ष को पा सकता है।

नदियों पेड़ों साँप के बिलों टोरियों पहाड़ों भेड़ियों सियारों और चाहे जिस पत्थर के टुकड़े का ध्यान और मन से पूजा करो कि मिला मोक्ष! अरे तुमने ही इस युग को कलियुग बनाया!! धिक्कार है तुमको!!!

धिक्कार तुमको और तुम्हारे बाप को! अज्ञान के वश समझते हो कि तुम्हारा मनमत ही सब कुछ है!! नितान्त भ्रम में पड़े हो। नरक में जाओगे।

दोनों के स्वर तीक्ष्णता पर चढ़ आये थे। लोगों ने अपने अपने आसन छोड़ दिये। कुएँ पर काम करने वाले मजदूर काम छोड़कर छाया में आ गये। शायद तमाशा कुछ और निखरे-सुधरे ये लोग चाहते थे।

नरक में बिलबिलाओगे तुम और तुम सरीखे सब जिन्होंने वर्तमान जीवन को अपने स्वार्थ के सिवाय और कोई महत्व नहीं दिया। हम निर्गुणपन्थ इस जीवन को स्वर्ग बनाते हैं और मरने पर कैलाश तो हमारे लिये है ही। दूसरे ने झपट कर कहा।

मजदूरों का मुखिया बीच में आ गया। निवारण करते हुये बोला 'महाराज लड़ो मत। हम लोगों के लिये भी कहीं कुछ है?'

प्रथम ब्राह्मण ने तपाक से कहा 'हम बतला सकते हैं यह जिस ज्ञान का विषय अज्ञान नहीं बतला सकता।'

जिसका नाम निर्गुणपंथ बतलाया गया था बोला 'यह बतला-गया। क्या बतलाता है बतला।'

'भजन भजन भजन भजन करो मूर्खो।' उसने बतलाया।

'किसका?' मजदूरों के मुखिया ने पूछा।

विजयजङ्गम ने तुरन्त उत्तर दिया 'इस पेट का। अपनी मजदूरी और पेट काटकर भरो इस भिखमंगे का पेट। भजन से इसका यही प्रयोजन है।'

वह भागा। मजदूर खड़े रह गये। वह छुआछूत के डर से नहीं ठिठक गया।

विजय ने कहा 'मैं काम करूँ तुम भीख माँग-माँगकर खाते रहो। यही है न तुम्हारे भजन की शिक्षा ?'

मजदूरों का मुखिया बोला 'हमारे भाग्य में यही बदा है। पूर्व जन्म का फल या भुगतना पड़ता है। आप सबके भाग्य में पढ़ना-लिखना राज्य करना कराना लिखा है सो बड़ी जात में जन्म लेते हो।'

'यह सब भ्रम है' विजय ने प्रतिवाद किया—'जीवन में काम करना, श्रम से रोटी का उपार्जन करना और शिव का नाम लेना यही गौरव है। इसी में जीवन की सार्थकता है। भीख माँग कर खाना और पाखंड से अज्ञानियों की श्रद्धा का संग्रह करते रहना यही सबसे बड़ा पाप है। पूर्व जन्म ने सब के लिये काम को प्रधान कर रक्खा है। पूर्व जन्म के सब दुःख श्रम और शिव की गायत्री से कट जाते हैं।'

मजदूर इस व्याख्या को नहीं समझे।

दूसरा भिखारी बोला 'बड़ा शिव की गायत्री वाला बना फिरता है। गायत्री केवल एक है केवल एक।'

'जिसको तुम लोगों ने छिपा-छिपा कर मटीला कर दिया है। सुना सकते हो इन लोगों को अपनी गायत्री ?'

'तुम तो हो मूर्ख! गायत्री किसी को सुनाई जाती है? अत्यन्त गोपनीय है'—कहा जङ्गम।

'शिव की गायत्री ऐसी है जिसका पाठ चाण्डाल भी कर सकता है और पवित्र हो सकता है परन्तु तुमको खाना पेट भरने और पाखण्ड रचने से अवकाश कहाँ ?'

'कहाँ लिखा है कि शिव की भी कोई अलग मालिनी है ? शासन पुराण में मूर्ख ।

'और अधिक मानी बकी तो डंडे से खोपड़ा खोल दूंगा ।

'डंडे से खोपड़ा खोलने के पहले त्रिपुण्ड से तुम्हारी आँखें हम पहले ही बाहर कर देंगे ।

फिर एक दूसरे पर झपटे । मजदूर फिर बीच में आ पड़े ।

'चल रे तिलङ्ग राजा के पास । वहीं न्याय और तेरा दण्ड होगा । वैष्णव ने चिल्लाकर कहा ।

विजय भी चिल्लाया—'मैं तैलङ्ग नहीं हूँ गाँव में कर्नाटक का हूँ जहाँ लक्ष्मी और भगवान शंकर ने अवतार लिये । बस न्याय होगा तो मुँह तेरा काला किया जायगा ।

'कलियुग में अवतार ! बस वहीं निर्णय और न्याय होगा । दूसरा पूरे भरे स्वर में बोला ।

मजदूरों को उसने आदेश दिया 'तुम लोग साक्षी हो । हमारे साथ चलो ।

मजदूरों का मुखिया बोला 'पर अभी कुछ हुआ तो है ही नहीं न ठेला चला और न त्रिशूल । बातें जो आप दोनों के बीच में हुई हैं सो हम लोग समझे नहीं ।

वैष्णव ने कहा 'हमने भगवान की बुराई की यह तो तुम समझे ? सब न चलें अकेले तुम ही चले चलो ।

'फिर यहाँ काम कौन करावेगा ? मुखिया ने पूछा ।

उस त्रिपाठी ने भर्त्सना की—'भाड़ में गया काम ! काम को देखते हो या धर्म पर किये गये आघात को ?

'मुझको क्या'—मुखिया ने उपेक्षा के साथ कहा,—'राजा का काम धरा पड़ा रहेगा । पास आओ । कुआँ रीता कर लिया गया है । पास कंगाल और मंच से कुएँ को पूरा कर लो फिर चले चलो ।

'धर्म के सामने छूआ-छूत कुछ नहीं। चलो मेरे साथ।' उसने हठ किया।

वे तीनों किले की ओर चले। किले के फाटक पर रोक लिये गये। राजा चौथे पहर सन्ध्या के समय मिलेंगे उन लोगों को बतलाया गया। वे तीनों भूखे थे। मजदूरों का मुखिया मनचाहा विश्राम पा गया था।

तीनों फाटक के पास एक घनी छाया में ठहर गये।

तीसरे पहर एक छोटी सी पोटली बांधे राई गांव का पुजारी भी वहीं आ गया।

आते ही उसने पूछा 'क्या फाटक नहीं खुला अभी?'

'चौथे पहर खुलेंगे।' उसको उत्तर मिला।

विजय ने पुजारी की धूल-धूसरित और पसीने से भीगी हुई आकृति का निरीक्षण किया। पुजारी के चेहरे पर नम्रता थी। पुजारी ने दोनों को टटोला।

विजय के साथी ने पुजारी से प्रश्न किया 'कौन हो कहां से आये हो?'

उसने उत्तर दिया 'पांच कोस की दूरी पर राई नाम का एक उजड़ा हुआ छोटा सा गांव है। वहीं से आया हूं। नाम मेरा बोधन शास्त्री है।'

उन बिचारों ने पूरी पड़ताल की—जाति गोत्र मूल पिता का नाम धर्म कर्म सभी पूछ डाला। जब पूरा पता लगा लिया तब जल पी लेने का अनुरोध किया। बोधन जल पीकर आया था इसलिये कृपा बनाये रखने भर की वाञ्छा प्रकट की।

'कैसे आये?' उसने आने का प्रयोजन पूछा।

बोधन ने प्रयोजन प्रकट किया,—'गांव में भगवान का मन्दिर था। [illegible] ने नष्ट कर दिया। उसके जीर्णोद्धार इत्यादि की याचना के लिये राजा के पास आया हूं।'

एक से दो हुये—बोधन और पुलग धात्री। विजय के विकारी को अपने भीतर स्फूर्ति का स्पन्दन मिला। बोधन ने विकारी के आने का कारण पूछा।

उसने सविस्तार बतलाया।

विकारी ने कहा 'इनका नाम विजयजङ्गम है। विमजाना या धर्मान्तिक के हैं। यह इस बात को नहीं मानते कि किसी भी मार्ग से भी जाओ, पहुँचो अभीष्ट स्थान पर ही।

विजय बोला 'कैसे मान जाऊँ? कूड़ा कर्कट फेंकने और मोहम भोग लगाने के परिणाम और अन्तर को कैसे भूल जाऊँ?'

बोधन सहमत नहीं हुआ।

विजय का विकारी बोला 'अब हम एकत्र तो हो गये हैं। करलो जितना शास्त्रार्थ करना हो।'

बोधन ने मोर्चा लेने से इन्कार नहीं किया।

Two negatives make one

विजय ने व्यङ्ग किया—'दो नाहीं की एक हाँ भले ही बन सकती है परन्तु दो मर्गों का भोग एक अविनाश नहीं होता है।'

बोधन की भौंह तन गई, परन्तु बोला कुछ नहीं।

विकारी ने व्यङ्ग का उत्तर दिया 'नाम इनका जङ्गम है परन्तु हैं वास्तव में जड़।'

बोधन विवाद को बढ़ाना नहीं चाहता था और वह राजा के सामने वादी या प्रतिवादी के रूप में नहीं पहुँचना चाहता था। बोला 'अभी थोड़ी देर में राजा के सामने पहुँचे जाते हैं वहीं निर्णय और न्याय होगा।'

चौथे पहर का घण्टा बजते ही फाटक खुल गये। वे चारों भीतर पहुँच गये। कोट की ऊँची दीवार के भीतर कई छोटे-छोटे कोट मिले। जिनमें सैनिकों का आवास था। प्रत्येक फाटक पर सशस्त्र सावधान पहरे। किले दिया के मैदान के छोर पर साथ बहू और तेली के मन्दिर थे।

"धर्म के सामने छुआ-छूत कुछ नहीं। चलो मेरे साथ।" उसने हठ किया।

वे तीनों किले की ओर चले। किले के फाटक पर रोक लिये गये। राजा चौथे पहर संध्या के समय मिलेंगे उन लोगों को बतलाया गया। वे दोनों भूखे थे। मजदूरों का मुखिया मनचाहा विश्राम पा गया था।

दोनों फाटक के पास एक घनी छाया में ठहर गये।

तीसरे पहर एक छोटी सी पोटली बाँधे राई गाँव का पुजारी भी वहीं आ गया।

आते ही उसने पूछा "क्या फाटक नहीं खुला अभी?"

"चौथे पहर खुलेगा।" उसको उत्तर मिला।

विजय ने पुजारी की धूल-धूसरित और पसीने से भीगी हुई आकृति का निरीक्षण किया। पुजारी के चेहरे पर नम्रता थी। पुजारी ने दोनों को टटोला।

विजय के साथी ने पुजारी से प्रश्न किया "कौन हो? कहाँ से आये हो?"

उसने उत्तर दिया "छः कोस की दूरी पर राई नाम का एक उजड़ा हुआ छोटा सा गाँव है। वहीं से आया हूँ। नाम मेरा बोधन शास्त्री है।"

जब विजारी ने पूरी पड़ताल की—गोत्र शाखा सूत्र पिता का नाम धर्म कर्म सभी पूछ डाला। जब पूरा पता लगा लिया तब जल पी लेने का अनुरोध किया। बोधन जल पीकर अघाया था इसलिये हुरा बनाये रखने भर की वाञ्छा प्रकट की।

"कैसे आये?" उसने आने का प्रयोजन पूछा।

बोधन ने प्रयोजन प्रकट किया—"गाँव में भगवान का मन्दिर था। आक्रमणकारियों ने नष्ट कर दिया। उसके जीर्णोद्धार इत्यादि की याचना के लिये राजा के पास आया हूँ।"

एक स दा हुये — और दूसरा शास्त्री। विजय के विवादी को अपने भीतर स्फूर्ति का स्पन्दन मिला। बोधन ने विवादी के आने का कारण पूछा।

उसने सविस्तार बतलाया।

विवादी ने कहा 'इनका नाम विजयजङ्गम है। तिमञ्जाना या कर्नाटक के हैं। यह इस बात को नहीं मानते कि किसी भी मार्ग से भी जाओ पहुँचोगे अभीष्ट स्थान पर ही।'

विजय बोला 'कैसे मान जाऊँ? कूड़ा कर्कट फेंकने और मोहन भोग खाने के परिणाम और अन्तर को कैसे भूल जाऊँ?'

बोधन सहमत नहीं हुआ।

विजय का विवादी बोला 'अब हम एकत्र तो हो गये हैं। करलो जितना शास्त्रार्थ करना हो।'

बोधन ने मोर्चा लेने से इन्कार नहीं किया।

Two negative make one p

विजय ने व्यङ्ग किया — दो नाहीं की एक हामी तो बन सकती है परन्तु दो मूर्खों का योग एक बुद्धिमान नहीं होता है।

बोधन की भौंह तन गई परन्तु बोला कुछ नहीं।

विवादी ने व्यङ्ग का उत्तर दिया 'नाम इनका जङ्गम है परन्तु हैं वास्तव में जड़।'

बोधन विवाद को बढ़ाना नहीं चाहता था और वह राजा के सामने वादी या प्रतिवादी के रूप में नहीं पहुँचना चाहता था। बोला 'वादी प्रतिवादी पीछे राजा के सामने पहुँचे जाते हैं वहीं निर्णय और न्याय होगा।'

चौथे पहर का घण्टा बजते ही फाटक खुल गये। वे चारों भीतर पहुँच गये। कोट की ऊँची दीवार के भीतर कई छोटे-छोटे कोट मिले। जिनमें सैनिकों का आवास था। प्रत्येक फाटक पर सशस्त्र सावधान पहरे। दक्षिण दिशा के मैदान के छोर पर खास गढ़ और तेली के मन्दिर थे।

यहाँ फूस के छोटे छोटे झोंपड़े डाले हुये फिर से लौटे हुये कुछ निवासी विपद के दिन काट रहे थे। कुओं के साफ हो जाने की प्रतीक्षा में पड़े थे। राजा का भवन उत्तरवर्ती कोट के भीतर था। इस कोट के फाटक पर थोड़ी ही देर की प्रतीक्षा के बाद राजा ने उन सबों को अपने कक्ष में बुला लिया। वे सब राजा को पहले से जानते थे। मजदूर को छोड़ कर बाक़ी तीनों को राजा भी पहिचानता था। उन तीनों को आसन दे दिया गया। मजदूर खड़ा रहा।

राजा मानसिंह युवावस्था के आगे आ चुका था। बड़ी काली आँखें भरी भौंह सीधी-लम्बी नाक चेहरा भरा हुआ कुछ लम्बा। ठोड़ी दृढ़ होंठ सहज मुस्कान वाले। सारा शरीर जैसा अनवरत व्यायाम से तपाया और कसा गया हो। कद लम्बा और छाती चौड़ी। घनी नोंकदार मूछें।

मानसिंह को इन लोगों के आने का कारण मालूम था परन्तु उसने विचार के विषय को नहीं छेड़ना चाहा। पुराने परिचय को नया करने के लिये बोधन से पूछा 'कहाँ-कहाँ कष्ट झेलते फिरते रहे शास्त्री जी ? भगवान ने हमारी सब की लाज रक्खी तो फिर एक दूसरे से मिलने का दिन पा गये। मानसिंह के स्वर की खनक ऐसी थी मानो तलवार झनझना गई हो।

बोधन ने अपने कष्टों की गिनती नहीं गिनाई, क्योंकि उसने मानसिंह और उसके साथियों की कष्ट गाथायें सुन रक्खी थीं। उसने कहा 'सुना था महाराज को कई घाव लगे।

मानसिंह ने मुस्कराकर उपेक्षा प्रकट की —'साधारण सी खरोंचें थीं शास्त्रीजी। दो-तीन तीर छू गये थे बस। मेरे साथी अवश्य बहुत मारे गये और घायल हो गये। परन्तु उन्होंने जो परम्परा बना दी है उसके बल हम लोग ऐसे ऐसे अनेक आक्रमणों का डटकर सामना करते रहेंगे। एक बात अवश्य बहुत दुख देती है। जनता बहुत तबाह होगई है और कुएँ अभी तक उसके सब पाक नहीं हो पाये हैं।

मजदूर ठिठककर रह गया।

बोधन बोला 'दुख आते हैं महाराज होते ही रहते हैं।'

राजा ने गांव का हाल पूछा।

बोधन ने सबसे पहले मन्दिर की दुर्दशा का वर्णन करके अपने आने का अभिप्राय प्रकट किया—'एक आक्रमण में दो सौ वर्ष पहले मन्दिर नष्ट हो गया था फिर आपके पूर्वजों ने बनवा दिया फिर नष्ट किया गया और फिर बनवाया गया अब की बार फिर नष्ट हो गया है। उस पर फूस छाया हुआ है। श्रीमान से फिर बनवा देने की याचना करने के लिये आया हूं।'

राजा ने निःसंकोच भाव के साथ कहा 'पहले कुएँ बावलियाँ तालाब और नहरों का उद्धार कर लूं फिर मन्दिर को देखूंगा। जितनी सामर्थ्य होगी सहायता करूंगा तुम आप देशाटन करके सेठों से उगाही कर लीजिये।'

बोधन चुप रहा। राजा ने बात नहीं छोड़ी।

बोला, 'गांव की खेतीपाती और जानवरों का क्या हाल है?'

बोधन ने कहा 'भूमि अभी थोड़ी सी ही उठ पाई है। अगले वर्ष भगवान की कृपा से अब भी हल-बैल आ जावेंगे आगे फसल थोड़ी सी ही बची है। जंगली पशु बहुत उपद्रव किये हैं।'

'कौन कौन से पशु हैं जंगल में?'

'अरने भैंसे सुअर रीछ चीतल सांभर'—

'नाहर तेंदुए भी?'

'हां श्रीमान नाहर तेंदुए भी हैं।'

'गांव में कोई शिकारी लक्ष्यवेधी नहीं है?'

'छोटासा रह गया है गांव। उसमें दो तीन बहुत अच्छा लक्ष्य बेधते हैं। भाई बहिन गूजर और एक अहीर-लड़की।'

लड़कियाँ अवश्य बैर करती हैं। धन्य है वह गाँव !!

अहीर की लड़की तो सीधी-सादी ही है महाराज परन्तु गूजर की लड़की बड़ी देखने में सुन्दर और दृढ़ शरीर की है वैसी ही तीर चलाने में बड़ी निपुण है। सुअर, नाहर तदुये को एक ही तीर में मार गिराती है।

'एक ही तीर में ! अच्छा !! अवकाश मिलते ही अहेर के लिये भी मैं किसी दिन आऊँगा। आपके मन्दिर को भी देखूँगा और उसके उद्धार की शीघ्र ही योजना भी करूँगा।

बोधन ने मानो सब कुछ पा लिया। विजय और उसके विधाती के निर्णय न्याय में उसको केवल श्रोता की रुचि रह गई। राजा उस चर्चा को टालना चाहता था परन्तु बोधन ने प्रसंग में जोड़ दिया —

'महाराज को इनके विवाद का कुछ निर्णय करना है।

राजा ने उन लोगों के प्रति उदारता भरी हुई आँख घुमाई मानो आरम्भ करने के लिये कह रहे हों।

विजय ने प्रारम्भ कर दिया —'जब लड़ाई चल रही थी यह ब्राह्मण ग्वालियर में नहीं था मैं श्रीमान् के साथ नहीं बन्द था। हम लोग दिन रात काम करते नहीं अघाते थे और न थकते ही थे। हम सबकी समझ में आ गया कि जीवन इसको कहते हैं। भगवान शंकर के सामने वर्ण अवर्ण सुजात कुजात का कोई भेद नहीं। हम सब पास कन्धे से कन्धा भिड़ाकर लड़ रहे थे सब एकाकार था तब हम लोगों की छूत-छात को मानते तो एक एक करके गिन-गिन कर मारे जाते।

'वह आपदा का समय था। संकट के समय जो कुछ भी उचित किया जाय सब धर्म है। यह सनातन सिद्धान्त है परन्तु निरापद समय में यह स्वतन्त्रता नहीं दी जा सकती। विधाती ने कहा।

राजा ने प्रश्न किया 'और कोई समस्या है या इतनी ही ? मजदूर से पूछा 'तुम कैसे आये ?

उसने विनीत उत्तर दिया 'मैं कुयें की खोज का काम करता रहा था। झूठ नहीं बोलूंगा श्रीमान्, हम दोनों में न तो हाथा-बाहीं हुई है और न सिर फुटव्वल, केवल जीभ को चलाते रहे और हम लोग जैसी गाली कभी बक जाते हैं वैसी गाली भी इनके मुँह से नहीं निकली। केवल मूरख-मूरख कहा सो संसार भर ही मूरख है समझाता।'

राजा ने हँसी को रोक कर कहा 'तुम जाकर अपना काम देखो। तुम्हारी साक्षी की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।'

मजदूर चला गया। राजा ने दोनों विवादियों की ओर दृष्टि फेरी।

विजय ने कहा 'यह कभी नहीं कहते कि किसी भी मार्ग से जाओ ईश्वर की प्राप्ति हो जायगी। संसार के गले पर कोड़ा चलाते जाओ और भगवान का नाम लेते जाओ तो क्या इस मार्ग से भी मोक्ष मिल जायेगा? वर्ण अवर्ण के भेद मान कर एक दूसरे से घृणा करते रहो, अछूतों को मनुष्य न समझो, घृणा-द्वेष के नरक में रहते हुए भी भजन की माला टालते रहो तो क्या वैकुण्ठ प्राप्त हो जायगा? जो गायत्री सबको पवित्र कर सकती है उसको अंधेरी मैली कोठरी में बन्द रक्खो और कहो कि यदि किसी अन्य को इसकी झाँकी मिल गई तो वह अपवित्र हो जायगी। यह कैसी गायत्री?—'

पुजारी ने उसको और आगे नहीं बढ़ने दिया। टोका—'इनके पास महाराज इन बातों का क्या प्रमाण है?'

'हमारा बासव पुराण'—विजय जंगम ने उत्तर दिया—'महाराज जानते हैं। मैंने लड़ाई के ही काल में कभी-कभी सुनाया है।'

पुजारी बोला 'संसार पाप और पापियों से भर गया है। भजन और त्याग से ही पापों के फन्दे काटे जा सकते हैं। यह कहते हैं जीवन में लगे रहो। क्षण-भंगुर जीवन के मोह के माया में लथ-पथ रहो और एक बार भव 'शिवाय' कहा नहीं कि वैतरणी का बेड़ा पार हुआ।'

शास्त्रार्थ को उग्र तापमान पर पहुँचता हुआ देखकर राजा ने मुस्कान के साथ हाथ के संकेत से निवारण किया।

बोला 'यह तो व्यर्थ का विवाद जान पड़ता है। मैंने शास्त्रों को नहीं पढ़ा है।' राजा एक क्षण चुप रहा।

विजय बीच में कूद पड़ा —'शास्त्र पढ़े हैं और नहीं भी पढ़े हैं तो सुने तो हैं।'

राजा ने उसको संकेत से चुप कर दिया।

'तपस्या बड़ी वस्तु है परन्तु सुनता हूँ कि तपस्या करने वाले मद और अहंकार के कारण आत्म-दमन में लीन हो जाते हैं और इस आत्म दमन को परमपद समझ कर दूसरों को आतंकित करने लगते हैं। जब ऐसे लोगों को इस लोक में गौरव नहीं मिल पाता है तब उस लोक में उतने अधिक गौरव के पाने की आशा पर उनको अचम्भा होने लगता है और पागल से हो जाते हैं।' राजा ने हँसते हुए कहा।

राजा चुप हो गया। वे दोनों चुप रहे। बोधन तो निःशब्द तटस्थ बैठा ही था। वे दोनों सोच रहे थे राजा ने निर्णय सा दे दिया है परन्तु यह समझ में नहीं आया कि किसके पक्ष में दिया।

राजा ने बात समाप्त की 'ये बैठे-ठाले के वाद-विवाद व्यर्थ हैं। कर्म मुख्य है। जो इससे बचना चाहते हैं, वे ही वाद-विवाद की पगडण्डियाँ ढूंढ़ते हैं।' थोड़ी देर निस्तब्धता छाई रही।

विजय ने स्तब्धता को पहले भङ्ग किया—'ब्राह्मण पुराणों में कुछ इस प्रकार की बात झूठे और सच्चे जोगियों के सम्बन्ध में कही गई है।'

सिकादी बोला 'हमारे यहाँ भी कुछ इसी तरह की बात कही गई है।'

"बौद्ध-शास्त्र में भी कुछ इसी प्रकार की बात कही गई है" धीरे से बोधन ने अपना मत प्रकट किया।

राजा ने हँसकर कहा 'मैं नहीं जानता। मैंने कहीं से सुना था कह दिया। मैं न शास्त्री हूँ और न पण्डित। केवल इतना कह सकता हूँ कि लड़िये मत। कुछ काम करिये और आने की तैयारी में चिपट लगिये क्योंकि आक्रमणकारी बार-बार अपने जनपद को रौंदने के लिये आवेंगे।' बोधन को आश्वासन दिया 'मैं शीघ्र ही आपके गाँव की ओर आऊँगा।'

[७]

तीसरा पहर था लू बहुत जोर की चल रही थी। लाखी की माँ गाय के साथ नदी किनारे के मरके की हरियाली चराने और वहीं छाया में आराम करने के लिये गई हुई थी। लाखी ने बांस के तीर तरकस में भरकर एक कन्धे पर बांधे कमठे को दूसरे कन्धे पर लटकाया छुरी कमर में डाल ली और नंगे पर निन्नी की झोपड़ी पर पहुँची। अटल अपने दो बैलों और एक गाय के साथ नदी किनारे कुछ दूर चला गया था।

'अभी तो धूप बहुत कड़ी है। थोड़ी देर में न चलो।' निन्नी ने अलसाये स्वर में कहा।

'सुअर और अरने भैंसे नदी किनारे किसी खोह में सो रहे होंगे। थोड़ी देर में वे जंगल में चरने के लिए घुस जायेंगे फिर क्या हाथ आवेगा? अभी चलो। लू का सरसराटा है गरमी नहीं लगेगी।' लाखी ने आग्रह किया।

'अकेली चली जाओ।'

'दो ठो लोहे के तीर दे दो। बांस के तीर से भैंसे का कुछ नहीं बिगड़ेगा और सुअर भी स्यात् ही प्राण माने।'

'यह कहो मुझको लिवाने नहीं आई हो, तीरों के लेन को आई हो।'

'अबकी फसल पर कुछ बचा सकी तो लोहे के अच्छे तीर मोल ले लूंगी।'

'अच्छा चलो।'

'दो न सही एक तीर मुझको उधार दे दोगी?'

'भैया से मांग लेना यह कई तीर यों ही दे देगा।'

'यों ही कोई किसी को कुछ नहीं देता।'

'तो क्या इस सनसनाती दुपहरी में लड़ने को आई हो?'

'मेरे आने का बुरा लगा हो तो यह चली।'

यहीं पहुँचो गाँव में। कहीं न कहीं भैया मिल ही जायेंगे ले लेना उनसे तीर।

'मिल जायेंगे तो परवाह नहीं और न मिलेंगे तो चिन्ता नहीं।'

लाखी मुँह मरोड़ कर चलने को हुई।

निन्नी ने मनाया 'अरी ठहर भी। यों ही भभुकने लगी। मैं चलती हूँ। तीर भी दूँगी।'

लाखी पीठ करके खड़ी हो गई। उसांसें ले रही थी। सारी देह पर वस्त्र उभर-उभर कर गिर रहा था। निन्नी ने तीर कमान उठा ले ली और जूते पहिने। लाखी को नङ्गे पैर देखकर उसको अपने जूतों पर अभिमान हुआ।

बोली 'कुछ अनाज कहीं से आ जावे तो तुम भी जूते बनवा लेना।'

लाखी के चेहरे का रोष छँट रहा था। उसांस को दबाकर मुस्कराने की चेष्टा करती हुई ठिनकी 'जब लोहे के तीर मोल लूँगी तब जूते भी बनवा लूँगी।'

निन्नी हँसी। उसने कहा 'सुभीता हो जाय तो मैं अपने लिये नई जोड़ी बनवाऊँ और तुमको अपनी दे दूँ।'

निन्नी के पैर का पंजा बड़ा था। उसके जूते अपने पैर में डालकर जब चलेगी तब वे फटर-फटर होंगे और दौड़ने पर एक पैर का जूता कहीं और दूसरे का कहीं छिटककर औंधा पड़ जायगा सोचकर लाखी को हँसी आ गई।

बोली 'नङ्गे पैर चलने में जो मौज रहती है वह दूसरे के आसरे नहीं मिल सकती।'

निन्नी को लाखी का हँसना अच्छा लगा। तरकस में से लोहे का एक तीर निकालकर उसको दिया। कहा 'अटक और पड़ने पर एक और दूँगी।'

लाखी ने तीर को बड़े चाव के साथ तरकस में रख लिया। दोनों चल पड़ीं। जङ्गल गाँव से लगा हुआ था। दूसरी ओर नदी। ठेवलू से

बहती हुई धार कल्लोलें कर रही थी उसको देख-देखकर उन दोनों की आँखें ठण्डक पा रही थीं। इसी प्रवाह के कहीं समीप ही सुअर और बनैली भैंसे पड़े होंगे यह सोच-सोचकर दोनों हुलसा रही थीं। वे दोनों नदी के किनारे को छोड़कर जङ्गल में घुस गईं। दोनों ने एक हाथ में कमान और दूसरे में लोहे का एक-एक तीर ले लिया। लाखी को लग रहा था मानो हाथ में इन्द्र का वज्र आ गया हो। आहट लेती हुई दोनों बढ़ रही थीं। लू के झकोरों से भूमि के बारीक कङ्कड़ और बिछे हुये सूखे पत्ते उड़-उड़कर निन्नी के तपे हुए गोरे और लाखी के साँवले गालों पर पड़-पड़ जा रहे थे। उन दोनों ने ओढ़नी को सिर से लपेट रक्खा था। घुटनों तक मोटे लहँगे का कच्छ। उरोज कंचुकी से कसे हुये पीठ से लगे हुये पेट उभार। गले में मूँगे और काँच के छोटे बड़े दानों की माला। कलाइयों पर काँच की दो-दो मोटी चूड़ियाँ। पैरों में काँसे या पीतल तक का कड़ा नहीं। शरीर का पसीना पिंडलियों की धूल पर मोटी पतली रेखायें बनाता हुआ बह रहा था। लू से उनको ठण्डक मिल रही थी। निन्नी की बड़ी-बड़ी और लाखी की कुछ ही छोटी काली कजरारी आँखें घने पेड़ों के पीछे ध्यान के साथ कुछ टटोल रही थीं। सिर और कन्धे झुके हुये मानो उचक कर किसी पर टूटने वाली ही हों।

वे दोनों ऊबड़-खाबड़ जङ्गल में कुछ दूर निकल गईं। नदी का किनारा छूट गया था। निन्नी के होंठ सूखने लगे।

धीरे से बोली 'नदी का किनारा पकड़ो। प्यास लग रही है।'

लाखी ने फुसफुसाहट की —'बस इतने ही में!'

निन्नी की सीधी-पतली नाक का नथना जरा सा फूल गया।

'नहीं पिऊँगी' —उसने निश्चय प्रकट किया 'सांझ तक नहीं पिऊँगी और तुम पानी पीने के लिये कहोगी तब तुमको भी नहीं पीने दो।

लाखी ने चुप रहने का संकेत किया। मानो कुछ हुआ ही न हो मानो शिकार ही सब कुछ थी। दोनों उसी तीव्र के साथ आगे बढ़ती गईं। आगे एक छोटी सी पहाड़ी की ओट मिली जो लम्बाई में नदी की ओर गई थी। लाखी के इशारे से दोनों इसी के नीचे की ओर बढ़ीं। पहाड़ी के नीचे साल सागौन महुए और अचार के बड़े-बड़े लम्बे पेड़ थे। पहाड़ी के ऊपर करधई की घनी हलकी कत्थई रंग की झाड़ी थी। दोनों इस पर चढ़कर उस ओर के नीचे मैदान के बाजू की निरख करना चाहती थीं परन्तु पहाड़ी की घनी करधई में घुसने के लिये पतली पगडण्डी भी नहीं थी। दोनों ने अपने लँहगों को घुटनों के ऊपर समेटकर कसकर कच्छ बांधा। दोनों की गोरी-गोरी जांघें खाली चमक गईं। लाखी की पतली मुड़ी हुई सी थी और निन्नी की मांसल पट्ठों वाली जैसे बैठकें लगाने वाले किसी पहलवान की हों। दोनों करधई की घनी झाड़ी में घुस जाने के लिये उकरे छोटे से ही मार्ग की तलाश में झुक-झुककर हाँफ-हाँफकर साँस साध-साधकर, फिरने लगीं। एक हाथ में कमान और दूसरे में सूर्य की प्रखर किरणों में चमक-चमक जाने वाला लोहे का तीर साधे हुये। निन्नी के होंठ सूख रहे थे परन्तु उसने पानी न पीने का निश्चय कर लिया था। तनूरी के मारे लाखी के पैर जल रहे थे। चुरचुराहट न करने के अभिप्राय से वे दोनों सूखे पत्तों पर पद चाप न करने की सावधानी बरत रही थीं। लाखी नंगे पैरों ही परन्तु उसकी आँखें करधई की घनी झाड़ी की झांकों को टटोल रही थी तनूरी की जलन अनुभव ही नहीं हो रही थी।

एक ओर निकट ही भूमि पर खुरों की अस्पष्ट धारी और करधई की डालियों की टूटन और कुचलन को देखकर लाखी के साँवले लाल चेहरे पर प्रसन्नता की रेखायें बिखर गईं। तीर के इशारे से उसने निन्नी को बतलाया। निन्नी की आँख ने भी तत्क्षण टटोल लिया। लाल गोरे चेहरे पर हँसी की धुंधली-सी फैल गई।

निन्नी ने गर्दन उचका कर संकेत किया 'वह गये यहीं होकर।' दोनों उस टूटन-फुटन पर पहुँच गईं।

निन्नी ने धीरे से लाखी के कान में कहा 'अरने भैंसे गये हैं यहीं होकर।'

'चलो' लाखी ने उत्साह प्रकट किया।

सोचा यदि एक अरने को भी बेधकर गिरा लिया तो उसकी खाल से अपने और बुढ़ी माँ के लिये जूते बन जायेंगे बाकी को बेचकर कुछ धन आ जायगा मांस से मजूरों की मजूरी चुक जायगी। एक 'परन्तु' भी मन में उसी समय आया—परन्तु यदि न मिला, मरता या तीर खाकर तीर समेत भाग गया तो निन्नी का उधार न मालूम कब तक चुका पाऊँगी।

निन्नी झाड़ी में पहले घुस गई। वह लाखी को पछाड़ना चाहती थी। खड़े होकर या झुक कर भी चलने के लिए गुन्जाइश न थी। बैठ कर और कहीं लेटकर ही बढ़ा जा सकता था। वे दोनों कहीं बैठ-बैठ कर और कहीं लेट-लेटकर रेंगने लगीं। कभी छातियां पत्थरों और करधई के मोटे कांटों से टकरा-टकरा जा रही थीं परन्तु मानो उनमें पत्थरों और कांटों से भी लड़ जाने की दम हो। करधई की टेढ़ी-मेढ़ी डालें सिर से बंधी हुई ओढ़नी में अटक-अटक जा रही थीं। गोरी सलोनी भुजाओं में कांटे खरोंचे कर-कर रक्त की पतली लीकें निकाल रहे थे हवा और धूप उनको सुखाकर मरहम का-सा काम कर रही थी। उन दोनों ने करधई की डालों में उलझी हुई ओढ़नी को सावधानी के साथ सुलझाया और कमर से कस लिया। बिना तेल के रूखे-सूखे केश-गुच्छों में करधई के एक दो झोंकों ने ही बन और करधई के छोटे-छोटे सूखे पत्ते भर दिये। वे दोनों इस प्रकार मन्द-गति से धीरे-धीरे बढ़कर पहाड़ों की चोटी पर पहुँच गईं। करधई के एक बड़े झाड़ के नीचे खड़े होने योग्य स्थान था। दोनों तीर-कमान साध कर खड़ी हो गईं। इधर-उधर आँखें

दौड़ाई, परन्तु टटोल में कुछ नहीं आया। घुटने छिल गये थे। हवा लगने से कुछ कसक आयी। झुक कर उनको पोंछा फटकारा। सोचने और सुस्ताने के लिये बैठ गई। कान लगाये थीं। पवन नदी की ओर बह रहा था। पेड़ों की खरखराहट झोंकों की मन्द या द्रुत-गति के साथ दुर्बल या तीव्र सुनाई पड़ती थी। कुछ क्षण के उपरान्त नदी की दिशा में पत्थर की ठोकर का शब्द सुनाई पड़ा। दोनों चौंक सी पड़ीं। उचक कर देखा। कुछ नहीं दिखलाई पड़ा। खड़ी हो गई। देखा नदी की ओर दो बड़े-बड़े सुअर चले जा रहे हैं। थोड़ी देर बाद वे दोनों नदी के भरके में उतर गई।

निन्नी ने कहा 'ये पानी पीकर लौट आवेंगे चलो' लाखी असहमत हुई, 'पानी पीकर नदी के किसी खड्ड में लोटेंगे ठहरो।'

थोड़ी देर ठहर कर वे दोनों उसी प्रकार पहाड़ी पर से उतरी। जब नीचे पहुंच गईं कुछ क्षण सुस्ताईं। कमर से धोवती को खोलकर सिरसे लपेट लिया और नदी के किनारे की ओर सावधानी के साथ चल दीं।

वे आहट लेती जा रही थीं। सिवाय झोंकों की खरखराहट के और कुछ नहीं सुनाई पड़ रहा था। ज्यों-त्यों करके उस भरके में पहुँचीं जहाँ दोनों सुअर उतर गये थे। भरके में एक मोड़ थी। उस मोड़ से सुअरों के निकल जाने की ताकी चूपी बनी हुई थी। भरके के ऊपर छोटी-सी झाड़ी थी। वे उस झाड़ी की ओट के लिये भरके की सीधी ढाल पर पेट और पंजों के बल पड़ी कमान की डोर और तीर को मुँह में दाबे हुये।

ऊपर पहुँच कर पहले फूली हुई साँस को ठिकाने किया फिर उचक कर ऊपर के नीचे के डाबर को देखा। डाबर में एक सुअर का सिर गर्दन तक निकला हुआ दिखलाई पड़ा। दूसरा सुअर नहीं दिखलाई पड़ा। सुअर की बड़ी-बड़ी डाढ़ें थीं। निन्नी ने झाड़ी के झरोखे में से सुअर की गर्दन का निशाना बनाया और डोरी को पूरा खींचकर तीर का

सन्धान कर दिया। तीर मर्म में धंस गया। सुअर वहीं ढुलक कर पानी को मथाने लगा। एक उछाल लेकर किनारे पर आ पड़ा और चीं-चीं करने लगा। दूसरा भरके के नीचे से भागता हुआ जङ्गल की ओर चला गया। उस पर लाखी या निन्नी से तीर नहीं चला पाया।

सुअर की ढुलक और चीं-चीं पर ऊपर के डाबर से धड़-धड़ का शब्द हुआ। कुछ ही क्षणों के उपरान्त एक भरा-पूरा अरना भैंसा उस डाबर के ऊपर वाले टीले पर आ-खड़ा हुआ और इस भरके तथा उस टीले के बीच में किनारे पर पड़े हुए मरणासन्न सुअर को देखने लगा। अरना कीचड़ में लथपथ था इसलिये अधिक भीमकाय दिखलाई पड़ रहा था।

उन दोनों ने कमानों पर तीर चढ़ा लिये। पहले लाखी का छूटा। निन्नी से नहीं चला पाया।

लाखी का तीर अरने के पुट्ठे से हटकर कलेजे की कोख पर पड़ा और अधिकांश धँस गया। अरने ने चीत्कार किया और तुरन्त भड़भड़ाता हुआ टीले के नीचे चला गया। दूसरे तीर के चलाने की बारी नहीं आई।

अरना जंगल की ओर भागा। पत्तों की खुरखुराहट पत्थरों की खड़खड़ाहट और वृक्षों की डालियों की सर्र-सर्र कुछ दूर तक सुनाई पड़ी। हवा जरा सी चल रही थी इसलिये फिर और कुछ नहीं सुनाई पड़ा।

किनारे पर पड़ा हुआ सुअर अन्तिम साँस ले रहा था। उसके मर जाने पर वे दोनों भरके से नीचे उतरीं।

निन्नी के रूखे होठों पर भरी मुस्कान थी। बोली 'सोचती हूँ पहले पानी पिऊँ या सुअर की मर्म में से तीर निकालूँ और उस भैंसे को ढूँढ़ूँ फिर पानी पिऊँ।'

'पहले मैं पीती हूँ। तुम जीती मैं हारी।' लाखी ने कहा।

वे हँसती हुई पानी में उतर गईं। जी भरकर पानी पिया।

निन्नी ने हँसकर कहा 'भैंसे को तुम उठा ले चलो सुअर को मैं ढोये लेती हूँ।'

'अरे राम!' लाखी बोली—'हम तुम दोनों एक सुअर का ही न उठा पावेंगे भैंसे के लिये तो चार छः आदमी चाहिये।'

निन्नी ने सुझाया 'सुअर को टाँगे लिये चलते हैं फिर गाँव से कुछ लोग आकर मरने को उठा ले जायँगे।'

वे दोनों सुअर के पास लौट आईं। उन्होंने सुअर को उठाने का प्रयत्न किया परन्तु न बन पड़ा। निन्नी दाव पर आ गई।

'इसकी दोनों टाँगें बाँधकर मैं पीठ करके बैठी जाती हूँ। पीठ पर उठाती जाऊँगी तुम पूरा बल लगाकर चढ़ा देना। अकेली लादकर ले चलूँगी।'

'अकेली!' लाखी ने आश्चर्य प्रकट किया।

'हाँ अकेली। पीठ पर लादकर ले चलूँगी! वैसे हम दोनों नहीं ले जावेंगी।'

'तुम मेरे हथियार ले लो।'

काफी प्रयास के बाद निन्नी ने लाखी की सहायता से उस बड़े सुअर को पीठ पर लाद लिया। नदी के किनारे किनारे वे दोनों चौथे पहर के पहले ही गाँव में आ गईं। निन्नी ने सुअर को अपने घर में उतार लिया। कुछ लोग गाँव में थे और कुछ गाँव के बाहर, वे सब आ गये। मरने भैंसे का ठौर ठिकाना बतला दिया गया। उसको उठाने के लिये पाँच छः चले गये। लाखी अपने घर जाने को ही थी कि एक स्त्री ने आकर लाखी को समाचार दिया 'तुम्हारी माँ को लू लग गई है। घर पर अचेत पड़ी है।'

लाखी और निन्नी दौड़ी गईं।

[८]

जब वे दोनों घर पहुँचीं तो उन्होंने बुढ़िया को अचेत नहीं मरा हुआ पाया। लाखी बिलख-बिलख कर रोने लगी। निन्नी भी रोई परन्तु लाखी को अधिक विह्वल देख कर सम्भल गई।

लाखी कह रही थी 'अब मेरा कोई नहीं रहा।'

निन्नी ने समझाया 'हम लोग हैं। जन्म भर साथ नहीं छोड़ेंगे।'

और स्त्रियाँ भी आ गईं। उन्होंने समझाया-बुझाया।

एक ने कहा 'जब हम सब पहाड़ की कन्दराओं में समय काट रहे थे तब यदि माँ शिकार जाती तो रो भी न पाते कि हल्ला सुनकर कोई शिकार न आ जाय। यहाँ हम लोग जियेंगे-मरेंगे नहीं घुमन्ती। रोना पीटना बन्द करो। आपको पालती पोसती रहा अब थोड़ा सा घर में है ही न होगा तो थोड़ा २ सब लोग देंगे। और फिर अजुन नया हुआ है। भगवान देंगे।'

अटल आ गया। उसने भी समझाया। बुढ़िया के दाह की तैयारी हुई उमर से मरने को मट्टों पर लादकर कुछ लोग ले आए। अटल उसकी चीर-फाड़ का प्रबन्ध करके बुढ़िया को दाह के लिये ले गया।

दाह करके जब अटल लौटा रात हो गई थी। उसके बाद अन्य स्त्रियों के साथ लाखी नदी में स्नान करने गई। लौट कर जब घर आई तब घर को सूना पाकर फिर रोई।

निन्नी ने अनुरोध किया 'कहो तो हम लोग यहाँ आ बैठें चाहो तो उस घर में चली चलो। यहाँ अँधेरे सूने घर में तुमको अकेली कदापि नहीं रहने दूँगी।'

अटल ने भी हठ किया।

लाखी ने सोचा इस प्रकार उस घर में पहुँचना लिखा था भाग्य में। परन्तु वह विवश थी। सूना घर भायँ भायँ सा कर रहा था। मौत के घर में वह अकेली नहीं बैठना चाहती थी। परन्तु माँ के मरते ही अन्य के घर जाना—बड़ी विडम्बना होगी।

घटल ने उसको चुपचाप बिसूरते हुये देखकर आँगन से गाय को खोला।

बोला निन्नी तुम इसको लेकर बर्तन-भाँड़ों सहित आ जाओ।

लाखी इनकार नहीं कर सकी। घटल गाय को लेकर अपने घर चला गया।

गाव के कुछ लोगों ने सोचा 'यह गाय को दुनिया से गया और लड़की को भी फांस लैगा?

निन्नी उसके थोड़े से असबाब का सही प्रबन्ध करके बर्तन भांड़े लेकर जो थोड़े ही थे—लाखी को अपने घर लिवा लाई।

गाँव वाले सुअर और अरने के चीरने में लगे रहे। गाँव भर को कई दिन के भोजन का प्रसाधन मिल गया। लाखी को भैंसे की खाल।

निन्नी ने लाखी को खिला-पिला कर अपने पास लिटा लिया। लाखी को नींद नहीं आ रही थी। ध्यान कभी मृत माता की ओर कभी सुअर के लदमेंड़ और कभी अरने भैंसे की उन आँखों की तरफ जा रहा था।

एक बार उसने सोचा 'यदि अरना मेरा काम पायल होता और टोके पर बढ़ आता तो माँ बेटी का दाह एक साथ ही होता! क्या मैं भी मर जाऊँ? क्यों मर जाऊँ? क्यों ऐसे ही मर जाऊँ? कुछ जीकर अच्छी तरह जीकर क्यों न मरूँ? सबको मरना है परन्तु जीवन का कुछ देख-सुन कर ही मरना चाहिए।

निन्नी ने सोचा लाखी दुखी है। बोली 'लाखी मैंने तुमसे आज बहुत बक-बक की। मुझको क्षमा कर दोगी? आगे कभी तुम्हारे मनको दुखाऊँ तो मेरी जीभ काट कर फेंक देना।

'नहीं मेरी निन्नी' लाखी ने कहा और सिसकने लगी। घटल ने उस सिसक को सुना।

अधीर स्वर में बोला, 'वाह संसार इधर का उधर हो जाय चाहे मेरी बोटी बोटी कट जाय तुमको कभी कष्ट नहीं होने दूँगा लाखी।'

'मैं भी यही कहना चाहती थी' निन्नी ने कहा।

लाखी की हिचकी बन्द हो गई। उसने धीरे से कहा 'मुझको भरोसा है।' सोचा 'इसी घर में इस तरह से आना था।

गाँव वालों ने झटपट चीरफाड़ करके सुअर को बाँट लिया अटल को बाँट में अधिक भाग मिला। अटल को निन्नी के बल और निशाने का बड़ा गर्व हुआ। वह यह नहीं मान कर सकता था कि दुर्बल छरेरी लाखी भी कुछ कर सकती है—अरने भैंसे को गिरा सकती है!

अरने की खाल का बहुत मोल है। बदले में काफी अन्न मिलेगा। बहुत दिनों गुजर होगी। उसने सोचा और तुरन्त ग्लानि के साथ अपनी भर्त्सना की—उस खाल का मैं यह उपयोग करूँ! धिक्कार है!! एक गरीब लड़की ने अपनी जान जोखों में डाल-डालकर इतना बड़ा पराक्रम किया मैं सियार की तरह ताक-झाँक लगा कर चोरी करूँ!! राम राम!!! खाल पूरी की पूरी उसकी। मैं एक छिल्ली भी उसमें से न लूँगा। उसके पास जूते नहीं हैं नङ्गे पैरों गाय चराने के लिये जायगी और नङ्गे पैर जङ्गली पशुओं का सामना करेगी। अन्न भी उसके पास कम ही है। खाल का पूरा दाम भी उसी का रहेगा। बल्कि अब मैं अपना मिलाऊँगा। उसका रक्खा रहेगा जिससे उसके लिये खेती करूँगा।'

दूसरे दिन उसने लाखी को उदास देखा। निन्नी उसके पास ही थी। ग्वालियर से लौटकर आये हुये पुजारी की बातों को उसने दुहराया।

कहा 'निन्नी का नाम चारों दिशाओं में फैल गया है कि बड़ी लक्ष्य वेधिन है। अब तुम्हारा भी फैलेगा लाखी।

निन्नी मुंह बिचकाकर बोली 'तो क्या मिल जायगा हम लोगों को ?'

अटल कहता गया 'यश और कीर्ति फैलेगी कि हमारी निन्नी नारी से भारी सुअर को अकेली पीठ पर लाद लाती है। ग्वालियर से राजा मानसिंह आयेंगे कभी शिकार खेलने तब देखेंगे यह अचम्भा और बतावेंगे हैं या किसी और लाखी !

लाखी की उदासी में से वाक्य फूटा 'राजा सुअर का पीठ पर अकेले उठा लावेंगे गाँव में से ?

[१]

तैमूर के प्रलयंकर विनाश ने दिल्ली की सल्तनत को उतना निर्बल नहीं किया था जितना राजस्थान के राजपूत और अन्तर्वेद के किसानों के निरन्तर अनवरत मजबूर युद्धों और उत्पातों ने। दिल्ली के शासकों ने अन्तर्वेद से लेकर बङ्गाल तक के प्रदेशों को छोटे-छोटे पठान जागीरदारों में बांट दिया था। इन सबके पास चार-चार छ छ हजार से लेकर पैंतालीस हजार तक की संख्या में सेना रहती थी। अन्तर्वेद में अकेले एक जागीरदार के हाथ में पैंतालीस हजार पठान और सात सौ हाथी थे। दिल्ली के शासक की कमर जरा ढीली पड़ी कि ये स्वतन्त्र हो जाने के दांव पर आ जाते थे। मारकाट करते रहना और जनता को शोषते रहना तथा उस शोषण के सहारे ऐश आराम करना ही इनमें से अधिकांश का उद्देश्य रहता था। राजपूत परस्पर की प्रतिद्विता और लड़ाई से अवकाश ही कम पाते थे इसलिये इनके अक्षुण्ण बने रहने में इने गिने ही विघ्न थे।

मेवाड़ उन थोड़े से राज्यों में था जो कम से कम अपने जनपदों की रक्षा के लिये सदा व्यग्र से बने रहते थे। गुजरात और मालवा के पठान शासकों से मेवाड़ का प्रायः युद्ध चलता रहता था। मेवाड़ को कभी-कभी दिल्ली के शासकों को भी भिड़न्त ओड़नी पड़ती थी। मालवा के महमूद खिलजी को पराजित करने के उपरान्त राणा कुम्भा ने चित्तौड़ में कीर्ति स्तम्भ बनवाया तो महमूद खिलजी ने मन की जलन को शान्त करने के लिये मांडू में सतखंडा महल बनवाया। जौनपुर के शासकों का राज्य बुन्देलखण्ड के उत्तरवर्ती क्षेत्र कालपी तक था। महमूद खिलजी ने मेवाड़ या गुजरात में गुंजाइश न देख कर कालपी पर चढ़ाई करदी और उसको अपनी सल्तनत में शामिल कर लिया।

महमूद खिलजी के मरने के बाद उसका पुत्र ग्यासुद्दीन उत्तराधिकारी हुआ। इसके समय में कालपी हाथ से चली गई परन्तु उसको फिर से

अधिकृत करने की हविस ग़यासुद्दीन के मनमें सदा बनी रही। ग़यासुद्दीन ने मेवाड़ के साथ संधि करली। बड़ी संख्या में राजपूत मालवा में रहते थे। उसने इनके साथ अच्छा बर्ताव करना शुरू किया। आशा करता था कि इनकी सहायता से गुजरात और दिल्ली का भी बन्दोबस्त कर चुका।

कालपी दिल्ली के अधीन हो गई थी। उसको विश्वास था कि मेवाड़ और दिल्ली की टक्कर के समय कालपी पर आक्रमण कर देने से काम बन जायगा। परन्तु उसका स्वभाव अधीर उग्र कामुक और व्यसनप्रिय था। मदिरा पीने पर वह सहज स्वाभाविक मानव सा हो जाता था। पीता अधिक नहीं था परन्तु पी लेने पर उसकी मानवीयता उपेक्षाएं और हास्य-प्रियता तथा कामुकता बढ़ जाती थी। हिन्दुओं के साथ वह अत्याचार नहीं करता था। कट्टरता का वह मज़ाक उड़ाया करता था—शराब पीने पर—इसलिये मुल्लावर्ग उससे रुष्ट रहता था। कामकथा के अन्वेषण में वह पुरुष और स्त्री की पहिचान नहीं रखता था और न जाति पाँतों की परवाह करता था।

अधिकांश पैंतालीस साल की आयु थी। लड़का नसीरुद्दीन पच्चीस / वर्ष का जवान था परन्तु उसका स्नेह एक ख्वाजा के ऊपर सबसे अधिक था। नसीर को मुल्लाओं से चिढ़ था। नसीर मुल्लों के राजकीय प्रभाव को जानता था। उसको नमाज़ और रोज़ों से इतना प्रेम नहीं था जितना उस भविष्य का जिसकी वह बाट देख रहा था और जिसको वह मुल्लों के और उनसे प्रभावित तथा प्रेरित मुसलमान सरदारों के हाथ में देखता था। ग़यास ने सोचा नसीर को मुल्लों के सुपुर्द करके मुल्लों और नसीर—दोनों—से छुट्टी पाई परन्तु वह यह न देख सका कि किसी दिन 'नमाज़ छुटाने गये और रोज़े गले पड़े' की कहावत चरितार्थ होगी। अभी तो चैन से गुज़रती है का वह क़ायल था। उन दिनों नसीर के पर निकले भी न थे।

बादल घिर आये। प्रचण्ड वेग के साथ पानी बरसने लगा। मांडू की रूखी-सूखी पहाड़ियां हरी-भरी हो गईं। नदी नालों ने किनारों की

मर्यादा छोड़ दी। मालवे का पग-पग रोटी डग-डग नीर था विख्यात हो है। अब प्रमुल-मंगुल पर पानी भरने और समाने लगा।

महल के पास का कालियादह-सरोवर पानी बादलों की बूंदों और पवन के प्रचण्ड झकोरों से उतावला सा हो उठा। सन्ध्या का समय था परन्तु जान पड़ता था जैसे रात हो गई हो।

निचले मंज़िल की बारहदरी में खिड़की के पास तख्त पर रंग-बिरंगे गुलगुले रेशमी मसनद और तकियों में डूबा हुआ-सा ग्यासुद्दीन बैठा था। बांदियाँ रत्नजटित सोने की सुराही और कटोरे लिए खड़ी थीं। नीचे उसका मुँह लगा ख्वाजा मटरू बैठा हुआ। एक दो कटोरों का घूंट कर उसने बांदियों को विदा कर दिया। खिड़की से ठण्डी हवा के झोंके पर झोंके आ रहे थे। ग्यास को फुरेरी आई।

'ऐसा रूप तो कहीं कभी देखा नहीं खुदावन्द नियामत।' ख्वाजा ने आँख नीची करके अर्ज की।

'कैसा रूप?' खिचड़ी बालों वाली दाढ़ी को हिलाकर और खिचड़ी बालों वाली मूछों पर एक उंगली फेरते हुये ग्यासुद्दीन ने पूछा।

'ग्वालियर से नज़दीक पर एक गाँव में।'

'किस गाँव में? ग्वालियर से कितनी दूर? कौन हैं वे?'

ख्वाजा ने बतलाया।

'अब तक क्यों नहीं ज़ाहिर किया तुमने? इन दिनों इस मौसम में तो वे दोनों यहाँ महल में होनी चाहिये थीं।' ग्यास ने व्यग्रता प्रकट की।

ख्वाजा मटरू ने व्याख्या की—'जहाँपनाह देहात में ऐसी खूबसूरती नहीं पाई जाती है इसलिये जब पहले पहल सुना तो यकीन नहीं किया फिर सरकार उन मस्त मौलवियों की उलझन और दूसरे राजकाज में उलझ गये।'

'जहन्नुम में जायें मल्ले-मौलवी। मेरा बस चले तो सारे के सारे फ़िरके को हिन्दुओं के बैकुण्ठ में पहुँचा दूं जहाँ करते रहें बहस क़यामत

तक परियों और फरिश्तों से। खैर, बरसात खतम होते ही कालपी पर धावा करता हूं, जरा दाएं होकर ग्वालियर के करीब से निकल चलेंगे। उनका कुछ और हाल सुनाओ।

'एक गूजर है दूसरी अहीर। दोनों शिकार खेलती हैं। तीर चलाती हैं।

'काहे का शिकार खेलती हैं? किस चीज के बाण चलाती हैं? नजर के न? तीखी चितवनों के? तू भी गजब शायर है।

'नहीं जहांपनाह, यह शायरी नहीं है। सीधी-सच्ची बात है। जङ्गली जानवरों का शिकार करती हैं और लोहे के लम्बे तीर चलाती हैं।

'तोबा! तोबा!! और वे खूबसूरत भी हैं!!! कहां की हांक रहे हो? कहीं नशा तो नहीं कर आये ख्वाजा?

'नहीं आलमपनाह। जिन लोगों ने देखा है वही अर्ज कर रहा हूं। दोनों गांव के गरीब घर की छोकरियां हैं। खाने को नहीं जुड़ा तो शिकार से गुजर-बसर कर उठीं। कपड़े पहनने को नहीं। घर मड़ैया पर सिर्फ फूस जिससे बरसात की मूसलाधार थोड़ी सी ही बच सकती है। पैर में जूते नहीं।

'बिचारियों के फफोले पड़-पड़ जाते होंगे!

'अकसर शिकार नहीं मिलता तो जङ्गल के कन्द मूल से पेट भरती हैं। फटे कपड़ों में पैबन्द नहीं लगा पातीं तो जंगली पेड़ों के पत्तों से तन ढक लेती हैं। हुजूर ने एक बार उस काफिर शायर कालिदास की शकुन्तला का जैसा जिकर सुना था वैसी ही।

'यहां कोई मुल्ला मौलवी तो बैठा नहीं है जो तुम कालिदास को काफिर कहो। वाह! क्या शायर था! शायर नहीं शायरों का जौहर था। दुनिया के किसी भी पर्दे पर ऐसा शायर नहीं हुआ। ग्यासुद्दीन का मन भर आया और आंखें गीली हो गईं। ख्वाजा ने समझ लिया कि सुराही की नियामत ने अपनी झोली में समेट लिया है।

ग्वाला बोला, 'आलम पनाह, नाम भी उनके बड़े मिठास भरे हैं। गाँव में जिसको निन्नी कहते हैं उसका असली नाम मृगनयनी है और दूसरी जिसको लाखी कहते हैं असल में लाखारानी है।'

'उनके कोई और है?'

'एक भाई है उनका। कुछ ऐसा वैसा ही नाम है उसका! बहुत गरीब हैं।'

'मालामाल कर देंगे। कुछ दे लेकर बुला न लो।'

'बन्दापरवर के मुकाबिले मेरा दर्जा नहीं के बराबर है। पराई सल्तनत में रुपये या जेवर के लोभ-लालच से काम नहीं चल सकेगा। बादशाही के ऊपर दावा करने के सिलसिले में ही यह काम बन पावेगा।'

'इस कमबख्त बरसात के लिये क्या किया जाय? यह भी और तेजी के साथ बरस पड़ा! जैसे आसमान में छेद हो गये हों!! मैं तो आज रात ही चढ़ाई के लिये कूच बोल देता लेकिन रास्ते में बे-हिसाब कीचड़ बड़ी-बड़ी नदियों के पूर वगैरह-वगैरह आड़े आ जायेंगे।'

'तब तक मैं कुछ हिकमतें लड़ाऊँगा हालांकि उम्मेद कम है।'

'फिर भी?'

'खानाबदोश नट बेड़िये कंजड़ दुनिया भर का चक्कर लगाया करते हैं। इनके जरिये कभी-कभी काम बन जाता है। कोशिश करूँगा।'

'बहुत मेरे प्यारे मटक। तुम आज से ही अपना काम शुरू करदो। कहाँ हैं ये नट-बेड़िये इन दिनों?'

'ये लोग शहर में नहीं रहते हैं। खानाबदोश हैं कभी किसी गाँव के पास कभी किसी जङ्गल में। मैं पता लगाता हूँ।'

एक खवासिन घबराती हुई आई। हाथ बाँधकर खड़ी हो गई, जैसे कुछ कहना चाहती हो। ग्यास ने बोलने की अनुमति दी।

'काजी आजम दीदार हासिल करने का फरमान चाहते हैं।' खवासिन बोली।

अलिफ लैला में उन्होंने सिन्दबाद और मिस्र के किस्से पढ़े थे। वे सब उनको सच प्रतीत हुये। कलेवा अभी समाप्त नहीं हुआ था। समाप्ति के पहले उसको सवेरे का पूरा काम कर डालना था।

एक कल में दो कौर करने के बाद बघर्रा ने प्रधान जासूस की ओर मुँह फेर कर 'हूँ' की। जैसे बादल गरज गया हो। जासूस ने काँपते हुये सिर उठाया। आँख नीची किये हुये बोला 'मालवा के सुल्तान गयासुद्दीन खिलजी—

बघर्रा के मुँह में आधा केला एक तरफ था आधा गले से नीचे उतर जाने की जल्दी में। आधा मुँह खाली था। उसी सिरा से दबी हुई कड़क निकली—'सुल्तान नहीं है वह नामाकूल। गुलाम खानदान का खिलजी है। कहो उसकी बाबत क्या कहना है?'

काँपते हुये कंठ को सँभालकर जासूस ने कहा 'जहाँपनाह गयासुद्दीन खिलजी की दोस्ती मेवाड़ के काफिर राना के साथ ज्यों की त्यों चल रही है। मेवाड़ के राना ने दिल्ली के सुल्तान—मैं भूल गया बख्शा जाऊँ—दिल्ली के सिकन्दर लोदी की फ़ौज को हरा दिया है।

बघर्रा के मन्तव्य को सुनाने के लिये जासूस ठहर गया। कुछ एक छोटे केले को समूचा मुँह में डालकर बघर्रा बोला, जैसे किसी नाले ने प्रवाह के जोर से बाँध को फोड़ डाला हो—'एक मुर्गी ने दूसरे मुर्गी को मारा। कहते जाओ। गयासुद्दीन आजकल क्या कर रहा है?'

जासूस ने बतलाया—'जहाँपनाह, वह एक खूबसूरत शराबा औरतों के बहुत पहले में है।

'अच्छा है। मरेगा। और आगे?' बघर्रा बोला, जैसे जमीन के नीचे से दरार में होकर भूकंप बोला।

जासूस गमगान से कुछ मन्तव्य को भी कहता गया 'गयासुद्दीन फौज भी बढ़ाता कर रहा है। ग्वालियर पर चढ़ाई करना चाहता है क्योंकि ग्वालियर के पास राई नाम के गाँव में दो बहुत खूबसूरत हिन्दू लड़कियाँ शिकार खेलती हैं जंगली भैंसे, शेर, सुअर, तेंदुये, रोझ वगैरह को

एक-एक तीर से ही मार गिराती हैं। ग्यासुद्दीन इन लड़कियों को मांडू ले जाना चाहता है।

हू! हू !! हू !!! हू !!!! हू !!!!! बघर्रा हँसा। हँसी के साथ ही केले के चप-चबाये टुकड़े छिटक कर दूर जा पड़े। दरबारियों को यह हँसी ऐसी जान पड़ी जैसे बन्दी फट पड़ी हो। जासूस कांपने लगा। काटो तो खून नहीं। न मालूम अब क्या होगा।

बघर्रा ने हँसी को रोका और एक बड़े केले के टुकड़े को मुंह में डाला। चबाते हुये कहा 'कहाँ की दास्तान बना लाए हो? खूबसूरत लड़कियां शेर और भैंसे को एक ही तीर से गिरा देती हैं। भीलनी होंगी कमबख्त। काली-कलूटी खबीस !!

जासूस प्राणों की खैर मनाता हुआ बोला 'जहाँपनाह, एक लड़की गूजर है और दूसरी अहीर। तसदीक कर ली है। दोनों बहुत हसीन हैं।

बघर्रा गम्भीर हो गया। खाते-खाते सोचने लगा 'ऐसी बात थी। हिन्दू लड़कियाँ और वे भी इतनी हसीन शिकार करती हैं!

खान समाप्त करके बघर्रा ने सेर भर शहद केलों के पाचन के लिए पेट में पहुँचाई। कुछ न कुछ पेट में दोपहर के भोजन तक बना रहे इस लिए ऊपर से सेर भर मक्खन भीतर डाला। इन सब को हल करने के लिये एक सुराही पानी पिया। फिर सात-आठ पान दांतों के नीचे दबे। नौकर खिसके और थाल उठाकर चले गए।

बघर्रा ने तकिया के सहारे पड़कर दाढ़ी पर हाथ फेरते हुये कहा 'बहमनी सल्तनत की कोई नई खबर?

जासूस ने चैन की सांस लेकर उत्तर दिया 'मुहम्मद गवां के कत्ल के बाद से दक्खिनी और विलायती अमीरों में फूट और भी बढ़ गया। बहमनी सल्तनत की टूटन-फूटन से नई सल्तनतें बन रही हैं। विजयनगर का राजा उनसे लड़ता रहता है।

मालूम है। बबर्री ने कहा जैसे काली हुई भौंकी किसी बड़े पेड़ को एक बड़ा उपाटा दे गई हो,—'लेकिन बहमनी सल्तनत के बाजुओं में इतनी ताकत हमेशा बनी रहेगी कि विजयनगर के राजा को पछाड़ती रहे यह क्या मालवे वाला तो वह बहमनियों का कुछ बिगाड़ नहीं सकता। मैं उसका होश जल्दी ठिकाने लगाऊँगा। पुर्तगाली क्या कर रहे हैं?

'जहाजी ताकत को बढ़ाने में लगे हुये हैं। उन्होंने पाँच जहाज नये तैयार करवाये हैं।

'कोई फ़िकिर नहीं। सवरनवीस तुर्की के सुल्तान याजम खलीफ़ा शरीफ़ को लिखो कि तैयार रहें। तुर्की और गुजरात की ताक़त पुर्तगालियों पर बेपनाह क़हर बरसावेगी।

'जहाँपनाह।

'माँडू पर चढ़ाई बरसात में की जावेगी। ,सावन की बिजलियों और नदी नालों के पानी के भरोसे जब गयासुद्दीन मांड के बिल में घुसा होगा तब मैं अपनी बिजलियाँ मालवे पर कड़काऊँगा—बरसाऊँगा। तैयारी को बढ़ाओ।

'जो हुक्म जहाँपनाह।

'फ़िलहाल कहीं भी तो बढ़ना है।'

'हुक्म जहाँपनाह? चम्पानेर के आस-पास राजपूत फिर सिर उठाने लगे हैं।

'अभी सात बरस भी नहीं हुये हैं कि जब मैंने सबका क़त्लेआम करवा दिया था। इतनी जल्दी भूल गये वे लोग!

'बहमनी सुल्तान ने काञ्ची के सारे मन्दिर तोड़ दिये थे वहाँ फिर मन्दिर बनाये जाने वाले हैं।'

'उन मन्दिरों को मैंने भी देखा था बुतों को भी। कुछ भी हो मन्दिर थे खूबसूरत। बुतों को तोड़ डालते काफ़ी था। पत्थर को जान देने के फ़न में हिन्दुओं ने जिस कमाल को हासिल किया है ताज्जुब होता

है। हमारे मुसलमान तो वैसी कारीगरी नहीं कर सकते। उस कारीगरी को बयान में ही पैदा नहीं कर सकते जैसा फ़रहाद कर दिखलाता था। बहुत दूर की बात है।

दरबारी सिर झुकाये हुए चुप रहे। बघर्रा ने मन में कहा 'पहाड़ों पेड़ों फूल पत्तियों कोमल की कुंजों और परियों की लोच-लचको को जैसे एक साथ इन मन्दिरों के बनाने सिंगार में टाँकी और हथौड़े से मचल मचल कर उतार दिया हो। मैं तो देखकर ठगा सा खड़ा रह गया था। और बुत भी बेपनाह खूबसूरती के। चाहता था इन बुतों को वैसे ही निगल कर पेट के किसी कोने में रक्खे रहूँ। अरे यह तो कुफ़ है। लेकिन कुफ़ अगर दिल को चैन दे तो क्या बुरा? तोबा! तोबा!! खुदा और करे।

पेट पर हाथ फेर कर बघर्रा ने एक लम्बी डकार ली जैसे बरसात में कोई कच्चा मकान गिरा हो। दरबारियों को चुप देखकर उसने अपनी बात का प्रायश्चित किया —'मन्दिर तोड़ दिये बुत फोड़ दिये तो और अच्छा ही किया। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी जैसा कि यहाँ के काफ़िर शायर कहते हैं। अब इन लोगों को फिर से नये मन्दिर यहाँ बनाने चाहिए। मुमकिन है कुछ मन्दिर तोड़े जाने से बच गए हों और उन्हीं को कह दिया गया हो कि नए सिरे से बनाये जा रहे हैं। तुम खुद गये थे वहाँ जासूस?

जासूस कौन गया —बघर्रा चाहता भी यही था —बोला 'जहाँपनाह मैं पुर्तगालियों की कारस्तानियों की जाँच में लगा रहा। काल्पी खुद नहीं जा पाया। चला जाऊँ।

बघर्रा ने मुलायम स्वर में कहा —फिर भी जान पड़ा जैसे कई फूटे बाँस एक साथ बज पड़े हों —'कोई बात नहीं। मुझको इन दिनों काल्पी या बिजयनगर में दिलचस्पी नहीं है। माँडू में बहुत से हिन्दू कारीगर हैं। मुसलमान होने को वे तैयार नहीं हैं। जबरदस्ती उनके साथ की नहीं जा सकती। माँडू की लड़ाई के नतीजे में उनको यहाँ

पकड़ लाऊं और मजहब बदलने के लिये न कहूँ तो मैं अहमदाबाद को और भी धता बैंधे। मुल्लों और काजियों ने मेरे ख्याल की ताईद करदी है इसलिये कोई दिक्कत नहीं। बढ़िये की शक्ल में उनकी मजदूरी में से थोड़ा सा काट लिया जाया करेगा।

'जो हुक्म जहाँपनाह। ग्वालियर में भी बहुत होशियार कारीगर हैं।'

'मांडू को जीतने के बाद ग्वालियर को भी कूटा जायगा। कौनसा गाँव है जहाँ वे दो छोकरियां रहती हैं? ग्वालियर से कितनी दूर है?'

'गाँव का नाम राई है। ग्वालियर से करीब ५ कोस दूर।'

'ठीक है। बरसात में देखूंगा। आज चम्पानेर की तरफ़ दोपहर का खाना खाने के बाद कूच। जब तक हजार पांच सौ सिर धड़ से खुली लड़ाई में रोज अलग न करूं तब तक चैन नहीं पड़ता।'

'जहाँपनाह।' दरबारियों ने नीचे सिर किये हुये ही क्षीण मुस्कान में भिगोकर समर्थन को प्रकट किया।

बघर्रा ने फिर डकार ली जैसे कोई बड़ी धौंकनी फुन्कार बोल गई हो मानो पेट के भीतर से किसी ने दोपहर के निकट खाने-पाने की इत्तिला और दोपहर के भोजन की मांग एक साथ भेजी हो।

अन्य नित्य नैमित्तिक काम की बातें करके दरबारी बघर्रा से आदेश लेकर चले गये।

'दो गोरी सांवरी सलोनी छोकरियां जानवरों के साथ शिकार खेलती हैं और वे मौलिनी भी नहीं हैं हालांकि मौलिनों में भी खूबसूरती देखी है। हिन्दू कारीगरों ने पत्थरों में तरह तरह की खूबसूरत औरतों को बेहिसाब तर्ज़ों और तरहों में पेश किया है, लेकिन इस किस्म की औरतों को कहीं नहीं उभारा है। अगर मिल गईं तो देखूंगा। कम से कम ख्याल अच्छा है मजेदार है। कुछ भी न मिला तो जंग की कसरत तो हाथों पैरों को मिलेगी ही। तलवार और तीर से कटकर गुड़कते हुये सिर और धूल पर बहता हुआ खून।' बघर्रा ने सोचा।

[११]

जब वर्षा से थोड़ा सा अवकाश मिलते ही अटल ने बँधियों वाले एक खेत में धान बोये। पास लगे हुये एक दूसरे खेत में थोड़ी सी ज्वार बाकी भूमि को ज्वारी के लिये रख छोड़ा। कुछ समय के उपरान्त धान के बीज कम निकले। जैसे ही धान कुछ बड़ी हुई खेत में फैलाकर लगा दी। बहुत पानी बरसा और खेत भर गया तो एक ओर से बँधिया को काटकर फालतू पानी निकाल दिया। दो महीने में धान खेत में लहराने लगी। ज्वार भी बड़े बड़े पत्तों वाली और होनहार। भाई बहिन और साथी, तीनों खेतों की रखवाली में तत्पर थे।

जाड़े का समय समाप्त होने को आया। वन्य पशु जङ्गल में अधिक फसलों पर निर्भय। खेतों को रखाना था और पेट भरना था। रखवाली के लिए एक मचान धान के खेत पर था और दूसरा जंगल के किनारे ज्वार की रखवाली के लिये। जानवर निर्भय थे और रात में कभी इस पहर और कभी उस पहर आ जाते थे। दिन में निकलते बहुत कम थे। जङ्गल में हरियाली इतनी अधिक हो गई थी और झाड़ एवं पल्लवित हो गये थे कि शिकार हाथ नहीं लगता था। अटल ने अपना सब अनाज खा लिया। अब केवल लाखी का रह गया था। लाखी की और अपनी गाय की दोहनी पर इन दोनों की गुजर हो नहीं सकती थी। पानी कभी-कभी इतना बरसता था कि दिन में घर से ही निकलना दुस्सह हो जाता था। रात में बदली और पानी के कारण इतना अँधेरा छाया रहता था कि जंगली जानवरों को चिल्ला चिल्लाकर भगाया तो जा सकता था परन्तु तीर से उनका शिकार नहीं किया जा सकता था।

लाखी के धान को छूने से अटल का मन इनकार कर रहा था। तो अब क्या खावें? गाँव के लगभग अन्य लोग भी इसी परिस्थिति में थे। उनसे कुछ नहीं मिलता था। पास नदी में से मछलियाँ भी नहीं पकड़ी जा सकती थीं।

लाखी ने कहा 'अनाज रक्खा तो है। कुछ दिन उससे काम चलाओ।

'जब बूढ़ी माँ का देहान्त हुआ। तब मैंने प्रण किया था कि इस अन्न को तुम्हारे लिये खेत में बोऊँगा। इसलिये इसको नहीं खाना चाहता हूँ।

'तो अपना अन्न मुझको क्यों खिलाया?

'तुम्हारा ही तो था यह।

'और यह तुम्हारा और निन्नी का नहीं है?

'है तो पर मैंने प्रण जो किया था।

'और मैं भी कोई प्रण कर लूँ तो?

'कैसा? कौन सा?

'वैसा ही। समझ से काम नहीं लेते?

'निन्नी से भी पूछ लूँ बाहर गई है आती ही होगी।

'तो मेरे कहने का कोई मोल नहीं?

'है। नहीं पूछूँगा निन्नी से। पर जब यह चुक जायगा तब क्या करेंगे?

'नदी कम हो जायगी मछली मिलने लगेगी और वर्षा कम हो जाने पर शिकार भी। तब तक धान और ज्वार पक उठेगी।

अटल ने उस सुरक्षित अनाज में से कुछ ले लिया। निन्नी जब बाहर से आई देखकर बोली 'भैया तुमने इसमें क्यों हाथ लगाया?

अटल ने उत्तर दिया 'इन्होंने कह दिया तो ले लिया। घर में नाज के लिये और कुछ था भी नहीं। इन्होंने कहा यह भी तो अपना ही है।

निन्नी ने लाखी पर व्यङ्ग की मुस्कान डाली। बोली 'ठीक तो कहा।

अटल बाहर चला गया। इन दोनों ने पीसना पीसा और रोटी बनाई तब कहीं साँझ को पेट भर पाया।

रात के पहले ही वे तीनों खेतों की रखवाली के लिये चले गये।

निन्नी और लाखी धान वाले खेत के मचान पर जा बैठीं अटल ज्वार वाले पर पहुँच गया।

रात होते ही अन्धेरा छा गया। गहरी काली घटायें। आकाश में चन्द्रमा के होते हुये भी चाँदनी का नाम नहीं। रुक रुक कर फुहार पड़ जाती थी। हवा चल रही थी परन्तु मच्छर भुण्ड बाँध-बाँधकर टूट टूट पड़ रहे थे। ओढ़े थे कपड़े परन्तु इतने कि शरीर को ढक लें। शरीर ढका नहीं कि गरमी और पसीने के मारे ठण्डक के लिये फिर अङ्गों को बाहर निकालना पड़ता। फिर मच्छर और फिर गरमी और सोने का क्रम। उन दोनों को बैठ जाना पड़ा।

निन्नी ने कहा 'कुछ बात चीत ही करें।

लाखी बोली 'बात चीत करने को है ही क्या? कुछ गाओ।

'गाऊँ तो पर मच्छर मुंह में घुस घुस पड़ रहे हैं। जी चाहता है मच्छरों को पकड़ पाऊँ तो मारकर भस्म कर दूं।

'सुना है बड़े लोग रंग-रजवाड़ों में इनसे बचने के लिये मसहरी लेते हैं।

'मैंने भी सुना है।

कैसी होती होगी मसहरी?

'क्या मालूम। जान कर क्या करोगी? मंगाओगी क्या मसहरी? अपने भाग्य में कहाँ लिखी है। एक अरना भैंसा मार लें तो उसकी खाल से पहले तो दो महीने का अनाज ले लें। दूसरा मार लें तो उससे कुछ कपड़े और दो मसहरियाँ ले लें—एक अपने लिये और दूसरी तुम्हारे लिये।

'हाँ तीसरी की जरूरत भी क्या है। तुम्हारे और भैया के लिये एक ही बहुत है।

'फिर तुमने ठठोली की। गाँव वाले यों ही बनबावले से देखते हैं कभी तुम्हारे मुँह से ऐसी बात किसी के सामने निकल जाय तो क्या होगा?

'बाजे बजाकर हो जाय तो अच्छा ही है। ब्याह रचा दिया जायगा।

'गाँव के पंच नहीं होने देंगे।

'रखेली की तरह रखेंगे तो गाँव के पंच कुछ नहीं कहेंगे ब्याह हो जाय तो मानो उन पर गाज गिर पड़ेगी।

'मैं तो अकेली ही बनी रहूँगी। किसी की रखेली बनकर रहने से पहले राई नदी में बड़े से पत्थर बाँध कर डूब मरना भला है। तुम्हारे साथ रहकर जनम कट जायगा।

'मैं सदा अकेली ही बनी रहूँगी?

'ब्याह करोगी?

'कभी जब मन चाहेगा।

'तुम्हारा मन या तुम्हारे भैया का मन?

देखा जायगा। आज की ही रात तो ब्याह होना नहीं है।

दोनों मच्छरों को भगाने मारने में लग गईं। कुछ देर बाद खेत के एक कोने पर खसखस शब्द सुनाई पड़ा। दोनों चौकन्नी होकर सुनने लगीं।

लाखी को एक आकार दिखलाई पड़ा। साफ़ नहीं अँधेरा। परन्तु उसने लोहे का एक तीर छोड़ दिया। वह आकार भस्स से हुआ। उसने दूसरा छोड़ दिया। आकार को वह तीर भी लगा। अरने भैंसे की ऊँची चिकार हुई परन्तु वह गिरा नहीं। भाग गया। जङ्गल में भागने की थोड़ी दूर तक आहट मिली। फिर कुछ नहीं सुनाई पड़ा।

'अरना था। भाग गया'—निन्नी ने कहा 'तुमने बहुत उतावली करदी।

'खेत में आ जाता तो धान को रौंद डालता। लाखी बोली।

'कितनी धान रौंद डालता? दो तीर खो दिये! बहुत बढ़िया तीर थे। तुमको कुछ सूझता थोड़ा ही है।

'तुम गिरा देतीं उसको?

'गिरा न देती तो तीर तो न खो देती।

'जैसे उन दिनों झिलमिलाती दोपहरी में झरने में से दोनों निकालकर लौटा दिये थे ऐसे ही सबेरे से दोनों भी ढूँढ़कर लौटा दूँगी।

'ढूँढ़ लिया झरने को! और लौटा दिये तीर!! अरना कोंछों पर आकर दम लेगा!!!

'तो प्राण न खा जाओ। और तनक धीरज धरो।'

'बड़ा घमण्ड करने लगी हो।

'तब झरने की लाज के जूते न बनवाए होते और मनाजन न के लिया होता तो ऐसे-ऐसे न जानें कितने तीर आ गये होते मेरे पास।

'कौन अकेले हम लोगों ने खाया वह धनाज। और जूते तो तुम्हारे ही बने थे और उनके जिनके साथ तुम्हारा जीवन बीतना है।

'मैं आ गई वह सब।

'जब हम लोग खा रहे हैं तुम्हारा अन्न तो नित्य सराहना किया करना।'

लाखी जीभ काटकर रह गई। निन्नी थोड़ी देर चुप रही परन्तु अधिक समय तक शान्त रहना उसको नहीं रुच रहा था।

बोली 'क्या-क्या लौटाओगी मुझको तुम?

'जो कुछ लूँगी वह सब।

मेरे भाई को भी?

'बात ही करना हो तो कुछ और बातें करो जिनसे रात भर कर अट्टहास होता रहे। यदि इस बात को तुमने कहा तो अभी मचान पर से उतर पड़ूँगी और अरने को ढूँढ़ने और तुम्हारे अनमोल अनोखे तीर लाने के लिये जङ्गल में चल दूँगी।

'ओ हो हो हो! कहीं धनुष न पकड़ा हो न।

'अभी दिखलाये देती हूँ मैं क्या हूँ।

लाखी ने तलवार उठाई और धम्म से मचान के नीचे कूद पड़ी। निन्नी ने उसको नहीं पकड़ पाया। निन्नी मचान से नीचे उतरी। तबतक लाखी गड्ढे पाँव कीचड़ में छप-छप करती हुई कई हाथ आगे निकल गई। निन्नी ने दौड़ना चाहा परन्तु वह दौड़ नहीं सकी। लाखी हलके शरीर की थी इसलिये उसको अधिक बाधा नहीं हुई।

निन्नी ने चिल्लाकर कहा 'तुमको मेरी सौगन्ध है खड़ी रहो ! मेरा मरा मुँह देखो जो एक पग भी आगे धरो !'

लाखी रुक गई। निन्नी ने उसको जा पकड़ा। 'लौटो।' निन्नी ने कड़े स्वर में कहा।

'नहीं।' दृढ़ता के साथ लाखी बोली।

'तो मैं भी तुम्हारे साथ ही मरने चलूँगी।' निन्नी ने निश्चय प्रकट किया।

दूसरे खेत के सिरे वाले मचान से अटल ने कुछ सुन लिया और कुछ देख लिया। वह उतर कर इन दोनों की तरफ आया।

वहीं से चिल्लाया —'क्या बात है ?'

निन्नी ने धीरे से लाखी से कहा 'जो अब निपटो उनसे चाहे उनके मचान पर चली जाओ।'

'तुम चाहती हो कि मैं मर जाऊँ या कहीं निकल जाऊँ जब देखो तब मना करती हो।' लाखी बोली

मैं ही कहीं क्यों न चली जाऊँ जिसमें तुमको काँटा न सालै। निन्नी ने सोचा परन्तु कहा कुछ नहीं।

निन्नी आने वाले अटल की ओर देखने लगी। अटल ने पास आते ही आश्चर्य के साथ पूछा 'यह क्या ! कहाँ जा रही हो तुम दोनों नङ्गे पाँव ?'

निन्नी ने तुरन्त उत्तर दिया 'अरना आया था। तुमने नहीं देखा दाऊ।'

निन्नी बोली 'इन्होंने उस पर दो तीर चलाये। उसको दोनों लगे। वह बिदका और भागा। तुमने नहीं सुना ? कहाँ थे तुम ?

अन्त में गरनाते-घरघराते बतलाया 'मैंने अभी ही पैर रखने को था। अब तुम चिल्लाई तब आँख खुली देखा तो तुम दोनों यहाँ खड़ी-खड़ी कुछ बात कर रही हो। मचान से क्यों उतर आई?'

लाखी ने जानने के पहले मर्म का पता किया परन्तु निन्नी ने बीच में ही कहा 'इन्होंने कहा और न बोलावें अपने को ढूँढें। और यह फूट पड़ीं। मैं रोकने के लिए लपक आई।'

'निकट हो तुम दोनों। जाओ मचान पर। तीरों का चिल्ला मत करना। कल ढूँढ लेंगे अपने को। जाओ।'

निन्नी ने लाखी का हाथ पकड़ कर मचान का मार्ग लिया। वे दोनों जब मचान पर चढ़ गईं तब अटल अपने मचान की ओर गया।

निन्नी ने लाखी के मन में हाथ डालकर कहा 'सौगन्ध खाती हूँ कि अब फिर कभी ऐसी बातचीत नहीं करूँगी।'

'मजाक जानकर भाई तो कुछ कह सकता हो।'

'अपने को अनाथ कह कर मुझको सदा शापल मत बनाओ। अनाथ तो मैं हूँ। सौगन्ध खाता हूँ अपने प्यारे से प्यारे की सौगन्ध खाता हूँ कि चाहे जो कुछ हो जाय आगे कभी नहीं लड़ूँगा।'

इस सौगन्ध के खाते ही लाखी हिलककर निन्नी से लिपट गई।

'ऐसी सौगन्ध क्यों खाई निन्नी?' लाखी ने फफकते हुये कण्ठ से कहा।

'क्योंकि मुझको ताव जल्दी आ जाता है। इस सौगन्ध के कारण अब कभी नहीं आयगा।'

'मैं अपने सारे पुरखों की सौगन्ध खाती हूँ कि तुम चाहे जैसी गालियाँ मुझको देना मारना-पीटना पर मैं कभी बुरा नहीं मानूँगी।'

'बस अब निपट चुका। आगे मेरी-तुम्हारी लड़ाई कभी नहीं होगी। अच्छा अब ऐंम लो।'

झोपड़ों में उनके पले दो भैंसे और बकरियाँ-बकरे बँधे हुये थे। कुछ बन्दर खूँटियों से एक झोपड़े के किनारे कमठे तीरों भरे तरकस और लम्बे छुरे रक्खे हुये थे। छोटे बच्चे डाल से टँगी हुई डलियों में थे। पाँच-सात अधेड़ और जवान स्त्रियाँ खाना पकाने में लगी हुई थीं। पुरुष एक मारे हुए जानवर की काटछाँट में लगे हुये थे। इन सबके केश लम्बे थे। पुरुष कच्छे जैसी धोतियाँ पहिने हुये थे। स्त्रियाँ चिथड़ों गुदड़ीदार पायजामें। ओढ़नी कोई नहीं ओढ़े थी। छातियों पर केवल चोली कसे हुये। कानों में जस्ते की बालियाँ और नाक में पीतल के बड़े बड़े नग। गले में काँच के रंग-बिरंगे गुरियों की मालायें।

डेरे के चारों ओर बड़े-बड़े लकड़ों का घेरा था। मार्ग-दर्शकों ने निकट की ओट से समझ लिया कि कौन हैं।

'ओ रे ओ!' मार्ग प्रदर्शकों का अगुआ उन लोगों का ध्यान आकृष्ट करने के लिये चिल्लाया। उन सबने तुरन्त देख लिया और फुर्ती के साथ खड़े हो गये। उनके चेहरों पर भय नहीं था केवल आश्चर्य था। इनका मुखिया अधेड़ अवस्था का था। बोला 'क्या है ?

अगुआ ने कहा 'गुजरात के सुल्तान की फ़ौज यहाँ पास आ गई है और तुमको खबर नहीं!

'हमको नहीं मालूम।

'मांडू का रास्ता बतलाओ और नदी का घाट।

'हमको नहीं मालूम।

'फ़ौज को इसी नदी उस पार उतरना है।

काहे के लिये ?

'काहे के लिये! तुम्हारे पुरखों को तारने के लिये। निकलता है इस खाड़े में से या हम रस्सी-खिंचा बनाकर फ़ौज के हाथियों को तुम्हें कुचल डालने के लिये बतावें ?

एक युवती ने खिलखिलाहट के साथ कहा—परन्तु उसकी आँखों में कोई खिलखिलाहट नहीं थी अचरज थी—'अरे महाराज क्यों यों ही जाए जाते हो ? हमारा तमाशा देखो नाच रस्से पर ढोलकी बजाते हुये दौड़ना कुलांचें एक पेड़ पर से दूसरे पर उछल कर पहुँचना बन्दरों के खेल और अनगिनते करतब । गुम्बरिया ! अरी ओ गुम्बरिया !।' उसने झोपड़ी में बँधे हुये बन्दरों की ओर मुँह करके सम्बोधन किया । छातियाँ मटकाईं और मार्ग-दर्शकों के प्रति शरारत भरी आँख चमाई ।

'कितनी सुघर है । नटनी ही तो ठहरी ।' पपुमा ने सोचा । बोला 'यह सब सुल्तान सलामत और उनके सरदारों को दिखलाना । इनाम मिलेगी । हमको तो रास्ता बतलाओ ।'

'कहाँ हैं तुम्हारे बादशाह और सरदार ? मैं तो दिखलाऊँगी आसमान तक का रास्ता । बल जाऊँ तुम्हारी महाराज । क्या इनाम मिलेगा ?'

'बादशाह के जो मन में आवे ।'

नटों के मुखिया ने कहा 'रास्ता तो सीधा है ।'

पपुमा बोला 'हम लोग भूल गये हैं । चलो साथ ।'

उस युवती ने तुरन्त एक झोपड़ी में से अपनी ओढ़नी उठाई और जूते पहिने । नटों का मुखिया भी तैयार हुआ । कुछ नट और अधेड़ अवस्था वाली एक स्त्री भी ।

पपुमा ने मुखिया से पूछा 'तुम्हारा नाम ?'

'पोटा ।'

'और इस लड़की का नाम ।'

'पिल्ली ।'

'रसियों को नाम जानने की जरूरत नहीं है ।'

'हाय हाय ! तुमको जरूरत न होगी । मैं तो चलूँगी । मैं रास्ता दिखलाऊँगी मैं खेल दिखलाऊँगी ।'

कहां के रहने वाले हो तुम लोग ?

'इसी मालवा के।

अगुए को उन सबों को साथ लेना पड़ा। एक कोस चलने पर अगुए ने मार्ग दिखला दिया। वहां से गुजरात की सेना की चहल पहल कुछ कुछ सुनाई पड़ी।

लखिया ने इनाम मांगा।

अगुआ ने नाहीं की —'नदी का घाट तो बतलाओ।

पिल्ली चिढ़ कर बोली 'चाहे मार डालो जब तक मैं अपना खेल तमाशा बादशाह को नहीं दिखलाऊँगी घाट नहीं बतलाया जायगा।

अगुआ को निरुत्तर होना पड़ा। वे सब सेना में पहुँच गये। सुल्तान महमूद बघर्रा को भूख लग आई थी। अविलम्ब हाथियों पर से तख्त उतारा गया और जोड़ कर रख दिया गया। मसनद तकिए लगा दिये गये। खाना आ गया।

कलेवा के अलावा बघर्रा दिन भर में एक मन गुजराती वजन का भोजन करता था जो इस गये गुजरे जमाने में बीस सेर के बराबर होता है। भोजन में रोटियाँ मांस के नाना प्रकार के व्यंजन दाल शाक दही इत्यादि रहते थे जिनको रसोइये हाथियों पर पकाते हुए या गरम रखकर चलते थे।

बघर्रा ने खाना शुरू किया ही था कि सेना के एक सिरे पर कुछ असाधारण शोर सुनाई पड़ा।

'क्या है यह ? बघर्रा ने पूछा—जैसे कोई पेड़ टूट कर गिरा हो।

पहरेदार दौड़ गये। लौट कर बतलाया 'रास्ता बतलाने वाले नट आये हैं। उनके साथ कुछ औरतें भी हैं। खेल-तमाशे दिखला रही हैं सिपाहियों को।

लाओ इधर। बघर्रा ने पाव भर का एक ग्रास मुंह में डालते हुये मिठास के साथ कहा— जैसे पेड़ की कोई डाल टूट पड़ी हो।

नटनी और नट बघर्रा के पास आ गये। सुल्तान की नजर उठाकर देखना अशिष्टता समझी जाती थी—उसके लिये कड़ा दण्ड भी था। नट चुपचाप खड़े हो गये।

नटनियों ने, विशेष कर पिल्ली ने देह की असाधारण लोचों-लचकों से असम्भव सी कुलाचें भरनी आरम्भ कर दीं। पिल्ली ने तख्त की मद भर भर-एक बड़ा सजीव ढेर भर देखा और भोजन के छोटे-बड़े समूह। वह नीची निगाहों अपना खेल दिखलाती रही। बघर्रा को शरीर की ऐसी मोड़ें-मरोड़ें देखकर आश्चर्य हुआ। कुछ क्षण के लिये भोजन के कौरों को कम करने से हाथ रुक गया।

'बहुत खूब!' बघर्रा के मुँह से निकला—जैसे किसी पहाड़ पर से चट्टान टूट कर लुढ़की हो।

नट काँप गये। पिल्ली की घिग्घी बँध गई। वह अटल के पास खड़ी होकर नीचे से ही सुल्तान को ताकने लगी। उस शरीर, दाढ़ी और मूँछ को देखकर उसके रोंगटे खड़े हो गये। सुल्तान ने पास-पास कर के ग्रासों से भोजन करना जारी कर दिया।

एक ग्रास को चबाते-चबाते बघर्रा बोला, 'कहाँ रहती हो?'

पिल्ली के कानों को प्रतीत हुआ जैसे किसी बड़े भरे हुये ढोल में भैंसा कूदा हो।

काँपते स्वर में बोली 'सरकार, मांडू के पास के एक जंगल में रहने वाले हैं हम लोग।'

'कहाँ जा रहे हो तुम लोग?' जैसे कोई चट्टान फटी हो।

'सरकार मेवाड़ की तरफ।'

'क्यों?' जैसे लोहे के दो गोले आपस में टकरा गये हों।

'वहाँ के राणाजी और सरदारों को अपने खेल दिखलाने के लिये।'

'यहाँ से कब चल दोगे तुम लोग?'

'दो-तीन दिन में। रास्ता साफ हुआ नहीं कि चल पड़े।'

'कौन जात हो?'

'हिन्दू और मुसलमान दोनों।'

'यह कैसे'

'सरकार, हम खुदा और भगवान दोनों को मानते हैं और सब जानवरों का मांस खाते हैं।'

'तोबा! तोबा!!'

'मेवाड़ का राणाजी कहाँ है?'

'चित्तौड़ में होंगे महाराज।'

'चित्तौड़ में नहीं है। मुझसे जूझने-मरने को आ रहा है। यहाँ चालीस-पचास कोस की दूरी पर है। मांडू के सुल्तान को खतम करके आता हूं उस पर भी। यह देखा कि चम्पानेर का हाल किया वही उसका भी करूँगा।'

'जो हुकुम सरकार।'

'कसम खाओ।'

'खुदा की कसम।'

'भगवान की भी खाओ।'

'कसम भगवान और खुदा की।'

नट हाथ बाँध कर इनाम के लिये झुक गये।

'रास्ता और घाट दिखलाओ इनाम मिलेगा' बघर्रा ने कहा मानो मोटी मीठी दरी को किसी ने फाड़ा हो।

वे लोग चल गये। खाना खाने के बाद सुल्तान बघर्रा सेना समेत चल पड़ा। नटों के बतलाये हुये घाट से शाम होते-होते वह नदी के पार हो गया और रात के लिये जङ्गल को अपना शिविर बना लिया।

सबेरा होते ही नटों ने अपना डेरा उखाड़ा और तेजी के साथ कतराते हुये मार्गों से मांडू की दिशा में चल दिये।

बघर्रा के जासूसों ने दूसरे दिन समाचार दिया कि बिलोचियों ने गुजरात के उत्तर में एक लाख की संख्या में सिन्ध से घुसकर लूटमार उपद्रव मचा दिया है। उसने तुरन्त लौट पड़ने का निश्चय किया। मांडू के सुल्तान और दो देहाती छोकरियों के पीछे न पड़कर बिलोचियों का पहले कुचल डालना जरूरी है फिर देखा जायगा। उसने सोचा।

महमूद बघर्रा बीच से ही लौट पड़ा और अहमदाबाद न जाकर गुजरात के उत्तर की ओर चल दिया। बिलोचियों को बतरह खदेड़ा। सिन्ध प्रदेश के उत्तर में सिन्ध नदी के किनारे बिलोची कुछ जमकर लड़े परन्तु हरा दिये गये और बड़ी संख्या में मारे गये। यहाँ बघर्रा को विदित हुआ कि मालाबार के दक्षिणवर्ती गोआ टापू पर पुर्तगालियों ने लड़ाई के जहाजों को बड़ी संख्या में जमा किया है एक बड़ी सेना उतार कर गुजरात में घुसने वाले हैं। मांडू के आक्रमण को अनिश्चित काल के लिये स्थगित कर वह पुर्तगालियों का सामना करने के लिये सिन्ध से सीधा गुजरात चला गया।

पोटा के दल के नट मांडू के पड़ोस में आ छिपे। वर्षा के अन्त तक वहीं बने रहे। अब उन्होंने सुल्तान और प्रचण्ड 'राजाजी' के झंझट में वे नहीं पड़ना चाहते थे। झंझट करने से सुल्तान पर आता और तब आता। परन्तु न सुल्तान आया और न राजाजी आये।

गयासुद्दीन को राणा रायमल के वापिस चले जाने का समाचार अविलम्ब मिल गया था। वह चाहता था मेवाड़ के राजपूत पहले जूझ जायें फिर बघर्रा से टक्कर लूं। ऐसा न हुआ। उसने अपने मन को बहलाया—राणा अकेले में लड़ना नहीं चाहते थे। सोचते होंगे मैं और सुल्तान महमूद कट मरें फिर मौके का फायदा उठायें। मैं भी समझ लूंगा।

परिस्थिति को विपरीत देखकर ख्वाजा मटरू ने पोटा के दल का पता लगा लिया।

उसको बुलाकर कहा 'सुना है तुम बहुत होशियार हो।

'क्या काम है हुजूर ?' उसने विनय की।

मन्क ने राई गाम की उन दोनों लड़कियों का परिचय दिया। क्या करना है यह भी बतलाया।

बोला 'अगर तुम उन दोनों को किसी भी तरकीब से मांडू या हमारे इलाके में लिवा लाओ तो मुँह मांगा इनाम पाओगे। तुमको खर्च और भटक भीर के लिये कुछ टके दे दिये जायेंगे। काम कर लाओगे तो सोना चाँदी से पूर दिये जाओगे। रहने के लिये मांडू में एक आलीशान मकान दे दिया जायगा। तुम्हारे सारे साथियों को भी बहुत इनाम मिलेगा।

उसने कहा 'हम लोगों को मकान नहीं चाहिये। हमको एक ही ठौर जमकर रहने की हमारे धरम में मनाई है—हमको कसम है। हम आपके हुक्म को पालने का उपाव करेंगे। पूरा उपाय।

'कुछ जादू टोना जानते हो ?'

'जादू टोना नहीं जानते तो जंगलों के साँप-बिच्छू, बाहर जेंदुए कैसे काबू में कर लेते हैं ?

'अच्छा जाओ करो काम। तुमको आज ही कुछ गहने, कपड़े और काफ़ी पेशगी रकम मिल जायगी।'

पोटा सामान लेकर चला गया।

[१९]

ग्वालियर फिर से बस गया। कारीगरों और व्यवसाइयों के संघ अपना काम कर उठे। गाँवों के किसान मजदूर रोते झींकते फिर से अपने धन्धे में लग गये और ग्राम्य पंचायतें पुनः अपने शासन नियन्त्रण और सम्पादन के कार्य में व्यस्त हो गईं। मानो एक बड़ा अन्धड़ आया था झाड़ झाड़ियों को झकझोर गया कुछ पेड़ों को उखाड़ गया अनेक की डालें तोड़ गया फिर सब ज्यों का त्यों।

ग्वालियर की सीमाओं के अन्तपालों—गढ़ियों-गढ़पतियों—को सतर्क और सजग रखने के लिये राजा मानसिंह ने उपाय कर लिये। नरवर का विशाल गढ़ ग्वालियर के तोमरों के अधीन लगभग डेढ़ सौ वर्ष से चला आता था। ग्वालियर से बहुत दूर नहीं था लगभग पच्चीस कोस दक्षिण-पश्चिम में। मालवा के सुल्तान से मोर्चा लेने के लिये पहला और बड़ा अड्डा यही था।

मानसिंह ने नरवर को भी सावधान कर दिया।

तोमरों ने नरवर के क़िले को कच्छपघातों—कछवाहों—से लिया था। कछवाहों को यह बात कभी भी गड़ती रहती। भूमि की भूख वाले उस युग में यह बात भुलाई भी कैसे जा सकती थी? मानसिंह के समय में नरवर के कछवाहों का अन्तिम वंशज राजसिंह था। बचानी के कोश में उसकी राज्य-लिप्सा और तोमरों के प्रति प्रतिहिंसा घनीभूत हो गई थी। वह ग्वालियर की सीमा के बाहर मालवा के सरहद्दी नगर चंदेरी में रहता था और कभी मांडू के सुल्तान कभी दिल्ली के बादशाह को अपने अभीष्ट की प्राप्ति के लिये उकसाया करता था। नरवर से चंदेरी लगभग बीस कोस के अन्तर पर है। चंदेरी में मालवा के सुल्तान का सूबेदार रहता था। वह ग्वालियर की शक्ति को जानता था। नरवर के ऊपर आक्रमण नहीं कर सकता था। सुल्तान करे तो करे-उसका निश्चय था। राजसिंह अवसर की ताक में था।

चन्देरी के दक्षिण-पूर्व से बेतवा पहाड़ों और जंगलों को रेतती कुरेदती पूर्व में लगभग चार कोस के अन्तर से उत्तर की ओर चली गई है। नई चंदेरी के किले और नगर के कोट को मालवा के सुल्तानों ने नये सिरे से बनवाया था। पुरानी चंदेरी उजाड़ पड़ी थी।

चंदेरी—नई चंदेरी—का किला नगर के ऊपर उत्तर से पूर्व की ओर घूमकर जाने वाली एक ऊँची पहाड़ी पर था। चन्देरी का सूबेदार इसी में रहता था। नीचे बसा हुआ नगर सघन था। यहीं एक बड़े भवन में राजसिंह रहा करता था। उसके पड़ोस में एक गायक था जिसके गले की मधुरता और वीणा पर अँगुलियों की चतुराई विख्यात हो गई थी। वह राजसिंह को अपना गायन और वीणा-वादन कभी-कभी सुनाया करता था। दोनों में मैत्री थी। गायक को उससे यदाकदा कुछ सहायता मिल जाती थी।

सूबेदार गायन-वादन का शौकीन नहीं था। फिर भी कभी-कभी थोड़ा बहुत दे देता था। गायक का नाम बैजनाथ था। जाति का ब्राह्मण गायन-वादन के अभ्यास बढ़ाने में उसको दिन और रात भूख और प्यास अवसर और कुअवसर की परवाह नहीं रहती थी। नगर में उसको बैजू कहते थे। बैजू के घर के सामने एक चित्रकार की लड़की रहती थी। वह चित्रकारी से बढ़कर संगीत कला में निपुण थी। वर्णसंकर होने के कारण उसका युवावस्था प्राप्त हो जाने पर भी विवाह नहीं हुआ था। रूपवती थी लाखी से कुछ मिलती-जुलती। बैजू से उसने गायन-वादन भी सीखा था परन्तु चित्रकारी में उसको विशेष रुचि थी। राजसिंह के भवन पर जब बैजू गाता था तो वह लड़की तम्बूरे का साथ देती थी और बीच-बीच में अपने कण्ठ से उसकी लय को साधती थी। पिता ने मरते मरते तक विवाह की चर्चा की कोई भी विवाह करने को तैयार नहीं हुआ तो उसने भी विवाह न करने की प्रतिज्ञा करली। नाम उसका कला था।

शरद ऋतु आ गई। शुक्ल पक्ष की चांदनी पेड़ों के लहलहाते पत्तों और दूबा पर बैठी हुई ओस की बूंदों के साथ खेलने लगी। शरद पूर्णिमा की रात में बैजू का गायन राजसिंह के यहां हुआ। कला तम्बूरे की झंकार और बीच-बीच में अपने स्वर से उसका साथ दे रही थी। कला की आंखें आई हुई थीं हल्दी का पीला कपड़ा आंखों पर डाले थी रस में इतनी डूबी हुई थी कि आई आंखों की उसको चिन्ता न थी।

राजसिंह की छोटी सी सभा में उसके कई मित्र बैठे थे। उनमें से एक चारण था। चारण कुछ कहने के लिये उतावला था। गायन के बीच-बीच में उसी के मुंह से सबसे ज्यादा 'वाह ! वाह !!' निकल रही थी। गायक बैजू उस वाह-वाह के कृतज्ञता-ज्ञापन के लिये मुस्करा भर देता था। चारण की वाह-वाह के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अशिष्ट तो होता ही, शायद कभी हानिकारक भी हो सकता था!

गायन की समाप्ति पर राजसिंह ने यथा-सामर्थ्य गायक को कुछ भेंट किया।

चारण बोला 'आप जैसे गायक हो बैजनाथ जी जैसा दान राजसिंह जी उस दिन देंगे जब इनकी पुरानी बपौती लौट आवेगी।

राजसिंह ने उठी हुई सांस को रोका।

बैजू ने कहा 'जो मिल जाय वही बहुत है। अपनी आत्मा के भीतर से जो कुछ पाता हूं वह सब से बढ़कर है।

चारण ने अपने भाव की धार तेज की—'जब नरवर के किले में इनका झण्डा फहराये, तब मैं इनको राजा कहूंगा तभी आपको मेरे राजा सोने और मोतियों से लादकर देंगे। तभी मेरी वाणी जुड़ायगी मेरी आत्मा भी।

'और तभी मैं सब के सामने गायन करूंगा और मद का प्याला ओटकर पिऊंगा' राजसिंह के मुंह से निकला।

कला ने आंखों की पट्टी को जरा सा हटाकर राजसिंह की ओर देखा।

चारण बोला 'हमारे पुरखों ने राजसिंह जी के पुरखों के साथ नरवर को छीना था जब तोमरों ने नरवर का हरण किया। हमको प्रण है कि तब तक नरवर में पैर नहीं रखेंगे जबतक कछवाहों का राज्य नरवर में फिर से नहीं हो गया।'

बैजू राजनीति को नहीं जानता था। उसे लगा राजसिंह किसी दिन अपने कुछ साथियों और चन्देरी के सूबेदार के संग नरवर पर धावा कर बैठेगा जिसका परिणाम बुरा अधिक और अच्छा कम होगा।

'कुमार के लिये तो बिना राज्य के भी आप राजा हैं। नरवर बहुत बड़ा किला सुना है। बहुत रक्तपात होगा।' बैजू ने कहा।

राजसिंह नशा किये था। बोला 'मर जाऊँगा किसी दिन। अपनी भूमि को फिर से पाये बिना मर जाना ही अच्छा।'

कला ने फिर आँख की पट्टी को उठाया। उसने राजसिंह को ऐसी बात कहते पहले कभी नहीं सुना था।

चारण ने चर्चा को और तेज किया —'मर क्यों जाओगे कुमार? मारोगे और नरवर को फिर पाओगे। चन्देरी के सूबेदार मालवा के सुल्तान आपको यों ही नहीं मर जाने देंगे। यों ही मरते हैं स्यार; राजपूत ऐसे नहीं मरा करते।'

राजसिंह ने सिर हिलाकर बतलाया कि उसका प्रयोजन मार कर मरने से था—यों ही मर जाने का अभिप्राय न था।

चारण ने एक उत्तेजक कवित्त सुनाया जिसका तात्पर्य था—सिंह और राजपूत कहीं भी जाकर अपने बाहुबल से राज्य की सत्ता लेते हैं। बैजू के गायन का जो प्रभाव हुआ था उस पर अपने प्रभाव को चढ़ा देने का उस कवित्त-पाठ का उद्देश्य अधिक था राजसिंह को भड़काने का कम।

बैजू को न तो कवित्त का साहित्य अच्छा लगा और न उसके पाठ की कर्कश ध्वनि।

बैजू बोला 'आपकी कृपा से सब ठीक रहेगा। देखूंगा कौन-कौन बर्बरे सामने आते हैं ग्वालियर में।

चारण और राजसिंह ने एक दूसरे की तरफ़ देखा। उसके मित्र ने भी किसी धार्मिक रहस्य को जानने का कुतूहल व्यक्त किया। कला ने भी पाँव की पट्टी उखाड़ कर वहीं की वहीं करली।

राजसिंह ने कला से अकेले में कुछ कहा। फिर सब तितर-बितर हो गये।

[१८]

ग्वालियर के क़िले के दक्खिणी मैदान में पुनर्वास के लिये लौटे हुये लोगों के अब कोई झोपड़े नहीं रहे थे। वे सब क़िले के नीचे नगर में जा बसे थे। इस मैदान के पूर्वी छोर की दीवार के नीचे छोटे-बड़े ऊँचे नीचे बांसों पर विविध रंगों के बड़े घास-फूस और मिट्टी के पक्षी तथा डोरियों पर लटकते, चक्कर खाते हुये छोटे-छोटे गोले घूम रहे थे। सामंतों और सैनिकों के साथ मानसिंह तीरन्दाजी का अभ्यास कर रहा था। एक घड़ी दिन चढ़े ही अभ्यास करने वाले इकट्ठे होकर समूहों में बँट गये थे। मानसिंह के साथ विजयजङ्गम भी था।

जिन्होंने अभ्यास का आरम्भ ही किया था वे बड़े-बड़े लक्ष्यों को साध रहे थे। जिनको पारङ्गत समझा जाता था वे छोटों के सामने थे। इन सब के पीछे मोटे कपड़े के रेत भरे बोरों की दीवार उठा दी गई थी जिससे तीरों की नोकें कोट की दीवार से टकराकर झड़ न जावें।

मानसिंह और विजय के सामने डोरी से लटकता हुआ एक छोटा सा घड़ा था। इसको उतारा गया और उसमें पानी भर दिया गया। काठ की एक छोटी सी बतख उसमें डाल दी गई।

मानसिंह ने विजय से कहा 'ठीक देने के बाद इस घड़े को हिला दिया जायगा। चक्कर खाते हुये घड़े के भीतर बतख को तीर छेद कर निकल जाय तब बात है।

'कितने तीरों में से एक लग जाय तो सफल वेध समझा जायगा?' विजय ने पूछा।

'पाँच' मानसिंह ने उत्तर दिया।

'बहुत राजा' विजय ने स्वीकार करते हुये कहा।

मानसिंह ने कहा 'तुर्क लोग तीरन्दाजी में बहुत बड़े-चढ़ हैं। जब तक हम लोग उनकी अपेक्षा अच्छे तीरन्दाज नहीं हो जाते हैं तब तक उनका सामना सफलता के साथ नहीं हो सकता। हम लोगों में साहस शौर्य इत्यादि सब कुछ है परन्तु इसकी कमी है।

विजय बोला 'और कई कमियाँ हैं जिनमें से एक बड़ी कमी अच्छे घोड़ों की है। तुर्कों के पास अच्छे घोड़े हैं। महाराज को स्मरण होगा कि मैंने तैलङ्गाने के दक्षिणवर्ती विजयनगर राज्य का कुछ वृत्तान्त सुनाया था। बहमनी सुल्तानों से लड़ने में विजयनगर की अपार सेना इन दो त्रुटियों के कारण ही रह-रह जाती है।

मानसिंह ने निश्चय के स्वर में कहा, 'मैं इन दोनों त्रुटियों को दूर करना चाहता हूँ। अभ्यास अभ्यास और अभ्यास से हम लोग तीरन्दाजी में तुर्कों से आगे निकल जावेंगे। घोड़ों की समस्या अवश्य कुछ कठिन पड़ती है सो मेवाड़ के मार्ग से प्राप्त हो सकते हैं। मेवाड़ के राणा को मैं अपना बड़ा मानता हूँ इस काम में वे मेरी सहायता करेंगे।

'सोना चाँदी बहुत चाहना पड़ेगा। कहाँ से आवेगा इतना ? विजय ने संदेह प्रकट किया।

'सोना चाँदी की कमी नहीं रह सकती ! शासन का प्रबन्ध अच्छा रक्खा जा रहा है। प्रजा धन उपजावेगी। सेठ और व्यापारी उद्योग धन्धों को बढ़ावेंगे फिर कमी नहीं रह सकती।

'आपको भवन बनवाना है मन्दिर भी ?

सोचा था परन्तु अभी नहीं। ध्यान में ही नहीं आता है कि भवन किस प्रकार का बनेगा और कैसा। दक्षिण का नमूना जैसे मन्दिर हैं परन्तु दिल्ली और दंग का बने तो अच्छा रहेगा। सबसे पहले शस्त्र और सेना फिर कहीं भवन और मन्दिर।

'और शिकार ? इन सबसे पहले ?

'हूँ ! हूँ !! हूँ !!! चोट करके ही मानें।

मैंने वैसे ही कहा।'

'परिश्रम कर लेने पर कुछ अवकाश भी तो चाहिये।

'जीवन में कायक—काम—ही सब कुछ है। एक काम से मन उचटे तो दूसरा करने लगे। मैं तो अवकाश इसी को कहता हूँ।'

'आपकी इस बात को मैं बहुत पहले गाँठ में बाँध चुका हूँ। इसी लिए परिश्रम से आह्लाद पाता हूँ। प्रण किया है जब महल और मन्दिर बनवाऊँगा तब मजदूरों के साथ नित्य एक घण्टे में भी पत्थरों पर श्रम करूँगा।

'शिकार खेलने कब जायेंगे महाराज ?

'हाँ हाँ! हाँ!!! फिर भ्यांकु!!!! नहीं जाऊँगा बाबा। उस गाँव का वह ब्राह्मण दो बार आकर बुला गया है। हुलास में आकर उससे कह देता हूँ कि शीघ्र आऊँगा परन्तु वह हुलास दासिक घा रहा मैं भूल-भूल गया।

याद फिर स्मरण हो आया!

'मेरे साथ न्याय करो आचार्य। मैं केवल मन बहलाव के लिये नहीं जाना चाहता हूँ जङ्गलों में। तीव्र गति के साथ दौड़ते हुये भयंकर पशुओं को एक तीर से मार गिराने की क्रिया में निपुण होना चाहता हूँ। बन सका तो वहाँ के टूटे हुये मन्दिर के उद्धार में भी कुछ सहायता कर दूँगा।'

'गाँव के उस शास्त्री ने कुछ और भी कहा था ?

'स्मरण नहीं आता।

'कुछ अहेरिनियों की बात कही थी।

'कही होगी याद नहीं रही।

विजय को राजा ने भोजन कराया। फिर स्वयं किया। भोजन के उपरान्त विजय मानसिंह को वीणा-वादन सुनाया करता था। वह इसका 'धन्धा' जानकार था। वीणा-वादन पर मानसिंह मुग्ध हो गया। जब रका

मन के उमङ्ग में भरकर कहा 'पहले के लोगों ने बड़े-बड़े मन्दिर और विशाल मूर्तियाँ बनवाई हैं—मैं चाहता हूँ संगीत को पत्थरों में खुदवा दूँ'।

'पत्थरों में सङ्गीत!' विजय ने वीणा को एक ओर रखकर आश्चर्य प्रकट किया।

'क्या कुछ असम्भव है? अजमेर के चौहान राजा विग्रहराज ने विग्रहराज नाटक और हरकेलि नाटक को खुदवा दिया था न शिलाओं पर?'

'परन्तु सङ्गीत? यह तो हृदय और कण्ठ की चीज़ है।'

'क्या अकेले मैंने ही ठेका लिया है सब निर्णय करने का? एक सुझाव दे दिया है। कुछ आप भी सोचो।'

'यह भी किसी क्षणिक उल्लास की ही उपज है महाराज या कुछ और।'

'आप जितने सरस सङ्गीतकार हो आचार्य उतने सरस वार्ताकार नहीं हो।'

'महाराज, मेरे गुरुओं ने थोड़ी बात कहने और निस्पृह रहने की शिक्षा दी है।'

'अच्छा मैं वचन देता हूँ कि उल्लास क्षणिक नहीं रहेगा। मैं संगीत को पत्थरों में मूर्त करने की बात—सोचा करूँगा।'

'राग-रागनियों की मूर्तियाँ और उनकी आरोही-अवरोही अलंकार तानें उभार कर, खोद कर, पत्थरों को सजीव किया जायगा क्या?'

'अभी कुछ नहीं कह सकता। कहा न कि आप भी सोचते रहो। लालसा है कि उसको देखकर भगवान भी किसी गीत को गा उठें। वीणा पर किसी और राग को मूर्त करिये।'

'अच्छा, कुछ क्षण। फिर थोड़ा सा विश्राम करिये और काम को देखिये।'

विजय ने कुछ क्षण वीणा बजाई। मानसिंह को अच्छा नहीं लगा। विजय बजाकर चला गया। मानसिंह ने एक घड़ी विश्राम किया और काम के लिये भवन के बाहर निकल आया।

[१२]

राई गाँव के निवासियों ने धान की फसल काट ली। ज्वार अभी खड़ी थी।

झटपट खलियान में बालों को सुखाया और कूटकर चावल साफ़ किये। पयाल को जाड़े के लिए सुरक्षित रख लिया। राज्य का लहना आया लम्बा ऐंच ले गया। पुजारी ने अपना अर्घ ले लिया। किसानों ने सोचा बाहर के लुटेरों से अब भय नहीं बहुत है उनको देना तो भाग्य में ही लिखाकर चले हैं। लुटेरे कहीं से न आ टूटें तो ज्वार में से दे-दिलाने के बाद भी खाने के लिये कुछ दिनों को हो जायगा। चावलों से आशा कम थी क्योंकि स्त्रियों के लिये कुछ कपड़े चाहिये थे और काँसे-पीतल के कुछ गहने—यदि एकाध लच्छा चाँदी का भी हाथ पड़ जाय तो क्या बात है।

पुरुष बचे हुये चावलों को खेती के औजारों और ढोरों में पलटवाना चाहते थे। परन्तु उनकी बहुत ही कम चल सकी। नंगे पैरों नंगे हाथों स्त्रियां कबतक और कैसे रह सकती हैं? तिथि त्योहारों पर भी बिना कड़ों और चूड़ों के पैर और हाथ आंखों में आंसू ला देते हैं। यह बात पुरुषों के मन में छिपी हुई थी। कहा 'ज्वार की फ़सल पर गहने और कपड़े-लत्ते ले लिये जायँगे। स्त्रियों ने हाथ की साँस भरकर हामी भरली मुँह लटका लिये। पुरुषों को चावल का अधिकांश भाग हटाकर काँसे पीतल के कड़े-चूड़े लेने पड़े। जाड़ों के लिये थोड़े से कपड़े और कुछ कम्मूती करके थोड़े थोड़े से ढोर।

गांव में अटल का घर कुछ हरा-भरा समझा जाता था क्योंकि दोनों स्वस्थ थे परिश्रम करते थे और शिकार खेलते थे। हरे भरे घर में भी कड़े-चूड़े एक भी नहीं! वस्त्र ही कम। परन्तु यहां वस्त्रों और गहनों के मुकाबिले में ढोरों को हारना नहीं पड़ा। कोई ऐसे जानवर हाथ नहीं लगे थे जिनकी खालों से वस्त्रों और हथियारों को ले लिया जाता। खाने के लिये थोड़े से चावल रख लिये गये ज्वार की फ़सल आने ही वाली थी

फिर पहाड़ी। इसलिये बाकी चावलों को हथियारों और वस्त्रों की खरीद के लिए उठा लिया। लाखी को चाँदी का एक छल्ला और निन्नी को गले के लिये एक छोटी पतली भी ही सही हँसुली की आवश्यकता प्रतीत हुई। छल्ला थोड़े में आ सकता था तीर बहुत आवश्यक थे। यह लाखी की माँग थी। मुझको तीर नहीं चाहिए एक हँसुली बिना गला बिलकुल सूना रहता है इसलिये मेरे लिए एक हँसुली आनी ही चाहिये, यह तकाजा निन्नी का था।

जितने तीर निन्नी के पास थे वे उसको पर्याप्त नहीं जान पड़ते थे। वह लाखी को अपने कुछ तीर दिये रहती थी परन्तु लाखी उनको अपना नहीं कह सकती थी। अटल उन तीरों को लाखी को नहीं दिला सकता था। कुछ वस्त्र दोनों को चाहिये थे। उतने चावलों से इतना सब हो जाना दुष्कर मालूम होता था।

अटल ने फुसलाने का प्रयत्न किया—

'अबकी बार एक बर्छी लाता हूँ। दोनों उससे अभ्यास करना। पास से मार सकती हो और दूर से फेंक कर भी।'

'अच्छा तो मैं गले के लिये हँसुली नहीं लूँगी मेरे लिये बरछी ला दो। निन्नी ने कहा।

लाखी बोली, 'एक बरछी मेरे लिये भी। मुझको चाँदी का छल्ला नहीं चाहिये। पहाड़ी की फसल पर छल्ला ले लूँगी। अभी बरछी और तीर।

'चावलों को कौन उठायगा जो रख लिये हैं? उनसे हम तीनों को दो दो एक-एक फरसे भी मिल जायेंगे। निन्नी ने सुझाया।

'फिर खाने के लिये क्या बचेगा? अटल ने मृदुलता के साथ पूछा।

'ज्वार में भुट्टे आ गये हैं। पकने तक उनसे काम चलायेंगे। निन्नी ने बतलाया।

लाखी ने उत्तर दिया, 'जाड़ा पड़ने लगा है, जंगल का घास सूख गया है, कुछ चलकर ढूँढने से मिल ही जायेंगे। उनसे काम चलेगा। नदी में मछलियाँ आ गई हैं। उनको भी देखो।'

अटल ने समझ लिया कि उसकी नहीं चल सकेगी। बर्छी की बात को भुलवा कर पछताया। फिर भी उसने आशा नहीं छोड़ी।

कहा 'अच्छा तो तीर, कपड़े, छल्ला और हँसुली रही। बरछी तुम्हारी की फ़सल पर। थोड़े से चावल रक्खे रहने दो।'

'नहीं। बर्छी अवश्य आवे।' निन्नी बोली।

'बर्छी तो आनी ही चाहिये।' लाखी ने हठ किया।

अटल को मानना पड़ा। भोजन की प्राप्ति भाग्य के भरोसे।

चावल लेकर वह ग्वालियर चला गया। पुजारी भी उसके साथ गया।

वे दोनों तीर कमान लेकर जङ्गल में जा पहुँचीं। जहाँ लाखी को बारसिंघा मरा पड़ा हुआ मिल गया था वहाँ उन्होंने देखा अनेकों बकरे बकरियाँ बन्दरों के साथ कुछ लोग आ ठहरे हैं। झिझकीं।

निन्नी ने कहा 'न जाने कौन हैं ये लोग?'

लाखी ने अनुमान किया—'लुटेरे नहीं हो सकते। कोई भूले भटके से जान पड़ते हैं। पास से चलकर देखें। डर क्या है अपने पास भी तीर कमठे और छुरे हैं।'

निन्नी उत्तेजित होकर बोली 'डर किस बात का? अपने पास हैं, क्या छिने यह स्थान ले जायेंगे? चलो देखें।'

वे उनके निकट पहुँच गईं।

यह समूह पोटा और पिल्ली का था। हाल ही में आया था। सबके सब मोटे कमान की मुठिया कर रहे थे। इन दोनों को अपने पास आया देखकर वे सब ध्यान के साथ देखने लगे। पोटा आगे बढ़ा। पिल्ली

उसके पीछे। निन्नी के विलक्षण सौन्दर्य को देखकर पोटा पिल्ली के बतलाये हुये परिचय को मन में तौलने लगा। उन दोनों को तीर-कमानों से लदा हुआ देखकर उसकी आशा को कोई ठेस नहीं लगी।

पिल्ली बोली, 'क्या तुम दोनों इसी गाँव की हो ?

उन्होंने हामी का सिर हिलाया।

'गाँव पास ही है क्या ? पोटा ने पूछा।

लाखी ने दूरी बतलाई।

पिल्ली आगे बढ़ आई। सुन्दर चोली पहने थी और बढ़िया पैजामा—लचका गटा के टंकों की देन। परन्तु ओढ़नी नहीं थी उसके शरीर पर।

उँगलियाँ नचाकर और नाक के नथ को हिलाकर उसने कहा 'आओ न इधर आओ। बन्दरों का तमाशा दिखलायेंगे नटों के नाटक रस्से पर ढोलकी बजाते हुये नाच। कुछ इनाम दोगी ? क्या दोगी ?

निन्नी ने शान्त निस्संकोच भाव से कहा 'हमारे पास देने के लिये कुछ नहीं है। हमारा गाँव बहुत गरीब है।

एक अधेड़ नटिनी आ गई।

बोली 'अरी ये तो हम सरीखी गरीब हैं इनसे क्या इनाम लेना। इनको वैसे ही अपने सब खेल तमाशे दिखलायेंगे। आओ बेटी इधर आओ हमारे पास अच्छे बड़े पके सीताफल हैं। बड़े मीठे हैं।

निन्नी और लाखी ने एक दूसरे के प्रति देखा।

पिल्ली तुरन्त कुलाचें खाने लगी। वे दोनों रुचि और अचम्भे के साथ उसके शरीर की लोचों-लचकों को निरखने लगीं।

हाँफ को साधकर पिल्ली इन दोनों के पास आ खड़ी हुई।

उसने बड़े निहोरे के साथ कहा 'आओ इधर आओ बहिन हम बन्दरों के खेल दिखलायेंगे।

पोटा बोला 'आकाश में रस्से पर नाचते हुए कभी देखा है तुमने किसी को ?'

लाखी पिल्ली के शरीर की बनावट को परख रही थी। निन्नी ने कहा 'कभी नहीं देखा।

'कभी सुना ?

'न कभी सुना।

'तो लो आओ। अभी दिखलाता हूं। हम हारे थके तो है पर तुम को ये खेल और जादू-टोने दिखलाना हमको बहुत अच्छा लगेगा।

'खेल देखो और सीताफल खाओ आओ बेटी इधर। अधेड़ नटिनी ने आग्रह किया। पिल्ली को मालूम हो गया कि दोनों उसकी कुमारों के आरम्भ से भर गई है परन्तु उसके तीर कमठों और बगल के छुरों को देखकर उसके मन में कुछ ग्लानि हुई।

उसने पूछा, 'ये तीर कमठे काहे के लिये बांधे है ?

लाखी ने उत्तर दिया 'शिकार खेलने आ रही थीं हम दोनों, इधर तुम लोगों को देखकर चली आई।

शिकार खेलती हो इस घने-भयावने जङ्गल में ! कौन सी चिड़ियां मारती हो तीरों से ? चिड़ियों को तो हम लोग गुलेल से ही मार गिराते हैं। पिल्ली ने कहा।

निन्नी मुस्कराती हुई बोली, चिड़ियों को हम लोग उँगलियों के कंकड़ों से मार लेते हैं। हमारी लाखी ने एक ही तीर से अरने भैंसे को छेद डाला था।

'इसका नाम लाखी है। और तुम्हारा बेटी ? पोटा ने प्रश्न किया।

लाखी ने बतलाया 'इन्होंने बड़ी-बड़ी सींगों वाले बनैले सुअर एक एक तीर से ही लिटा दिये हैं। इनको निन्नी कहते हैं पर असली नाम मृगनयनी है।

पोटा ने जाना जैसा सुना था वैसी ही है। दूसरी भी उसी मेल की बैठी।

नटों का समूह अपने निवास के लिये लकड़ियों का घेरा बना रहा था। अभी अधूरा था। वे दोनों अधूरे घेरे के भीतर हो गईं।

अधेड़ नटिनी एक टोकनी में से दो बड़े-बड़े पके सीताफल ले आई। निन्नी ने लेने से नाहीं कर दी।

बोली, हम कुछ शिकार मार कर ले आवें और तुमको दें तब हम भी तुम से कुछ ले सकती हैं। यों ही सेंतमेंत किसी का कुछ ले लेना हमारे कुल की रीति नहीं है।

अधेड़ नटिनी ने आग्रह किया 'अरी तुम दोनों महलों में रहने लायक हो! बड़े-बड़े पलङ्गों पर आराम करने योग!! लौंडियाँ-बाँदियाँ तुम्हारी हाजिरी में खड़ी रहें!!! हुकुम करो और हम उसको पालें। सीताफल तुम्हारे ऊपर न्योछावर है। देखो तो, ऐसी है जैसे गुलाब और कमल के फूलों से बनी हो इसकी देह। किसी राजा के साथ होगा तुम्हारा ब्याह तब कभी कभी हमारी और सीताफलों की याद करना भूलना नहीं। शिकार मारकर दोगी तब हम लोग ले लेंगे पर इस समय हमारी यह भेंट तो कबूल करलो रानी।

निन्नी को यह भाषा बुरी लगी लाखी को अच्छी।

लाखी ने कहा 'ले लो निन्नी ले लो। अभी दिन भर पड़ा है। कोई न कोई शिकार जंगल में मिलेगा सो इनको ब्याज समेत चुका देंगी।

नटों के आग्रह के पीछे किसी विशेष अभिप्राय को न देखकर निन्नी ने एक सीताफल ले लिया। दूसरा लाखी ने। जब तक उन दोनों ने सीताफल समाप्त किये। पोटा ने एक टोकनी में से लम्बा रस्सा निकाला। दो दुफाकार नोकदार बाँसों से एक ओर और वैसे ही दो बाँसों से दूसरी ओर उस रस्से को बाँधकर ताना और कड़ा कर लिया। अधेड़ नटिनी के

संकेत पर पिल्ली दो बड़े-बड़े सीताफल और लाई। उन दोनों ने लाने से इनकार किया परन्तु पिल्ली और अधेड़ नटिनी के लचक-लचककर किये हुये आग्रह को वे न ठुकरा सकीं। उन्होंने इन फलों का खाना समाप्त नहीं कर पाया था कि गले में ढोल बाँधकर पोटा अपने साथियों की सहायता से रस्से पर पहुँच गया। चलने लगा।

वे दोनों आश्चर्य के साथ उसकी क्रिया को देखने लगीं। पिल्ली मचल-मचलकर मटक-मटक कर नाचने और गाने लगी। पोटा कभी धीरे धीरे कभी द्रुतगति के साथ रस्से पर इधर से उधर और उधर से इधर चलने लगा। पिल्ली के गायन और नृत्य का साथ देने के लिये गले में पड़ी हुई ढोलकी को भी बजाता जाता था।

निन्नी का आश्चर्य शीघ्र समाप्त हो गया। कुछ क्षण उसको पिल्ली का नाचना गाना भाया परन्तु कुछ ही क्षण। वह अपने मन को कारण नहीं समझा सकती थी परन्तु उसको पिल्ली के गायन में बेसुरापन और भद्दापन प्रतीत हो रहा था और नृत्य में बहुत भौंड़ापन। क्या स्त्रियाँ इतनी निलज्ज भी हो सकती हैं? उसके मन में ग्लानि के साथ बार-बार प्रश्न उठ रहा था।

लाखी को उसके गायन और नृत्य में कुछ कुरस या नीरस नहीं लग रहा था। उसका ध्यान पोटा के संतुलन और विलक्षण लाघव पर मुग्ध हो रहा था।

उसके मन में उठा, क्या मैं ऐसा कर सकती हूँ? क्यों नहीं कर सकती? इस नटिनी सरीखी कुलाचें चाहे न ले पाऊँ, परन्तु इस नट के समान रस्से पर तो चल फिर लूँगी। अवश्य चल फिर लूँगी। देह को साधने और सांस को सँभालने ही का तो काम है। सीखूँगी। घर में रस्सा है ही। जंगल से बांस काट लाऊँगी। गांव ही पूरे से चार बांस काटूँगी और घर लौटते ही अभ्यास करूँगी। यदि अधिकार मिलता रहा तो नटों को लिया करूँगी और उनसे इस विद्या को सीख कर ही रहूँगी।

नट प्रदर्शन को समाप्त करके रस्सी से नीचे उतर आया। उसने पूछा 'बेटी कैसा लगा?'

निन्नी ने केवल सिर हिलाया लाखी ने उत्साह के साथ कहा 'बहुत अच्छा लगा। कब तक रहोगे तुम सब यहाँ?'

'कुछ ठीक नहीं अभी तो आये ही हैं। नदी का सहारा है। हमारे जानवरों के चरने के लिये घास यहाँ बहुत है। आस पास कई गाँव हैं। हैं तो छोटे ही पर अपने खेल तमाशे दिखलाते रहेंगे और पेट पालते रहेंगे। ग्वालियर भी दूर नहीं है। कभी वहाँ भी खेल दिखलाने जायेंगे पर अभी तो यहीं पड़े हैं।' पोटा ने कहा।

पिल्ली बोली 'तुम आया करो तुमको रोज कोई न कोई नया खेल सिखलाया करेंगे। अभी दिखलाया ही क्या और कितना है। अनगिनत तमाशे हैं हमारे पास। तुम्हारे गाँव में भी आयेंगे हम।'

निन्नी ने हतोत्साहित किया 'गाँव में तमाशे के बदले कुछ नहीं मिलेगा। बहुत गरीबी छाई है।'

अधेड़ नटिनी ने उत्साह प्रकट किया 'बेटी हम लोग बहुत थोड़ा खा सकते हैं। एक गाँव में कुछ न सही। तुम्हारे सहारे यहाँ जङ्गल में दिन काट लेंगे यही क्या कम है? आया करो अम्मा। कसम है आया करो बेटी दोनों। और देखो शिकार क्यों खेलती हो? यह तो मर्दों का काम है। जङ्गल में शेर भालू होंगे। झाड़ झड़ और काँटे हैं। तुम्हारे कन्धों पर तो फूलों की मालायें और कमर में मोतियों की करधौनी होनी चाहिये। बिना तीर कमठों के ही आया करो। वैसी बहुत भली लगोगी।'

पिल्ली ने अपने वक्ष फुला कर आँख मिचकाई और मुस्कराई। लाखी को यह उपहास-जनक फूहड़पन जान पड़ा। ग्लानि और क्षोभ के कारण निन्नी का चेहरा तमतमा गया।

निन्नी ने कहा 'अब हम लोग शिकार खेलने जा रही हैं। कुछ मिल गया तो तुमको भी देंगी।

नोटा ने अनुरोध किया, 'हम लोग भी तीर चलाना जानते हैं। दल में से सो हम में से दो एक को, मदद मिलेगी। दो से तीन और तीन से चार भले।

लाखी हामी भरने वाली थी। निन्नी ने तुरन्त निषेध किया 'शिकार में जहाँ दो से तीन हुए कि शिकार हुई चौपट। हम लोग किसी को साथ नहीं लेती। यहाँ तक कि मैं अपने भाई को भी साथ नहीं लेती।

'कहाँ हैं तुम्हारे भाई ?

'ग्वालियर गये हैं आज ही।

'कब तक लौटेंगे ?

'चार पाँच दिन में आ जायेंगे।

अधेड़ नटिनी ने कहा 'अच्छा कोई बात नहीं। तुम दोनों अकेली ही चली जाओ पर शिकार मिल जाय तो हम लोगों को न भूल जाना। हमारे पास बहुत बढ़िया चावल और मालवे का गुड़ है। हम तुमको देंगे।

निन्नी ने पूछा 'तुम लोग कहाँ से आ रहे हो ?

उसने उत्तर दिया 'दूर मालवे के एक जंगल से। हम गरीबों का कोई घर नहीं होता। जिस जगह में डेरा डाल दिया वहीं हमारा घर बन जाता है।

लाखी को पिन्नी के वस्त्रों की चमक-दमक और बहुमूल्यता पर आश्चर्य हो रहा था। ये लोग अपने वस्त्रों से बहुत कमा लेते होंगे तभी इनके पास इतने अच्छे कपड़े हैं।

निन्नी बोली, 'तुम्हारे चार सौगातम हम लोग आ गईं—

अधेड़ नटिनी ने टोका 'अच्छा लगे न ? हमारे पास और बहुत हैं। जंगल में से तोड़ते-बीनते आये हैं।

पिल्ली कहती गई,—सेंतमेंत तुम्हारा कुछ भी नहीं लेंगी। जानकर बार कर देंगी तभी तुमसे फल बादाम और गुड़ लेंगी।

पिल्ली लाखी को लेकर खेमे के एक कोने में चली गई।

नटों का सन्तोष और हर्ष फूट पड़ने को हुआ। अधेड़ नटिनी ने होंठ पर उंगली रखकर वर्जित कर दिया।

पिल्ली बोली 'इसको और गाँव वालों को जादू टोने के करतब दिखलाओ।'

अधेड़ नट ने कहा 'धीरे धीरे, सबका सब इकट्ठा नहीं। बड़ी आँख वाला के भाई को आ जाने दो।'

पिल्ली ने बतलाया —'नाम उसका मृगनयनी है भूल गई क्या?'

'कच्ची गोलियाँ नहीं खेली हूँ यह सारी पिल्ली। तू छोकरी ही है अभी, तू भले ही भूल जायगी।' अधेड़ नटिनी ने भर्त्सना की।

'नहीं भूलूँगी' पिल्ली ने आश्वासन दिया।

'यहाँ के लोगों ने जो कपड़े कभी देखे सुने न होंगे तू उनको अपनी के भाई के सामने पहिनियो। और देख उसके सामने घूँघट डालियो तभी वशीकरण कर पावेगी। ऐसी ही अनमनी खड़ी हो जायगी उसके सामने तो कहीं वह बिचक न जावे।'

पिल्ली ने कुछ अकड़ के साथ विवाद किया 'लेकिन तुमने बहुत दिन हुये जब बतलाया था और मैंने देखा भी है कि मर्दों को इसी तरह ज्यादा चालाकी के साथ घुमाया जा सकता है।'

अधेड़ नट ने कहा 'कुछ खिंचाव मुकाव करने से आदमी का मन बढ़ता है। अन्त में उसको लुभाने के लिये ऐसा ही कर फिर जैसा ठीक दिखे वैसा करना। किसी तरह भी उसके भाई को—।' उसने वाक्य पूरा नहीं किया आँख की एक हल्की झपकी से मनोरथ समझा दिया। पिल्ली अपना हठ पर आकर जम पड़ी।

पोटा ने ऊंचे स्वर में अर्वोहिन का समर्थन किया 'समझ के काम करना पिल्ली ! नायकिन ठीक कह रही है।

पिल्ली ने तुरन्त आज्ञाकारिता का भाव ग्रहण किया। वे सब अपने काम में लग गये। चौथा पहर नहीं आने पाया कि उन्होंने लक्कड़ों का मजबूत घेरा बना लिया। उसके भीतर झोपड़े खड़े कर लिये और अपने जानवरों तथा सामान के लिये ठौर कर लिया।

एक घड़ी पीछे निन्नी और लाखी आ गईं। दोनों एक-एक सुअर को टांगे थीं। दोनों छोटे थे किन्तु लाखी वाला कुछ बड़ा था। कमान और तरकस कंधों पर डाले शिकार के खून से भीगी हुई नटों के पास आ खड़ी हुईं। वे सब के सब बाड़े को खोलकर बाहर आ गये। पोटा आतंकित हुआ और अर्वोहिन भी कुछ खिन्न हुई। पिल्ली ने उनके रूप में साकार भीमता देखी।

उन दोनों ने शिकार को जंगल की बेलों से बांध रक्खा था। लाखी के जानवर को निन्नी ने खोलकर नीचे रखवा दिया। अपना बांधे रही।

नटों से उसने कहा 'यह तुम्हारे लिये है। खाते हो न इसको ?

नटों ने हर्ष प्रकट किया। उन लोगों ने बाड़े के भीतर चलने और सीताफल खाने के लिये प्रार्थना की।

निन्नी बोली, 'सीताफल बहुत खा लिये हैं ! फिर कभी देखेंगे। इसके बदले में थोड़ा सा चावल और गुड़ दोगे ? तुमने कहा था।

अर्वोहिन और पिल्ली के मुंह से एक साथ निकला, 'जरूर।

पोटा ने कहा, 'थोड़ा नहीं बहुत। भीतर आओ न।

लाखी बोली 'समय कम है। नदी में पानी पीते हुये घर पहुंचना है। दोनों की उतार करनी है।

अर्वोहिन और पोटा बाड़े के भीतर दौड़ गये और छः सेर चावल तथा एक भेली गुड़ की ले आये।

[१६]

हाथ मुँह धोने और नहाने के उपरान्त लाखी ने घर में चार लकड़ियाँ ढूंढ़ी। उनको गाड़ने के बाद एक रस्सा ले आई।

निन्नी ने कहा उस नट ने जो किया था देखती हूँ मैं भी कर सकती हूँ या नहीं।

'खाना नहीं बनाना है? कब बनाओगी?

तुम बना दो मेरी भली सी निन्नी।

'खा लोगी मेरे हाथ का बनाया हुआ?

आज नहीं तो किसी दिन खाना ही है।

'तो मुझसे ननद कहो एक बार ही कह दो।

ऊँ—ऊँ। बड़ी वैसी हो।

'एक बार कह दो तो रोज खाना बना दिया करूँगी।

'जिसमें मैं निकम्मी हो जाऊँ और तुम मुझसे लड़ा करो।

'अच्छा आज बना दूँगी फिर तुम बना दिया करो। पर एक बार कह दो।

'ननद जी बना दो खाना।

अभी लो भौजी।

वे दोनों एक दूसरे से लिपट कर हँसती रहीं।

निन्नी खाना बनाने लगी। लाखी ने नट के रस्से के तनाव का अनुकरण किया। लकड़ियों को गाड़ कर कस लिया। अभ्यास करने लगी और बार बार गिरने लगी। रस्सा ढीला पड़ गया तो उसको फिर से कस लिया। जब तक निन्नी ने खाना पकाया वह उस अभ्यास में लगन के साथ उलझी रही। अन्त में वह रस्से पर कुछ कदमों के लिये सधने लगी। एक बार चार पाँव डग उस पर चली भी। हर्ष के मारे फूल गई। दौड़कर निन्नी के पास पहुँची।

हाँफती हुई सी बोली — मैं एक पखवारे में रस्से पर चलने लगूँगी। मैं भी यह समझूँगी कि आकाश में चल सकती हूँ।

निन्नी ने बधाई दी — हाँ हाँ क्या कहना है। बड़ा अनूठा काम है न? मैंने चावल पकाये हैं। अपने तो बहुत मोटे थे जिन्हें भैया ले गये हैं। ये बहुत अच्छे हैं। गुड़ भी है खाव तो! भैया जब आवेंगे तब तो पकवान ही करेंगे। आओ गुड़ चावल की बधाई लो।

दोनों ने उस रात साथ बैठकर एक ही बर्तन में खाना खाया। मचान पर पहुँचकर लाखी देर तक सोचते सोचते सो गई। जब सवेरा हो और नटों के डेरों पर पहुँचूँ निन्नी को भी साथ ले जाऊँगी ढोरों को किसी चरवाहे को सौंप दूँगी। निन्नी ज्वार की रखवाली के लिये जागती रही। जब उसको नींद आई तब उसने लाखी को जगा दिया।

सवेरे हाथ मुँह धोने के बाद ढोरों का प्रबन्ध करके और कुछ बासी खा-पीकर नटों के डेरे पर पहुँची। तीर कमठे और छुरे लिये ही थीं।

नटों ने बहुत आव-भगत की। अपड़िम और पिल्ली ने चौकड़े से रिझा दिये।

लाखी ने रस्से का खेल देखने की वांछा प्रकट की। नट ने बाँसों को गुणाकार गाड़कर रस्से को कसकर तान लिया। ढोलको गले में बाँधकर रस्से पर पहुँच गया। पिल्ली एक बहुत रंग-बिरंगी बढ़िया ओढ़नी ओढ़ कर आ गई। पोटा रस्से पर चलने फिरने लगा। पिल्ली हाथ भाव के साथ नाचने-गाने लगी।

निन्नी का मन उस ओढ़नी और रस्से पर के नाच और ढोलकी की धमाधम से उलझा गया। लाखी का मन उस ओढ़नी और नट के आकाश भ्रमण में बँट बँट जाता था। परन्तु उसने अपने मनको एकाग्र करके नट के आकाश भ्रमण की तौल पर अधिक लगाया। नट ने रस्से को जोर के साथ इधर-उधर हिलाते-डुलाते ढोलकी बजाते हुये चलना प्रारम्भ किया। लाखी अचम्भे में डूबने लगी।

निन्नी ने मन में कहा 'इस काम के लिये बहुत अभ्यास चाहिये। पर सीख लेने पर इससे लाभ क्या होगा? यदि सुअर या भैंसे को बर्छी से बेधना मैंने सीख लिया तो रस्से पर इस तरह झूलने से कहीं अच्छा रहेगा।'

नट खेल को समाप्त करके उतर आया।

लाखी के मुँह से अकस्मात् निकला 'क्या मैं भी सीख सकती हूँ इस काम को?'

'जरूर' सब नट-नटियों ने एक साथ कहा।

निन्नी ने देखा कम—जितने नट बेड़े में थे उनमें से कुछ नहीं हैं। जिज्ञासा नहीं हुई। सोचा अपने किसी काम से कहीं चले गये होंगे।

पोटा बोला 'बहुत जल्दी सीख लोगी। तुम्हारी देह बहुत छरेरी है। कुछ ही दिन में सिखला दूंगा। आज से ही शुरू कर दो।

लाखी ने निन्नी की तरफ देखा।

निन्नी ने कहा 'आप एक अरने को मारने की बात सोच रही है। यदि बाहर हाथ लग गया तो और भी अच्छा। अच्छी खाल अच्छे मोल बिक जायगी।

पिल्ली बोली अभी तो दिन भर पड़ा है आओ तब तक कुछ बड़े नगरों की बातें सुनाऊँ।

लाखी सहमत हो गई। निन्नी को भी मानना पड़ा। नट एक जगह सिमट गये। स्त्रियाँ एक स्थान पर इकट्ठी हो गईं। पिल्ली एक झोपड़ी के भीतर उन दोनों को ले गई। अन्य नटनियाँ बाहर बैठ गईं।

पिल्ली ने एक पिटारी में से कुछ बहुमूल्य ओढ़नियाँ निकालीं। एक एक करके दिखलाने लगी और सराहना करने लगी। उन दोनों ने इस तरह के कपड़े कभी नहीं देखे थे। दोनों चाव के साथ देखने-टटोलने और सराहना को सुनने लगीं।

निन्नी ने सोचा 'इन कपड़ों से हमारा तो कोई काम कभी चलता नहीं है। इनको पहिनकर न तो रसोई बनाई जा सकती है, न ढोरों और खेती का काम किया जा सकता है और न शिकार खेली जा सकती है। एक कांटा बीचा या डाल उलझी कि फटकर फुर्र हो जायगी। पहिनकर यदि माई के सामने गई तो कहेंगे मटकिनी है! राम!! राम!!! राम!!!! कितनी लाज-हीन है यह पिस्सी!!!!!

'बहुत दाम होंगे इनके?' लाखी ने देखते-देखते प्रश्न किया।

'अरी हां बहुत। बड़ी अनमोल है।' पिस्सी ने कहा।

'तुमको कैसे मिल गई? किसी ने इनाम में दी है क्या?'

'और क्या? वैसे हम लोग मोल थोड़े ही ले सकते हैं। ये कपड़े तो बड़े-बड़े नगरों में ही मिलते हैं।'

'तुमको कहां मिले थे?'

'मांडू में। रानियों के पहिनने के कपड़े हैं ये। यानी रानियां या हमारी तुम्हारी सरीखी मन वाली ही पहिन सकती हैं इनको। मांडू के राजा को खेल दिखलाया। उन्होंने प्रसन्न होकर इनाम दे दिया।'

पर्वतिन ने बाहर से ही रङ्ग चढ़ाया—'अरी बेटी राजा क्या है मानो इन्द्र है। बहुत सोना चांदी हीरे जवाहिर, मोती हैं उसके पास। बड़े-बड़े महल। वह इसके बोलों को देखकर मट्टू हो गया था।' पिस्सी मटके के साथ हँस पड़ी। लाखी ने भी साथ दिया। निन्नी भी हँसना चाहती थी परन्तु भीतर के किसी झटके से हँसी को होठों पर क्षीण मुस्कान के आकार में संकुचित कर दिया।

पिस्सी बोली 'मेरे मन में तुम दोनों बहिनों के लिये इतना प्यार पसीज उठा है, न जाने क्यों कि चाहती हूं एक-एक दोनों के जामे और पहिनो। मैं तो खेल में नाचने के समय कभी-कभी ही पहिनती हूं सो बहुत सी रक्खी हैं। ले लो एक-एक।

उन दोनों को यह नहीं रुचा। निन्नी को विक्षेप बढ़ा। लाखी उस पात्काय नृत्य को सीखना चाहती थी। इनमें से किसी को भी स्पष्ट नहीं करना चाहती थी।

मुस्कराकर बोली, 'अभी नहीं लेंगी हम। जब कुछ देने योग्य हो जायेंगी तब लेंगी। अभी तो हमारे लिये ये काम की नहीं हैं।

मर्बेड़िन ने पूछा 'तुम्हारा ब्याह हो गया है?

'नहीं' निन्नी ने बिना संकोच के उत्तर दिया।

उसने दूसरा प्रश्न किया 'कहीं सगाई हो गई है?

लाखी को संकोच हुआ। निन्नी ने दृढ़ता के साथ उसके प्रश्न पर प्रश्न किया 'तुमको इससे क्या?

लाखी ने साधने का प्रयत्न किया—'नहीं हुई है।' निन्नी इन्होंने वैसे ही पूछा कोई बात नहीं।

मर्बेड़िन सहारा पाकर बोली 'मरी हाँ। देखो तो तुम दोनों कितनी रूपवती और गोरी नारी हो। जैसे जंगल की रानी हो। तुम्हारी सगाई होगी किसी बड़े राजा के साथ। मैं हाथ देखकर बतला सकती हूँ। ज्योतिषी जो बात नहीं बतला सकते वह हमलोग बतला सकते हैं। जो मन्त्र-तन्त्र कोई नहीं जानता है वह हम जानते हैं। जंगल की जिन जड़ी बूटियों को राजधानियों के बड़े-बड़े वैद्य नहीं जानते उनको हम लोग पहिचानते हैं। काले नागराज से हम कटवा लें तो जड़ी के जोर से और मन्त्र की मार से पलों में विष को दूर करदें।

निन्नी नहीं सहमी परन्तु उत्तर नहीं दे सकी। मुस्कराकर रह गई। लाखी ने अपने हाथ की गदेली पसार दी।

मर्बेड़िन कुछ देर तक रेखाओं को देखती रही। उसने परिणाम सुनाया, 'तुम किसी बड़े सिलेदार को ब्याही जाओगी किसी बड़े ठिकानेदार को।

वे दोनों हँस पड़ीं। अर्बेफ़िन को ज़रा भी संकोच नहीं हुआ। बोली 'देख लेना बहुत जल्दी मेरी बात सच्ची होकर रहेगी। तुम दिखलाओ मृगनयनी अपना हाथ।'

निन्नी संकोच कर रही थी। लाखी ने पकड़ कर उसका हाथ बढ़ा दिया। अर्बेफ़िन ने ध्यान के साथ देखा।

कहा 'तुम तो बेटी बड़ा भारी राज्य भाग्य में लिखाकर चली हो। राजा की नहीं किसी बड़े महाराज की रानी बनोगी। झूठ निकले तो मेरी जीभ काटकर फेंक देना।' अर्बेफ़िन ने साथ ही अपनी जीभ बाहर निकाल कर भीतर करली। जीभ पर काफ़ी मैल जमा था।

वे दोनों उस कौतुक को देखकर हँस पड़ीं।

लाखी ने हँसते-हँसते पूछा 'कहाँ का राज्य मिलेगा इनको ?'

अर्बेफ़िन ने उत्तर दिया 'बेटी बहुत से राज्य आसपास हैं। बिलकुल ठीक इसी घड़ी तो नहीं बतला सकती। परन्तु देवताओं को बलि चढ़ाकर ध्यान करते करते कुछ दिन बाद यह भी बतलाऊँगी। वैसे देखो इतने राज्य तो आस-पास ही हैं—ग्वालियर, कालपी, मालवा मेवाड़ और न जाने कितने। हम लोग सब देशों में घूमा करते हैं। बहुतेरों का तो नाम भी याद नहीं है।'

राज्यों की गिनती की लपेट में उसने मालवा को सावधानी के साथ रक्खा। वे दोनों नहीं समझ पाईं।

अर्बेफ़िन बोली 'अब हम लोग अपना काम देखती हैं, तुम तीनों तब तक अपने मन की बातें कर लो।'

'हम लोग भी दफ़्तूल की तरफ़ जाती हैं।' निन्नी ने कहा।

पिल्ली ने रोका, 'आह, वाह, थोड़ी देर ठहरो। अभी तो बहुत दिन पड़ा हुआ है।'

अर्बेफ़िन अन्य स्त्रियों को लेकर वहाँ से चली गई।

निन्नी ने पूछा 'यह तुम्हारी कौन है ?'

पिल्ली ने बतलाया 'यह हम लोगों की सब कुछ हैं। हमारे गोल की मलकी हैं यह। इन्हीं का हुकुम चलता है।'

'अभी मुखिनी! जो रस्से पर चलते हैं वह होंगे मुखिया?'

'बाहर वालों से वही बात करते हैं, पर हमारे भीतर हुकुम इन्हीं का चलता है। हमारी जात में बूढ़ी पुरानी स्त्रियों की ही चलती है।'

'तुम्हारी कौन हैं यह?'

'हमारी माँ हैं और रस्से पर चलने वाले हमारे काका हैं। हम सब एक ही कुटुम्ब के हैं।'

'तुम्हारा ब्याह हो गया है?'

'अभी नहीं हुआ है। सगाई भी नहीं हुई है। तुम कराओगी अपना ब्याह और यह तुम्हारी बहिन?'

'बहिन नहीं है सखी है।'

'कराओगी ब्याह?'

'हिश्ट!'

'हिश्ट कैसी? मैं कराऊँगी अपना ब्याह। तुम दोनों भी कराओ। जवानी के दिन हैं। यही तो समय खेलने-कूदने और खाने-पीने का है।'

'खाती-पीती भी हूँ और खेलती-कूदती भी हूँ।'

'पर यह सब कोरा और रूखा है, बिना राग-रङ्ग आराम और चैन के। हम लोग तो ऐसे सूखे दूर बैठी कि जैसे नायकिन भी ये तुम्हारे हाथ देखकर बतलाये हैं।'

लाखी बोली 'अभी तो हमको अपने पेट पालने हैं। घर के हमारे बड़े करेंगे यह काम। वह ग्वालियर से आ जायें तब उनसे चर्चा करना।'

निन्नी खड़ी हो गई। लाखी से कहा 'देर हो रही है चलो घर।' वह भी खड़ी हो गई।

पिल्ली ने रोक रखने का प्रयत्न किया।

लाखी बोली 'कल दिन भर रहूँगी। म रस्से का काम सीखूँगी तुम इनको कहानियाँ सुनाना।

निन्नी ने जाते जाते कहा 'यदि कुछ शिकार मिल गया तो तुम्हारे डेरे पर होकर जाऊँगी।

वे दोनों चली गईं। सन्ध्या तक नटों ने उनकी प्रतीक्षा की परन्तु वे नहीं आईं। उनको बहुत भटकने पर भी कोई शिकार नहीं मिला था। जंगल के सीधे मार्ग से घर पहुँच गईं।

[१७]

अटल को ग्वालियर गये आठ दिन के लगभग हो गये थे। दो दिन से निन्नी और लाखी को कुछ चिन्ता रहने लगी थी। दिन में वे नटों के डेरे पर या आखेट के लिये जङ्गल में रहती थीं। संध्या के पहले घर आ जाती थीं। ढोरों की देखभाल और भोजन बनाया जाता और रात में ज्वार की रखाने के लिये मचान पर पहुँच जातीं।

इन दिनों रस्से पर चलने का लाखी ने इतना अभ्यास कर लिया था कि पोटा नट को हँसी आती थी।

सुल्तान का नाम न लेकर पिल्ली और नायकिन ने मालवा की राजधानी माँडू के महलों नगर, दुकानों सम्पत्ति और तड़क-भड़क की उन दोनों के मन पर धाक बिठलाने में कसर नहीं लगाई। इस बीच में निन्नी और लाखी को जङ्गल में कोई ऐसा जानवर नहीं मिला जिसको देकर नटों से वे कोई सामान लेतीं। मुफ्त में वे कुछ लेना नहीं चाहती थीं।

दोनों सन्ध्या के पहले ही उस दिन भी घर आ गईं। ढोरों के बाँधने और चारे का प्रबन्ध कर रही थीं कि अटल आ गया। वह हाथ में बर्छी लिये था पीठ पर तरकस में लोहे के कुछ तीर। नये मोटे गहरे लाल रंग के कपड़े की छोटी-सी पोटली को दूसरी बर्छी पर कन्धे से टाँगे था। नाटी मलमल चौबदार जूतों पर धूल पैर झुके हुये चेहरा घुमा तपा हुआ। आँखों में प्रसन्नतापूर्ण मस्तता जैसे किसी बड़े समाचार को सुनाने के लिये व्यग्र हो। आँगन की एक तरफ उसने एक रस्से को दो दो लकड़ियों के धनुषाकारों पर बँधा हुआ तना पाया। आश्चर्य हुआ।

आह्लाद के स्वर में पुकार लगाई— कहाँ हो री ?

लाखी ने कहा 'आई।'

निन्नी बोली 'भैया!'

दोनों मुस्कराती हुई निकल आईं। अटल ने तपाक के साथ हाथ वाली बर्छी को पटी के बल आँगन में गाड़ दिया और एक हाथ में कन्धे वाली पोटली को ले लिया। दूसरे में दूसरी बर्छी को।

तने हुए रस्से की ओर देखकर हँसते हुये कहा, 'यह क्या खेल है?'

'खेल तो है ही'—निन्नी बोली 'बतलाऊँगी पहले यह कहो कि इतने दिन कहाँ लगा दिये?

'बहुत चिन्ता रही।' लाखी हर्ष को नहीं छिपा पा रही थी।

अटल ने पैर फैलाये 'अरी बड़े-बड़े समाचार हैं। थोड़ी देर में सुनाऊँगा। दोपहर का रक्खा है खाने को कुछ? या सेंतमेंत बतला दूँ?'

अटल पालथी मारकर बैठ गया। चुप्पी साध ली। निन्नी ने उसके हाथ से बर्छी छीन ली। लाखी ने गड़ी हुई बर्छी को उखाड़ लिया।

निन्नी ने आक्षेप किया 'खोल लो लाखी इनकी पीठ पर से तरकस, फिर मैं देखती हूँ इनकी पोटली को। इसी में हैं इनके बड़े-बड़े समाचार जिनकी ठसक के मारे मौनी बाबा बनकर बैठ गये हैं।

झूठ-मूठ का विरोध करते हुए अटल बोला, 'पहले खाना! पहले खाना!! तब तीर-तरकस और पोटली!!! अरेरेरे, सब छीन लिया!!!! सब लूट लिया!!!!!

वे दोनों विनोद में डूबने उतराने लगीं। पोटली को झटपट खोला उसमें एक मोटी लाल धोती और दो चोलियों के मोटी छींट के टुकड़े निकले। उन्हीं में चाँदी की एक पतली हँसुली और चाँदी के दो छल्ले। तरकस को लाखी ने कन्धे पर चढ़ा लिया और बर्छी को हाथ में लिये बड़े चाव के साथ देखने लगी। निन्नी ने अपने गले में हँसुली डाल ली और एक छल्ले को उँगली में डाल लिया और दूसरे को लाखी की उँगली में पहिना दिया। छल्ला लाखी की उँगली में ढीला बैठा परन्तु वह अपनी बर्छी और चोखे के तीरों पर, उस समय अधिक ध्यान दिये थी।

पोटा तुरन्त विनय के साथ बोला —आँख में उसके बोलबोल का लालच और ढिठाई थी —'मैं अभी दिखलाता हूँ। चाहे सारे काम पड़े हैं पर तुमको तमाशा दिखलाऊँगा एक ही नहीं कई तमाशे।

मिल्ली एक बहुत कीमती रंग-बिरंगी और बारीक ओढ़नी ओढ़कर आई। वह मायकिन के पीछे खड़ी होगई। मायकिन ने परिचय दिया इस लड़की की कसरतों को देखो पहले की बलखाती हुई मेंद को भी अपनी कुचालों से भुलवा देगी। देखो इसने अपनी देह को कैसा कमाया है! कैसा सुन्दर बनाया है!! और कैसी सलोनी है यह!!!

मिल्ली एक हलकी सी लोच लेकर मायकिन के पीछे से आगे आगई। वहीं से उसने पटल को अपने अङ्गों को जरा सा लचका कर मोहिक दिखलाया। सिर पर घूंघट को जरा सा बढ़ाया एक क्षण के लिये चितवन घुमाई और सिर नीचा करके उसकी ओर कनखियों देखने लगी। सलज्जता की इस अभिनय को पटल नहीं समझा। कुछ अनोखी सी लगी। परन्तु नितम्ब और छाती के बाल कानों तक खास हो गये। लड़ाम ने उसको देखा परन्तु आँख को जमा न सका। दूसरे नटों की ओर देखने लगा जैसे कोई अचूगा हो परन्तु फिर से मिल्ली को देखने के लिये इच्छा प्रबल हो गई।

पोटा बोला 'मैं रस्से को तान दूं। अभी खेल शुरू होता है।

मायकिन ने मिल्ली को जरा सा और आगे करके कहा 'यह बहुत परभक्ती है, पर कमानियों कुलाचों और रस्से पर नाच दान के समय अपनी कारीगरी में ऐसी मस्त हो जाती है कि अपने को बिलकुल भूल जाती है।

यह सब देखने के लिये पटल के मन में कुलबुली सी मच गई। पोटा रस्से को तानने में लग गया। मायकिन ने मिल्ली को आँख का इशारा किया।

पिल्ली ने ओढ़नी को कस और कन्धे पर लपेट लिया, बिजली की गति वाली आँख की एक कोर अटल पर फेरी और कुलांचें लगाने लगी। अटल ध्यान के साथ उसकी मोचों मरोड़ों कूदफांद और देह की लचकों को देखता गया। उसने किसी भी नर-नारी में इतनी फुर्ती और देह की कमाई नहीं देखी थी।

जैसे ही पोटा ने रस्से को ताना और ढोलकी गले में डालकर रस्से पर चढ़ने को हुआ पिल्ली ने व्यायाम बन्द कर दिया और ओढ़नी को खोलकर ओढ़ने लगी। उस समय भी उसने चितवन और अङ्गों की फड़कन को नाच के झरोखे से अटल के सामने प्रस्तुत किया। पोटा ने रस्से पर विविध गतियों से चलना आरम्भ किया और पिल्ली ने असीम स्वच्छन्दता के साथ नृत्य। अटल का मन पोटा के काम पर अधिक रीझने लगा। पिल्ली ने और भी अधिक प्रयत्न के साथ अटल *का ध्यान आकृष्ट करने की चेष्टाएँ कीं। निन्नी और लाखी पोटा की* गतियों को अधिक चाव से देख रही थीं। पोटा रस्से को झूला सा बना कर, इधर से उधर झूलता रहा और पिल्ली के नृत्य पर ढोलकी की ताल देता रहा।

जब वह खेल को समाप्त करके रस्से पर से उतर आया 'बोला 'बेटी लाखी तुम भी थोड़ा सा अभ्यास करलो।

लाखी पहले लजाई पर फिर निन्नी के कन्धे के सहारे रस्से पर पहुँचकर बैठ गई और चलने के लिये थोड़ी देर काँपती रही। दृढ़ता के साथ खड़ी हुई, कुछ पग स्थिर रही। एक-दो डग चली तौल बिगड़ी और नीचे आ गिरी। पैर में कुछ धमक आई परन्तु उसको दबाने के लिये हँसने लगी।

पिल्ली खिलखिलाकर हँस पड़ी। अटल ने देखा। उसने हँसते हुये थोड़ासा घूँघट डालकर कटाक्ष किया। लाखी ने नहीं देखा परन्तु निन्नी और अटल ने देख लिया। निन्नी बोली 'अभी लाखी चौगान में बर्छी का अभ्यास करेंगी।'

'जोखम तो नहीं है। कहाँ मारी-मारी फिरोगी ?' नायकिन ने कहा।

निन्नी ने आग्रह किया 'अभ्यास अवश्य करना है। पास के किसी बड़े ढेकले के पेड़ पर करूँगी। उसके बाद बड़िया भाई को लेकर शिकार के लिये जंगल में निकल जायँगी।'

'अच्छा।' नायकिन ने मान लिया।

वे दोनों थोड़ी दूर ढेकले के पेड़ पर बर्छी चलाने का अभ्यास करने लगीं। अटल वहीं बैठा रहा।

नायकिन ने उससे कहा 'इस लड़की का खेल तुमको कैसा लगा ?'

'बहुत अच्छा।' अटल बोला।

पिल्ली इठलाती हुई झोपड़ी में भाग गई।

नायकिन ने धीरे से कहा 'तुमको तो यह देखते ही चाहने लगी है।'

'हाँ मां—हूँ!'

'देखो न यह समझ गई मैं क्या कहना चाहती हूँ इसलिये तुरन्त दूर गई। कितनी समझती है!'

अटल को थोड़ी देर ही पहले देखे हुये उसके निर्लज्ज प्रदर्शन का पूरा स्मरण था। 'मुझको चाहती है! चाह कर क्या करेगी? ब्याह करेगी? और लाखी? राम! राम!! राम!!!' उसने सोचा।

नायकिन ने कुछ नहीं कहा। उस दिशा में देखने लगी जिसमें निन्नी और लाखी जाकर बर्छी चलाने का अभ्यास कर रही थी।

नायकिन ने दूसरा पहलू पकड़ा। संकेत से अटल को अपने निकट बुला लिया। पिल्ली झोपड़ी के एक खूँटे के पीछे खड़ी थी।

नायकिन ने कहा, 'इसको देश-देशान्तरों का हाल सुनाओ जब तक वे दोनों यहाँ आती हैं। मांडू, चन्देरी, मन्दसौर कितने बड़े-बड़े और कैसे ठाठ वाले शहर हैं। तुमने कभी पहले देखे!'

अटल ने उत्तर दिया 'मैं तो अपने गाँव और आस-पास के गाँवों को छोड़कर और कहीं कभी भी नहीं गया। अबकी ही बार ग्वालियर गया था। और कुछ नहीं देखा।

पोटा ने देखे और अनदेखे नगरों की कहानी को गहरा रंग-रंगकर सुनाया। अन्त में बोला 'हमारे साथ माँडू चलो तो देखना ग्वालियर उसके सामने रत्ती बराबर भी नहीं बैठेगा।

'निन्नी बाबी को कहाँ छोड़ जाऊँगा?

'साथ लेते चलना। बड़ी अच्छी है। वे भी बिचारी देख-सुन लेंगी कि दुनियाँ में सांक नदी और राई गाँव से भी बहुत बढ़-चढ़कर कुछ है।'

पिल्ली भूसे के पीछे से भौंकी।

नामकिन ने कहा 'यह देखो पिल्ली की बोली में कह रही है कि माँडू चलो। तुमको सभी तरह का सुख मिलेगा हमारे साथ में।

अटल सिकुड़ गया।

पोटा बोला 'इन लड़कियों की गजब की तीरन्दाजी को देखकर माँडू का सुल्तान दाँत तले उँगली दबावेगा और न जाने कितना इनाम न दे देगा।

'माँडू कितनी दूर है? कहाँ होकर जाते हैं?

'बहुत दूर नहीं है और जवान के लिये संसार का कोई भी कोना दूर नहीं होना चाहिये। वैसे एक रास्ता नरवर होकर है। यहाँ से बिना ग्वालियर गये सीधे पहुँच सकते हैं। पच्चीसेक कोस होगा बस।'

'ग्वालियर के राजा शिकार खेलने आ रहे हैं। वे इन लड़कियों की निशानबाजी देखेंगे। माँडू फिर कभी सही।'

ग्वालियर के राजा का नाम और उसके आने का समाचार सुनकर नटों को हड़कम्प हो आया।। पोटा ने चर्चा को टाला।

'हमारे पास कुछ अनमोल साड़ियाँ हैं। इन लड़कियों को देना चाहते हैं।

'दाम कहाँ से लायेंगी देने को ?

'हम तो वैसे ही देना चाहते हैं।

'ये नहीं लेंगी। सेंतमेंत नहीं लेंगी।

'हाँ हाँ ऊँचे मन वाली हैं महलों में रहने के लायक।

'क्या ?'

'मतलब उनका ऐसा ऊँचा मन है जैसा महलों की रहने वाली रानियों का होता है।

'हाँ सो तो है पर झोपड़ों में रहने वाले लोग महलों को क्या जानें ?

'हमारी इन्होंने जो बहुत बड़ी ज्योतिषी हैं इन लड़कियों के हाथ की रेखायें देखी हैं। इनका कहना है कि किसी राजा की रानियाँ बनेंगी।

'अरे वाह ! ऐसा कभी हो सकता है ?

'हो सकता है और होगा। तुम देखोगे कुछ ओढ़नियों को ?'

'अच्छी बात है। यों ही बैठे-बैठे क्या करेंगे।

अटल का कुतूहल जागा। उसके सामने कई चुनरियाँ आ गईं। वह उनको देखने लगा। यदि इनमें से एक को भी लाखी ओढ़े तो कैसी दिखेगी वह ? उसने सोचा। कपड़ों को देखते-देखते उसकी आँख बहुमूल्य सुनहरी गोटे हुये पिछौरी पर गई। उसने फिर आँख चलाई। अटल की आँख के सामने तुरन्त लाखी का चित्र पिछौरी के साथ ही खिंच गया। उसके मनमें ग्लानि आई।

'पानी पी आऊँ नदी में।' अटल ने कहा। नटों का पानी वह नहीं पी सकता था। उठकर नदी की ओर चला गया।

[illegible] और नायकिन की खुसफुस होने लगी।

'ऐसे काम होता नहीं दिखता ।

'पिल्ली पर तुला है वह कुछ ।

'बस यही एक सहारा दीखता है ।

'मांडू से लौट आवें वे लोग तो कुछ और उपाय बनावें ।

'साथ में कुछ ले तो आवें ।

'हाँ पहले कुछ टके और और कुछ अच्छे सवार । शायद जरूरत पड़ जाय ।

'यह काम है बड़े झंझट का । कहीं ग्वालियर का राजा अपने दलबल के साथ न आ धमके ।

'आ भी जाय तो हम लोगों के लगाव को कोई भी नहीं समझ पावेगा ।

'गहनों की बात इस आदमी के सामने न की जाय । लड़कियों को दिखलाये जावें और उनको फुसलाया जाय । लड़कियां अच्छे कपड़ों और कीमती गहनों की शौकीन होती हैं । उनके पीछे अपनी जान तक दे दें । अकेले में समझावें तो शायद कहने में आ जावें । इस आदमी को नहीं बता देंगे । और लड़कियों को लेकर चल देंगे ।

'जरा कठिन काम पड़ता है । पर कुछ उलट-जुगत निकालेंगे । वे दोनों मांडू से लौट आवें तभी कुछ तै हो सकेगा ।

एक घड़ी पीछे अटल लौट आया और उसके बाद लाखी और निन्नी भी आ गईं । वे दोनों अपने अभ्यास पर सन्तुष्ट थीं ।

निन्नी ने प्रफुल्ल स्वर में कहा 'भैया हम लोग बहुत शीघ्र बर्छी का चलाना सीख लेंगी । तीर चलाने से यह कहीं सहज है ।

'फेंककर भी चलाया ?' उसने पूछा ।

लाखी ने उत्तर दिया, 'हाँ, हाँ ।

निन्नी बोली 'भैया तुम बछियों रख लो, हम दोनों शिकार खेलने जाती हैं। कोई बड़ा शिकार मिल गया तो उसके बदले में इन लोगों से लाखी के लिये एक अच्छी चूनरी ले लूंगी।

'एक तुम्हारे लिये भी तो लेनी है।' लाखी ने कहा।

उसी प्रकार की एक चूनरी ओढ़े अटल ने निन्नी को देखा। उसने मुस्कान के साथ तुरन्त अटल पर चितवन चलाई। इस तरह की रंग बिरंगी, फूलदार, बारीक चूनरी ओढ़े हुये लाखी कैसी लगेगी? उसमें से उसका रोम रोम म्यकिसा जैसा इस नटिनी का दिखलाई पड़ रहा है। कैसी आँखें चलाती है! भवों को कितना मटकाती है!! नाचते समय कितनी बेशर्मी दिखलाई थी इसने!!! लाखी इस प्रकार की चूनरी पहिन कर क्या इसी नटिनी सरीखी नहीं दिखेगी? क्या यह कुछ दिखेगी? और निन्नी? मेरी बहिन! इस तरह के कपड़े पहिने यह कैसी दिखलाई पड़ेगी? नटिनी ही न? राम! राम!! राम!!! उसके मन में ग्लानि की कोपलें उठीं।

उसने कहा 'अपने यहाँ ऐसे कपड़े नहीं पहिने जाते।'

नामकिन बोली 'रानियाँ तो पहिनती हैं।'

अटल ने प्रतिवाद किया 'न मैंने कभी देखा और न कह सकता हूँ और न हम लोगों को राजा-रानी बनना है।'

'तो भी एक को तो घर में रख ही लेंगे। अवसर काज पर काम आ सकती है।' निन्नी ने लाखी के भविष्य में होने वाले ब्याह का संकेत किया।

'देखा जायगा',—लाखी ने कहा 'लेंगे तो दो लेंगे एक नहीं ली जायगी।'

वे दोनों शिकार खेलने जंगल में घुस गईं। अटल बछियाँ लिए हुये घर चला आया।

सन्ध्या के पहले नट-शिविर में नौ-दस दिन पहले बाहर गये नट आगये। आते ही उन्होंने सावधानी के साथ अपनी फेंट में से एक पोटली दी और गर्व के संकेत द्वारा प्रकट किया कि साथ में कुछ इससे भी अधिक प्रबल साधन लाये हैं।

पिल्ली और लाखी जंगल में पूर्ववत् भटककर रीते हाथ घर आयीं।

[१९]

दूसरे दिन निन्नी और लाखी कहीं नहीं गईं। घर का काम किया, बड़ियों का अभ्यास और—लाखी ने—रस्से पर चलने का कुछ प्रयत्न। अटल अपने ढोरों के साथ चला गया।

रात को उन दोनों ने एक निश्चय किया।

निन्नी बोली, 'कई दिन से जंगल में कुछ भी नहीं मिल रहा है। जानवरों के खोज तो मिलते हैं, पर दिखलाई उनकी पूछ तक नहीं पड़ती। सवेरे के काम-काज से निबटकर जल्दी जगल में घुस चलें और एकाध कोस आगे बढ़ जावें। देखें शिकार कैसे नहीं मिलता। जानवर नटों के डेरे और हम लोगों के फिर-फिर वहीं घूमने के कारण कुछ दूर हट गये हैं।'

लाखी ने समर्थन किया, 'बिलकुल ठीक। साथ में एक बर्छी भी ले लो तो कैसा रहे?'

निन्नी ने कहा 'मैं ले लूंगी अपनी बर्छी। पीठ पर बांध लूंगी। झाड़ी-झंखाड़ में अड़चन आन पड़ी तो हाथ में ले लूंगी। अवसर आने पर पहले तुम तीर चला देना फिर मैं देखूंगी।'

'ठीक है।' लाखी ने आश्वस्त किया।

सवेरे का काम-काज करके और कुछ खा-पीकर वे दोनों जङ्गल की ओर चलो गईं। गांव से थोड़ी दूर निकल जाने पर उनको पोटा मिला।

नट ने कहा 'तुम दोनों को रात में जानवरों की कोई बोली सुनाई पड़ी?'

'कौन से जानवरों की?'

'नाहरों की डँकार और घुमरों की हुर्र-हुर्र?'

'नहीं तो।'

'ओफ़ ! वही तो बतलाने को आया हूँ। हमारे डेरे से कुछ दूर उधर पीछे की तरफ़ न जानें कितने जानवर ऊधम करते रहे हैं। शायद आपस में लड़ रहे थे।

'या नाहर ने दिखाई दी हो। कई दिन से खेतों के भी पास जानवर नहीं आये। तुम्हारे डेरे से कितनी दूर जान पड़ते थे वे ?

अटल ने अपने अटकल और जानवरों की दिशा को बतलाया। वे दोनों उसी दिशा में उल्लास के साथ चली गईं।

अटल अपने डेरे की तरफ़ बढ़ गया।

निन्नी और लाखी जानवरों के चिह्नों की तलाश में दूर निकल गईं।

बहुत से खोज मिलने शुरू हुये। खोज ऊसर के सूखे और साफ़ स्थानों में दिखलाई पड़ जाते थे परन्तु पथरीली या घास और मकूराव वाली भूमि में बहुत कम। निशान एक-दूसरे पर चढ़े हुए से मालूम पड़ रहे थे और साफ़ समझ में नहीं आरहे थे कि किस जानवर के हैं। कभी अनुमान करती थीं कि हिरनों के हैं कभी भ्रम हो जाता था कि घोड़ों के हैं। घोड़ों के ! घोड़े यहाँ कहाँ से आये ? उन्होंने अपने भ्रम का खण्डन करना चाहा। दोनों एक झाड़ी की ओट में खड़ी हो गईं। खुस फुस करने लगीं।

'सुअर और भैंसे के खुर तो चिरे होते हैं, ये घोड़ों के खोज जान पड़ते हैं। निन्नी बोली।

लाखी ने कहा 'घोड़ों के ही हो सकते हैं परन्तु यहाँ घोड़े कहाँ से आवे ? कहीं से तुर्क न आगये हों।

'निन्नू किसी बड़े दल के नहीं हैं। तुर्कों ने चढ़ाई की होती तो अपने गाँव वालों को बहुत पहले मालूम हो जाता। रात को हर टौरिया पहाड़ पर से आग बलती हुई दिखलाई देती। गाँव-गाँव से लोगों की

रूप-रूप सुनाई पड़ती और एक पञ्चायत का हरकारा दूसरी पञ्चायत को समाचार दौड़कर दे आता। कहीं ऐसा न हो कि राजा मानसिंह के सवार पहले से आ गये हों।

'वाह! पहले यहां आते या गांव में? और फिर यहां ग्वालियर से आने के लिये मार्ग भी नहीं है।'

जंगल में फैला हुआ ऊंचा पहाड़ ढालू जङ्गल। पथरीली जगह नीची खाड़ी समतल भूमि पर सघन विशाल वृक्ष कहीं झुरमुटों में, कहीं बिखरे हुये। गांव लगभग एक कोस की दूरी पर। नटों का डेरा भी दूर था। इन दोनों ने इधर-उधर देखा। कुछ दूरी पर एक टौरिया की ओट में धड़-धड़ का शब्द सुनाई पड़ा।

'कोई जानवर है। स्यात् मरता हो।' निन्नी ने बहुत धीमे स्वर में कहा।

'हां मरता ही होगा सुअर नहीं हो सकता आवाज ऊंची थी।'

उन्होंने कान लगाया परन्तु कुछ सुनाई नहीं पड़ा।

निन्नी ने पीठ पर से बर्छी को खोल लिया।

लाखी ने कहा 'बर्छी मुझको देदो। मारने के लिये तुम्हारे हाथ का तीर अच्छा रहेगा।'

'नहीं।'—निन्नी ने समझाया,—'बर्छी मेरी मुट्ठी और कलाई ज्यादा बल के साथ चला सकेगी और तुम्हारा अच्छा रहेगा। इस टौरिया की ओर चलें जहां से आहट आई है।'

वे दोनों टौरिया की दिशा में चलीं। टौरिया के नीचे पहुंचकर देखा तो टौरिया को इतनी उलझी हुई झाड़ी से भरा हुआ पाया कि उसमें घुसकर जाने की भी गुञ्जाइश न थी। उनको विश्वास था कि टौरिया के ऊपर से आहट नहीं आई, बल्कि पीछे या बगल से। भूमि ऊंची-नीची थी और नाला कुछ अधिक ऊंचा। कहीं जानवर पड़ा हो और उछलकर सिर पर आ

निन्नी प्रण की लज्जा और निर्भयता के हठ के द्वन्द्व में पड़ गई।

उसने गांव के सङ्कोच से थोड़ी देर और खड़े रहने का आग्रह किया। कुछ ही क्षण पीछे उन दोनों को टौरिया के ऊपर से स्पष्ट बोलने का शब्द और मोड़ के पीछे से घोड़ों की टापों की आवाज सुनाई पड़ी। दोनों धक से रह गई।

निन्नी ने एक ही क्षण उपरान्त भौंह सिकोड़ी होंठ चबाये और लाखी की मुट्ठी में दाबकर कहा। तीर को पकड़े लाखी का हाथ कांपने लगा। होंठ उसके हिल रहे थे। धीरे कांपते हुये स्वर में बोली 'पीछे हटकर ओट ले लो। सवार आरहे हैं।'

निन्नी के भी कान ने धोखा नहीं खाया था। आस-पास कोई अच्छी ओट का सहारा न देखकर वह लाखी के साथ पीछे को मुड़ी। लौटकर देखा तो सिरे की मोड़ पर दो घोड़ों के धूमर दिखलाई पड़े। पहाड़ी पर चढ़ जाने के लिये सीधे भर का भी मार्ग दिखलाई नहीं पड़ रहा था। जहां से आई थीं उसी रास्ते से जाने में छिपाव की गुंजाइश नहीं के बराबर थी। पहाड़ी के समानान्तर वाली ढलान में कुछ दूरी पर पेड़ों की एक झुरमुट थी। वे दोनों उसी दिशा में मुड़ीं। परन्तु इस ओट के पीछे नहीं पहुँच पाईं। शस्त्र-सज्जित चार सवार सिरे की पीछे की मोड़ से उस स्थान पर आगये जहां से वे लौट पड़ी थीं। वे दोनों एक छोटी सी झाड़ी के पीछे दुबकने का प्रयास करने लगीं।

चार सवारों में से जो आगे था चिल्लाया 'घबराओ मत गांव की नारियो! हम तुमको खुश करने के लिये ही आये हैं। चलो हमारे साथ।'

कलेजे की धक-धक के साथ निन्नी खड़ी हो गई।

उसके मुंह से फटे स्वर में निकला 'कौन हो तुम?'

जवाब के बाद ही निन्नी के कलेजे की धक-धक बन्द हो गई और अपने शिकार का सफल इतिहास उसकी स्मृति में बिजली की तरह कौंध गया।

लाखी भी खड़ी हो गई।

'कहाँ चलें तुम्हारे साथ ?' लाखी बोली। स्वर निष्कम्प ऊँचा और पैना था। होंठ सूखे।

सवार लोहे की जाली का कवच पहिने हुये थे, शिरस्त्राण पर साफा बाँधे थे। उनकी आँखों की जगह केवल बड़े गोल छेद दिखलाई पड़ रहे थे। सवारों ने कोई जवाब नहीं दिया। आगे बढ़ आये। उनके निकट आकर थम गये।

आगे वाले सवार ने कहा 'एक एक घोड़े की पीठ पर आकर दोनों बैठ जाओ। कूँटे से तुमको कस लिया जायगा। गिरने का कोई डर नहीं रहेगा। ऐसी जगह ले चलेंगे जहाँ जिन्दगी भर गुलछर्रे उड़ाओगी। निकल आओ झाड़ी में से यहाँ।

सवार घोड़े पर से उतर पड़ा। कन्धे पर तीरों का तरकस और कमान कसे था। कमर में तलवार लम्बी शमशीर। उन दोनों की तरफ़ बढ़ा। उसके पीछे दूसरा सवार भी घोड़े पर से उतर कर बढ़ा। घोड़ों को दोनों ने छोड़ दिया था। घोड़े घास पर मुँह करने लगे। बाकी दो सवार आरूढ़ रहे।

निन्नी ने तीखे पैने स्वर में रोका 'वहीं खड़े रहो! हमको क्यों घेरते हो ?

'शुरू-शुरू में आज-कल इसी तरह भड़कती-उछलती हैं फिर अपने लगती हैं। हुकुम की तामील के लिये आये हैं हम लोग। घोड़ों पर सवार हो जाओ इसके बाद तुम्हारे भी हुकुम के सामने सिर झुकायेंगे। वह बोला।

'चुप !' निन्नी कड़की, जैसे बिजली तड़क गई हो। सवार ने अपने पैदल साथी को लाखी के पकड़ने का इशारा किया और स्वयं आगे का लपककर झपटकर निन्नी की बगल पर आया।

उसने ठट्ठा मारकर कहा 'अच्छा! यहीं मिले हो!! और तीर कमान!!! कबूल है कस दो बाहीं। तुम्हारा—आपका नाम मृगनयनी है?

जाकर उन्होंने बर्छी और तीरों को टोला। सहसा धीर धर आयी। घर पहुँच कर अब उनको डर लगा। घर में जैसे कोई बड़ा अजगर हो जैसे वहाँ कोई आने की टोह रहा हो जैसे वे निरस्त्र हों निस्सहाय। घर की टटिया बन्द कर लेने पर उनको और भी डर लगा। मिन्नी ने टटिया खोल दी। घर के बाहर आकर इधर-उधर देखने लगी।

लाखी बोली, 'उन्होंने बड़ी देर लगाई। ढोरों को लिये न जाने कहाँ डोल रहे होंगे।

मिन्नी ने कहा 'यही मैं सोच रही थी। चाहती हूँ हम सब व्यालू करके मचान पर चल दें।

थोड़ी देर में संध्या हुई। गांव वाले अपने-अपने ढोरे ले कर आ गये। दूर से उनके शब्द को सुनकर मिन्नी को भास हुआ जैसे कई घुड़सवार दौड़ते चले आते हों। लाखी बड़ी पीछे अटल भी अपने ढोरों सहित आ गया। जैसे ये दोनों उसके लिए आँखें बिछाये बैठी हों।

मिन्नी बोली, 'कहाँ थे अभी तक बड़ी देर लगाई।'

अटल को अचरज हुआ 'देर लगाई! पशुओं को पानी पिला कर लौटने का तो समय ही यह है। क्यों, क्या बात है?

लाखी ने कहा 'हम दोनों को भ्रम रहा था जैसे कुसमय हो गया हो।

पशुओं को सार में बांधने के बाद अटल को उन्होंने पूरा वृत्तान्त सुनाया। अटल को विश्वास नहीं हो रहा था। अन्त में मानना पड़ा।

बोला 'तुर्कों की कोई छोटी सी ही टुकड़ी है। बहुत होते तो तुम दोनों घिरकर मारी जातीं। तुमको पकड़कर तो वे ले नहीं जा सकते थे। आज मेरे साथ तीर और बर्छे सार्थक हुये। हमारे तोमर राजा ने चम्बल और यमुना की सीमाओं और घाट घाटियों पर मोर्चे बांध रक्खे हैं। उनके बीच में होकर चार छः का ही निकल जाना सहज हो सकता है। कोई

बड़ी टुकड़ी या सेना बिना बड़ी लड़ाई और मारकाट के यहाँ तक नहीं आ सकती । चिन्ता मत करो । रात में मचान पर हम दोनों रहेंगे । दोनों को खाना मैं पायता पहुँगा । कल से इतनी दूर शिकार खेलने मत आया करो । बस । फसल कटने को आ गई है । अनाज गाहकर गढ़ में रख लें फिर कोई बात नहीं ।

दूसरे दिन सबेरे मचान पर से घर आने के बाद थोड़ी ही देर हुई थी कि पान्ना आया । उसकी आँखों की ढिठाई में ओछबीन नहीं थी । पुत लियों के घुमाव-फिराव के अन्तरों में कुछ भय सा था ।

आदर सूचक प्रणाम के बाद बोला इन बेटियों को कल कुछ शिकार मिला था क्या ? मिला हो तो थोड़ा हमको देदो ।

अटल ने अभिमान के साथ कहा 'शिकार नहीं मिला कुछ चोर मिले थे सो इन्होंने उनको मार भगाया ।

चोर ! ओ भगवान !! ओ भाट के बटौरिया देवता !!! ओ गाँव ता !!!! हम लोग यहाँ सूने में अकेले पड़े हैं । क्या करें ? नट ने कातुरता प्रकट की ।

अटल बोला 'तुम तो कई हो । तुम्हारे पास हथियार भी हैं ।

नट ने भय के घसे स्वर में कहा 'हमारे पास कुछ कपड़े हैं । पावन और गुड़ भी थोड़ा सा है । कुछ और सामान है । गाँव की पञ्च मत और पटेल कहें तो हम लोग गाँव के पास ही कहीं अपना डेरा डाल लें ।

कोई बाधा नहीं करेगा । थोड़ा सा सोचकर उसी अभिमान के स्वर में अटल ने कहा ।

नट प्रसन्नता प्रकट करता हुआ वहाँ से अपने डेरे को चला गया । धीरे से उसने मार्गक्रम से कहा 'हमारी सांठ-गांठ का उनको पता नहीं है । थोड़े दिन गाँव के पास ही रहकर कोई और क्रिया करनी पड़ेगी ।

सन्ध्या के पहले उन्होंने अपना शिविर गाँव के निकट खड़ा कर लिया ।

[१०]

वज्र-मुष्टि में बर्छी की मूठ को पकड़ कर नोक से कवच को झन-झन के साथ छेदा और चोर को धराशायी कर दिया। दो दिन के ही अभ्यास में कितना सफल प्रबल सीखा हुआ प्रहार रहा!! दूर दूर तक कहीं भी कोई सहायता प्राप्य नहीं रोने-चीखने तक की भी कोई सम्भावना नहीं!!! कोई और स्त्रियाँ ऐसी परिस्थिति में पड़ी होतीं तो डाकू उनको उठा ले जाते और उनके सतीत्व को उजाड़ देते!!!! निन्नी के हृदय के एक कोने में अभिमान थाप-थाप पर रहा था। परन्तु वे तुर्क रहे होंगे। आगे अनेकों को साथ लायेंगे। तब क्या होगा? यह डर निन्नी के अभिमान को दबा-दबा डालता था।

लाखी ने अपने ऊपर आते हुये उस नकाबपोश का वेध अटारी की ओट लेकर, क्षण भर में निशाना बाँधकर किया। चोर को दूसरे तीर से छेद डाला उसी पर चढ़ाकर तो वह तुर्क भगा ले जाना चाहता था। परन्तु क्या उस समय इतना सोचा था? कुछ भी याद नहीं आता कैसे क्या हो गया। परन्तु हो गया। गाँव की स्त्रियों में गाँव के पुरुषों के सामने कैसे बतलाया जाय? बात चारों तरफ फैलेगी। यदि तुर्कों की फ़ौज की फ़ौज चढ़ दौड़ी और लूटी, पशु और घर मिटा दिये तो लोग कहेंगे इन लड़कियों ने ही सब सत्यनाश खड़ा करवाया—लाखी ने सोचा।

उन दोनों ने अपने पराक्रम की कथा को सिवाय अटल के और किसी को नहीं सुनाया। अटल से अनुरोध किया कि वह किसी को उन सवारों के मार डालने का हाल न बतलावे।

अटल के अभिमान ने कथा को पहला रूप दिया—लड़कियों ने चोरों को मार भगाया। दूसरा रूप—चोरों के पास हथियार न थे वे घोड़ों पर सवार थे मार खाकर भागे। तीसरा रूप—चोर तुर्क थे या मन्दसौर के कोई पठान लूटने मारने को आये थे कि इन विकट लड़कियों ने मार

मचाया। बोला स्वर—'हम तुर्कों या पठानों को तीरों से घर दिया वे
तीरों को ही ले जा सके। मार डालने की बात किसी से नहीं कही और
न चोरी का अभिप्राय बतलाया कि वे इन लड़कियों का ही उठा लाने
को भाग ये।

परन्तु गाँव वालों को चोरी के अभिप्राय के समझने में लग भर का
भी विलम्ब नहीं हुआ। उनको शंका होगई कि फिर कोई बड़ा हमला
होता है और फिर वन-कन्दराओं में मरने-खपने या अधमरे हो जाने की
बारी आती है। राजपूतों का परस्पर युद्ध तो था ही नहीं जिसमें सतो
गाँव और स्त्री की इज्जत नहीं बिगाड़ी जा सकती थी।

दूसरे-तीसरे ही दिन मिट्टी भीलों और ढोरों के चराने वाले ने दो
मरे हुये मनुष्यों और एक मरे घोड़े का पता दिया। भटों ने अपने अन्वेषण
अनुभवान द्वारा उनका समर्थन किया। कवच भिलम और मृत तुर्कों
के हथियार भी लाकर गाँव वालों को दिखला दिये। लाशों पर और जो
कुछ पाया हो उसको अपने डेरे में रख लिया।

गाँव की जन-संख्या अल्प थी। थोड़े से नटों के आजाने से गाँव
की चिन्ता कम नहीं हुई। नटों की जाति उनका व्यवसाय किसी भी
गाँव के अंग या अंश न होना उस गाँव में उनको हिलामिला नहीं
सकता था। लाखी निन्नी और अटल को नटों का अधिक सम्पर्क प्राप्त
था इसलिये वे उनको अपने से उतना ज्यादा अलग नहीं समझते थे
परन्तु गाँव की चिन्ता या भय की अवहेलना नहीं कर सकते थे।

आक्रमण के भय का शमन केवल एक ही उपाय द्वारा हो सकता
था—ग्वालियर के राजा की सहायता।

गाँव वाले पुजारी के पास पहुँचे।

ग्वाला। एक गाँव वाले ने कातर स्वर में कहा 'हम किसान लोग
किसी से नहीं लड़ते। लड़ाई राजपूतों तुर्कों और पठानों का काम है
परन्तु गाँव की दो लड़कियाँ कुछ घायल हैं। इनके तीरों से दो तुर्क या
पठान अपने जङ्गल में मारे गये हैं—

अटल ने तुरन्त टोका 'बाबा वे डाकू इन दोनों को जबरदस्ती उठा ले जाना चाहते थे। हथियार न उठातीं तो क्या करतीं? अपनी लाज खो देतीं? पुरखों की दुहाई देतीं?'

गाँव वाला बोला 'ऐसे ही छोकरा बोलता है। मुझको बात कर लेने दे।'

अटल मुँह बिचका कर चुप रहा।

गाँव वाला कहता गया 'घोड़ों की टापों के चिन्हों से जान पड़ता है कि वे सब बहुत से थे। लड़कियाँ कुछ चार बनमाती हैं पर इतने अचरज थे कि दो को मरा छोड़कर बाकी जहाँ से आये थे वहीं पहुँच गये। अब वे लायेंगे अपने साथ न जाने कितनों को। यदि आगये तो न तो फसल बचेगी न ढोर और न हम लोगों के प्राण। आप ग्वालियर जाकर राजा से कहिये।'

'ग्वालियर होकर ही अभी तो हम लोग लौटे हैं। राजा ने फिर से वचन दिया है कि चार छः दिन में आयेंगे।' पुजारी ने कुछ निराश स्वर में कहा।

गाँव वालों ने प्रार्थना की कि एक बार और कष्ट करो। किसी भी बहाने हो राजा को अपने साथ ले लिवा लाओ। गाँव का एक बूढ़ा बोला, 'पुजारी देवता अबकी बार मन्दिर को और तुमको सिखरी फसल से दूना चढ़ायेंगे हम गाँव वाले।'

पुजारी को भविष्य बुरा नहीं लगा परन्तु वर्तमान ने क्षणिक ग्लानि डाल दी। मुसकराया। मुसकान में होठों के एक कोने पर छोटा सा तिरछापन आ गया।

अटल ने तुरन्त कहा 'पुजारी महाराज को सोम-आसव पिलवाते हो जो संसार को छोड़े हुये इस वृक्ष के मन्दिर में अपने पोथी पत्रों समेत पड़े रहते हैं! यह किसके लिए? क्या हमारे अनाज की चढ़ोती के लिये?

पुजारी को अटल की बात अच्छी नहीं लगी की भी उसने चाटुकारी परन्तु पुजारी को गड़ गई—मन पर उसका प्रतिक्रम छूट गया समाज की बड़ोसी के लोभ में यहाँ पड़े रहते हो। परन्तु उसने अपनी मुस्कान को नहीं छोड़ा।

बोला 'फिर से आता हूँ। आशा है कि अबकी बार सिखाकर ही आऊँगा और बिना विलम्ब के आऊँगा।

अटल ने विनय की 'मैं भी साथ चलूँ ?

पुजारी ने रूखे स्वर में अस्वीकार किया 'नहीं, मैं अकेला ही आऊँगा। दो तीन दिन बाद। एक पाठ को पूरा करते ही चल दूगा।

गाँव वाले आशा और उत्साह के साथ लौट आये। नटों ने विशेष उत्साह प्रकट किया। परन्तु सोचा टिके रहें या राजा के आने के पहले कहीं खिसक जायें।

लाखी और अटल ने टिके रहने और राजा के सामने अपने खेल दिखलाने का आग्रह किया।

गाँव वाले फ़सल काटने पर जुट पड़े। पकने में थोड़ी सी कसर थी परन्तु वे और अधिक नहीं ठहरना चाहते थे। अटल ने भी काटा। सबने पास-पास खलिहानों में रखली। अबकी बार खलिहान जंगल में नहीं बनाये। अटल ने निन्नी और लाखी को जङ्गल में जाने से रोक दिया। वे दोनों गाँव के पास के पलाश वृक्षों पर बर्छी चलाने का अभ्यास करने लगीं। गाँव वालों को अब उनका यह अभ्यास ज्यादा खटकने लगा।

स्त्रियाँ चाहती थीं, दोनों कहीं टल जाय तो अच्छा। सब सोचते थे पागल हो गई हैं—बिलकुल गोंड़ भीलनी नहीं तो क्या ऊँची जाति की लड़कियों में ऐसे कुलक्षण होते हैं।

गाँव वालों की वृत्ति अब दोनों से छिपी नहीं रही। एक दिन अटल खाना खाकर खलिहान में चला गया। वे दोनों हथियार लेकर खलिहान

वे कुछ ही दूर बर्छी चलाने के अभ्यास के लिये निकटवर्ती पलाश वृक्ष समूह के नीचे पहुँच गईं। बर्छियों को पेड़ से टिकाकर छाया में बैठ गईं।

लाखी ने कहा 'यदि हम लोग हथियार चलाना न जानती होतीं तो वे लोग क्या हमको छोड़ देते? हमारा सर्वनाश हो जाता तो गाँव वाले क्या करते? क्या कहते?

'रोते कलपते और क्या करते? निन्नी बोली।

स्यात रोते भी नहीं। हमारे भाग्य को दो चार ब लिया देकर अपने अपने काम में लग जाते।

इन लोगों की समझ में यह क्यों नहीं आता कि हम दोनों गाँव में न होतीं तो इनकी सारी फ़सल को जङ्गली जानवर चौपट कर जाते और ये चार तुर्क गाँव की सारी स्त्रियों को नष्टभ्रष्ट कर जाते?

मुझको एक संदेह है निन्नी—ये लोग हम दोनों को पकड़ने आये थे।

'क्यों?

क्योंकि तुम्हारे गोरेपन की, तुम्हारी आँखों की, तुम्हारी छवि की चारों दिशाओं में कीर्ति फैल गई है।

'दुर पगली! तुम कुछ कम सलोनी हो?

हूँ या नहीं हूँ—दर्पण आरसी तो अपने पास है नहीं। पर मेरा कहना ठीक है कि वे हम दोनों के पकड़ने के लिये ही आये थे। यहाँ से ग्वालियर चल देना अच्छा होगा।

'फिर साँक नदी, जङ्गल, शिकार और खेत? ये वहाँ कहाँ मिलेंगे?

'एक और कारण है। तुमने सुना है या नहीं? सुना होगा।

नहीं तो क्या बात है?

एक स्त्री ने मुझसे ठठोली की थी—तुमको गर्भ रह गया है।

'ऐं ! क्या है ऐसा कुछ ?

'अरी हट !'

वैसे ही क्वार को घर में नाहीं तुम्हारा ब्याह रचूंगी। नटों से नोकझोंक इसीलिये लेनी है।

'गांव वाले नहीं होने देंगे।

'पुजारी को कुछ मनाज दे दिलाकर साथ लेंगे।

'देखो।

'और किसी से कही यह बात ?

'और तो किसी से नहीं कहा। पर दूसरी स्त्रियां भी भनभनाई सी रहती हैं मानो मैं कुजात हो गई हूँ।

'तुमको जो कुजात कहे वह कुजात।

'अभी कहा तो नहीं है परन्तु डर है कहीं कह न उठें।

'तो कहीं भी जायेंगे सभी जगह एसी ही कहा सुनी और बराई होगी।

'बाहर अपने को गूजरी कह उठूंगी।

'अरी वाह! डर काहे का है ? क्यों डरें ? कोई पाप नहीं हो का गया। पुजारी बाबा कथा-कहानियों में सुनाया करते हैं। ब्याह के बाद तो गूजरी हो ही जामोगी। मैंने और भैया ने तो ब्याह होने के पहले ही तुम्हारा अपना चौका एक कर लिया है।

गांव वाले गांव में रहने नहीं देंगे। जाति का दण्ड बहुत कठोर होता है।

'तब कहीं बाहर चल देंगे। इतनी दूर जहां कहीं इस गांव वालों की कांव कांव सुनाई ही न पड़े।

'इन नटों को भी एक भ्याव है। किसी गांव में नहीं रहते घूमते फिरते बने रहते हैं और मौज करते हैं।

कर जावेंगे ? किसी तरह इस लड़ाई से मेरा सिर छूट जाय तो बड़ी बात हो। यह खतम हो जावे तो नसीरुद्दीन सुल्तान बनेगा। क्यों न अभी से उसकी पीर मनाने लगूं ? मगर इससे धोखा पूरे तब तो। वैसे इस तरह कभी पहले नहीं बिगड़े। शायद फिर मुहब्बत मिहरबानी करने लगें। देखूंगा। मटरू सोच रहा था।

सुल्तान बोला 'मेवाड़ में नकली राना ऊदा और असली राना रायमल का किस्सा तो खतम हो गया है लेकिन मेवाड़ में कुछ कमजोरी अब भी है। मगर बघर्रा वहां उलझा रहा तो हमको ग्वालियर की लड़ाई में सुबीता रहेगा। हम मेवाड़ को किसी तरह की भी मदद नहीं देंगे क्योंकि पिछली मर्तबा राना फौज लेकर आया और बघर्रा से बिना लड़े ही लौट गये। वैसे भी फिलहाल में दो मोर्चों पर लड़ाई नहीं लड़ूंगा। एक ग्वालियर ही काफी ठीक रहेगा। क्या कहते हो ?

मटरू ने सुल्तान को फिर बदला हुआ पाया परन्तु वह अपनी पिछली गलती को दुहराना नहीं चाहता था।

बोला 'यही ठीक है जहांपनाह।

'अच्छा ग्वालियर की चढ़ाई के लिये यह मौसम मजेदार है। तुम्हें भी पास होशियारी के साथ खबर भेज देना। जो कुछ मैंने कहा है होकर रहे।'

'जहांपनाह।

[२२]

दोपहरी के समय को छोड़कर दिन में राजा मानसिंह किसी न किसी काम में व्यस्त रहता था। लोगों से मिलने का समय नौ बजे से बारह बजे तक। न्याय का शासन तीसरे पहर की अन्तिम घड़ियों में। चौथे पहर के आधे भाग में सेना की तैयारी और अश्वारोहण दिन के पहले पहर की तरह। रात के पहले पहर में भोजन और राज्य-व्यवस्था की चर्चा, दूसरे पहर में सङ्गीत। यह कार्य क्रम गर्मी की ऋतु में कुछ घट बढ़ जाता था।

तीसरे पहर की समाप्ति में कुछ विलम्ब था। मानसिंह अपने भवन के सभा-मण्डप में सिंहासन पर बैठा था। सभा में मन्त्री, सचिव इत्यादि यथास्थान थे। उसके कुछ निकट एक नया भूपति खड़ा था। नाम निहालसिंह। निहालसिंह अट्ठाईस-तीस वर्ष का युवा था। छरेरी पठीली देह। सहसा अग्रवर्ती नराए नामी योधा। मानसिंह ने इसको कुछ समय पहले ही अर्जित किया था। कुशल उपयुक्त साथियों को ढूँढ़ निकालने की मानसिंह में प्रतिभा थी।

'यदि दिल्ली के सुल्तान ने जौनपुर पर फिर आक्रमण किया तो जौनपुर सुल्तान की सहायता करनी पड़ेगी। आक्रमण अनिवार्य सा जान पड़ता है।' राजा मानसिंह ने मन्त्री से कहा।

मन्त्री बोला 'परन्तु यदि मालवा के सुल्तान ने हमारे ऊपर चढ़ाई करदी महाराज तो हम जौनपुर की सहायता नहीं कर सकेंगे। यदि हमारे ऊपर पहले आक्रमण होगया तो क्या जौनपुर सुल्तान हमारी सहायता करेगा? जौनपुर का सुल्तान बंगाल की ओर चला गया था सम्भव है फिर लौट पड़ा हो।'

'परन्तु मालवा के सुल्तान की सन्धि मेवाड़ के साथ है और मेवाड़ हमारा मान्य है। फिर मालवा की अस्मत को गुजरात के बघर्रा

से चैन कहाँ है? वह हमारे ऊपर हमला करने का अवकाश कैसे पायगा? मानसिंह ने पूछा।

मन्त्री ने बेधड़क उत्तर दिया 'महाराज गयासुद्दीन सबकी और प्रबल है। हम लोग उसके विग्रह का विश्वास तो कर सकते हैं परन्तु सन्धियों का भरोसा नहीं कर सकते।

राजा ने हँसकर कहा 'हमारी की हुई सन्धियों के सम्बन्ध में भी लोग इसी प्रकार का व्यङ्ग कर सकते हैं।

राजा ने निहाल की ओर स्नेह की दृष्टि फेरी। वह तुरन्त बोला 'हम मालवा और दिल्ली दोनों से लड़ लेंगे। अपने दिये हुये वचन का पालन करेंगे।

सचिव ने कहा और यदि मालवा के गयासुद्दीन खिलजी ने हम पर पहले धावा कर दिया और जौनपुर दिल्ली के बादशाह के डर के मारे फिर बंगाल भाग गया और हम खिलजी से लड़ाई में उलझ गये उसी समय बादशाह ने जौनपुर पर आक्रमण कर दिया तब हम यदि जौनपुर की सहायता न करें तो दिये हुये वचन को भङ्ग करने का अपराध हमारे सिर आयगा या जौनपुर के सिर जायगा?

निहालसिंह उत्साह के साथ बोला 'हम दोनों मोर्चों पर युद्ध कर लेंगे।

मानसिंह ने निर्णय किया ऐसी परिस्थिति में हम दो मोर्चों पर लड़कर अपने बल को क्षीण नहीं करेंगे।

मन्त्री और सचिव ने समर्थन किया। निहालसिंह निर्णय को समझने की कोशिश करने लगा।

मन्त्री ने कहा 'एक छोटा सा काम और रह गया है। बैजू नायक को आज सवेरे ही विदाई दी जानी थी। उसने नहीं ली। कुछ सनकी सा है। कहता है ग्वालियर में ही रहूँगा। हमारे चित्त में इतना उत्साह

नहीं है कि एक ऐसे गायक और उसके साथ वाली वैसी गायिका और चित्रकारिणी को मासिक वेतन पर रख सकें। आजकल तो हमको अपनी सब बचत सेना पर खर्च करनी पड़ रही है।

राजा हँसकर बोला मेरे चिट्ठे में कमी करके उन दोनों कलाकारों का वेतन बाँध लो। राज्य है काहे के लिये? प्रजा पालन कला की रक्षा और बढ़ोत्तरी के ही लिये न? प्रजा और कला दोनों के लिये हमें अपना प्राण देने के लिये तैयार रहना चाहिये। इन दोनों की रक्षा का ही तो दूसरा नाम धर्म का पालन है। कहाँ है आचार्य विजय जङ्गम?

मन्त्री ने उत्तर दिया 'किले के भीतर जो सरोवर बन रहा है उसकी मजदूरी से नहीं लौटे हैं।

विजय को 'जानक'—शारीरिक श्रम में इतना विश्वास था कि अपना पसीना बिना बहाये वह किसी से कभी कुछ नहीं लेता था।

'कितना बड़ा कलाकार और पण्डित है वह! राज्य से कुछ नहीं लेता। बीणा सुनाने के बदले में एक कौड़ी नहीं लेता। कहता है अपनी रक्षा के पलटे में बीणा को सुना देता हूं। परन्तु काम की कमी को शारीरिक श्रम से पूरा करता है। एक दो बरस क्षीण हो जायँगे। इसकी आजीविका का प्रबन्ध तो मन्त्रीजी राज्य की ही ओर से होना चाहिये।' राजा ने कहा।

मन्त्री सहमत नहीं हुआ—'महाराज आपके और मन्त्रियों के चिट्ठे में कुछ कटौती करके ही प्रबन्ध किया जा सकेगा वैसे तो नहीं हो सकता।'

'करो। अपने चिट्ठे के सम्बन्ध में मैंने पहले ही कह दिया है।' राजा ने मुस्कराकर कहा।

सिंहासिंह की समझ में राजा के दोनों निर्णय आ आये। उसने सीधा सिर कर लिया।

द्वारपाल ने आकर सूचना दी 'राई गाँव से पुजारी जी आये हैं। दर्शन करना चाहते हैं।

राजा ने अनुमति दी। द्वारपाल पुजारी को ले गया। परस्पर अभिवादन के बाद पुजारी से राजा ने कुशलवार्ता पूछी।

पुजारी ने कहा 'श्रीमान् ने कई बार वचन दिया कि राई आकर शिकार खेलेंगे। अब तो आप लेकर ही टर्रा ग्वालियर से।

क्षमा करना शास्त्री जी राज्य की व्यवस्था को बिलकुल ठीक अवस्था में स्थापित करने की धुन ने शिकार को भुला सा दिया है। शीघ्र ही आने का उपाय करूँगा। वैसे भी राज्यभर का एक दौरा तो आठों बारहों में लगाना करना ही है, राई भी आऊँगा अर्थात् यदि इस बीच में किसी शत्रु से अटक न गई और युद्ध में उलझ न जाना पड़ा तो।'

'युद्ध तो महाराज अपनामें भर कर आ रहा है।

कैसे? कहाँ से शास्त्री जी?

'अभी तो उसकी भूमिका हमारे गाँव में उतर से आई है। चाहे अभी वह अन्तर्वेद से हो या मालवा से।'

'पहेली सी बूझ रहे हो! स्पष्ट कहो शास्त्री जी।

पुजारी ने विस्तार के साथ पूरी कथा सुना दी।

मन्त्री ने कहा महाराज ये लोग अन्तर्वेद से नहीं आये होंगे। कालपी और इटावा अपने मित्रों के हाथ में हैं। ये तुर्क या पठान सवार मालवा के खिलजी के सिवाय और किसी के नहीं हो सकते।

बात को निखारने के लिये मानसिंह बोला 'इस बुरे काल में चार लुटेरों का कहीं से भी आ जाना सम्भव है।

पुजारी ने विनय की,—'महाराज, लुटेरे तो कहीं से भी आ सकते हैं परन्तु इन सुन्दर लड़कियों का अपहरण करने के किसी शक्तिशाली की आज्ञा पर ही आये होंगे यहाँ।'

राजा ने पुजारी पर प्रश्न-सूचक दृष्टि की मानो उन लड़कियों के सम्बन्ध में कुछ और जानना चाहता हो।

पुजारी ने बतलाया — मैंने पिछले जेठ के महीने में और पीछे भी उन लड़कियों के लक्ष्य-वेध की कुशलता के विषय में कुछ कहा था। उनकी सुन्दरता के विषय में या तो कवि ही कुछ कह सकता है या कुशल चित्रकार और मैं इनमें से एक भी नहीं।

राजा समझ गया और समझने के साथ ही कुछ लजा भी गया।

निहालसिंह बोला 'महाराज का राई गाँव पधारना आवश्यक हो गया है। जनता के मनमें विश्वास का संचार हो जायगा शत्रु सुनकर और जायगा और महाराज नाहर, अरना इत्यादि का शिकार भी खेल लेंगे।

राजा ने अपना निश्चय सुनाया —'मैं कल ही राई की ओर यात्रा करूँगा। निहालसिंह अपने दल को साथ ले चलेगा। खाने-पीने की सामग्री की पूरी व्यवस्था यहीं से कर ले चलो।

[२१]

एक पहर दिन नहीं चढ़ा था जब गाँव के अधिकांश स्त्री-पुरुष खलिहानों में पहुँच गये । एकाध में दाँय भी होने लगी थी । घटस न बैल नाधाये । मिसी और सावी मुट्ठों को पछेलने-बटोरने में लग गईं । पुजारी हाँफता हुआ सा तेजी के साथ आया । दूर से ही चिल्लाया 'अरे ओ ! अरे ओरे !! चल आओ चल आओ !!! महाराज की सवारी आ रही है !!!!'

खलिहानों में जो लोग काम कर रहे थे सब थम गये । पुजारी ने पुकार को दुहराया । स्त्री-पुरुष सरपट उसके पास आ गये । घेर लिया । उनके चेहरों पर उत्सुकता और आह्लाद की रेखायें फैल गईं ।

'कब ?' उन लोगों ने पूछा ।

'अरे अभी आ रहे हैं । शीघ्र आ रहे हैं । बस आते ही होंगे । बन्द करो काम । बड़े भाग्य से राजा के दर्शन होते हैं ।'

'धन्य हो पुजारी बाबा आप ! हमारा तो भाग्य जाग गया । अब काम नहीं करेंगे । चलो रे सब दर्शन करने ।'

'अरे ऐसे नहीं । मूर्ख हो न ! जल्दी से नहाओ । थालियों में दीपक सजाओ । जब महाराज आवें तब उनकी आरती उतारो । हमने मन्दिर के पास गेंदा के कुछ पौध लगाये हैं । उनमें से कुछ फूल ले लो । अच्छा नहीं । मिसी और सावों की थालियों के लिये हम तोड़ देंगे फूल । नहीं तो तुम लोग सारे पौधे ही उखाड़कर फेंक दोगे ।'

'हाँ कपासिये घी के दिये, पर थालियाँ तो सबके पास हैं ही नहीं । कठुल्ले चाहे सबके यहाँ निकल आवें ।'

'अच्छा जिसके पास जो निकल आवे उसी में घी के दिये रखकर आरती उतारना । राजा भगवान का अवतार या पूर्वजन्म का योगी होता

निन्नी फिर सोचने लगी। लाखी उसका मुँह ताकने लगी।

निन्नी बोली 'नटों से कपड़े या गहने उधार लेकर नहीं पहिनना चाहिये। भाग्य में होंगे तो अपने पसीने की कमाई के पहिनेंगे।'

'वे लोग देने को तैयार हैं। कहते थे। पिछली बढ़िया कपड़े पहिनकर खड़ी होगी आरती उतारने और हम दोनों के होवें ये चिथड़े-गुदड़े से।'

'अपने ऐसे ही अच्छे। कपड़ों पर तो राजा इनाम देगा नहीं। नट, नट-बेड़िये ही हैं और हम लोग हम लोग।'

'तुम्हारी तो सनक है जब जैसी उमड़ पड़े।'

'तो क्या नटनी बन जावें? गाँव-डँगर में ये जो तितलियाँ उड़ रही हैं क्या वैसी बनावट बनावें? राजा से क्या बात छिपी रहेगी कि पिछली नटिनी है? राजा हम दोनों को दुखिनी बेटिनी समझ बैठेगा।'

'तो तुम मेरे लिये उनसे उस तरह की एक ओढ़नी मोल लेने की बात क्यों कहती थी?'

'अरी पगली कुछ भाग गई क्या? ब्याह के समय पहिनाऊँगी तुम को उस तरह की ओढ़नी। पर इस अवसर पर न तो मैं पहिनूँगी और न तुमको पहिनने दूँगी। राजा को अपना जौहर दिखलावेंगी तीर कमान से।'

निन्नी ने उसके गाल मीड़ दिये। लाखी के चेहरे की दमदमाहट बढ़ गई।

गोधन करते करते और थालियों कचुल्लों में दीपक सजाते सजाते दो घड़ियाँ निकल गईं। पुरुष गाँव के बाहर इकट्ठे हो गये। स्त्रियाँ घरों से बाहर नहीं निकली थीं। अटल दौड़ता हुआ आया। टपरिया के बाहर से ही पुकार लगाई—'अरी चलो री सवारी आ गई।'

उन दोनों ने दीपक जला लिये। हाथ और अञ्चल की ओट में थालियों को लिये गाँव बाहर आकर खड़ी हो गईं। और स्त्रियाँ भी आ गईं। पुरुष एक तरफ खड़े हो गये स्त्रियाँ एक तरफ। इन्हीं में नट बर्ग

पुजारी ने नहीं बतला पाया। नटी की नायकिन तुरन्त आगे आकर बोली 'महाराजाधिराज यह नट जात की है। मेरी लड़की। कुंआरी है अभी। ऐसे खेल करती है कि जिसका ठिकाना नहीं। हम लोग अपने खेल महाराज को दिखलावेंगे।

उसकी आरती को स्वीकार करके मानसिंह नटों के समीप एक क्षण भी नहीं ठहरा।

कहा 'तुम लोगों का भी खेल देखूंगा, मैं यहां कई दिन ठहरूंगा।'

पुजारी ने विनय की 'अब महाराज मन्दिर की ओर पधारना होवे। वहीं बरगद के नीचे डेरा लगेगा न ?

'हां शास्त्री जी उसी के लगभग।' राजा ने उत्तर दिया।

राजा कुछ देर वहीं ठहरना चाहता था परन्तु ठहरने के लिये कोई कारण नहीं था। स्त्रियां भौंड़ी तरह एक ग्राम्य गीत गा रही थीं। लाखी का स्वर उस गीत में कुछ मिठास डाल रहा था। निन्नी नहीं गा रही थी।

राजा ने कहा 'यहां की स्त्रियां तो शास्त्री जी खूब गाती हैं।' राजा ठिठका।

पुजारी ने मुँहफोड़ की लगाई, 'महाराज मन्दिर को सिधारें, वे सब वहीं आकर और भी गीत सुनावेंगी।

राजा को वहां से चलना पड़ा। चलते-चलते उसने एक बार फिर मृगनयनी की ओर आंख फेरी। निन्नी ने कनखियों देखकर आंख नीची करली।

मन्दिर पहुंचकर राजा रुक गया। खण्डित मूर्तियां इधर-उधर बिखरी हुई पड़ी थीं। उमंग की बिजली सी कौंध गई। मानो खण्डित मूर्तियों ने चुपचाप उसकी तीव्र भर्त्सना की हो।

दृढ़ स्वर में बोला 'शास्त्री जी मैं इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करूंगा और—

उसकी स्मृति में दिल्ली की कुतुब मीनार के सामने गड़ी हुई लोहे की भारी-भरकम पताका पर अनङ्गपाल तोमर प्रथम का खुदवाया हुआ वचन उभर आया—मैं इस भूमि को फिर उन्हें अर्थों में आर्यावर्त बनवाऊँगा।

मानसिंह हिल गया। उसका गला भर आया। नियन्त्रण किया।

गला साफ करके धीरे से उसने कहा 'मन्दिर को शीघ्र बनवा दूँगा।'

'महाराज की जय हो। महाराज सब कुछ कर सकेंगे।' पुजारी ने आशीर्वाद दिया।

राजा की आँख एक यक्षिणी की खण्डित मूर्ति पर गई। आँख की दिशा में ध्यान उचटा।

राजा पुजारी से पूछना चाहता था 'क्या स्त्रियाँ यहाँ गीत गाने आवेंगी।' परन्तु साहस नहीं हुआ। शिविर की योजना में लग गया।

भटस इत्यादि पुरुष राजा के शिविर का तमाशा—हाथी घोड़े, सैनिक इत्यादि—देखने के लिये मन्दिर की ओर चले गये। स्त्रियाँ अपने अपने घर लौट आईं।

निन्नी और लाखी प्रसन्न थीं। निन्नी अपने किसी मनचाहे स्पन्दन को दबाकर लाखी को और अधिक प्रसन्न करने का प्रयास कर रही थी।

निन्नी ने लाखी के कन्धे से झूलकर कहा 'मुझको तो जकड़ सी लग गई थी तुमने बहुत अच्छा गाया।'

'तुम तो ध्यान में मग्न हो गई थीं। सोच रही होगी हमारे बरसाये हुये फूल को राजा ने धूल में से उठाकर माथे पर चढ़ा लिया।'

'अरी तुम्हारे फूल को भी पगड़ी में खोंस लेते, पर ऊपर से वह मूहर पिल्ली आ गई न मेंढकी की तरह फुदकती हुई। छाती को कितनी निर्लज्जता के साथ उचका रही थी! उस पर वह चूनरी ऐसी लगती थी जैसे काली के ढेंढ़ पर सिन्दूर की बिन्दी!!'

'अरी तो मेरा कच्चा क्यों खोले डालती है?'—तुमको निगाह नीची किये थी, तुमने यह सब कहाँ से देख लिया?

'आँखें नीची थीं, पर मुँदी तो थी नहीं।

और कनखियों भी कुछ देखा!

'तुम तो ऐसी पुतलियाँ घुमा-फिराकर देख रही थी जैसे राजा को बरौनियों और पलकों के भीतर भर लेने के लिये अँगूठों पर तुल गई हो।

'हूँ! हूँ!! हूँ!!! हूँ!!!! उनको बरौनियों से बाँधकर पलकों के भीतर तो तुमने भरा है। मैं यहाँ तो सब परख रही थी मेरी ननदबाई। आँखों में भर कर फिर कहाँ ले गईं उनको?' लाखी ने निन्नी के हृदय पर उँगली रक्खी।

'अरी कैसी है तू! कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली!!

'हाँ हाँ हाँ माँ। शास्त्री जी धन्य है यह गाँव जहाँ सब गुणों से सम्पन्न मृगनयनी जैसी सुन्दर रचना हो!! पुजारी बाबा ने टीप लगाई—महाराजाधिराज मृगनयनी कुमारी कन्या है!!!

निन्नी ने उसका मुँह बन्द करने के लिये झपटकर अपनी हथेली बढ़ाई। लाखी हँसती हुई भागी। निवारण करती हुई बोली 'दूर खड़ी रहो। पहले मेरी बात पूरी सुन लो। अपनी भुजाओं के बल भरोसे बहुत न रहना हाँ भाँ।

निन्नी ने अपने होठों पर बार-बार आने वाली कम्पनमयी मुस्कान को ओढ़नी के छोर से नाक तक छिपा लिया परन्तु आँखें छल करती रहीं।

लाखी उसी प्रकार कहती रही 'पुजारी ने बतलाया—अभी तक कुमारी है बिचारी! हूँ! हूँ!! हूँ!!! बिचारी ने नयन उठाये और किसी को कोई सन्देसा भेज दिया। राजा की आँखों ने उस सन्देसे को अपनी

पलकों पर ले लिया। और फिर इन्होंने उनको और उन्होंने इनको को कुछ गुपचुप समाचार दिया-लिया सो लाखी ने अपनी आँखें फाड़-फाड़ कर देख लिया! और उन कनखियों ने कसर पूरी कर दी। अरी निन्नी मुझसे बने मत।

'ओ हो हो हो! तुम कहीं की बड़ी कवि हो न! तुम्हें तो अपनी बीती याती है तो तुमने बखान डाली। सच बतलाओ लाखी भैया के तुम्हारे बीच में कुछ इसी तरह का चलता रहा है न?

'अरी वाह! कैसी टाली अपनी करतूत मेरे सिर पर!!

'असम्भव बातें क्यों करती हो लाखी? कहाँ गरीब किसान कहाँ इतना बड़ा राजा!

'किसान ही तो राजा को बनाता है और फिर गूजर तोमरों से किस बात में कम है।

'भाग्य भी तो कुछ होता है न?

'सो उस नटिनी ने हाथ की रेखायें देखकर पहले ही बतला दिया।

'रेखायें तो तुम्हारी भी देखी थीं!

'अब तो मुझको विश्वास हो गया। तुम्हारे भैया भी कुछ होकर रहेंगे।'

'अभी से ऐसी बड़ी-बड़ी आशायें मत बाँधो।

लाखी दौड़ कर निन्नी के गले से लिपट गई। गद्गद् हो गई। रो पड़ी।

हिलकियों में लाखी यदि काली माई को अपना सिर भेंट करके तुम को ग्वालियर की रानी बनवा सकूँ तो कभी नहीं भिझकूँगी।

[१४]

दूसरे दिन मानसिंह ने शिकार का आयोजन किया। आसपास के गांवों से हँकाई करने वाले आ गये। शिकार का खेल और राजा का सङ्ग। वे सब मोद-मग्न थे। अटल भी शिकार में शामिल होना चाहता था परन्तु हँकैया बनकर नहीं। इससे भी बढ़कर उसकी कामना थी निन्नी और लाखी के लक्ष्यवेध-परीक्षण की। राजा से कैसे कहे? अपनी कामना प्रकट करने के लिये उसके पास तक पहुँचे ही कैसे? राजा ने निन्नी की कितनी प्रशंसा की थी! उसके नाते गांव को धन्य कहा था!! तो उनकी परीक्षा कब हो? पाड़े और गैंडों को फोड़ने की जगह यदि निन्नी और लाखी कहीं अरने या नाहर को फोड़ दें तो क्या बात! और यदि मैं भी एकाध शिकारा सुघर अपने तीर से पटक दूं तब तो सभी कुछ बन जाय!! उसने ताका। पुजारी से कहा। विनय सी की। सोचने लगा। उसी समय पुजारी के पास निहालसिंह आया। मटिये रंग की शिकारी-पोशाक पहिने था।

आते ही बोला 'महाराज की आज्ञा है कि उन लड़कियों के लक्ष्यवेध की परीक्षा आज ही इसी शिकार में ली जाय।

पुजारी अपने महत्व को बढ़ाने के लिये और अधिक विचार मग्न दिखलाई पड़ा। अटल कुछ कहने के लिये फड़फड़ाने सा लगा। निहाल सिंह व्यग्र था। पुजारी न तोलते हुये सा कहा 'लड़कियां हो हैं। शिकार तो उन्होंने खेली है परन्तु ऐसी बड़ी हँकाई में जोखिम बहुत है।

निहालसिंह ने व्यग्रता प्रकट की मैं क्या करूं। आप चलकर महाराज को समझा दें। वैसे उन्होंने कहा है कि लड़कियों को कहीं उनके निकट ही किसी मचान पर बिठला दिया जायगा जहां से वे बिना किसी संकट के तीर चला सकें। शीघ्र निश्चय करिये।

पुजारी के पहले ही अटल ने निश्चय व्यक्त किया 'वे नहीं डरतीं। बीहड़ भयंकर जङ्गल में पैदल घूमती हैं। उन्हें मचान-वचान नहीं चाहिये।

'तुम कौन हो जी ?' निहाल ने पूछा।

'मृगनयनी का भाई अटलसिंह मेरा नाम है। मैं भी शिकार खेलना चाहता हूँ।' अटल ने उत्तर दिया।

निहाल उपहास में हँसा। सोचा यह शिकार खेलेगा ! राजा और सामन्तों की बराबरी करना चाहता है !!

पुजारी को कहना पड़ा 'अच्छी बात है। जाओ अटल, दोनों को यहीं भेज दो। यहाँ से मचान पर चली जायेंगी। कहियो महाराज से राजजी कि वे अभी आती हैं। पर उनके पास भूमिया रंग के कपड़े नहीं हैं।'

'भूमिये रङ्ग के तो मेरे पास भी नहीं हैं।' अटल ने चलते चलते अपनी टीप जमाई।

निहाल मुस्कराकर 'अच्छा' कहते हुये चला गया। अटल गाँव की ओर सरपट भागा। निन्नी और लाखी घर पर थीं।

'अपने हथियार संभालो ! जल्दी करो !! राजा ने शिकार के लिये बुलाया है !!! तुम्हारे निशाने की परीक्षा होनी है !!!! हथियारों को माँजकर चमकदार बनाओ !!!!!' अटल ने कहा।

मन की हिलोर को दबाकर निन्नी बोली 'हथियार तो चोखे रखे हैं।'

लाखी कमरा देकर मुस्कराई। निन्नी पर जरा सी आँख चलाई। निन्नी दूसरी तरफ देखती हुई हथियार उठाने घर में चली गई।

अटल ने लाखी से कहा 'तुम्हें भी बुलाया है। खड़ी क्यों रह गई ? मुझे भी जाना है।'

लाखी भी घर में चली गई। निन्नी को पकड़कर झँझोड़ डाला।

धीरे से बोली 'कहो कैसी रही ?'

'अरी कोरी परीक्षा है। क्यों मेरी देह को नोचे डाल रही है ?'

'कोरी परीक्षा नहीं है। भाग्य जागने वाला है।

'यदि परीक्षा में खरी न उतरी ? बाण चूक गये तो ?

'तुम हारोगी तो भी जीतोगी । पर हारोगी नहीं ।

'बड़ी ज्योतिषिन हो न ! उधर ज्योतिषी जी आँगन में खड़े हैं बड़ी उतावली में !!

'बकबक करी तो यो ठूंस दूंगी मुँह में ।

'बड़ी हैं न सो करके मनचाहा उत्पात । लो अब राम का नाम लेकर उठाओ और बांधो अपने-अपने हथियार । वहीं भी रखलेंगी ।

उन्होंने अपने अपने हथियार उठाये और बांधे । लाल ओढ़नी को चोटी पर कसते हुये सिर को ढक लिया । मोठों वाले अटरङ्ग लहंगे की कछन लगाली । द्वार पर घोड़ों की टापों की आहट मिली । निन्नी ने मुस्कान को दबाया । लाखी हँस पड़ी । बोली 'देखा ? राजा का मन नहीं है सवार भेजा है ।

निन्नी घूँसा तानकर उस पर झपटी और रुक गई । कहा 'तुम बहुत बुरी हो ।

दोनों अपनी अपनी बर्छियां लिये हुये आँगन में आ गईं । अटल मुगिया रङ्ग के कपड़ों की एक पोटली लिये हुये बाहर से आया । वह अपनी उमङ्ग भरी मुस्कानों को सँभाल ही नहीं पा रहा था ।

बोला 'शिकार में लाल कपड़े नहीं पहिने जाते । राजा ने ये भेजे हैं । पहिनो इन्हें जल्दी ।

निन्नी ने बिना किसी मुस्कान के कहा 'अभी तक तो मैंने लाल कपड़े पहिने ही शिकार खेली है ।

'अब इन्हें पहिनो नहीं तो राजा को बुरा लगेगा । लाखी हँसती हुई बोली ।

अटल ने पोटली खोली । अच्छे मुलाम की दो चोलियां दो छोटे-छोटे पजामे और एक लम्बा कुर्ता ।

अटल ने कहा 'चोलियाँ तुम्हारे लिये हैं कुर्ता मेरे लिये।

अटल ने कुर्ता पहिन लिया। निन्नी और लाखी घर में जाकर चोलियाँ पहिनने लगीं।

लाखी बोली, 'राजा ने धूपिया रंग की चोली क्यों नहीं भेजी ?

निन्नी की आँख पर जरा सा ताव आया। फिर हँस पड़ी।

'राजा चोली पहिनता होता तो भेज देता।' निन्नी ने कहा।

वे दोनों नये कपड़े पहिनकर अटल के सामने आईं।

अटल बोला अब जची ! और देखो मैं भी ठीक रहा।

निन्नी ने मुड़ासे को उतार कर हाथ में ले लिया।

'अच्छा नहीं लगता। उसने कहा।

'क्यों नहीं लगेगा ? लाखी बोली 'पुरुषों का सा काम करने चलीं तो पुरुष जैसा बनना पड़ेगा। रक्खो मुड़ासा सिर पर।

निन्नी ने वैसे ही रख लिया। आरसी भी नहीं जिसमें अपने चेहरे मोहरे को देखती। उल्टा पुल्टा इधर-बिखरा सा हो गया। केशों की एक लट माथे भौंह छोड़ी एक दो कानों पर लटक आईं।

वे दोनों नये कपड़े पहिनकर अटल के साथ मन्दिर जा पहुँचीं। वहाँ से सिपाही उन तीनों को बरगद से थोड़ी दूर राजा के शिविर के पास ले गया। राजा चल पड़ने के लिये तैयार था। हाँका करने वाले अपने ठिकानों के लिये पहले ही जा चुके थे।

राजा ने उन दोनों की वेष-भूषा को उत्सुकता के साथ देखा। निन्नी के मुड़ासे पर आँख जा अटकी। निन्नी ने एक बार आँख उठाकर नीची करली। दूसरी दिशा में फेरकर देखने लगी।

राजा ने पूछा 'घोड़े पर चढ़ना जानती हो ?

'नहीं। उत्तर मिला।

अच्छा चलो। मैं भी पैदल ही चलूँगा।

निन्नी लाखी की ओर देखने लगी।

वे सब जङ्गल में मचान के लिये चल पड़े।

घने पहाड़ी जङ्गल के एक ठौर पर मानसिंह अपने कुछ साथियों सहित रुक गया। मार्गदर्शक साथ था। मचान कहाँ कहाँ है किसको कहाँ बैठना है शीघ्र निश्चित हो गया।

मानसिंह ने मार्ग प्रदर्शक से कहा 'इन दोनों को मेरे निकट वाले मचान पर बिठला दो।

अटल के लिये भी स्थान तै होगया था।

निन्नी बोली 'सब ठौर मेरे देखे हुये हैं।

'सारा जंगल! मानसिंह ने मुस्कराहट के साथ आश्चर्य प्रकट किया।

लाखी ने कहा 'हाँ महाराज।

'तो भी —मानसिंह ने मार्गदर्शक को सङ्केत किया 'तुम इनको मचान पर सुरक्षित बिठला देना।

वे दोनों मार्गदर्शक के साथ चली गईं। मानसिंह अपने मचान पर जा बैठा। और लोग अपने अपने मचान पर सतर्कता के साथ जा डटे।

जब निन्नी और लाखी निश्चित स्थान पर पहुँची मार्गदर्शक ने मचान पर चढ़ जाने के लिये संकेत किया।

निन्नी ने धुसफुस स्वर में अस्वीकार किया 'मचान पर नहीं बैठेंगी। यहाँ से तीर के लिये निशाना अच्छा नहीं बैठता।

'राजा की आज्ञा है।

राजा की आज्ञा से ही तो नाहर और अरना बिंध कर गिर नहीं जावेगा।

'जीवे प्राणों की जोखो है।

'चिन्ता मत करो। तुम जाओ।'

'राजा रुष्ट होंगे।'

'किससे? मुझसे? चिन्ता मत करो।'

'तुम लोगों से नहीं मुझ से। आफ़त में पड़ जाऊँगा।'

'डरो मत। चले जाओ किसी पेड़ पर। हँकाई होने वाली होगी।'

मार्ग-दर्शक अपना माथा टटोलता हुआ चला गया और थोड़ी दूर एक बड़े झाड़ पर चढ़ गया।

'अब?' लाखी ने धीरे से पूछा।

निन्नी ने उत्तर दिया 'यह पेड़ घात के लिये बहुत अच्छा है। बर्छियाँ इससे टिकाओ। कमान के ऊपर तीर चढ़ाओ। तरकस में दो दो तीन तीन झटपट निकाल लेने के लिये तैयार रक्खो। एक दिशा में मुँह करके तुम खड़ी हो जाओ दूसरी में मैं। आड़े-ओटे अच्छी है ही। जानवर जब बहुत निकट आ जावेगा, तब कहीं देख पावेगा।'

'देखें आज कुछ निकलता है ढाँग में से या नहीं।'

'अवश्य निकलेगा। कई दिन से हम लोग जंगल में आई नहीं हैं। उस पर हो रही है बड़ी भारी हँकाई। शिकार की कमी रह ही नहीं सकती।'

'यह सुनो क्या बज रहा है?'

'हाँका शुरू हो गया है। सचेत हो जाओ।'

दूर से ढोल की आवाज सुनाई पड़ी। दोनों सतर्क हो गईं।

हाँके वालों ने काफ़ी दूरी से जङ्गल को घेरकर हँकाई की। हाँकने वालों की संख्या बड़ी थी इसलिये एक बड़े क्षेत्र के पहाड़ और झाड़ी को ढङ्ग से घेरने में सुविधा पड़ी।

मचान दूर दूर तक लगे हुये थे और इतने थोड़े-थोड़े अन्तर पर कि छोटा सा भी जानवर निकले तो दिख जाय।

नाहर भालू, अरने भैंसे सुअर इत्यादि सभी भयंकर पशु ढोलों और रमतूलों की तुमुल ध्वनि के कारण अपने अपने ठियों पर क्षुब्ध हो होकर हिले डुले और इधर उधर जहां तहां होकर उनको निकास के जाना चाहते थे निकासन सब।

निन्नी और लाखी के निकट से सब से पहले मोरें भरभराती हुई निकलीं फिर लोमड़ी। इसके अनन्तर कुछ समय तक कुछ नहीं आया। हांकने वालों के बाजों और हल्ले-गुल्ले का शब्द एक बड़ा घेरा डालता हुआ सा धीरे धीरे निकट आता हुआ सुनाई पड़ता था। कभी किसी दिशा में अधिक सिमटा हुआ कभी किसी में बिखरा हुआ सा।

एक दिशा से नाहर के गर्जने की आवाज़ सुनाई दी। लाखी ने बगल से निन्नी का हाथ कोंच कर संकेत किया। निन्नी ने संकेत से ही उसको जवाब दिया—तैयार हूं।

नाहर दूर वाले किसी मचान से निकला था। उसको तीर लगा और वह घायल होकर झाड़ी में जा गिरा। उसका गर्जन वहां से आ रहा था।

एकाएक लाखी के सामने से खड़खड़ाहट की आहट आई। निन्नी ने मुड़कर देखा। दोनों ने कमानों पर तीर चढ़ा लिये। बड़े-बड़े चीतलों का एक झुण्ड आया। निन्नी ने तीर चलाने का निषेध किया। चीतल भागते हुये निकल गये।

क्यों? लाखी ने धीरे से पूछा।

इन पर नहीं। नाहर या अरने पर। निन्नी ने धीरे से उत्तर दिया।

हांका होता चला आ रहा था। थोड़ी देर तक उनके पास से कुछ नहीं निकला—सिवाय दो तीन बन-बिलावों के।

बन-बिलावों के पीछे फिर खड़खड़ाहट का शब्द हुआ। उन दोनों ने फिर तीर चढ़ाये। अबकी बार सांभरों का झुण्ड था। निन्नी ने फिर मना कर दिया—

'इस पर भी नहीं।

साँभरों का झुण्ड भाग गया। दूसरी दिशा के किसी मचान वाले ने उस झुण्ड पर तीर चलाया। गिरने की आवाज आई।

'यदि अब कोई न आया तो निशाना लगाने को कुछ भी नहीं मिलेगा।' लाखी ने धीमे क्षुब्ध स्वर में कहा।

निन्नी चुप रही।

किसी ओर मचान से फिर गरज सुनाई पड़ी। निन्नी ने सोचा 'यह तेंदुवे की बोली हो सकती है।'

थोड़ी देर तक इन लोगों के सामने या निकट से कुछ भी नहीं निकला। कमानों पर तीर सुभियाये हुये विलम्ब हो गया। कन्धों में थकावट और पीड़ा कसक देने लगी। हाथ नीचे करके सुस्ताने लगीं।

उसी समय निन्नी को अपने सामने की झाड़ी के पीछे पत्तों के दबने की भुरभुराहट सुनाई पड़ी। झाड़ी के झोंके में होकर आँख गड़ाई। परछाहीं सी जान पड़ी। परन्तु साफ़ नहीं दिखलाई पड़ा।

मानसिंह के मचान की दिशा से किसी जानवर के गिरने और खुरों को समेटने फटकने की आवाज आई।

निन्नी के सामने वाली झाड़ी के पीछे से एक दबी हुई छोटी हुंकार सुनाई पड़ी। निन्नी ने डोरी पर तीर चढ़ा लिया। लाखी ने भी मुड़कर देखा।

एक क्षण उपरान्त ही पूरी लम्बाई चौड़ाई वाला भरा-पूरा नाहर मानसिंह के मचान की दिशा में गर्दन जरा सी मोड़ कर देखते हुये आता दिखलाई पड़ा। निन्नी ने तुरन्त गर्दन का निशाना बाँधा और पूरी शक्ति के साथ डोरी को खींचकर तीर छोड़ दिया। अविलम्ब दूसरा चढ़ा लिया।

नाहर की गर्दन में तीर बैठ गया। नाहर ने तड़प और हुंकार के साथ ऊपर को उछाल भरी और जिस ठौर से उछला था उसी पर गिर कर अपने बड़े नाखूनों से धरती खोद-खादकर धूल उड़ाने लगा। तीसरा

हुंकारें तो निकाल ही रहा था। लाखी उस पर तीर छोड़ना चाहती थी। निन्नी ने रोक दिया। नाहर अन्तिम सांसें लेने लगा। लाखी ने हर्षोन्मत्त होकर निन्नी के छूटे हुये कपोल की चुटकी लेने के लिये हाथ बढ़ाया परन्तु हाथ इतना कांप रहा था कि चुटकी में गले के ऊपर का ही कपड़ा दबा पाया।

मानसिंह ने अपने मचान पर से नाहर की दबी हुंकारों को सुना। उसने सुअर पर तीर चलाया था। वह मर चुका था। मानसिंह मचान पर से उतर कर यहां आना चाहता था परन्तु उसको विश्वास था कि निन्नी और लाखी का मचान पेड़ की इतनी ऊंचाई पर बंधा होगा कि वे संकट में पड़ ही नहीं सकतीं।

थोड़ी देर बाद नाहर समाप्त हो गया। हांका बढ़ता आ रहा था।

लाखी के सामने कुछ दूरी से लड़खड़ और जोर की सांस का शब्द सुनाई पड़ा। लाखी तयार हो गई। नाहर पर एक दृष्टि डालकर निन्नी ने भी मुड़कर तीर संभाला। कमान पर तीर चढ़ाया ही था कि एक बड़ा पूरा अरना भैंसा फुसकारें मारता हुआ सामने से छोटी छोटी झाड़ी को रौंदता कुचलता आ गया। लाखी ने सिर का निशाना लेकर तीर छोड़ा कोई दूसरा निशाना ठीक बैठता ही नहीं था। तीर अरने के माथ पर लगा और थोड़ा सा धस गया। अरने ने दोनों को देख लिया। झपटा।

जब तक लाखी दूसरा तीर चलावे निन्नी ने अरने के मस्तक के बीचोंबीच का निशाना लेकर तीर छोड़ दिया। तीर अपने निशाने पर तो लगा परन्तु इतनी जल्दी में चलाया गया था कि पूरी शक्ति का लेकर न छूट सका। माथे की ऊपरी हड्डी की एक तह को ही फोड़ सका। ठठ कर रह गया। अरने ने जोर की डिड़कार लगाई और उनकी ओर पूंछ उठाये हुये धाया। लाखी ने दूसरा तीर छोड़ा। तीर ने उसके नथने को ही फोड़ पाया। अरना थोड़ा सा हिचका। परन्तु अन्तर इतना कम रह

गया था कि तरकस में से तीर निकाल कर प्रत्यञ्चा पर नहीं चढ़ाया जा सकता था। अरने की बड़ी-बड़ी लाल आँखों से अङ्गारे से छूट रहे थे और फुफकार में से फेन उड़ रहा था।

निन्नी ने कमान को एक ओर फेंककर बर्छी उठाई और अरने की दिशा में सीधी की ही थी कि वह लपका। निन्नी पेड़ से एक पग आगे बढ़ आई। लाखी ने अग्रम से कमान की डोरी पर तीर चढ़ाया परन्तु छोड़ नहीं पाया।

सिर को थोड़ा सा नीचा किये हुये उन दोनों को अपने माथे और सींगों की बाढ़ से पीसकर फेंक देने के लिये अरना और बढ़ा। उन दोनों का कचूमर निकलने के लिये एक क्षण ही और रह गया था कि निन्नी ने पूरे बल और वेग के साथ अरने के माथे पर बर्छी ठोक दी। बर्छी तीर के कुछ ऊपर जाकर लगी। अरना उपेक्षा के साथ बढ़ता चला आया। निन्नी एक हाथ से बर्छी की डांड़ को पकड़े रही और पेड़ के तन से थोड़ी सी बगल काट गई। अरना खाई हुई बर्छी समेत पेड़ से आ टकराया। निन्नी के हाथ से बर्छी छूट गई। मूठ पेड़ के तने पर पड़ गई।

अरने के अपने ही धक्के से बर्छी का फल माथे की हड्डियों को तोड़ता फोड़ता और भी धस गया। निन्नी उछल कर पीछे हट गई। उसने अपना छुरा निकाल लिया। लाखी ने तीर कमान को फेंक कर अपनी बर्छी उठाई और अरने पर हूलना चाहती थी कि अरना लड़खड़ा कर गिर पड़ा और चौपट हो गया। फिर हिलने लगा और लम्बी-लम्बी घूमने लगा। उसका चक्कर आ रहा था। परन्तु वह मरा नहीं था।

निन्नी ने उसकी गर्दन को निशाना ताककर छुरे को फेंका। वह ऊपर से निकल गया। लम से अरने की बगल में जा गिरा। लाखी ने पूरी शक्ति के साथ उसकी कोख पर बर्छी चलाई परन्तु अरना भड़-भड़ाते पैरों भी उठ खड़ा हुआ और बर्छी एक टांग को छीलती हुई धरती

में धस गई। मूठ लाखी के हाथ से छूट गई। लाखी अपने छुरे को निकाल कर पीछे हटी। उस छुरे के सिवाय उन दोनों के हाथ में अब और कोई हथियार न था। आतुरता में फेंके हुये तीर कमानों को उठाने के लिये गाँठ में आधा क्षण भी नहीं था। निन्नी को केवल एक उपाय सूझा।

उसने उछल कर अपनी ओर वाले एक सींग को दोनों हाथों से पकड़ कर अरने को प्रचण्ड वेग के साथ धक्का दिया। अरना मुड़ गया रिल गया और धम्म से गिर गया। निन्नी भी उसके सींग को पकड़े हुये उस पर गिरी परन्तु तुरन्त सम्भल गई। उसका छोटा सा मूँगिया मुट्ठा झटके के साथ खुलकर अरने पर जा गिरा—एक ओर अरने पर, बाकी धरती पर।

पीछे से मानसिंह के मचान की तरफ से किसी के दौड़कर आने की आवाज आई। निन्नी अरने को छोड़कर पीछे हटी कि नङ्गी तलवार लिये हुये मानसिंह को आते देखा। मानसिंह ने उसकी झपट और अरने के भरभरा कर गिरने का दृश्य कुछ दूर से देख लिया था। वह अरने की छिड़कार सुनकर मचान से उतर आया था।

अरना फटी हुई आँखों अन्तिम फुफकारें ले रहा था। कुछ ही दूरी पर नाहर मरा हुआ पड़ा था।

मानसिंह ने मरते हुये अरने पर तलवार उठाई परन्तु चलाई नहीं। धीरे से बोला 'मर रहा है।

नाहर की ओर आँख फेरी। धीरे-धीरे उसके निकट गया। निन्नी और लाखी ने अपने-अपने तीर कमान उठा लिये। पेड़ से सटकर जा खड़ी हुईं। अरना दूसरी तरफ था।

मानसिंह ने नाहर का बारीकी के साथ निरीक्षण किया। नाहर ने केवल एक तीर खाया था। आश्चर्य के साथ उन दोनों के पास लौटा। उनके सामने खड़ा हो गया।

निन्नी उसकी ओर अच्छी तरह देखकर दूसरी ओर देखने लगी। लाखी की दृष्टि कभी अरने पर और कभी जंगल की दिशा में जाने लगी। अभी हाँका समाप्त नहीं हुआ था।

राजा ने पूछा 'नाहर की गर्दन पर किसका तीर बैठा?'

निन्नी ने सिर झुका लिया। लाखी ने तुरन्त सामने होकर उत्तर दिया 'निन्नी—मृगनयनी का।'

राजा ने दूसरा प्रश्न किया—'अरने के माथे पर बर्छी किसकी कोंची हुई है?'

लाखी बोली 'मृगनयनी की।'

'वाह! धन्य हो!! तुम दोनों धन्य हो!!!' मानसिंह के मुँह से निकला और उसने अपने गले से सोने का रत्नजटित हार निकालकर निन्नी के गले में डाल दिया। निन्नी मुँह फेरकर पैर की घास को उंगलियों से कुरेदने लगी।

मानसिंह ने कांपते हुये स्वर में धीरे-धीरे कहा 'सुन्दरी मृगनयनी साहस नहीं होता संकोच लगता है परन्तु कहे बिना नहीं रहा जाता। क्या तुमको ब्याह में पा सकता हूँ? क्या अपनी जन्म-संगिनी बना सकता हूँ?'

लाखी अत्यन्त कठिनाई से अपने हृदय की धड़कन को दबाकर सामने आई। निन्नी पैर की घास को और भी जल्दी-जल्दी खरोंचने-कुरेदने लगी।

लाखी बोली 'यह तो इनके भाई बतला सकते हैं।'

'उनसे भी पूछूँगा परन्तु पहले इनके मन की भी तो जान लूँ।' राजा ने कहा।

निन्नी कांपी। लाखी इशारे को समझ गई। उससे सटकर खड़ी होगई।

निन्नी ने धीरे से कहा 'गरीबों का और बड़ों का जन्म-संग कैसा ?

मानसिंह ने सुन लिया। उसे सुनाने के लिये ही कहा गया था।

मानसिंह बोला 'आदि काल में सबके पुरखे गरीब ही थे। अपने शौर्य से बड़े। शौर्य में तुम मुझसे कम नहीं हो।

बड़े लोग कहते कुछ और हैं, करते कुछ और हैं ऐसा सुना है कथा कहानियों में उसी ओर से निन्नी ने कहा। मानसिंह ने सोचा इसने शकुन्तला की कहानी कहीं सुनी है।

बोला 'तुम्हारे लिये हमने उस फूल को पगड़ी में खोंस लिया था। अब भी वहीं बाँधे हूँ और सदा वहीं रहेगा। गंगा–यमुना की सौगन्ध खाता हूँ कि जन्म–संगिनी रहोगी। मानसिंह का स्वर काँप–काँप आ रहा था।

निन्नी ने क्षीण स्वर में प्रतिवाद किया 'सौगन्ध मत खाइये।

तो कहो क्या कहती हो सुन्दरी ? राजा ने हठ किया।

मैं राजाओं की भाषा नहीं जानती। निन्नी ने उत्तर दिया।

लाखी-एकाएक बोली 'उस झाड़ी के पीछे मेरे तीर चले गये थे। ढूँढ लाऊँ। और झाड़ी की ओर भागी।

'ठहर जा कहाँ जाती है लाखी ? तीर ना सब यहीं हैं! निन्नी ने कोमल स्वर में रोका। लाखी नहीं मानी।

राजा ने अपना हाथ बढ़ाया कहा—'इस भाषा को संसार भर समझता है। अपना हाथ मेरे हाथ में दो। गर्दन मोड़े हुये कनखियों देखते हुये धड़कते कलेजे और मंदस्मित के साथ निन्नी ने अपना काँपता हुआ धूल भरा हाथ उसके हाथ में दे दिया।

बोली 'मैं नहीं जानती क्या कर रही हूँ। मेरी पत रखना।

मानसिंह ने तुरन्त कहा 'परमात्मा मेरा साक्षी है तुम सदा मेरे हृदय की रानी और जीवन की शोभा रहोगी। समझ गईं ?

'समझ गई।' बहुत धीरे से उसके मुँह से निकला।

'क्या कहा?'

'आज्ञा का पालन करूँगी।'

'मेरी तरफ़ देखो।'

'लाखी उस झाड़ी के पीछे से झाँक रही होगी'

निन्नी ने अपना हाथ उसके हाथ से छुड़ा लिया। ...ओं उसको ओर देखा। मानसिंह के नेत्रों से छुटते समय में भी वह आभा उन पीली आँखों में समा गई। मानसिंह के नेत्रों से आभा-सी बिखर रही थी।

मानसिंह चिल्लाया—'लाखा रानी जी इधर आजाओ। तीर मिल गये हमें अब तक तो।'

वह झाड़ी के पीछे से हँसती हुई बोली 'सब मिल गये। आज समझ मिल गए।' और हँसी को पसेली से दाबे हुये आगई।

मानसिंह ने कहा 'कहाँ है तीर? हाथ में तो एक भी नहीं।'

'जहाँ रहते हैं वहाँ हैं।' उसने निन्नी की ओर देखते हुये व्यङ्ग किया।

'तुम्हारी सखी विकट है।' मानसिंह हँसते हुये बोला।

लाखी ने मुँह फेर कर पूछा 'महाराज कबतक ठहरेंगे इस गाँव में?'

'जब चाहो तब चला जाऊँ।'

'वाह! अभी तो इस जङ्गल में बहुत शिकार है।'

'जीवन का सब कुछ पा लिया। तुम सब मेरे साथ ग्वालियर चलो।'

'ऐसे?'

निन्नी मुँह फेरे हुये बोली 'सुना है ग्वालियर में जल का बड़ा कष्ट है।'

'अब तो तुम्हें स्वच्छ हो गया है। कोई कष्ट नहीं है।' मानसिंह ने कहा।

अरने ने टाँगें पसारीं और समाप्त हो गया। मानसिंह ने उसके पास जाकर देखा।

तुमने अपने हाथों इसके सींग मोड़े और गिरा दिया! अरना बहुत भारी है!! उसने आश्चर्य प्रकट किया।

कोमल धीमे स्वर में निन्नी बोली 'मुझको स्मरण ही नहीं क्या हुआ और कैसे हुआ।

राजा ने मुस्कराकर पूछा, 'इतना बल तुम में कहाँ से आया?

नीचा सिर किये हुये मुस्कान के साथ उसने कहा

'राई की नदी के पानी से। हम लोगों की गाँठ में और है ही क्या?'

'राई गाँव तुमको बहुत प्यारा है?

बहुत। आँखों में बसा रहता है।

ग्वालियर के किले में तालाब है। उसके पानी को देखना।

'मैं अपनी नदी के बिना नहीं रह सकती।

'तो ग्वालियर के किले को यहाँ उठा ले आना।

'सांक को ही ले चलिये वहाँ।

'कैसे?

'राजा को क्या गाँव के लोग यह भी बतलावें?'

'गाँव के लोगों को नहीं राजा की रानी को बतलाना होगा।

'तो नहर काटकर ले जाइये किले तक। मैं तो इसी का पानी पिऊँगी।

'ले जाऊँगा। वचन देता हूँ।

'कब तक?'

'काम का आरम्भ तुरन्त करवा दूँगा। बस या कुछ और?'

'मैं ग्वालियर में जाकर पर्दा नहीं करूँगी।

'मत करना। कुछ और?'

'और कुछ नहीं।'

हाँके वाले पास आ गये। उनसे पहले पेड़ से उतर कर मार्ग-रक्षक सरकता-सरकता आ गया।

उसने उनसे प्रार्थना की —'महाराज अन्नदाता मुझको क्षमा मिले। मैंने बहुत कहा कि मचान पर चली जाओ पर ये नहीं मानीं।'

निन्नी ने समर्थन किया, 'हाँ हम लोगों ने हठ किया, मचान पर नहीं बैठीं।'

मानसिंह हँसकर बोला, 'और उस हठ का फल यह सामने है और वह नाहर उधर पड़ा हुआ है।'

हाँके वाले आ गये। उन लोगों ने अरने और नाहर को देखा। निन्नी के गले में रत्न-जटित स्वर्ण-माला को देखकर समझ गये कि किसके पराक्रम का परिणाम है।

राजा ने पगड़ी में से मोतियों की माला खोली और लाखी के गले में डाल दी।

कहा, 'तुम भी बहुत वीर हो।'

थोड़ी सी ही देर बाद वहाँ और शिकारी भी आ गये।

जिस जिसने जो कुछ किया और जो नहीं कर पाया उसकी चर्चा होने लगी। राजा ने एक विशाल सुअर को मारा था।

अटल भी आ गया। उसके हाथ कुछ नहीं लगा था। अरने, नाहर और उन दोनों के गले में मालाओं को देखकर वह फूला नहीं समा रहा था।

उस स्त्री की आँखें सजल हो गईं और कण्ठ गद्गद्। बोली 'हमारे लिये तो बड़ी मोटी पाती ढोरों की तरह काम एक जून का खाना। तुम सुखी रहो। हमको इसी में सुख है।'

लाखी ने पिघलकर कहा 'अभी कोई बात ऐसी तो नहीं हुई है काकी। हो जावे तो क्या कहना है!'

स्त्री ने आँसू पोंछकर गला साफ किया। बोली 'मेरी गाँव के मानस बात उठे हैं सो कहने आई हूँ।'

निन्नी ने ताड़ लिया कि यही सबसे अधिक भली होगी और अब अपनापन समझने आ गई है।

वह स्त्री कहती गई,—'एक कहती थी निपूतो कि निन्नी रानी बनकर राज चलावेगी और लाखी चेरी बनकर निन्नी की पीक को अटेली पर लेगी और राजा की सेज को बिछाया उठाया करेगी सुन्दर सजोगी है न।'

निन्नी का चेहरा लाल हो गया और लाखी का फक।

निन्नी ने तमककर पूछा 'किसने कहा?'

वह स्त्री पाँव पड़ती हुई बोली 'मत पूछो अभी। अभी नहीं। गाँव में रहना जो है। वे सब सुन लेंगी तो मेरा मुँह काला कर दिया जावेगा और गाँव में से निकाल दी जाऊँगी। हा हा खाती हूँ अभी न पूछो। वे सब आने वाली ही होंगी। उन्हें मालूम न होने पावे कि मैंने कुछ बतलाया है। राम! राम!! मेरी जीभ कट जाय कैसे निकल गई मुँह से यह बात।'

वे दोनों ठण्डी पड़कर सोचने लगीं।

लाखी ने कहा 'काकी तुम बड़ी भली हो। हमको क्या पड़ी जो ऐसी बुरी बात को फैलाती फिरें। इसमें तो हमारी ही नाक कटेगी।'

उसी समय कुछ और स्त्रियाँ आईं जिनके चेहरों पर मुस्कानें थीं और आँखों में छिपी हुई ईर्ष्या। उनके पीछे से [illegible] आ गया।

आते ही बाबा 'ब्याह का मुहूर्त—निन्नी के साथ महाराज के ब्याह का मुहूर्त—परसों के लिये शोधा है पुजारी बाबा ने। हमारी गाँठ में तो कुछ नहीं है पर गाँव वालों की कृपा से पार लग जायेंगे।

स्त्रियों में एक बुढ़िया भी आई थी। वह सबसे अधिक प्रसन्न थी।

बुढ़िया ने कहा 'राजा पाहुने देंगे। मंगल साज सजाओ री। इनके घर में कोई बड़ी-बूढ़ी नहीं है। हमीं लोगों को तो नेगचार करने पड़ेंगे। अभी से लाओ कुछ।

इस बुढ़िया के स्वर में निन्नी को सचाई का आभास मिला। स्त्रियाँ मंगलचार गाने लगीं। थोड़ी देर बाद अटीर पटेल ने टोका—यह सब पीछे करती रहना। पहले यह बतलाओ कि करना क्या क्या है। एक ही दिन तो बीच में है।

बुढ़िया समेत कुछ स्त्रियों ने जो योजना बतलाई उसके लिये अटल के घर में धन का सौवाँ भाग भी नहीं था।

परन्तु उसने दृढ़ता के साथ कहा 'हमारी डाँग में हरे पत्ते, मन्दिर में कुछ फूल और घर में थोड़ी सी हल्दी है। हल्दी से निन्नी के हाथ पीले कर दूँगा, फूल राजा पर चढ़ा दूँगा और डाँग के पत्तों से मण्डप बन्दनवार और द्वार की शोभा बना दूँगा। राजा से कुछ नहीं लूँगा अपने पुरखों की नाक रक्खूँगा।

एक स्त्री बोली, 'तोमरों और गूजरों में ब्याह सम्बन्ध होता है?

अटल ने उत्तर दिया, 'हाँ होता है—हुआ है। पुजारी बाबा ने बतलाया है। उन्हीं ने तो शोधा है मुहूर्त और वे ही ब्याह को पढ़ेंगे।

'हाँ राजा हैं। सब कर सकते हैं। ठीक है। स्त्री यह कहकर चुप हो गई और तुरन्त ब्याह का एक गीत गाने लगी।

निन्नी और लाखी को वे स्त्रियाँ थोड़ी देर बाद भार स्वरूप जान पड़ीं। पर वे वहाँ से नहीं टलीं। गान में जैसे जैसे स्त्रियों का मन लगा

विशेषकर मसीत गीतों में—बैठे-बैठे उनकी पसन्द और उन बोलों की अटूटता कहीं दबकर जा बैठी।

अटल अखूय के उपायों से अपने घर और आसपास के अखवाड़ों को सजाने के लिये कुल्हाड़ी लेकर बाहर चला गया। गांव की स्त्रियां खाद्य सामग्री से आने वाले विवाह विधान की तैयारी करने लगीं।

निन्नी के पास की भीख अपनी अकेली पर सूंघी! राजा की सेज की चेरी बनूंगी!! लाखी के मनमें यह रहकर उठ-उठ रहा था। फिर भी वह निन्नी के भविष्य से सुखी थी।

[२६]

राजा ने ग्वालियर से विजयजङ्गम को बुलाकर अपना पुरोहित बनाया—उसका मौरूसी पुरोहित भी था। लड़की के पक्ष का पुरोहित बोधन पुजारी बना। अटल ने अपनी डांग के पत्तों से घर-द्वार को सजाया। गाँव वालों ने भी साज सजाये। राजा की ओर से काफ़ी धूम धाम की गई। लाखी के हठ पर अटल ने अपनी एकमात्र गाय बैंत छोड़ने के नेग में दान की। राजा ने दान लेते समय कहा 'इस गाय का संसार में मूल्य ही नहीं आंका जा सकता।

निन्नी गांव से मृगनयनी—को इतने बहुमूल्य वस्त्रालंकारों का चढ़ाव चढ़ाया गया कि उसका शरीर झूकने लगा।

बिदा के समय मृगनयनी लाखी से लिपट कर इतना रोई कि गला बैठ गया और लाखी तो अचेत हो जाने पर ही अलगाई।

मैं तुम्हें ग्वालियर बुला लूंगी' निन्नी ने कहा।

हिलकियां लेती हुई लाखी बोली 'देखा जायगा'। एक आँसू धुमला चित्र हाथ पर पीक जैसे लाखी दासी का—आँखों के भीतर कौंधकर तुरन्त तिरोहित होगया।

मृगनयनी राजसी सवारी में बैठी हुई जा रही थी। जब तक साँक नदी और सुपरिचित डाँग-भूमि दिखलाई पड़े वह आँसू पोंछ-पोंछकर देखती रही। राजा ने गाँव छोड़ने के पहले गाँव भर का एक साल का लगान त्याग करने की घोषणा की और साँक नदी से ग्वालियर तक नहर काटकर के लाने का काम जारी करवा दिया। इसको भी मृगनयनी ने देखा। बहुत संतुष्ट हुई।

ग्वालियर पहुँचते ही उसको स्वागत के प्रदर्शनों का तूफ़ान चकित करने लगा। बाजे गायन नगर की सजधज फूलों और बाजों की बरसा चौरस्ता बस्तबालों की झुरमुटें आरतियां जयजयकार के हल्ले ने तो उसको

हैरान ही कर दिया। सोचती थी राजा क्या सचमुच भगवान का अवतार होता है ? या क्या वह पूर्व-जन्म का योगी होता है ? योग करने से राज मिलता है ? योगी कौन होता है ? क्या करता है ? किसी समय राजा से पूछ लो। लाखी साथ में होती तो यह सब देखकर क्या कहती ? मुझको बार-बार तङ्ग करती। कितनी अच्छी है वह ! अब उसका ब्याह भैया के साथ हो जायगा। अब गाँव वाले चीं-चपड़ नहीं करेंगे। किसी समय उसको बुलाऊँगी। मृगनयनी सोच रही थी।

राजा का जुलूस रुकते-रुकते धीरे-धीरे क़िले में पहुँचा। फाटकों से होकर ऊपर का मार्ग खाइयों पर से गया था इसलिए सवारी ऊपरी परकोटे के भीतर वाले भवन में देर से पहुँच पाई। ऊपर पहुँच कर मृगनयनी ने किले की पहाड़ी के तटवर्ती फैले हुये मैदान को लालसा के साथ देखा। सूर्यास्त होने में थोड़ा सा ही विलम्ब था। विस्तृत क्षेत्र की ऊँचाई-निचाई पर सन्ध्या की सुनहरी किरणें छहर रही थीं। एक पहाड़ी की उपत्यका से सूर्य की ऊँची-पतली रेखायें आ रही थीं। यहाँ कोई छोटी सी नदी होगी। किनारे पर कोई छोटा सा गाँव। ढोर खुरों से धूल उड़ाते हुये गाँव को चले आरहे होंगे। गाँव में रोटी बनाने की तैयारी हो रही होगी। गाय के लिये बछड़ा रँभा रहा होगा। पास हाँफती हुई घर की ओर दौड़ी चली आ रही होगी। अरे नहीं ! वह तो दान में बच्चे समेत मेरे साथ आई है। कहाँ है वह ? वह तो नीचे ही रह गई होगी। किसने बाँधी होगी ? किसने उसकी गर्दन पर हाथ फेरा होगा ? क्या मैं उस प्यारी गाय को नहीं देख पाऊँगी ?

मृगनयनी भवन के भीतर पहुँची। दास-दासियों की मनुहारें पर मनुहारें बरस उठीं। अरे तो क्या मैं थोड़ी देर के लिये भी अकेली न रह पाऊँगी ?

जैजकार के बाद पान-इलायची इत्र इत्यादि सत्कार की सामग्री नाना प्रकार के भाजन सिर झुकाये हुये दासियां स्वच्छ वायु के लिये भवन में

खिड़कियां। बैठने के लिए क़ालीन मसनद तकिये लेटने के लिये मखमली गद्दे का चांदी की पत्तियों वाला पलङ्ग।

यह महल यह चांदनी रात जिसमें लहराते हुये अनाज का खेत जैसे किसी बालक के साथ बात करना चाहता हो और चीतल की बोलियां बगल में रक्खा हुआ धनुष-बाण लाखी की ठठोली क्या सब सदा के लिये हाथ से छूट गये? क्या मैं वहां नहीं सकूंगी? क्या यहीं बन्द होकर रहना पड़ेगा? महाराज ने वचन दिया था कि परदे में नहीं रक्खेंगे। वह निभायेंगे अवश्य निभायेंगे। नहर की खुदाई का प्रारम्भ उन्होंने कितनी जल्दी कर दिया! पर बाहर भी निकलूंगी तो सबेरे कहां जाऊंगी?

निन्नी ने झरोखे के बाहर दृष्टि डाली। मन चाहा कि उठें और झांक कर देखें। ये लोग क्या कहेंगी? मन में कहेंगी गांव की गंवार है। सब पढ़ी लिखी होंगी। मैं अपढ़ हूं। मैं कुछ का सीखी हूं पर इन सबने रसों अभ्यास किया होगा। जब रात से सबेरे और सन्ध्या समय ड़ियां बोलेंगी और मैं जाना चाहूंगी तो क्या कोई रोक लेगी? नहीं भी रोकेंगी तो मन में क्या कहेंगी? इन सबसे अच्छा गा सकूंगी तब कुछ नहीं कह सकेंगी। और ये विलासवाली कैसी करती होंगी? इसमें तो मैं सबको पछाड़ दूंगी। महाराज को भी। अपने पति को! वह पति हैं परन्तु मनमोहन तो लिया है, इसमें हारजीत की क्या बात?

भवन की दीवारों पर चित्रकारी थी। मृगनयनी का ध्यान उस पर गया। बहुत चाव के साथ देखने लगी। कैसे इनको बनाया होगा? चित्रों में केवल प्राण नहीं है और सब कुछ है! बहुत विलक्षण है!! ऐसा तो कभी नहीं देखा कभी पहले!!! पोथों अक्षरों में कहां रक्खा है यह सब? मैं जब अपने गांव में फिर जाऊंगी तब पढ़ लिखकर यह सब सीख कर जाऊंगी। लाखी को भी सिखलाऊंगी। कहूंगी भौजी सीख मुझसे। क्या कर रही होगी इस समय मेरी बहुत प्यारी लाखी? कितनी रोई थी वह! मैंने कभी-कभी उसके साथ थोड़ा व्यौहार किया है। अब कभी नहीं

करेंगी। मृगनयनी की आँखों में एक आँसू आ गया। दासियों ने नीची निगाहों ही देख लिया। थोड़ी देर तक देखते रहने के कारण आँखें पीली हो गई होंगी।

मृगनयनी सोचती रही—यह सब सीखने में न जाने कितने दिन लग जायेंगे घर जल्दी जाऊँगी जल्दी न जा पाई तो लाखी और भाई को बुलवा लूँगी उनके लिये गाँव में अब ऐसा क्या रक्खा है?

बगल के कमरे से वीणा बजाने की ध्वनि सुनाई पड़ी। मृगनयनी को वह विचित्र जान पड़ी। समझ तो गई कि कोई बाजा बज रहा है। ध्वनि बहुत मीठी लगी। मन को जैसे अपनी गाँठ में बाँधती जा रही हो। एक घड़ी पीछे गायन भी सुनाई पड़ा। ऐसा गायन! ऐसा स्वर!! पहले कभी नहीं सुना था। था किसी पुरुष का ही परन्तु कितना मधुर! बीच-बीच में किसी स्त्री का भी कण्ठस्वर सुनाई पड़ा—नाद की झंकारों को बढ़ाने वाला सा।

मृगनयनी ने एक दासी की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि की। दासी ने बतलाया—'प्रसिद्ध गायक बैजू आ रहे हैं। साथ में उनकी चेली कला है।

[२७]

गाँव से राजा और मृगनयनी के दलबल सहित चले जाने के उपरांत चहल-पहल एकदम ठंडी पड़ गई। लाखी और अटल को घर सूना-सूना प्रतीत होने लगा। लाखी की आँखें सूज गई थीं और अटल की लाल हो गई थीं। वह लाखी को खलियान में ले गया। सन्ध्या तक खलियान में काम करते करते समय काटा। घर आने पर ब्यालू के उपरान्त अटल मारे थकावट के सो गया। लाखी को भी थोड़ी देर के बाद नींद आ गई।

दूसरे दिन हाथ-मुँह धोकर खलियान में काम करने के लिये दोनों गये और जाकर छाया में बैठ गये।

अटल ने चर्चा चलाई,—'अब हमारा तुम्हारा ब्याह भी हो जाना चाहिये।

लाखी उदास तो थी ही, उसका चेहरा और भी गिर गया। बोली 'निन्नी के बिना कैसे होगा?

'उसको बुलायेंगे। वह अवश्य आयगी। रानी हो गई तो क्या होगया बहिन तो मिट नहीं गई।

कब बुलाओगे?

'कल ही। सोचता हूँ अभी मण्डप हरा है। इसी के नीचे भाँवर पड़ना सूँगा कल ही।

क्या हो गया है तुमको? कल गई है यहाँ से और कल के दिन लौट आयेंगी यहाँ से? ऐसा तो गाँवों में भी कहीं नहीं होता।

'तो कब तक विदा करा लेने की रीत है?

'यह ख्याल ही कभी आवे नहीं। इतने बड़े राज की महारानी को हमारी झोपड़ी में राजा और उनके सामन्त नहीं आन देंगे।

'कैसे नहीं जाने देंगे ? कोई नहीं रोक सकता। मैं लिवा लाऊँगा। पुजारी से मुहूर्त सुधवा लूँगा और ग्वालियर को चल दूँगा। यह भाँवरी और उसके सामने इसी मण्डप के नीचे भाँवर पड़ेगी।

'ग्वालियर जाओ तब मोतियों की उस माला को लेते जाना। सुना है हजारों टके की है। उसमें से कुछ मोती बेच आना। थोड़े से कपड़े लत्ते ले आना। गाँव वालों को खाना देना पड़ेगा पुजारी बाबा को दक्षिणा। उससे बहुत काम चलेगा।

'हाँ यह ठीक है। उसकी याद ही नहीं रही कहाँ है माला ?

'घर में छिपाकर रख दी है। पहिनती तो गाँव वाले देखकर जलते बाहर के चोर चपाटे भी ताक लगाते।

'तो मैं पहले पुजारी के पास मुहूर्त सुधवाने के लिये ही जाऊँ। घड़ी भर में लौटकर आता हूँ।

'ऐसी कौन सी जल्दी पड़ी है ?

'हम दोनों पति-पत्नी की तरह रहना चाहते हैं यह जल्दी पड़ी है।

अटल पुजारी के पास चला गया। अटल को आशा थी कि राजा का साला होने के कारण पुजारी अविलम्ब मुहूर्त सोध देगा।

पुजारी ने अटल के अनुरोध पर तुरन्त नाहीं की,—

'मैं राज्य को छोड़कर परदेश चला जा सकता हूँ परन्तु वर्णाश्रम धर्म को लात नहीं मार सकता।

अटल उसके लोभी स्वभाव को जानता था। उसने धैर्य और सहिष्णुता को हाथ में रखने का प्रयास किया। बोला 'महाराज मन्दिर बनवाने के लिये तो कह ही गये हैं मैं भी आपको मनमानी दक्षिणा दूँगा।

'मैं ऐसा नहीं कर सकता। कोई भी ब्राह्मण नहीं कर सकता।

'तो हमारे छोटे घराने की लड़की को छत्तीस कुरी वाले के साथ क्यों ब्याह दिया ?

'वह राजा है। राजा किसी देवता का अवतार होता है वह कर सकता है। उसको सब सुहाता है। तुम लोग राजा नहीं हो। तुम्हारे लिये मनाई है।

'पर हम दोनों ने निश्चय कर लिया है कि ब्याह करेंगे।

'लाखी को तुम्हारा गर्भ है ?'

'झूठ, बिलकुल झूठ। हम लोग गंगाजल की तरह पवित्र हैं।

'गंगाजल की बराबरी करके गंगाजी का अपमान मत करो। तुम यदि हठ करोगे और लाखी को रख लोगे तो जाति बाहर कर दिये जाओगे।

'हमारी और उसकी जाति का गांव में है ही नहीं कोई दूसरा घर।

'गाँव का कोई भी नर-नारी तुम्हारे हाथ का भरा-छुआ पानी नहीं पियेगा तुमको छवेगा तक नहीं बोल चाल काम-काज सब बन्द हो जायगा।

'परवाह नहीं। मैं ग्वालियर चला जाऊँगा।

'जिसमें राजा को भी बुलवाओ, सारी प्रजा कहे कि राजा का साला अधर्मी है।

'कहीं और चला जाऊँगा पर इस घोर अन्याय को नहीं सहूँगा। पहले राजा के पास जाकर इस अन्याय की बात सुनाऊँगा।

'मैं ब्राह्मण हूँ। राजा मेरा कुछ नहीं कर सकते। रूठ जावेंगे तो इस राज्य को छोड़ कर कहीं और चला जाऊँगा। मैं तुम्हारी धमकी में नहीं आ सकता। शास्त्रों को मैंने यों ही नहीं पढ़ा है। जाओ कह दो राजा से।

अटल धैर्य को थोड़ी सी ही देर धारण कर सका था। भनभनाता हुआ चला आया।

अतिथिशाला में पहुँचते ही उसने कहा 'पानी लाओ। लुटिया को मांज कर अब भर लाओ।

मटिया अलिहाम में रक्खी हुई थी। उसमें कई छोटे-छोटे गहनों की डिबिया थीं। लाखी मुटिया को खोलकर दंग रह गई। बारीकी के साथ उसके चेहरे को परखा। सहम गई।

अटल ने धीरे से जल से अपने हाथ धोये और मुटिया को दोनों हाथों में ले लिया।

बोला 'मेरी बगल में बैठ जाओ।'

लाखी को आश्चर्य था यह सब क्या हो रहा है। अटल ने ऊपर की ओर आँखें उठाईं। और कहा 'हे भगवान मैं कुँवारा हूँ और लाखी कुँवारी है। मैं बजरंगी की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि यह जन्म भर मेरी होकर रहेगी।' उसने आँखें बन्द कर लीं। हिल उठा। आँखों से आँसू टपक पड़े।

'यह क्या कर रहे हो?' गद्गद् कण्ठ से लाखी ने कहा और अटल के आँसू अपनी उँगलियों से पोंछे। अटल ने मुटिया एक ओर रख दी।

बोला 'अपना बायाँ हाथ मेरे हाथ में दो।' लाखी ने हाथ बढ़ा दिया, अटल ने अपने में पकड़ लिया।

कहा 'अब सदा के लिये तुम मेरी हुईं, चाहे जाति मुझको रक्खे चाहे निकाले चाहे गाँव मुझको पत्थर मारकर गाँव से भगा दे मेरा तुम्हारा सम्बन्ध कभी नहीं टूटेगा। बोलो तुम मेरी हुईं?'

लाखी के उदास चेहरे पर लाली दौड़ आई होठों पर मुस्कान आयी और रेखाओं में सारे मुख पर आँखों तक बिखर गई।

बोली 'हाँ।'

'मैं आज ही गाँव भर में कह दूँगा कि हम दोनों का ब्याह हो गया।'

'वे लोग मान जायेंगे?'

'न मानें। हम लोग अपना सामान लेकर ग्वालियर चल देंगे।'

'ग्वालियर नहीं जायेंगे।'

'क्यों ?'

'अपना निज का कुछ करतब कर दिखलावेंगे तभी ग्वालियर जायेंगे।'

'मैं समझा नहीं।'

लाखी ने म ... के निर्णय को सुनाया। अन्त में कहा, 'कोई मुझसे यदि किसी को घेरा ... यह मेरी निज मनसा ही क्यों न हो तो मैं नहीं सहूँगी और न यह सह सकूँगी कि तुमको राजा का दास या ... कहे। तुम ... मन में बस दिया है और काम करने की समझ। कुछ करके ही ग्वालियर चलना।'

'मैं तो गाँव वालों से आज ही कह दूँगा। वे लोग ... हमारा अपमान नहीं कर सकते। यह ... तो भूल गया पर हम लोग अपने प्राणों का मोह त्यागकर उनका और उनके ढोर-ढंगरों की रखवाली करते थे परन्तु गाँव वाले नहीं भूल सकेंगे।'

'जैसा ठीक समझो।'

'मैं सब तरह की विपद झेलने को तैयार हूँ।'

'मैं पीछे नहीं रहूँगी।'

'मुझे तो पूरा भरोसा है।'

[२८]

अटल ने अविलम्ब अपनी उमङ्ग के प्रवाह को गाँव में बहाया और तुरन्त उसका फल पाया।

'यह नहीं होने पायगा हमारे गाँव में।' एक ने कहा। दूसरे ने हामी भरी—'ऐसा अधर्म! हाय रे दुष्ट कलियुग!!

अहीर की लड़की गूजर के घर!

गाँव में अहीर होते तो दोनों को मार डालते!!

पुजारी बाबा ने क्या कहा?

उन्होंने साफ ही तो कहा है कि यह अधर्म है।

अटल का बहनोई राजा है।'

तो क्या हुआ? राजा चाहे जिस जाति की लड़की के साथ ब्याह कर, चाहे जितनी स्त्रियों को घर में डाल के बन्द कर सकता है। बड़े-बड़े लोग कर सकते हैं। करते आये हैं पर यह अन्धेर? राम! राम!! राम!!!

उसकी ऐंठ तो देखो। ऐसे कहता फिरता है जैसे काशी रामेश्वर नहा आया हो!

राजा न उपद्रव कर बैठे कोई? किसी उसको भड़काये कहीं!

धर्म के खिलाफ कोई कुछ नहीं कर सकता। राजा अधर्मी हो जायगा तो राजा रहेगा कितने दिन?।

और यदि कुछ किया तो?

तो बुन्देलखण्ड पास ही बसा हुआ है। ओर्छा के राजा के राज में जा बसेंगे। यहाँ हमारा कौनसा सोना गड़ा है जिसके पीछे धरम को खो दें? लोग कहेंगे तुर्क फिर से आ गए।

'तुम्हारे बाबा कितने अच्छे हैं। उन्होंने कह दिया कि राजा अ-
पना आधा राज भी हमको दे दें तो महल की भीतर नहीं पहुँचा।

'हाँ कहीं गाय और भैंसे का ब्याह हुआ है जग में कभी ?

इसने पहले ही कहा था कि लाखी को महल का मर्म रह गया है।
उसम माताचार इ. महीने में बात अपन आप फूट पड़ती अभी से कह
-। और गाव वालों को उल्लू बना कर सीधा कर लो !

'नौकर रखना चाहता है। हम लोगों की असीस चाहता है।।

अगे बैठे चाह को करता। पर कितना निसङ्ग है ' ढोल बजा
-- करना गिर पड़ा है जैसे गाँव की पचायत कोई चीज ही न हो '
वन हम लाग किसी गिनती में ही न हों '। गरीब हुए तो क्या हम
रब इज्जत तो नहीं है '।'

गाने गीत की लालच देता है ' कहता है सह लो की पगुन हू न।
-र म आवें एस न-- !!

खाना-पीना छूना उठना-बैठना बोल चाल यहाँ तक कि उसकी
तरफ हेरना तक बन्द कर दो !

बह मन्दी से लगे हाथ ग्वालियर चला जायगा।

'बहुत अच्छा होगा। वहाँ जाकर लाखी चाहती बनेगी तो उसके पीछे
उन-तुम ना न पावेंगे गाँव को मान-पान्ने।

'निन्न बुरे वसन की निकली यह छोकरी !

'पास के गाव के अहीरों को खबर दे दो न। वे बात की बात में
निबटा देंगे सारा किस्सा।

'--ह ठीक रहेगा। गाँव भर करे इसके साथ व्योहार बन्द और
अहीरों को दे दो खबर। राजा सबको तो मार नहीं देगा।

जब दंगा दिखाई पड़ेगा तो पोटा के राज में भाग रहेंगे।

अन्त में उसी दिन मन्दिर के निकटवर्ती बरगद के पेड़ के नीचे पंचायत हुई और उन दोनों के बहिष्कार का निश्चय हो गया। पुजारी ने इस निश्चय पर पहुँचने में पंचायत की पूरी सहायता की।

पोटा नट ने अटल के पास आकर बड़े स्नेह के साथ कहा, 'अटलसिंह जी, तुम अब गाँव में मत रहो, नहीं तो आस पास के गुंडे आकर तुम दोनों को मार डालेंगे। सब जानते हैं कि मैं और तुम इस बगिया पर बहुत दया करते हो। इस समय हम लोग भी आफ़त में पड़ जावेंगे। जो कुछ करना हो जल्दी से या और कर डालो।'

अटल सोचने लगा।

'बाहर जाकर मारेंगे। अगर अनेक गाँवों के आयेंगे। राजा धर्म के मामले में हाथ नहीं डाल पावेंगे।' नट बोला।

'तुम ठीक कहते हो।' अटल के मुँह से निकला।

'क्या सोचा?' उसने पूछा।

क्षीण स्वर में अटल ने उत्तर दिया, 'अभी तो ऐसा कुछ नहीं सोचा जाता।'

नट ने कहा, 'दो ही उपाय हैं—या तो यहाँ से भाग चलो या लाखी का साथ छोड़ो।'

'क्या!' अटल के कण्ठ से दबी हुई गरज सी फूटी।

पोटा ने अनुनय की, 'मैंने रावजी, आपके हित की बात कही। माफ़ी देना। लेकिन कही मैंने सच्ची बात।'

अटल फिर कुछ सोचने लगा।

पोटा ने धीरे से कहा, 'यह संसार बहुत लम्बा-चौड़ा है। किसी अच्छी जगह चलकर अपना काम देखो और आराम के साथ रहो। क्या ग्वालियर जाने का विचार है? पर ग्वालियर पास है और अहीरों के जत्थे के जत्थे राजा को घेरेंगे, तुमको चैन नहीं लेने देंगे।'

लाखी भीतर से बोली 'ग्वालियर नहीं जायेंगे।'

'मैंने इसीलिये कहा' पोटा ने लाखी की बात को घुमाया—'ग्वालियर में मार मीठी पड़ जायगी मुँह दिखलाने को ठौर नहीं रहेगा।'

'लाखी को पर्व तो है नहीं?' धीरे से नट ने पूछा।

'अरे दुष्ट!' तीखे स्वर में अटल ने प्रतिवाद किया।

नट ने क्षमा प्रार्थना की 'रावजी माफ करना। हम लोग जंगल के आदमी हैं। गाँव वाले कह रहे थे इसलिये मुँह से निकल गया। अब बस्ती है करो क्या करना है। हम लोग सोचते हैं कि बखेड़ा उठने वाला है इसलिए मन करे तो यहाँ से उखाड़ कर किसी दूसरी जगह चलें।'

'कहाँ जाओगे?'

'हमारा अभी तो कुछ नहीं। वैसे नरवर किले के पास मगरोनी नाम के गाँव में हमारी कुछ जान पहिचान है। बहुत दिन हुये तब गये थे। खेल दिखलाये थे। इनाम पाया था। बहुत अच्छे लोग हैं वहाँ के। खेती-पाती के लिये वहाँ जमीन बहुत पड़ी है। वहाँ रह जाना। मन न लगा तो मामला को चल देना। मामले में तो माल ही माल है।'

'मगरोनी किन लोगों की बस्ती है?'

'गूजरों और अहीरों की। बनिये ब्राह्मण भी थोड़े से हैं। पर वहाँ इस तरह लोगों के फँसाने की अटक ही क्यों पड़ेगी। क्या सोचा?'

'सोचता हूँ तुम्हारे साथ ही चलूँ। तुम लोगों में लाखी का मन भी लगा रहेगा। मगरोनी चलकर तै करेंगे कि वहीं रह जायें या मामला में चलें। उनसे पूछता हूँ।'

लाखी ने तुरन्त कहा 'अपने पास थोड़ा सा सामान है सो बोझ नहीं रहेगा।'

नट बोला 'हमारे पास गधे काहे के लिये हैं? गधे पर हमारा सामान रहेगा और तुम्हारा भी। कुछ पर सवारी रहेगी।'

गधे पर सवार होकर अटल और लाखी के चित्त में अटल के भीतर गुदगुदी उत्पन्न की और वह हँस दिया। पोटा सहमा। अटल शीघ्र गम्भीर हो गया।

'भाग्य में जो कुछ लिखा होता है वह होकर रहता है फिर रास्ते की थकावट से बचने के लिये जो भी सवारी मिल जाय सो ठीक ही है।' अटल ने कहा।

पोटा तुरन्त बोला 'राजजी, हमारी नायकिन ने तुम्हारी बहिन का और लाखी का हाथ देखा था। उस दिन कोई भी चर्चा ग्वालियर के राजा के साथ ब्याह सम्बन्ध की न थी। नायकिन का ज्योतिष कितनी जल्दी और कैसा सच्चा निकला! लाखी के सम्बन्ध में जो बात उसने कही है वह भी राई-रत्ती सच्ची निकलेगी। आज तुमको नहीं दिखलाई पड़ रही है परन्तु बहुत जल्दी दिखलाई पड़ेगी। नायकिन की बात कभी झूठी नहीं निकली। उसको न जाने कितने देवता सिद्ध हैं।'

लाखी ने नहीं से कहा 'इस गांव को छोड़कर कहीं भी चलना है। तब जहां भी वह चल रहे हैं वहीं ठीक है।'

अटल ने भी अपना निश्चय प्रकट किया 'अच्छा भाई पोटा तुम्हारे साथ चल देंगे। हमारे दो बैल हैं। वे हमारी तुम्हारी सवारी के लिये ठीक रहेंगे और तुम्हारे गधों पर सामान आ जायगा। ज्वार की दांय हमने कर ही ली है। कल सबेरे उसको बटाकर बाढ़ लूंगा। गधों पर लाद लेंगे। कुछ अपने बैलों पर लाद ले चलेंगे। है भी कितनी?'

'ठीक है, ठीक है,'—प्रसन्न होकर पोटा बोला, 'गांव में किसी को बात मालूम न होने पावे। कल रात में किसी समय चुपचाप चल देवेंगे। गांव वालों को हमारे जाने का पता तब लगेगा जब हमलोग कोसों की दूरी पार कर जावेंगे।'

'यहां से कितनी दूर है मधरौली? कब तक पहुंच जावेंगे वहां?' अटल ने पूछा।

पोटा ने चाव के साथ बतलाया—'बहुत दूर नहीं है। यहाँ से कुल बीस-बाईस कोस होगी। मगरोनी के दक्षिण में नरवर केवल दो कोस पर है। वहाँ कोई नहीं जान पायगा कि क्या से क्या हुआ। सब अपने अपने काम में लगे रहते हैं। बहुत अच्छा ठौर है।'

अटल ने दूसरे दिन अन्न का संग्रह कर लिया। दिन भर अटल और लाखी से गाँव का कोई भी नर-नारी नहीं बोला। कुछ स्त्रियों ने तो लाखी को देखते ही धरती पर बार बार थूका। गाँव की पञ्चायत का निर्णय सुनाने के लिये कुछ पुरुष आस-पास के गाँवों को चले गये।

रात में चुपचाप अपना सामान लादकर, वे लोग चल दिये। लाखी ने केवल यह जानने के लिये लौट-लौटकर गाँव की ओर देखा कि पीछे से कोई आ तो नहीं रहा है।

मनुष्य की ओर दृष्टि गई तो उसने एक साँस भरी—इसमें भला कोई पशु नहीं रहता जङ्गल के पशु गाँव के इन पशुओं से अच्छे।

अँधियारी रात के तारों की धुँधली सी झिलमिल में दूर एक ऊँची पहाड़ी पर आँख गई—इसी पर ग्वालियर का किला है इसी में निन्नी कहीं होगी मेरी निन्नी! आज यदि वह मेरे साथ होती!! कितना हँसती-खेलती चली जाती हम दोनों इस मार्ग पर!!'

लाखी रो पड़ी। मार्ग की खड़बड़ में किसी ने उसका रुदन नहीं सुना। तारों की धुँधली झिलमिल में किसी ने उसके आँसुओं को नहीं देखा।

[२६]

गियासुद्दीन के आदेशानुसार बघेला मटक ने नटों से सम्पर्क स्थापित करने के लिये जासूस भेजे। जासूस अपने भावों को छिपाते छिपाते राई गांव तक आ गये और यह पता लगा कर वहां से चले गये कि मृगनयनी का विवाह राजा मानसिंह के साथ हो गया और बहुत दिन हुये अब तो ग्वालियर चली गई हैं। लाखी गई है नट भी कहीं चले गये हैं। जासूस जैसे आये थे वैसे ही मांडू को लौट पड़े।

नरवर पर चढ़ाई करने की तैयारी हो चली थी परन्तु गियासुद्दीन ने कूच नहीं किया। उसको खबर लगी कि बघर्रा मांडू पर हमला करने के लिये अहमदाबाद में छावनी जमा है।

यह सुन कर तो गियासुद्दीन ने मन ही मन उसको गालियां दीं।

थोड़े दिनों बाद समाचार मिला कि बघर्रा दक्षिण में अहमदनगर के सुल्तान का दमन करने के लिये निकल पड़ा है क्योंकि अहमदनगर का सुल्तान गुजरात की अधीनता में नहीं रहना चाहता था। गुलबर्गा और बीदर की बहमनी हुकूमत की कमर टूट चुकी थी और उसकी जगह चार पांच सल्तनतें बनकर उभर रही थीं। खानदेश भी गर्दन पर से गुजरात के जुए को फेंक देने का प्रयत्न कर उठा था। बघर्रा के दक्षिण की ओर जाने का कारण यही हुआ।

गियासुद्दीन बघर्रा से चिन्तित रहता था। ऐसा न हो कि वह तो दिखावा ही करता हो दक्षिण की दिशा में और अचानक पैरा को पलट दे मांडू की ओर। जब तक मांडू की सीमा से निकल न जाये दूर न चला जाय तब तक मांडू को शाहजादे के अनुभव-शून्य हाथों में छोड़ देना बुद्धिमानी न होगी इसलिये गियासुद्दीन को कुंठित होना पड़ा।

मटक मौका निकाल कर शाहजादे से एकान्त में मिला।

शाहजादा नसीर ने आंखें मीचते हुये मटक से पूछा, शराब तो बहुत बुरी चीज कही जाती है फिर लोग क्यों पीते हैं?

'जान आलम'—मटक ने झुक कर क़दम रक्खा—

'बुजुर्गों ने ज़माने से इसको बुरा कहा है मगर लोग नहीं मानते हैं इसलिए पी लेते हैं।'

'बुरी कहते हैं तो पीने में भी बुरी होती होगी?

'जान आलम बुरी चीजें जब बादशाहों के हाथ छू लेती हैं तब उतनी बुरी नहीं रहतीं! बन्दा तो गुलाम है कह ही क्या सकता है? लेकिन हाँ सुना है कि बाज लोग दवा के तौर पर कभी-कभी पी लेते हैं।

'तुमने कभी पी?

'जान आलम के सामने बयान करने में गुस्ताखी होगी।

'तुम कैसे आये?

'जान आलम बादशाह सलामत की ग़ैर मौजूदगी में माँडू का बन्दोबस्त करेंगे। मुझ गुलाम की याद बनी रहे और दरबार की परवरिश होती रहे यही अर्ज करने आया था। जान आलम का कभी कोई हुक्म बजाने के लिए हो तो आजमा लें और सिर कटवाकर फिकवा दें।

'जी चाहता है कि मैं भी कुछ दुनिया को देखूँ। किताबें तो बहुत सी पढ़ ली मगर दुनिया समझ में नहीं आ रही है।

'जानआलम जिन्दाबाद। मैं क़ुर्बान जाऊँ हुजूर तो इतना देखेंगे कि न खुद समझेंगे न दुनिया समझेगी।

'देखूँ कब वक्त आता है।

'आयन्दा वक्त हुजूर और अभी क्या हो गया है। हुक्म होने की देर है कि बन्दा हाजिर पाया जायगा। सिर्फ खिदमत अर्ज की है क्योंकि मुल्ला मौलवी तमाम से कुछ यों ही फिरे रहते हैं।

'मगर मौलवियों को खबर न होगी। अकेला ही रहता हूँ रात में कभी-कभी हो जाया करो।

[१०]

महमूद बघर्रा मांडू की सीमा से बाहर निकल कर दक्षिण में खान-देश की ओर बढ़ गया। गियासुद्दीन ने सन्नाटे के साथ नरवर पर चढ़ाई कर दी। मांडू का प्रबन्ध नाम मात्र के लिये नसीर के हाथ में सौंप दिया। वास्तविक प्रबन्ध वजीर के पास रहा।

नरवर मांडू के उत्तर-पश्चिम में है। मालवा के मैदान को पार करके पहाड़ों और जङ्गलों को लांघता हुआ गियास एक बड़ी सेना के साथ नरवर के निकटवर्ती जङ्गल में पहुँच गया।

यह विशाल जङ्गल नरवर के दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम में था। सिन्ध नदी सर्प की गति और मरोड़ें खाती हुई दक्षिण-पश्चिम से आकर नरवर को पश्चिम की ओर से घेर कर उत्तर पूर्व की तरफ चली गई है। नरवर गांव उसकी पश्चिमी कुण्डली के भीतर स्थित है।

जङ्गल इतना विशाल सघन और भयंकर था कि हाथियों के बड़े बड़े झुण्ड इसमें मौज के साथ विचरते थे। नाहरों, अरनों और भैंसों तक की तो कोई बात ही न थी। उत्तर से दक्षिण तक को मार्ग नरवर के पश्चिम दक्षिण होता हुआ सिंध नदी की कुण्डलियों को कई घाटों पर काट कर गया था। जङ्गल का लम्बा चौड़ा विस्तार नरवर के पूर्व में भी था परन्तु कुछ दूर तक थोड़ा।

इस सीमा से पूर्व दक्षिण में फिर बहुत सघन हो गया था — पहाड़ियों पर पहाड़ियों के सिलसिले। इनमें बड़ी नदियाँ, झीलें, खोहें और जंगल के मैदान बीच बीच में सुदूर पूर्व तक। चन्देरी तक लगभग चालीस कोस तक, यही क्रम चला गया था। गियास ने चन्देरी के सूबेदार को मांडू से ही आदेश भेज दिया था। चन्देरी का सूबेदार चन्देरी के पश्चिम दक्षिणवर्ती पहाड़ी के दामन में बसा हुआ था। उसको काट कर वह चन्देरी का मालवे के लिये मार्ग सीधा कर देना चाहता था। सूबेदार ने

उस काम को चालू रक्खा और नरवर के लिये चल दिये। इधर-उधर के छोटे-मोटे से हिन्दू राव और राय अपनी वफ़ादारी प्रकट करने के लिए सहायक हुये। ग्यासुद्दीन के मार्ग में जो छोटे-छोटे गांव और ग्राम पड़े उन्होंने उसकी निभाई। प्रजा—जनता—अपनी जान-माल बचा कर खेती-किसानी और जीवन की अन्य कठिनाइयों में उलझी हुई थी उसने ध्यान मिल के कर्म श्रम को जारी रक्खा। जब ग्यासुद्दीन एक तरफ़ से और चन्देरी का सूबेदार दूसरी तरफ़ से नरवर की चढ़ाई के लिए ग्वालियर राज्य की सीमा के भीतर आ गए तब भी गांवों में सब काम की रुक नहीं जाती किन्तु अवश्य बहुत बढ़ गई—जब पता लगता है। ग्यासुद्दीन चन्देरी के सूबेदार से मिल नहीं उसका और सेना भी उतना ही अल्प थी जितनी उसके चाहों का बारन के लिये चाहिये थी।

ग्यासुद्दीन नरवर से अभी कुछ दूर था। पश्चिम दक्षिण में कुंआरवन का सघन ऊबड़-खाबड़ और बड़ा वन उसके और नरवर के बीच में था। वह अपने सूबेदार के समीप आ मिलने की प्रतीक्षा में अनुकूल से घिरी हुई एक लम्बी जगह में ठहर कर विश्राम करने लगा।

नरवर के क़िलेदार को ग्यासुद्दीन के आने की उस समय सूचना मिली जब उसने नरवर के चारों ओर आने जाने वालों को बिलकुल रोक देने के लिये चौकियों की जगह लगादी। क़िलेदार ग्वालियर को समय पर समाचार न भेज सका। क़िले के फाटक बन्द कर दिये और जूझ जाने की तयारी में लग गया।

नरवर के उत्तर में दो कोस पर मगरोनी नाम का गांव है। वहां के बने हुये लोहे ताम्बे इत्यादि के बर्तन भारत में दूर दूर तक हाटों पर लद कर बिकने के लिए जाते थे। मगरोनी घेरे के भीतर कर लिया गया। जो गांव घेरे के परिधि में न आये गये थे उनके निवासी भाग कर दूर के गांवों या पास के जङ्गलों में अपनी अपनी सुविधा के अनुसार चले गये।

चतुर्थी पखवारे की आधी रात वाली चांदनी पश्चिम के क्षितिज की गोद में लीन होने वाली थी। ग्यासुद्दीन की सेना का प्रधान शिविर

गजब था। जगह-जगह मशालों के प्रकाश जल रहे थे। शिविर के चारों ओर आड़ें ओटें पहरे, चहल-पहल। बीच में गियासुद्दीन की आलीशान रावटी। रावटी के एक भाग में हरम। दूसरे भाग में दरबार भवन और उससे लगा हुआ गियास का बैठक-खाना।

सेना के शोरगुल और जङ्गल के काटे जाने के कारण हाथी बड़े पहले कुछ दूर पहाड़ों में हट गए थे। परन्तु हाथियों की चिंघाड़ हवा के झोंकों के साथ कभी कभी शिविर में सुनाई पड़-पड़ जाती थी। बीच बीच में नाहर की गरज भी।

शिविर के जो सिपाही सिर पर थे। उनको वे आवाजें अधिक स्पष्ट सुनाई पड़ रही थीं। अलावों में लक्कड़ पर लक्कड़ डाल कर प्रज्वलित अग्नि शिखाओं में वे अपने डर को मिटाने का प्रयत्न कर रहे थे। दूर के पहाड़ घूमते-से नभ बादलों की आड़ी-तिरछी रेखाओं से छिन्न-भिन्न लगते थे। दूर के पेड़ आलों की टट्टियों जैसे और पास के ऊँचे मोटे पेड़ों की झुरमुट में हवा से हिल जाने वाले पत्ते कुछ चमकी सी दिखलाई देते। जब भी बहुत तेज हो जाती तब वे चपल चमक से झुकते-छिपते से दिखते। जो धीमी पड़ती तो उनके टेढ़े-मेढ़े विचित्र आकार खड़े मुर्दों के जैसे। फिर जो तेज हुई और तुरन्त मन्द तो जैसे मुर्दों के प्रेत बन गये हों। दूर से हाथी की चिंघाड़ या नाहर की गरज सुनाई दी तो सिपाही अलाव के और नजदीक आ गये और हथियारों पर बार-बार निगाह डालने लगे। इनके सिर पर केवल आकाश का तम्बू था।

गियास की रावटी के बैठक खाने वाले खण्ड में एक चौकी पर अंगीठी जल रही थी दूसरे पर अबरी सुराही और रत्नजटित स्वर्ण प्याले। यथास्थान रख कर दी गई थीं। गियास के मसनदी तख्त के नीचे मोटे मखमली कालीन पर ख्वाजा मटरू बैठा हुआ। हाथी की चिंघाड़ और नाहर की गरज बहुत क्षीण होकर कभी-कभी सुनाई पड़ जाती थी। कुछ देर पहले से बातचीत हो रही थी। राई गाँव का भेजे गये जासूसों ने रास्ते में ही समाचार दे दिया था कि उस भागी हुई लड़की और नटों की तलाश

को जा रही है जासूसों ने समाचार में इतना अन्य समाचारों के साथ अपनी तरफ से मिला दिया।

सुल्तान को विश्वास था कि वह भागी हुई सुन्दरी नटों के बीच में है और नटों को जासूस बूझ पावें या न बूझ पावें नटों को नरवर की लड़ाई का हाल वहां भी होवे मालूम हो जायगा और वे शिविर में स्वयं आ जायेंगे। इसके सिवाय मांडू से इतनी दूर निकल आने के बाद अब लौटना असम्भव था।

मल्ल बोला 'जहांपनाह अगर मनासिब समझें तो चन्देरी के सूबेदार को नरवर का घेरा डाले रहने के लिए छोड़ दें और ग्वालियर को जा घेरें। शायद मृगनयनी के पास वह भी पहुंच गई हो।

सुल्तान ने उलटा सा चाबे हुए स्वर में कहा 'गांव से उनको ग्वालियर जाना होता तो जासूस यह खबर क्यों लाते कि वह और नट सामना ह? मगर यह कुछ ठीक मालूम होता है कि नरवर का घेरा सूबेदार डाले रहे और हम लोग यहां से चलकर ग्वालियर का घेरा डाल दें। मेवाड़ का राना इस लड़ाई में किसी तरफ से शामिल न होगा। जौनपुर का कोई डर नहीं है क्योंकि सुल्तान भाग कर बङ्गाल चला गया है। मुझे एक ख्याल आ रहा है मटक। वाह! क्या कहना है!!

'जहांपनाह।

य ग्वालियर का खातमा करके कालपी और फिर कालपी से दिल्ली। आखिर मरहूम जो नहीं कर पाये वह बन्दा कर गुजरे तो नाम हो जायगा! क्या कहते हो?

कितना बड़ा ख्याल है जहांपनाह! मटक!!

हाथियों की एक पतली सी चिंघाड़ सुनाई पड़ी। गियास के मन में गुदगुदी लगी।

बोला 'कितनी सुहावनी मालूम होती है यह बोली रात के इस समें में! क्या जंगल झाड़ों की इतनी चांदनी गुलशन नियामत में हाथी घोल रहा है। थोड़ी देर पहले शेर की गरज भी सुनाई पड़ी थी। मौका

मिले तो शिकार खेल आऊँ। खेदा डालकर सौ पचास हाथी तो वहां से पकड़ ही ले चलें। अबकी बार नरवर के इलाके को मालवे की सल्तनत में मिला ही लेना चाहिये।

क्यों ? तब तो अच्छा है ही नरवर का इलाका शामिल कर लेने से बड़ी तरक्की हो जायगी जहाँपनाह। एक सूबेदार नरवर में और दूसरा ग्वालियर में।

तुम नासमझ ही रहे। ग्वालियर को जीत लेने पर राजा मानसिंह को ही सूबा ? बल्कि दूँगा, मुझको मालवा सल्तनत से इन दिनों ग्वालियर की जमीं से। जमीन और बैर भँजाने के लिए राजपूत अपना सिर तक दे देने को तैयार रहता है।'

मटरू के मन में उठा और पगली स्त्री के पीछे सारी दुनिया में आग लगा सकता है।

परन्तु उसने कहा, 'जहाँपनाह बिलकुल सही है। नरवर की सूबेदारी राजसिंह कछवाहा को दे दी जाय और ग्वालियर को राजा मानसिंह तोमर के ही हाथ में रहने दिया जाय। खिराज हर साल देता रहेगा।

जो काम नासिर अन्जाम नहीं कर पाये वह आपके मेरे हाथों हो जायगा। मगर इस वक्त सवाल यह नहीं है। सवाल है नट घटर माना जो चाहेंगे हमारे हुजूर में तो पहरों के डर और खतरे की वजह से निकल जायेंगे।

जहाँपनाह का हुक्म हो तो उन्हीं जासूसों को तलाश के लिये छोड़ दिया जाय।

खोज पता या नटों को नाना खेल दिखलाने की आम इजाजत दे दी जाय अपने आप आ जायेंगे।

बिलकुल बजा है।

लेकिन दूसरा ख्याल कहता है कि कुछ पागल राजपूत नट बनकर छावनी में आ गये और उन्होंने कोई बड़ी शरारत कर डाली तो फ़ौज पर

बुरा असर पड़ेगा। इसके अलावा चन्देरी से रस्ता आता ही होगा फिर शायद ग्वालियर की तरफ चल देना पड़े।

"राजपूत नट बनकर शायद न आवें जहाँपनाह।

"अजी तुम तो बुद्धू हो! बुजुर्ग अलाउद्दीन खिल्जी को चित्तौड़ के राजपूतों ने कितना बड़ा धोखा दिया था जो डोलियों में बैठकर आ गये थे।

मटरू ने सहमकर समर्थन किया। गियास के संकेत पर उसने अशमरी सुराही में से एक प्याले में कुछ ढाली। उसने पी और शक्कर का मजा लेने लगा।

हाथी की चिंघाड़ फिर सुनाई पड़ी।

झिझकते रिपटते स्वर में गियास बोला 'कितनी प्यारी बोली है!

[११]

लाखी और अटल नटों के साथ मगरोनी चार पांच दिन में आ गए। ग्वालियर और मगरोनी में अन्तर बाईस तेईस कोस का ही था परन्तु उनको पहाड़ों जङ्गलों नदियों को पार करने में समय लगा और नटों की मर्जी पर उनकी यात्रा निर्भर थी।

मगरोनी में नटों ने गांव के बाहर अपने अभ्यास के अनुसार डेरा डाल लिया। वहां अटल और लाखी को आश्रय लेना पड़ा।

लाखी सोचती थी इससे तो ग्वालियर ही अच्छा था कहाँ आ गई? मर गई तो कजबे राई तक हाड़ भी नहीं ले जायेंगे!!

अटल के मनमें उठा मैंने व्यर्थ ही यह जंजाल बिसाया!

जब लाखी के सूखे चेहरे, धंसे हुये से नेत्र और कराहते हुये से स्वर को सुना तब उसने अपने को धिक्कारा—इसका यहाँ आ पड़ी भी कौन है? जंजाल की समझ लेकर मैंने कोई वचन हारा था? भगवान को साक्षी करके इसका हाथ पकड़ा था!! अब क्या मैं अपने वचन से मुंह मोड़ूंगा? कभी नहीं।

परन्तु क्या नटों के बीच में रहकर नट बन जावें? जैसा वह पोटा है और वैसी उसकी लड़कर पिस्सी है! पर जावें तो कहाँ जावें?

यहां लोहे और तांबे का काम बहुत चलता है और मजदूरों की सदा खटक बनी रहती होगी। पेट भरने लायक मजदूरी अवश्य मिल जावेगी, ढूंढ़ूं ना?

दूसरे दिन अटल मजदूरी और निवास-स्थान की खोज में गांव में निकल गया।

पिस्सी लाखी के पास आ बैठी।

बोली हाय! हाय!! कितना दुख हुआ तुमको इस यात्रा में!!! हम लोग तो इस तरह चलते-फिरते ही रहते हैं तुम्हारे लिये नई बात थी।

हमें तो एक दिन मिल गया आराम के लिये सो सुस्ता लिये पर तुम तो वैसी ही दिख रही हो जैसी पहली बार दिखलाई पड़ रही थीं। आगे दिन बहुत अच्छे आ रहे हैं चिन्ता मत करो। नायकिन की बात कभी झूठी नहीं पड़ी।

लाखी ने सोच करके कहा 'जैसे भी दिन आवेंगे भुगतूंगी। फिलहाल मजदूर के अच्छे बुरे दिन क्या।

'तुम्हारी सखी निन्नी है रानी मृगनयनी हो गई। हाथ देखने की बात उनको निकली न ?' पिल्ली ने स्मरण कराया।

पिल्ली और नायकिन अपने जादू टोने के बल और हाथ की रेखाओं को देखकर भविष्य की बात बावन तोले पाव रत्ती बतलाने की शक्ति का यात्रा में भी कई बार दिखला कर चुकी थीं। लाखी को भी कुछ विश्वास सा था।

लाखी ने प्रतिवाद नहीं किया —'सो तो जानती हूँ। परदेश में तुम्हीं सब का भरोसा है।'

'नायकिन कहती है कि एक महीने के भीतर तुम किलेदारिन या ठिकानेदारिन तो क्या कहीं की रानी बनोगी।'

'अच्छी मजदूरी मिल जाय और बात-बात बाके ठग न करें तो हमारे लिये यही सब कुछ है।'

'मांडू चलकर देखना तुमको दिन रात कितना सुख चैन मिलेगा।'

'मांडू कितनी दूर है यहां से?'

'अरे यों ही थोड़ी दूर। पहाड़ जंगल कुछ कोस और निकल [illegible] हरा-भरा सावन वहीं मांडू के सुल्तान का राज है। बड़ा अच्छा [illegible] है। वहाँ ऐसी मुसीबतें थोड़े ही हैं जैसी यहाँ आई हुई हैं। [illegible] यहाँ का कुछ है देखोगी ? मैं तुम्हें कुछ दिखलाऊँ ? [illegible] मालूम न होने पावे।

'ऐसी क्या चीज है ?'

'अरी अभी दिखलाती हूँ। पहले मेरे सिर की सौगन्ध खाओ कि किसी को जाहिर नहीं करोगी।'

लाखी के रूखे होंठों पर मुस्कान आई जैसे मरुभूमियों के सूखे नाले में पहली बिजली वर्षा की पतली धार हो। कहा 'खाती हूँ सौगन्ध बतलाओ क्या कोई भेद है ?'

पिल्ली ने अपने वस्त्रों में से सोने और मोतियों के गहने निकालकर उसके सामने रख दिये। उसने अपने मोतियों के हार से मन में उनकी तुलना की। वह उनकी अपेक्षा अधिक चमक वाले थे। अपने मोतियों को वह समस्त सुरक्षित रखते हुये थी।

पिल्ली बोली 'एक छोटे से रजवाड़े के बराबर है मोल इनका। ये तुमको मिल जावें तो एक रजवाड़े की मालिक तो यों ही हो गई।'

'कैसे ?' लाखी को कुतूहल हुआ।

पिल्ली ने लाखी के कुतूहल को और भी जगाया 'अरी यह तो क्या इनसे कई गुने और मिल जावेंगे मोल भी उनका इतना कि नरवर का किला खरीद लो।'

नरवर का किला मगरोनी से दो कोस था। सिन्ध नदी बीच में। ग्वालियर को न देख पाया तो इसी को देखूंगी किसी दिन। लाखी के मन में एक लहर दौड़ी।

'कैसे मिल जावेंगे ?' उसने फिर पूछा।

'मोल चुकाकर।' पिल्ली ने उत्तर दिया।

लाखी के नारी-हृदय का सन्देह जागा।

उसने उसी प्रश्न को दुहराया 'कैसे ? किससे ?'

परन्तु पिल्ली नट-नारी थी। उसने लाखी की आँख के कोने में सन्देह की छाया को परख लिया।

बोली 'आयरकिन ने अभी इतना ही बतलाया है। चार छः दिन में बड़ी बतलावेंगी। अभी इतना तो मैं कह सकती हूँ कि इनको तुम ले लो और समझ लो कि ऐसे बिले और मस्ते मिले।

पिल्ली ने मुस्कानों के साथ गहनों को उठाकर उसकी ओर बढ़ाया। सुलभ भलङ्कार-मोह लाखी के भीतर उठ खड़ा हुआ और वह गहनों को ग्रहण करने के लिये हाथ बढ़ाना ही चाहती थी कि भारी-सहज शंका फिर भाड़े आ गई। यदि ये गहने पीतल और कांच के नहीं हैं तो नट गरीब लोगों के पास कहाँ से आये? और ये इतनी सरज-सरजकर क्यों मों ही दिये डाल रही है? बदले में मुझसे क्या चाहेगी? अटल की ओर बाँकी तिरछी निगाहों मुस्का-मुस्काकर देखा करती है तो क्या सौत बनना चाहती है? अटल से बात करके तब इन गहनों को लूँगी जैसे ह बढ़िया।

कहा, 'अभी रक्खे रहो। उनके आने पर ले लूँगी। तुम मुझे बहुत चाहती हो।

पिल्ली ने छोटा पानी बिलमा। बोली 'जब बढ़िया लहँगे पर सुन्दर चूनरी ओढ़ोगी और उसमें से ये गहने दिखलाई पड़ेंगे तब मालूम पड़ेगा कि कहीं की रानी या बेगम हो। मांडू के बड़े-बड़े लोग आह भर कर रह जायेंगे।

पिल्ली मजरे के साथ हँस पड़ी। लाखी उसकी उथली छिछली प्रकृति को पहिचान गई थी इसलिये बात बुरी नहीं लगी परन्तु उसको लगा इस तरह की चूनरी को पहिनने से अङ्गों का एक एक रोम दिखलाई पड़ेगा और देखने वाले समझेंगे कि मैं भी कोई नट बेड़िनी हूँ! छि!! परन्तु य गहने यदि सच्चे हों? मझोले मोटे कपड़े के नीचे पहिने जावें और स्त्रियाँ देखें तो बस तो बरूर बढ़ेगी ईर्षा के मारे और पुरुष देखेंगे तो अपना मन मारकर अपनी गैल पकड़े चले जावेंगे। कल्पना में अपने को विजयी पाना उसे अच्छा मालूम हुआ।

परन्तु अटल का चित्र आँखों के सामने घूम गया।

'चूनरी तो हमारे यहाँ जैसी पहिनी जाती है वैसी ही पहिनूँगी।' लाखी ने कहा।

पिल्ली ने एक चोट की—'रानी मृगनयनी क्या ग्वालियर में वैसे ही कपड़े पहने होंगी जैसे गाँव में पहिनती थीं? और तुम यदि ग्वालियर उनके साथ जाती तो आज जैसे पहिने हो वैसे ही पहिन फिरतीं?'

लाखी को अटल के साथ अपने गाँव की स्त्री की बात याद आ गई। निन्नी की पीक हाथ पर झेली गई होगी और राजा की—। उसने विचार को आगे नहीं बढ़ने दिया।

बोली 'यदि यदि बनी रही या माँडू चली जैसा तुम कहती हो तब देखा जायगा। अभी तो मैं ही अच्छी।'

'माँडू तो अजगा ही है। बड़ा नगर है। वहाँ क्या धरा है?'

'चलोगी? वहाँ तो हमारे यहाँ से भी बड़े पहाड़ और जंगल हैं। सुनते हैं हाथी तक हैं वहाँ के जङ्गलों में!'

'हाँ है। पूरा देश है वह। पर रास्ता माँडू के लिये सीधा नहीं होकर पड़ता है। तुम्हारी और कुँवर जी के बात के कुछ लोग तो होंगे ही वहाँ पर उनको कुछ मालूम न होने पावेगा'

लाखी सोचने लगी—मालूम भी हो जायगा तो भुगतूँगी।

'माँडू में स्वाद् जाति के लोग न हों?' उसने पूछा।

पिल्ली ने उत्तर दिया 'हों या न हों' मालूम नहीं। पर इतना बड़ा सुल्तान तो है। जाते उसको देखोगी तो अचरज करोगी।

'देखूँगी किसी दिन। माँडू के सारे खेल-तमाशे देखूँगी!'

'खेल-तमाशे तो वहाँ ढेरों हैं। हाथियों की कुश्ती आदमियों की कुश्ती औरतों की कुश्ती नाना बजाना नाचना भालुओं के नाच और न जाने क्या क्या।

'हाथियों की कुश्ती ! कैसी होती होगी वह ?

'लड़ते हैं भिड़ाड़ते हैं महावत उनकी गर्दन पर बैठकर लड़ाते हैं और सुल्तान एक बड़े हाथी पर बैठकर सब देखता रहता है। प्रजा एक तरफ बड़ी आनन्द में झूमती रहती है।

'बड़ा विचित्र होता यह तमाशा जरूर देखूँगी।

तुम बढ़िया-बढ़िया गहनें और रेशम के रंग बिरंग कपड़े पहिनकर जब वहां तमाशा देखने जाओगी तब भीड़ की भीड़ लोगों तुम्हें देख-देख कर दंग-दंग रहेंगी। कहेंगी है भगवान यह अप्सरा कहाँ से आ गई यहाँ !

'ह ! ह !! ह !!! हाँ हो तो सकता है ऐसा। दूसरों के गहने कपड़े बहुतेरों को अच्छे नहीं लगते।

लाखी हँस-हँसकर बात कर रही थी और उसकी कल्पना हाथियों की कुश्ती से उलझ रही थी।

पिल्ली ने अवसर आया हुआ समझ कर कहा 'एक बार इन गहनों को पहिनकर देखो तो कैसी खिलती हो। मन को न भावे तो लौटा देना। सच्चे और अनमोल हैं इतना तो मैं कह सकती हूँ।

पिल्ली ने गहने बढ़ाये और लाखी ने ले लिये। पहिनने शुरू कर दिये।

पिल्ली उत्साह के साथ बोली 'इनके ऊपर रेशमी लहँगा और चूनरी भी पहिन कर देखलो। देखो तो। फिर उतार डालना।'

जरा देख भी लूं कैसी लगती हूँ लाखी ने सोचा। गहने पहिन लिये। उनकी आभा से वह दमक उठी। उस दमक को उसने अपनी आँखों में अवगत किया। पिल्ली दौड़कर गई और लहँगा चूनरी उठा लाई। लाखी ने उनको भी पहिन लिया। जब भीड़ की भीड़ में स्त्री-पुरुष देखेंगे तो नटिनी नहीं कहेंगे क्योंकि मैं तामझाम नहीं पहिने हूँ और नटनियां ऐसे जेवर नहीं पहिनती होंगी। तमाशे की भीड़ में

स्त्री पुरुष मुझको देखते रहेंगे और मैं हाथियों की लड़ाई को देखती रहूँगी। कोई भी देख लो क्या गहने कपड़े तो देखने के लिये ही बनाये गये हैं। वह मन ही मन प्रसन्न होकर सोच रही थी।

पिल्ली ने नृत्य का एक चक्कर काटकर ओज के साथ कहा।

'रानी सी बन रही हो बिलकुल महारानी सी। कोई कह सकता है कि किसान मजूर हो? अरी अपना काम तो करना ही चाहिये पर ऐसे गहने कपड़े कहीं से मिल जायें तो उन्हें क्यों न पहिनो?

लाखी के मन में आया अब उतार कर के रख दूँ परन्तु अपने सौन्दर्य और उसकी आभा का मेल थोड़ी देर और रखना चाहती थी।

उसने पूछा मांडू में क्या बहुत स्त्रियों के पास होंगे ऐसे गहने कपड़े?

पिल्ली ने बतलाया बहुत थोड़ों के पास कहाँ रक्खे हैं? प्रजा में किसान कारीगर मजदूर ज्यादा हैं। मोटे मोटे कपड़े पहिनते हैं। उन्हीं को मेले ठेलों में रंग-बिरंगा कर लेते हैं। थोड़े से सेठ-साहूकार और सरदार हैं उनके यहाँ भी ऐसे न निकलेंगे। तुमको भीड़ में देखते ही सुल्तान हाथियों की लड़ाई पर से आँख हटाकर तुमको देखने लगेगा।

'हो सकता है।

'हो सकता है नहीं ऐसा ही होगा। वह तो इतना लट्टू हो जायगा तुम्हारे ऊपर कि हाथी पर से उतर पड़ेगा और पास आकर पूछने लगेगा कि कहाँ से आई हो?

पिल्ली हँस पड़ी। लाखी को भी हँसी आ गई। हाथ और गले के चमकते हुये आभूषणों पर आँख बार-बार गई। वे उसको अच्छे लगे। उसकी आभा को वह आत्मसात्-सा कर रही थी।

पिल्ली ने सोचा अब समय आ गया।

बोली 'सुल्तान तो तुमको पास से देखकर बेहोश हो जावेगा।

क्यों ?

'अरी तुम अपने रूप और गुन को क्या जानो। वह तो देखने वाले ही जान सकते हैं।

'हूँ—ऊँ—हूँ !

मैं कहती हूँ य सोना मोती है कितने वह तो बरसा देगा तुम्हारे रूप-गुण के ऊपर ढरों के ढर। तुम्हारे हाथ चूम लेगा और कहेगा महलों में रहो। वहाँ उसकी रानी बनकर रहोगी हुकम करोगी और यही कुँवर भी उसके दीवान बनकर रहेंगे। हम गरीबों को न भूल जाना।

अच्छा !

अरी मेरी रानी झूठ थोड़े ही कहती हूँ। उसकी महारानी बनकर रहोगी। वह तुमको नर्बदा जी का पानी पीने के लिये मँगवाया करेगा परन्तु थोड़े ही देगा तुम्हारा। अपने साथ हाथी पर बिठलाकर जङ्गलों में शिकार खिलवायगा और तुम्हारे पैरों की धूल को अपने माथ पर चढ़ावेगा। यहाँ से भाग चलो तो दो दिन में हो जावेगा यह सब। न हो जाय तो मेरा सिर काट कर फेंक देना।

न्नी के दिमाग में एक तूफान सा उठा। राई गाँव सौंक नदी राई के पहाड़ कोई जङ्गल शिकार निन्नी मानसिंह और हाथियों की लड़ाई एक साथ चक्कर खा गये। न सब और चमक-दमक वाले गहने और तड़क-भड़कदार कपड़े आँधी के बवण्डर में जंगल के सूखे पत्तों की तरह एक दूसरे के साथ लिपट कर उड़ने लगे। निन्नी और मानसिंह कुछ अधिक स्पष्ट हुये तो पहिने हुवे गहने-कपड़ों की माया पर आँख के जाते ही फिर उसी बवण्डर में पड़ गये।

निन्नी न सोचा लाखी निश्चय में है।

बोली मन में रखते रहो। किसी से कहने की जरूरत नहीं है। जब जैसा मौका आवे तब तैसा करना।

लाखी के दिमाग की आँधी कुछ हलकी पड़ी। परन्तु उसके मुँह से कुछ नहीं निकला।

पिल्ली ने कहा 'अरी रानी तुमको थोड़े ही कुछ करना पड़ेगा अपनी तरफ से। किसी तमाशे में जान की तुमको जरूरत नहीं पड़ेगी। जैसे ही सुल्तान को खबर लगी कि तुम सरीखा हीरा किसी कुटिया में छिपा पड़ा है कि वह जुग हाथ जोड़ता हुआ आयगा, हाथी पर बिठला कर महल में ले जावेगा और छाती से लगा कर अपने भाग्य को धन्य समझेगा।'

लाखी के मन के भीतर की आँधी झटका खाकर एकाएक बन्द होगई और उसको कुछ साफ सा दिखलाई पड़ा। उसने एकाएक प्रश्न किया 'ये गहने कपड़े तुम्हारे पास कहाँ से आये? क्या सुल्तान ने दिये थे?'

'मेरे कहाँ ऐसे भाग?' उसने लापरवाही के साथ उत्तर दिया, 'मुझको तो तुम सरीखे लोगों का ही आसरा है। कपड़े चोरी के नहीं हैं इस बात की मैं सौगन्ध खा सकती हूँ।'

'कहाँ से आये?' उसने फिर पूछा।

पिल्ली ने बारीकी के साथ लाखी के चेहरे को आँकने की चेष्टा की।

'अच्छा बतला दूँ पर मेरे सिर पर हाथ रखकर सौगन्ध खाओ कि किसी से कहोगी नहीं।'

'सौगन्ध खाती हूँ।'

'जैसे आगी और अमरित नहीं छिपती वैसे ही तुम्हारे रूप का नाम नहीं छिप सका। सुल्तान ने ही तुम्हारे लिए भेजे हैं।'

'किसके हाथों?'

'हमारे ही एक नट के हाथों।'

'क्या उन सवारों के हाथों जिनमें से दो को हमने मार गिराया था?' उसने अपने मन में प्रश्न किया।

लाखी चुप रही। कई क्षण। निन्नी ने छोटा तीर चला बैठा। बोली 'और अधिक मत पूछो। सुल्तान जब तुमको पक्के नचाकर अपनी बीती घड़ियों को बखानेगा तब सब मालूम हो जायगा। उसने निन्नी के बारे में भी सुना था। चाहता होगा दोनों सखियाँ साथ ही रहें। अब अकेली ही राज करना।'

लाखी ने कनखियों देखा—कहीं से अटल न आ जाय। फिर गहनों कपड़ों पर ध्यान गया। वह सबको एक एक करके उतारने लगी।

निन्नी बोली 'पहिने रहो। तुम्हारे ही तो हैं। कुंवर साहब भी तो देखें कैसी फब रही हो।'

'नहीं,' दृढ़ स्वर में लाखी ने कहा। उसने सब उतार दिये और अपने मोटे झोटे कपड़े पहिन लिये। अटल पर ध्यान गया। कहाँ थे कहाँ थे? उनमें कितनी तड़क भड़क थी!! देखा जायगा। फिर कभी पहिनूँगी पर उनसे कहकर। क्या सब बतलाऊँ? आज नहीं पर एक दिन अवश्य और यहीं मगरोनी में। उसने निश्चय किया।

थोड़ी देर में अटल घबराया हुआ आ गया। आते ही उसने सबसे कहा 'मांडू का सुल्तान नरवर पर चढ़ आया है। चौकियाँ पड़ती आ रही हैं।'

'मांडू का सुल्तान! हमारा राजा!!' लाखी के मुँह से निकल पड़ा—'तुम्हें कैसे मालूम? किसने कहा? कहाँ है? कितनी दूर?'

अटल ने उसी घबराहट में सूचना दी—'गाँव में सुन आया हूँ। हलचल मच गई है। लोग नरवर नगर में भाग जाने की तैयारी में जुट गये हैं। चलो हम सब नरवर चल दें।'

सब एक दूसरे की ओर देखने लगे।

मायकिन बोली 'अपुन लोगों का लड़ाई वाले क्या करेंगे? नरवर के कोट में घिर जाने से तो बड़ी मुश्किल पड़ जायगी। यहाँ से निकल चलो

'जङ्गल में शिकार के समय जो वचन दिया था वह अखण्ड और अमर है।

'क्या फिर कभी नाहर अरने इत्यादि का शिकार खेलने को मिलेगी ?

'अवश्य। जब चाहे तब। कहो तो अभी प्रबन्ध कर दूँ यहीं राई के पीछे की खोहों और पठारों में ?

'नहीं। अभी नहीं। वैसे ही कहा। पहले कुछ सीख लूँ तब जाऊँगी राई की ओर। मैंने प्रण किया है कि सीखकर लाखी को सिखलाऊँगी।

'वहीं बुलालो न। कला को अपने से मिलती-जुलती पाकर उसको अचरज होगा।

'वह अभी नहीं आवेगी। लाऊँगी कभी उसको। मैं चाहती हूँ पढ़ना लिखना गाना-बजाना और चित्रकारी बहुत शीघ्र सीख लूँ, पर आपके मारे जब सीख पाऊँ तब तो।'

'अरी महारानी, मैं बिगाड़ करता ही क्या हूँ ?

'बिगाड़े! बड़े बिगाड़े हैं न आप!! अब मुझको अलग बैठ जाने दीजिये।

'मैंने तुम्हारा बोलना तो बन्द किया नहीं।

'एक बात कहूँ ?

'एक नहीं सब।'

'मैं चाहती हूँ आपका शरीर उत्साह बल और पुरुषार्थ दिनदूना दृढ़ और चमत्कार से भरा हुआ बना रहे।'

'जिस राजा में ये गुण न हों उसका राज आजकल दो महीने भी नहीं टिक सकता।

'तुम ठीक कहती हो मैंने गाँठ बाँधी।

'नियम-संयम के साथ रहिये और मुझको रहने दीजिये। मैं चाहती हूँ कि उन गुणों के साथ मेरी देह में भी वही बल बना रहे जिसको राई मे

लेकर आई हूँ जिसके भरोसे मरे हुये सुअर को पीठ पर लाद कर गाँव तक लाई थी जिसके बूते अरने मैंने का—

मानसिंह ने उसको आगे बात नहीं कहने दी। गले से लगाकर उसके होठों को अपने कपोल से सटा लिया।

बोला 'मैं वचन देता हूँ प्राणप्यारी मृगनयनी। समझ गया कि मन से तुमको जीवनपर्यन्त बसाये रखने के लिये नियम-संयम ही बस दे सकेगा। तुमको कलाओं के सीखने के लिये पूरा पूरा समय दिया करूँगा और तुमको सदा अपने निकट समझता हुआ इतना काम करूँगा इतना कि काम को पूरा करते करते बनी उमङ्ग बनी रहे तुम्हारे दर्शन प्राप्त करने की।

आप मेरे स्वामी हैं।

'बस! स्वामी ही!!

'प्राणनाथ मेरे प्राणनाथ। बहुत धीमे रिसन्ते हुए स्वर में मृगनयनी ने कहा।

मानसिंह बोला, 'मुझको सदा ध्यान रहेगा—जैसे तुम बहुत दूर रहते भी मेरे कान में कह रही हो 'मानसिंह, सावधान!

'हूँ ऊँ। ऐसा तो मैंने कभी नहीं कहा।'

'मेरी महारानी जो मेरे हृदय के भीतर इसी तरह बासोगी।'

'आप कलाओं के जानकार हैं सो न जानें बात को कैसा उमेठ-उमाठ कर कह लेते हैं!

'तुम थोड़े ही समय में सारी कलाओं को अपने अर्चल के छोर में बाँध लोगी समझ लिया है। फिर कौन कैसी बात करोगी उसकी कुछ कल्पना ही कर सकता हूँ। अच्छा यह तो बतलाओ कि यह बात तुमको किसने सिखलाई? नियम-संयम इत्यादि वाली बात?

'किसी ने नहीं सिखलाई। सब स्त्रियाँ जानती होंगी। जानती न हों या कह न पाती हों यह और बात है।'

'तुमने बहुत बड़ी बात कही। आज की संध्या से ही तुम्हारी शिक्षा का पक्का प्रबन्ध करता हूँ। कला और बैजनाथ गायन-वादन चित्रकारी सिखलायेंगे। विजयजङ्गम से कहे देता हूँ पढ़ाने के लिए। कल क्रम आरंभ कर देंगे।'

'मेरे प्राणनाथ!'

'तो अब उस सवाल का जवाब दो।'

'हूँ—किसका?'

'किरणें अब तुम्हारे मन पर और भी छा गई हैं। तुम्हारी मुस्कान में जो चमत्कार है उसमें से कितना भाग वे किरणें ले-लेकर भागती जा रही हैं?'

'मेरे प्राणनाथ!!'

संध्या के उपरान्त कला और गायक बैजू आ गये। उनको प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। मृगनयनी ने दत्तचित्त होकर सीखना शुरू कर दिया।

कला और लाखी के बीच के सामंजस्य में मृगनयनी को बहुत अचम्भा नहीं हुआ था। वह यहीं है—मृगनयनी की भावना थी।

उसी दिन से हमेशा कि कला अधिकांश समय उसके निकट रहा करेगी। विजयजङ्गम को लिखाने-पढ़ाने का काम सौंप दिया गया और उसी पाठभवन में वीणा-वाद्य के अभ्यास को और भी बढ़ाने का। वह जुट पड़ी।

मृगनयनी के शिक्षण-समय में मानसिंह बड़ी रानी के पास गया। नाम उसका सुमन मोहिनी था। जैसा नाम उससे उल्टा स्वभाव—प्रखर।

उसके भवनखण्ड में बैठे ही मानसिंह सूचना देकर पहुँचा। रानी ने रीति के अनुसार आरती उतारी, आसन दिया और हाथ जोड़कर खड़ी हो गई।

धीरे से बोली, 'बड़ी कृपा की। महाराज कुछ भूल से पड़ गए इस दिशा में!'

'नहीं तो। एक प्रार्थना करने आया हूँ।'

'आज्ञा?'

'नई रानी—मृगनयनी—का मन नहीं लगता होगा, सो मैंने संगीत इत्यादि कलाओं के सीखने का प्रबन्ध कर दिया है। आपका समर्थन है न इसमें?'

'मेरा बड़ा भाग्य था महाराज मुझको इतना आदर दे रहे हैं। मन उनका कैसे यहाँ इतनी जल्दी लगेगा? कहाँ राई के जङ्गलों का मुक्त पवन भरते भैंसे, सुअर, नाहर, नीलगाय आदि की धाक और कहाँ ग्वालियर के किले का एकान्त! यहाँ न नदी है, न भील है और न गाँव के किसान! न गाय न गोबर!'

व्यङ्ग्य स्पष्ट था। मानसिंह रुककर कुछ कहना चाहता था परन्तु उसने सोचा इससे कटुता ही और बढ़ेगी।

'कला आप ठीक कहती हैं। वह लगभग ऐसा अच्छा करती है कि बड़े-बड़े गन्धर्व लज्जित हो जायें।'

मृगनयनी ने व्यङ्ग्य को जाने दिया। 'हाँ महाराज आप तरीन पुरुषों को जो नारी पराजित करे उसके सामने संसार भर के पुरुषों को सिर झुकाना पड़ेगा।'

'महारानी आप भी किसी दिन उसका नृत्यगान देखियेगा।'

'जब से आई हूँ नित्य प्रतिक्षण अपना और इस सब का कर्म जपना रहती हूँ। और कुछ देखना पड़ेगा, देखूँगी।'

'महारानी उन्होंने एक ही बाण से एक बड़े नाहर को मारा और अपने मुक्के से अरने भैंसे को मोड़ दिया।'

'सुना है महाराज और यह भी सुना है कि एक दिन जब घर में खाने को कुछ नहीं था तब सुअर के एक पिटस्के को मारकर अपनी पीठ पर बांध लाई थीं। उनमें बहुत बल है बहुत शक्ति है।'

'वह क्षत्रिय कन्या है। सब को एक दिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। आप देखना वह पढ़-लिखकर और विविध कलाओं में पारङ्गत होकर, हमारी आपकी सबकी कीर्ति-ध्वजा को ऊँचे फहरावेगी।'

'महाराज ने बिलकुल ठीक कहा अभी जो नये-नये बहुमूल्य रेशमी वस्त्र पहिनने को मिले हैं, उन्हीं की ध्वजा को अपने इस छोटे से स्वर्ण महल के कँगूरे-कँगूरे और शिखर-शिखर पर फहरती-फुरकती फहराती फिरती हैं।'

यह व्यंग मानसिंह को गड़ गया। सौतिया डाह ने बिचारी सीधी सादी मृगनयनी को, जिसका प्रमोद-क्षेत्र अभी तक जंगल और खेत खलियान था और अब संकुचित सीमाओं से घिरा हुआ छोटा-सा स्वर्ण महल रह गया था, बन्दर बनाया है। इतना अधिक न उछले कूदे तो कोई हानि होगी? उसको प्यार के साथ सावधान कर दूँगा। जिसमें सुमनमोहिनी इस प्रकार का आक्षेप न करे। मानसिंह ने सोचा। उसकी शेष सात रानियाँ आज्ञाकारिणी पतिव्रतायें थीं। उन्होंने अपना दमन शमन कर लिया था। परन्तु सौतिया डाह एक दूसरे के प्रति मन तल में था। मृगनयनी के आते ही उन आठ का परस्पर डाह एक धारा में प्रवाहित होकर मृगनयनी से आ टकरा था। डाह का नेतृत्व सुमनमोहिनी के प्रबल स्वभाव को अपने आप प्राप्त हो गया। मानसिंह को समझने में जरा भी देर नहीं लगी। उसका अभिमान कहता था—इतने बड़े राज्य की व्यवस्था करने वाला क्या आठ स्त्रियों का भी शासन नहीं कर सकेगा?

उसके विवेक ने बतलाया एक स्त्री का शासन हो पुरुष के लिये कठिन काम है, आठ तो आठ ग्वालियर राज्यों की समस्या के समान है। फिर क्या करूँ ? करूँ क्या विनय शील और मृदुलता से काम लो—व्यङ्ग वाली कटूक्तियाँ सब हँसी के साथ सहो। इसी में कल्याण है मानसिंह ने सोचा।

एक दो क्षण चुप रहने के उपरान्त मानसिंह बोला 'आप सबके शिक्षण अनुशासन और आदर्श से यह भी अपने को ढालती रहेगी जैसा मैंने अपने को ढाल लिया है।' मानसिंह हँस पड़ा। सुमन मोहिनी को भी हलकी सी हँसी आगई।

वह मनही मन प्रसन्न थी—यह मेरा लोहा तो मानते हैं।

'अब तुमको अनुमती मिले आकर बैजनाथ से कुछ बातें करलूँ। मन्त्री आने वाले होंगे। दिन में उन से राज-काज की चर्चा नहीं हो पाई थी।' मानसिंह ने कहा।

यह अनुमति माँगना नहीं था आदेश देने का अर्थ रखता था।

सुमन मोहनी ने फिर व्यङ्ग किया 'महाराज को आजकल अव काश ही कहा मिल पाता है। बिचारा मन्त्री राज्य की चिन्ताओं के मारे सिर धुनता रहता होगा। यहाँ तक ध्यान का आपने अवकाश न जाने कैसे निकाल लिया।'

राजा ने परवाह नहीं की। हँसकर बोला 'अवकाश मिल जाया करेगा बहुत मिलेगा। मुजरा करने आया करूँगा।'

समाचार पाकर बाकी सातों रानियों ने आकर आरती उतारी। एक-दो चलतू बातें करके मानसिंह उस अन्तःपुर से चला आया।

मृगनयनी को उस दिन की शिक्षा देकर बैजनाथ अलग बैठा हुआ था। कला मृगनयनी के पास दूसरे कक्ष में थी।

मानसिंह ने आते ही पूछा 'कहिये आचार्य आपके नये शिष्य का प्रगति का क्या हाल है ?

बैजू ने उत्तर दिया, 'महाराज, वह पूर्व जन्म में संगीत का अवतार रही होंगी। मुझको अपना आचार्य-पद बनाये रखने के लिये विशेष अभ्यास करना पड़ेगा।'

बैजू के होठों पर मुस्कान थी परन्तु उस मुस्कान के भीतर सचाई की छाप थी और आँखों में उसका समर्थन था।

'वीणा के वादन पर अधिकार करने में समय कुछ अधिक लगेगा?' मानसिंह ने पूछा।

'बहुत कम। इतना कम कि मुझको आश्चर्य होगा। महारानी ने आज ही कहा कि गाने और बजाने की ऐसी कोई परिपाटी निकालो जिसमें समय कम लगे।' बैजू ने बतलाया।

मानसिंह हर्ष-मग्न होकर भीतर गया। मृगनयनी कला से वीणा के सम्बन्ध में बड़े उत्साह के साथ बात-चीत कर रही थी। उसको देखने पर मानसिंह के मन में उमड़ा—क्या यह कँगूरों और शिखरों पर बन्दर की तरह कूदती-फुदकती होगी? अह! कितनी सरल, सुन्दर और विनम्र है यह!! मैं इसकी स्वतन्त्रता को हरगिज नहीं छिनाऊँगा।

मानसिंह के आते ही उन दोनों की चर्चा बन्द हो गई। कला की आँखों पर पट्टी नहीं थी लगभग अच्छी होगई थी। डोरे कुछ लाल थे। मृगनयनी के होठों पर मुस्कान आई और गई।

'कला'—मानसिंह ने कहा—'महारानी का अभ्यास लगातार चालू रहे। देखूँ यह जल्दी है या तुम। तुम्हारी बराबरी पर आजायेंगी तभी इनको कुछ चैन मिलेगा। अब तक कितना अभ्यास कर लेती?'

कला विनय के साथ बोली—नम्रता में काफी बनावट थी—'मेरी बराबरी पर तो महीने दो महीने में ही आ जायेंगी। फिर आचार्य जो कुछ बतलाते रहेंगे उसको मैं जितना सीख पाऊँगी, सीख भी पाऊँगी या नहीं इसमें सन्देह है। क्योंकि महारानी जी तो बहुत जल्दी जल्दी सीख लेंगी

मैं सिद्ध हो जाऊंगी। स्वर भी सुन्दर बहुत अच्छा है। सबको सेवा करने का पुण्य मिल जायगा यही बहुत है। फिर चित्रकारी का क्रम आवेगा।

मानसिंह को अच्छा लगा।

'और चित्रकारी का श्रीगणेश कब से करायोगी?' मानसिंह ने पूछा।

'बहुत शीघ्र' रानी ने उत्तर दिया।

दासी द्वार की ओर से आई। मानसिंह ने पूछ लिया।

'क्या है?' उसने पूछा।

दासी ने उत्तर दिया — 'श्रीमन्महाराज, मन्त्री जी और आचार्य विजयजंगम आये हैं। मन्त्री जी ने तुरन्त ध्यान की प्रार्थना की है। बहुत आवश्यक कार्य है।'

'अभी आता हूं। ठहरो।' मानसिंह ने कहा।

दासी चली गई।

मृगनयनी बोली 'काम इकट्ठा हो गया है। निबट आइये।'

मानसिंह हँसा 'तुम्हारा समय पढ़ने, संगीत और चित्रकारी सीखने में लगेगा इसलिये मेरा समय मन्त्री जी बाटेंगे ही। थोड़ी देर में विजय जंगम थोड़ा बतायेंगे उसको भी सुनना।'

'सुनूंगी' — मृगनयनी बोली — 'आज जो कुछ सीखा है उस में भी आपको सुनाऊंगी। पहले मन्त्री जी की बात सुन आइये।'

मानसिंह उल्लास के साथ उस स्थान में गया जहां मन्त्री विजयजंगम और बैजू बैठे थे।

आते ही मानसिंह ने विजयजंगम से कहा, 'आचार्य आपको नई महारानी के पढ़ाने-सिखाने और शास्त्रों का ज्ञान कराने का काम सौंपता हूं। महारानी बहुत उत्सुक हैं। कल से आरम्भ कर दीजिये। आज थोड़ा सा श्रीगणेश हो जाय।'

वे तीनों मुँह लटकाये बैठे थे। मन्त्री व्यग्र था।

विजय पहले बोला 'महाराज, वीणा की झंकार का नहीं धनुष की टंकार का समय आ गया है—'

'क्या?' मानसिंह के मुँह से निकला।

मन्त्री ने बात पूरी की 'मांडू के सुल्तान गियासुद्दीन ने नरवर पर आक्रमण किया है।'

'यह समाचार कब आया?' मानसिंह ने धैर्य के साथ प्रश्न किया।

मन्त्री ने उत्तर दिया 'अभी घड़ी भर पहले। आसपास के गाँव उजड़ गये हैं। मगरोनी नष्ट कर दिया गया है। नरवर के चारों ओर घेरा पड़ गया है।

'सिकन्दर लोदी किधर है? किस दिशा में? कहाँ?

सिकन्दर लोदी दिल्ली में अपने सरदारों से उलझा हुआ है।

'गुजरात का महमूद?

'महमूद सौराष्ट्र के ठाकुरों और पुर्तगालियों में व्यस्त है।

'चित्तौड़ के महाराणा रायमल की सन्धि मांडू के सुल्तान से है। इधर महाराणा को हम अपना अगुआ मानते हैं। महाराणा जी सुल्तान का निवारण नहीं कर सके तो कोई बात नहीं क्योंकि सुल्तान जब स्वयं सन्धि-पत्र को मान्यता नहीं देता तब कोई उससे निबाह भी कैसे करा सकता है? मैं कूच कर देना चाहता हूँ। तुम महाराणा जी को समाचार भेजो। यह भी लिख दो कि दिल्ली के बादशाह सिकन्दर से सावधान रहें। यदि इस बीच में वह सिकन्दर से लड़ जायं तो हमारा उद्योग शीघ्र सफलता की ओर बढ़ेगा। चम्बल की सीमाओं को सतर्क रखना। मैं नरवर का उद्धार करके शीघ्र लौटूँगा।

मन्त्री की व्यग्रता चली गई। चेहरे पर उत्साह छा गया। बोला 'सेना की तैयारी का इसी समय ढिंढोरा पिटवाता हूँ। रात भर में तैयारी हो जायगी।

राजा ने स्वस्ति की।

बैजू सिगाई सी चुरा रहा था। राजा ने देखा।

कहा 'आचार्य बैजू तुम कुछ कहना चाहते हो।'

बोलने की इच्छा न रखते हुये भी उसके मुँह से निकला 'महाराज चन्देरी में सुल्तान का सूबेदार घरसौ भी दलबल लायगा। मालूम नहीं वह नरवर पर ही आ टूटेगा या ग्वालियर की ओर आयगा।'

राजा बोला 'मैं जानता हूँ। चन्देरी के राजसिंह का लोभ नरवर पर है। परन्तु मैं सावधान हूँ। ग्वालियर की पूरी रक्षा का प्रबन्ध करके ही कूच करूँगा।'

'कल से मैं अपने कार्य का आरम्भ कर दूँगा। युद्ध उसमें कोई बाधा नहीं डाल सकेगा।' विजय ने कहा।

'नहीं डाल सकेगा।' राजा ने समर्थन किया।

'तो कुछ क्षण आपकी बीणा और आचार्य बैजनाथ के गले का लाभ हो जाय।' मानसिंह ने अनुरोध किया।

मन्त्री ने उन दोनों की ओर निहोरे के भाव आँख फेरी जैसे विनती कर रहा हो कि टाल दो।

विजय बोला 'महाराज धनुर्वों की प्रत्यञ्चा का निरीक्षण करिए बाणों की नोकें टटोलिए कहीं भोथरी तो नहीं पड़ गईं। बीणा के नाद की ध्वनि और आचार्य बैजनाथ की तानों की भाँई सैनिकों के कान में भी पड़ेंगी फिर वे बस कूच करने की तैयारी न करके किसी न किसी बाजे को लेकर अपने राजा का अनुकरण करेंगे।'

मानसिंह ने हठ नहीं किया तुरन्त मान लिया। वे तीनों चले गये। मानसिंह मृगनयनी के पास पहुँचा। मन्त्री के आने का कारण बतलाया। युद्ध की बात को सुनकर मृगनयनी को अपने तीर कमान और बर्छे का स्मरण हो आया।

बोली 'महाराज की आज्ञा मिल जाय तो मैं भी युद्ध में अपने लक्ष्य-वेध की परीक्षा बैरियों पर करूं।'

मानसिंह ने उल्लास के साथ कहा 'अभी नहीं। युद्ध तो आये दिन होते रहते हैं। मांडू के सुल्तानों को नरवर की इन घाटियों में तोमरों ने कई बार हराया है सो आशा है अबकी बार भी सुल्तान का मुंह मोड़कर आऊंगा। तुम्हारी स्मृति मुझको जितनी शक्ति देगी उतना तुम्हारा साथ न देगा।'

मृगनयनी को कुण्ठा हुई—राजपूत स्त्रियां युद्ध में लड़ने नहीं जातीं वरन् उनको जौहर करने के लिये घर पर तैयार रहना पड़ता है। मुंह नीचा कर लिया।

'मेरी एक प्रार्थना है'—राजा ने विनय की—'तुम अपने कार्यक्रम को जारी रक्खो। गायन-वादन इत्यादि सब अच्छी तरह चलता रहे। चाहता हूं जब लौटूं तुमको खूब मोद-मग्न पाऊं। कला तुम्हारे साथ के लिये है ही। काम में लगी रहोगी तो उदासी नहीं आवेगी। महात्मा विजय काम को ही सब से ऊपर मानते हैं।'

मृगनयनी को लाखी का स्मरण हुआ। उत्कट कामना हुई, कहीं आज लाखी यहां होती।

चाह को न दबा सकी भरकर बोली 'लाखी को और भाई को राई से बुलवा लीजिये।'

मानसिंह ने तुरन्त हामी भरी 'अभी लो सांड़िनी सवार और उनके साथ तेज ऊंट भेजे देता हूं। रात में ही दोनों आ जावेंगे।'

मानसिंह ने अविलम्ब सांड़िनी सवार और ऊंटों के भेजने का आयोजन कर दिया। फिर कूच की तैयारी में लग गया। रात भर तैयारी करके सूर्योदय के उपरान्त सेना चल पड़ने के आदेश की प्रतीक्षा करने लगी।

एक घड़ी दिन चढ़े राई से सांड़िनी सवार लौट आये। एक ऊंट पर उनके साथ केवल बोधन पुजारी आया। उसने मानसिंह को इन दोनों के

विजाह गाँव के जाति-बहिष्कार और नटों के साथ वहीं भाग निकल जाने की कथा सुनाई।

अन्त में कहा 'महाराज वे दोनों अनहोनी कर गये। गाँव वाले नहीं सह सके। कुशल हुई कि वे भाग गये नहीं तो गाँव में उनकी बड़ी दुर्गति होती।'

'आपके रहते!' वह कष्ट के साथ मानसिंह बोला।

बोधन कुछ विचलित हुआ 'महाराज मैं क्या कर सकता था। शासन-बचन के सामने मैं छोटा सा पुजारी असमर्थ था।'

'आचार्य विजयजङ्गम भी शास्त्रों में पारङ्गत हैं। वह तो बिलकुल दूसरी बात कहते हैं। आपकी इस कठोरता की वह बहुत निन्दा करते हैं।'

'वह भ्रम में हैं। मैं उनसे शास्त्रार्थ कर सकता हूँ।'

'कब?'

'अभी। बुला लीजिए उनको। मैं बिना पुस्तकों की सहायता के ही उनसे अभी शास्त्रार्थ में दो-दो हाथ करने को तैयार हूँ।'

'मौलवियों और मुल्लाओं से भी कभी शास्त्रार्थ करने की कामना हुई तुम्हारे या तुम सरीखे पुरातन-पंथियों के मन में?'

'हुई दीनबन्धु, और कभी अवसर मिला तो पैर पीछे नहीं हटाऊँगा।'

'तुम्हारे पैरों का ही सब कुछ दिखलाई पड़ता है या आँखों को भी?'

'महाराज क्षमा करें हिन्दू माथ की आँख ब्राह्मण ही हैं। वह न देखें तो सब अन्धे हैं।'

'तुम्हारी आँखों ही राई गाँव के किसान-मजदूरों ने अटल और लाखीरानी के प्यार-सम्मान को परखा होगा?

और किसकी आँखों देखते महाराज वे?

'तुम सरीखे मूढ़ ही मिले राई के इन अन्धों को !

'महाराज क्रोध करें तो और न करें तो भी सच्चा ब्राह्मण और प्राचीन काल के शास्त्र-पुराण अटल हैं और रहेंगे।

'हे भगवन् क्या हमारे समाज के इन अन्ध-बहिरों को कभी सूझता सुनता करोगे ? या हम सबको डुबोकर ही रहोगे ?

'मैं जानता हूँ महाराज को यह सब भ्रम उस अधर्मी विजयजंगम ने दिया है। बुला लीजिये उसको और करा लीजिये अपने सामने मेरा और उसका शास्त्रार्थ।

'कितना समय लगेगा शास्त्रार्थ में ?

'एक दिन दो दिन चार दिन जितना समय जाय। यह उसकी हठ और हम दोनों के शास्त्रज्ञान पर निर्भर है।

'तो मैं तुरही रम्मट, शंख और ढोलों की हीसें जो नरवर पर धाये हुये बैरी का सामना करने के लिये पुकारों पर पुकारें लगा रही हैं उनको बन्द कर दूँ ?

'शास्त्र तो महाराज शास्त्र ही है। प्राण चाहे चले जायें परंतु शास्त्र की बात नहीं जा सकती।

'तुम्हारे अन्धविश्वास ने उन दो सुन्दर प्राणियों का विध्वंस किया ! उनकी हत्या तुम्हारे ऊपर है !!

'महाराज की जय हो। धर्म के लिये यह निरीह ब्राह्मण अपना प्राण देने को तैयार है। दीजिये दण्ड।

'मूर्खों को ब्रह्मा भी नहीं समझा सकते। मैं सीधी बात कर रहा हूँ तुम उल्टे बोले जा रहे हो। अभी तो मैं जा रहा हूँ। नरवर से लौटकर तुमको और तुम्हारी बात को समझूँगा।

बोधन पुजारी के रुष्ट विचलित मन में समाया राजा ने दण्ड को स्थगित कर दिया है पर देगा दण्ड अपने साले और समधिन का पक्षपात करके।

त्याग-तपस्या की वृत्ति से प्रेरित होकर बोला 'तो मैं रहूँ क्यों राई में ? चला जाऊँगा कहीं विदेश।

राजा क्षुब्ध हो गया। तीव्र स्वर में कहा 'चले जाओ जहाँ जाना हो। एक मूर्ख तो कम हो जायगा इस राज्य में।' फिर कुछ धीमा पड़ कर बोला 'तुम रहो या जाओ राई का मन्दिर तो मैं बनवाऊँगा ही।'

बोधन के दिमाग की चढ़ती हुई सनसनी कुछ उतरी। चुप रहा। राजा को जाने की जल्दी थी। बोधन आशीर्वाद का हाथ उठाकर चला गया। राजा को उसके जाते ही अपने क्रोध पर परिताप हुआ। साथ ही लाखी का चित्र आँखों में घूम गया—गले में मोतियों का हार डाला था मृगनयनी के प्रथम-मिलन के समय मुक्त और निस्संकोच भाव से सामने आई थी और अटल कितना सीधा अल्हड़ युवक था! मरवा दिया इसी पुजारी की करतूत ने!! कितना हठी मूर्ख है यह!!!

पुजारी आँख की ओझल हो गया और परिताप पस्त पड़ा।

मानसिंह मृगनयनी के पास विदा लेने के लिये गया। अटल और लाखी का वृत्तान्त सुनाया। मृगनयनी की उन बड़ी आँखों में से दो बड़े बड़े आँसू उमड़कर टपक गये। मानसिंह की विदाई ने उसको सँभाल लिया।

गद्‌गद् कण्ठ से मृगनयनी ने याचना की 'यदि उस ओर उनका कुछ पता लग जाय तो आप अपने साथ लिवा लायेंगे ?'

मानसिंह ने दृढ़ता-पूर्वक उत्तर दिया 'अवश्य। इस युद्ध के बाद ही जातपाँत के इस व्यूह से भी लड़ूँगा।'

सजल-नयन मृगनयनी ने आरतियों के साथ मानसिंह को विदा किया।

सबकी आरतियों और असीसों में मानसिंह ग्वालियर से उसी दिन मोर्चों की योजना बनाकर नरवर की दिशा में चल दिया।

[११]

ग़ियासुद्दीन खिलजी ने नरवर के पश्चिमी और दक्षिणी बाजुओं पर चौकियाँ बिठला दीं और अपनी सेना के बहुभाग को उत्तर और पूर्व की ओर फैला लिया। पश्चिमी और दक्षिणी दिशाओं में लम्बे और ऊँचे पहाड़ विकराल जंगल और बड़ी बड़ी घाटियाँ थीं। नरवरगढ़ का एक ही फाटक—चंगलपोल—दक्षिण की दिशा में था। नरवर की बस्ती परकोटे से घिरी हुई, किले के नीचे पूर्व से चंगलपोल नामक दक्षिणी फाटक तक फैली हुई थी। किले का ले लेना टेढ़ी खीर था परन्तु नगर के मिटाने में कम बाधा थी।

नरवर के दक्षिण-पश्चिम से बहती हुई सिन्ध नदी उत्तर का करवट लेती हुई पूर्व की ओर चली गई है। नगर और किले को सिन्ध ने जैसे तीन ओर से घेर रक्खा हो। नदी की पूर्व वाली मोड़ पर ग़ियास का शिविर था। चन्देरी से सूबेदार एक बड़ा दस्ता लेकर उसी दिन आ मिला था। एक ही दो दिन बाद ग़ियास ग्वालियर पर आक्रमण करने के लिये जाने को था। नरवर का भार चन्देरी का सूबेदार सम्हाले रहता। वहाँ ग्वालियर अधिकार में आया कि नरवर तो वैसे ही हाथ जोड़कर सामने आ खड़ा होगा। ग़ियास उसका बड़ा मुल्ला चन्देरी का सूबेदार और मटक सहज ही इस निष्कर्ष पर पहुँच गये। उस समय तक सुराही और प्याले ग़ियास के सामने नहीं आये थे। अभी संध्या होने में कुछ देर भी थी।

मुल्ला ने सुझाव पेश किया 'जहाँपनाह शहर को कब्ज़े में करके यहाँ मन्दिर और बुतों को तोड़ दें। इसके बाद सूबेदार के हाथ में घेरे को सौंपकर ग्वालियर की तरफ़ कूच करें तो बहुत अच्छा होगा।

ग़ियास को यह बात नहीं रुची। बोला 'शहर के मन्दिर और बुत तो हमारे बुजुर्ग पहले ही तोड़ चुके हैं।

'लेकिन नये तामीर हो गये हैं जहाँपनाह।

'क्या फ़ायदा इस प्रकार काम से ? हम तोड़ते जायें वे बनाते जायें अच्छा धन्धा रहा !

'जहाँपनाह हिन्दुओं को अपनी रखवाली का यक़ीन बुतों पर है। बुतों को तोड़ दीजिये, उनका यक़ीन टूट जायगा फिर कीड़ों-मकोड़ों की तरह बिलबिलाते फिरने लगेंगे और पनाह माँगने लगेंगे।

'यह सही है कि हिन्दुओं का दीन-ईमान और यक़ीन सैकड़ों हज़ारों देवताओं में बटा हुआ है इसलिये पेड़ों-पत्थरों को पूजते हैं मगर बुतों के मिटा देने से उस यक़ीन को कैसे ख़तम किया जा सकेगा ?

'इसका असर पड़ेगा जहाँपनाह किसी भी आफ़त के सिर आने पर वे बुतों की पनाह पकड़ते हैं। बुत टूटे यक़ीन उखड़ा और पनाह गई।

'और मौक़ा पाते ही फिर चिपट पड़े मन्दिर बनाने पर। मुल्ला जी, यों ही आम हिन्दुओं को चिढ़ाने से क्या फ़ायदा ?

'जहाँपनाह से मैंने अर्ज़ कर दिया है। दिल्ली के मुल्लाओं का यही फ़तवा है।

गियास कुछ चुप कर रह गया—दिल्ली के मुल्ला मुझसे भी बढ़कर हैं! काम बने चाहे बिगड़े इनके फ़तवे के सामने सिर को झुकाना पड़ेगा!! कठमुल्लों के सामने!!!

गियास ने कहा 'मैं रात में ग़ौर करूँगा। सवेरे हुक्म दूँगा। इतना अभी तै किये देता हूँ कि शहर पर ज़ोरदार हमला किया जायगा। शहर को क़ाबू में कर लेने के बाद क़िले की फ़तह या घेरा ज़्यादा आसान हो जायगा। अगर शहर को जल्दी हाथ में न कर सके तो सूबेदार को यहाँ छोड़कर ग्वालियर चल देंगे।

चन्देरी का सूबेदार उग्र प्रकृति का आदमी था। बोला 'जहाँपनाह शहर के हमले को कल रात के लिये तै करें ताकि मैं अभी से उसकी जुगत में लग जाऊँ। राजसिंह के पास एक दस्ता राजपूतों का है। वह हमले के लिये तड़पता रहा है।

'उसका यकीन किया जा सकता है ?

जहाँपनाह पूरा। उसका भाट उसे चैन न लेने देगा।

भाट !

'जहाँपनाह भाट दिन रात उसके कान में भरता रहता है कि दुश्मन से बापदादों के बैर का बदला न चुकाया और बापदादों से छीनी हुई ज़मीन को दुश्मन से वापिस न लिया तो राजपूत ही नहीं कुछ और है।

ख्वाजा मटरू अर्थ भरी दृष्टि से सुल्तान की ओर कई बार देख चुका था। सुल्तान की निगाह गई।

बोला 'ख्वाजा तुम कुछ कहना चाहते हो ?

'जहाँपनाह ऐसी तो कोई खास बात नहीं है —मटरू ने कहा— एक छोटा सा ख्याल उठा था उसको हुजूर कल तै ही कर देंगे। गुलाम की समझ में मन्दिर और मूरतों का तोड़ना बेवक्त होगा यों ही आम हिन्दुओं का दिल दुखाना फ़िजूल है।

गियास बोला 'यही मैं सोचता हूँ।

मुल्ला ने बेधड़क प्रश्न किया 'जहाँपनाह आम हिन्दुओं की हिम्मत को पस्त करने की यही तरकीब सब से अच्छी है।

मटरू ने फिर अर्थ भरी आँख घुमाई।

कुछ और कहना चाहते हो ? गियास ने पूछा।

मटरू ने उत्तर दिया,—'कुछ नहीं जहाँपनाह बातें करीब-करीब सभी तै हो चुकी हैं। नमाज़ का वक्त आ रहा है।

गियास समझ गया कि एकान्त में ही कुछ कहेगा। मजलिस खतम कर दी गई।

दो घन्टे के बाद सुराही और प्यालों के एक दो दौर होते ही मटरू और गियास रावटी के एक कोने में अकेले रह गये।

'कुछ कहना चाहते थे तुम ?' सिकन्दर ने मस्ती के स्वर में पूछा।

'हाँ जहाँपनाह'—मटक ने उत्तर दिया—'मर्द औरत—दो नट—इस गिरोह के मारे हैं। लाखी नरवर में है।'

'ऐं! क्या सच? इतने नज़दीक! यहाँ से आध कोस पर ही!! कमाल की खबर दी तुमने मिर्ज़ा मटक!!!'

'खबर सही है जहाँपनाह। लाखी आने के लिए क़रीब-क़रीब तैयार हो गई है। वे गहने और कपड़े उसने बड़े शौक और चाव से पहिने थे।'

'भाई वाह! भाई वाह!! इसी घड़ी हमला कर दो नरवर पर।'

'जल्दी न की जाय ग़रीब परवर। दोनों नट कल शाम तक नरवर शहर में किसी तरकीब से घुस जावेंगे। वहाँ उनके बाक़ी साथियों के बीच में होगी वह। ये नट वहाँ पहुँच कर कल रात एक बँधा हुआ इशारा करेंगे। समझ लिया जावेगा कि लाखी उन लोगों के साथ उस मक़ाम पर है। फिर शहर पर हमला करने की इसी पल पूरी कोशिश की जावे।'

'शाबाश मेरे मटक! मजलिस में ज़ाहिर करने लायक न थी यह बात।'

'शहर को ले लेने के बाद मन्दिर मूर्तियों को हाथ न लगाया जावे जहाँपनाह। हिन्दुओं को फुसलाने का यही तरीक़ा शायद, सबसे अच्छा रहेगा। लाखी आखिर हिन्दू ही है। मगर मुल्लाजी की समझ में यह बात नहीं आवेगी।'

'भला है। बेवकूफ है!! नालायक है!!! जाहिल है यह मुल्ला!!!! मुल्ला नहीं कठमुल्ला है। निकाल दो उसको छावनी में से। मांडू से भी करदो उसका काला मुँह। सल्तनतों की बरबादी की जड़ में ये मुल्ले ही तो रहे हैं।'

'जहाँपनाह कसूर माफ करें और गुलाम के सिर को बख्शें। यह मौका मुल्लाओं के निकालने का नहीं है। सिपाही नाराज और बदिल हो जायेंगे। मांडू चलकर वहाँ हुजूर कुछ अमल करें।

'मैं कसम खाता हूँ, बघाता कि मांडू लौटने पर इन सरकश काजी मुल्लाओं को निकाल कर ही दम लूँगा।

मटक मन ही मन बहुत प्रसन्न था। सिर नीचा करके प्रसन्नता को छिपाने का प्रयत्न करने लगा।

गियास ने कहा तो फिर कल की रही।

मटक ने बड़ी नम्रता के साथ विनय की जहाँपनाह ने जो तै किया है वही होगा। मैं नटों से सारी तरकीब और फितरत को ब्योरेवार तै करके चौथे पहर के करीब अर्ज कर दूँगा।

गियास बोला 'ठीक है। फौज तैयार रहेगी। शाम के पहले ही मोर्चों की बाँध तै हो जायगी। फौरन नक्शा बनाकर काम शुरू कर दिया जायेगा।

'हुजूर।

'अच्छा वे नट कैसे आ गये यहाँ तक ?

'उनको सबक सुझाकर मांडू लिये आ रहे थे कि हमले की खबर पाकर रुक गये। उनमें से दो खबर देने और मदद लेने के लिये रसद की तलाश में इधर आये मगर लाखी बाकी नटों के साथ शहर में चली गई।

'क्यों ?

'जहाँपनाह इस बात का पूरा पता तो उन लोगों के मिलने पर ही लग सकेगा।

'सब बेवकूफ हैं। काम करने का ढंग नहीं जानते।

'जहाँपनाह।

तुम भी बददिमाग हो ! मगर खैर ।

मटरू ने सिर नीचा किये हुये दांत भींचे ।

गियास एक क्षण बाद बोला 'खैर कल का काम बहुत होशियारी के साथ किया जाय ।

मटरू ने कहा 'जहांपनाह ।

[१४]

नरवर के नगर-कोट में तीन फाटक थे एक उत्तर की ओर और दो पूर्व दक्षिण में। दीवारें ऊँची थीं और फाटक मजबूत। हाथियों के कवच-रक्षित माथे को फोड़ने के लिये फाटकों के बाहरी ओर बड़े मोटे नुकीले लोहे के कीले जड़े हुये थे। खाद्य-सामग्री नगर और किले के भीतर कम से कम एक वर्ष के लिये पर्याप्त थी। स्वच्छ मीठे पानी के बहुत से अच्छे कुयें नगर में और अनेक तालाब किले के भीतर। रक्षा के लिये लड़ने वाले और आक्रमणकारियों का भुर्ता कर देने के लिये फाटकों की बुर्जों और कोट मीनारों पर भारी-भारी चट्टानें जिनको नीचे ढकेल दिया जाय तो नाक भी टूटे। नरवर वालों को विश्वास था कि साल भर तक तो शत्रु उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता फिर राजा मानसिंह सहायता के लिये न आ पहुँचेंगे क्या ?

सुल्तान की सेना को अपने पुराने अनुभवों के आधार पर विश्वास था कि हिन्दुओं में लड़ने वाले दस प्रतिशत से भी कुछ कम होते हैं। ये दस भी आपसी लड़ाई झगड़ों के कारण एक दूसरे की गर्दन काटने में व्यस्त।

पर उस दल में से प्रत्येक को गर्व था मैं अकेले ही शत्रु को मार भगाऊँगा, अपने समोंगी की सहायता क्यों लूं जिससे अपने पुरखों की कमोती कालिख लेनी है और ऊपर की किसी अठारवीं पीढ़ी वाले पुरखे के अपमान का जिससे प्रतिशोध करना है ?

नरवर में इस वातावरण में लड़ाई की उमंग थी शत्रु का आवाहन करने उस पर टूट पड़ने और मार कर मर मिटने का मोह और उत्साह था। वह अपने पुराने करतब और नई टकसाली बहर की भाषा में मारू के गानों से स्फूर्ति साहस और धैर्य देने का प्रयास पर प्रयास कर रहा था। दमामों, ढोलों और तुरहियों के घहर-घहर नद होने वाले नादों द्वारा जनता की स्नायुओं को प्रबलता और स्पन्दन दिया जा रहा था।

चमचमाते हथियारों मूंगिया रंग के कपड़े पहिने चमकते हुये घोड़ों पर सवारों और हट्टे-कट्टे ऊंचे पूरे जवानों को देख-देखकर जनता को स्फुरण मिल रहा था।

परन्तु साधारण जनता के मन में छिपा बैठा हुआ कोई कभी-कभी कह देता था—पहले भी तुर्क आये हैं यहाँ जिनका सामना इसी तरह के योद्धाओं ने किया और कट मरे मगर लुटा पिटा और मिटा अबकी बार भी वैसा ही हो सकता है। पर हमारा राजा मानसिंह तो दूर नहीं है वह आयगा—हाँ यदि नये ब्याह की मस्ती में न झूम गया तो!

फाटक बन्द कर लिये गये थे बाहर भीतर से लोगों का आना निषिद्ध कर दिया गया था। नगर की जनसंख्या थोड़ी सी बढ़ गई परन्तु इतनी नहीं कि अन्न के लिये कोई विशेष चिन्ता करनी पड़े। फिर भी दो दिन के भीतर ही अन्न का भाव चढ़ गया। घुघुने मोल बिकने लगा। व्यापारी माथे को ठोंक-ठोंक कर गर्दन हिला-हिला कर कहते थे सब व्योपार चौपट हो गया! उनका मन भीतर ही भीतर गुदगुदाता था चलता रहे घेरा दो चार महीने तो एक-एक के सौ-सौ हुंड पर हल है! और अगर अगू बीत ही गया तो अन्न वस्त्र इत्यादि इनको भी चाहिये बहुत सस्ता भी खरीदेगा तो घुघुने में तो कसर लगने की नहीं।

नगरपाल और जिलेदार के पास शिकायत पहुँची। उन्होंने समाधान किया लड़ाई के युग में ऐसा हो ही जाता है धीरज से काम लो ज्यादा मजदूरी करके कमाओ खाओ। वे दोनों और अधिकतर सोचते थे सेठ साहूकारों को नाराज किया नहीं कि भूखों मरने की नौबत आई।

लाखी अटल और नटों के पास अपने निज का अन्न वस्त्र था इसकी चिन्ता नहीं थी। कम से कम कुछ दिन। जब चुक जायगा तब क्या होगा? कब तक इस अनजानी जगह में घिरे रहना पड़ेगा यह समस्या अटल और लाखी को असमंजस में डाले हुये थी। परन्तु उस समय प्रश्न वर्तमान का था।

वे दोनों नटों के साथ ही नगर के एक खुले स्थान में पेड़ों के नीचे जा ठहरे थे। उनके आस-पास इधर-उधर से आये हुये कुछ और लोग ठहरे हुये थे। वह ठौर दक्खिनी फाटक के निकट था। नट लोगों की बस्ती में इन लोगों को स्थान नहीं मिल सका। अटल और लाखी नटों के समूह में होते हुये भी उनसे कुछ भिन्न एक अलग सी इकाई बनाये थे।

पास के ठहरे हुये लोगों ने भान लिया था कि यह समूह नटों का है परन्तु अटल और लाखी की अलग इकाई ने उनके मन में सन्देह उत्पन्न किया—ये कोई और हैं। प्रचलन और अभ्यास के अनुसार एक ने इन दोनों की जातपांत पूछी।

अटल ने बतलाया 'गूजर ठाकुर हैं।

नायकिन के होठों पर बरबस मुस्कराहट कौंध गई और आँखों की पुतलियाँ घूम गईं। पूछने वाले का जातपांत विवेक सतर्क हुआ।

वह बड़ी दीनता के साथ बोला 'दोनों जनें गूजर ठाकुर हो। नट नहीं हो यह तो मैं पहले ही समझ गया था।

नटिनी ने पीठ फेर ली मानों असहमति प्रकट कर रही हो।

बोली 'कोई सही' नट नहीं हैं ऊँची जात के हैं। क्या करोगे पूछकर?

कुछ न बतलाकर वह बहुत कुछ कह गई।

प्रश्नकर्ता ने नम्रता के साथ कहा 'भाई री मुझको क्या करना है। पर यह तो पूछा ही जाता है। सब पूँछते हैं। कठिन समय में जान लेना पड़ता है कि किसके हाथ का छुआ पानी पियें और किसके हाथ का न पियें। मुझे और करना ही क्या है। मैंने पूछ लिया तो कौन कुछ बुरा किया दूसरे लोग पूछेंगे।

नायकिन पीठ करे ही बोली 'यह गूजर ठाकुर हैं और बनी भी ऊँची जात की है। जाओ अपना काम देखो।

वह अपना काम देखने लगा—अर्थात् उसने अपने सहचरियों से कह दिया कि दोनों भिन्न भिन्न जातियों के हैं और कुछ काल में जाना है। युद्ध का काल था। लोगों को अपनी-अपनी कठिनाइयों की गुत्थियाँ पहले सुलझानी थीं। 'देखा जायगा।' कहकर वे अपनी चिन्ताओं में डूबने उतराने लगे।

नगर की घनी बस्ती की तरफ से कुछ शोर की आवाज़ आई। उसी ओर अटल ने कान लगाये। कुछ लोग भागते हुए आये।

'घुस आये! मर गये!!

भागो! छिप जाओ!!

तुर्कों ने मार डाला!!!

घायल कर दिया! खून की नदी बहा दी!!

नटों ने जल्दी जल्दी एक दूसरे की ओर देखा और इत्मीनान के साथ अपने खुले सामान को ढकने लगे। नायकिन ने धीरे से एक नट के कान में कहा 'इन दोनों को देख रखना कहीं लुक छिप न जायें।'

नट ने सतर्कता का सिर हिलाया।

अटल का चेहरा विकृत हुआ। लाखी ने होंठ चबाए और कमर में पड़ी हुई छुरी पर हाथ डाला। सोचा 'पहले भी बहुत सी राजपूतनी चिता पर भस्म हो चुकी हैं। भगवान की दया से मैं छुरी का पकड़ना और चलाना भी जानती हूँ। तुर्क मुझको नहीं छू सकेंगे।' अटल के विकृत चेहरे पर उसका ध्यान नहीं गया।

शोर गुहार करने वाले जैसे ही निकट आये उन से अटल ने और कइयों ने प्रश्न किये

'तुर्क किस फाटक से घुस आये हैं?

कहाँ लूटमार कर रहे हैं?

कितनी दूर हैं यहाँ से?

'तुम कहाँ जा रहे हो ?'

'अब कहाँ छिपें ?'

परन्तु वे किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं दे पा रहे थे। इसी क्षण दो राजपूत सवार दौड़ते हुये आये।

एक चिल्लाया 'घबराओ मत ! तुर्क नहीं आये हैं। तुर्क दूर हैं।'

लोगों के जी में जी आया। सबों ने उन सवारों को घेर लिया। फाटक पास में था।

अटल ने पूछा 'क्या बात हुई ? किसने किसको घायल किया है ?'

सवार ने उत्तर दिया 'कुछ भी नहीं हुआ। था ही जरा सी बात का बतंगड़ हो गया। कितने निकम्मे हैं ये लोग ! व्यर्थ की भाग-दौड़ चिल्ल-पुकार मचा दी !!'

'फिर भी ? क्या बात थी ?' अटल ने प्रश्न किया।

सवार ने बतलाया 'बात यह हुई कि बीच वाले फाटक पर बाहर की ओर से एक स्त्री और पुरुष रोते चिल्लाते आये। उनको तुर्कों ने पीटा-पाटा होगा। घायल हैं। फाटक खुलवाने के लिये हाहा-दैया की। बिचारे निहत्थे हैं। हम दोनों ने फाटक खोलकर उनको भीतर कर लिया और फाटक ज्यों के त्यों बन्द कर दिये। वे भीतर आने पर भी रो रहे हैं। कहते हैं नट हैं। यहाँ कोई नट ठहरे हैं ?'

अटल ने संकेत से बतलाया। लाखी भीड़ चीर कर आगे आई। आँखों से कौतूहल जाता रहा था। चेहरे पर मुर्दनी सी छा गई थी। पुतलियाँ निकल पड़ने को।

'कहाँ हैं वे दोनों ?' लाखी ने भर्राये हुये गले से पूछा।

'उस घर की ओट में ठियसिये पर बैठे हैं। उनको पानी पिला दिया गया है।' सवार ने उत्तर दिया।

नायकिन और नट उसी दिशा में दौड़े गये।

सवार ने अटल से प्रश्न किया 'तुम नट नहीं हो क्या ?'

अटल बोला 'नहीं मैं गूजर ठाकुर हूँ।' उसके स्वर में अभिमान था।

'कहाँ के आये हो ?'

'अमरौली के।'

'अमरौली के ! मैंने तो कभी पहले नहीं देखा। मैं भी गूजर ठाकुर हूँ। यहाँ गूजरों की बड़ी बस्ती है। किले के भीतर दक्षिणी भाग में तो गूजर ही गूजर रहते हैं। तुम अमरौली में कहाँ से आये ?'

'ग्वालियर से आये थे अमरौली।'

'फिर नटों में कैसे ?'

'साथ पड़ गये।'

सवार ने अपनी नातेदारियों का बखान शुरू किया और अटल की भी पूछता परन्तु उधर से नट दो घायलों को अपने बोझ में लादे हुये ले आये।

अटल का सन्देह उन दोनों के निकट आने पर पुष्ट हो गया—पिल्ली और पोटा थे। खून में तर।

जब ये सब अपने डेरे के पास आ गये पिल्ली ने नीची निगाहों एक आँख की कनखी को मिचका कर संकेत किया। नायकिन का चेहरा खिल गया परन्तु उसने अपने हर्ष को तुरन्त दबा लिया। उन्हें आस-पास के लोगों की भीड़ घेरे चली आ रही थी।

नायकिन ने दृढ़ स्वर में प्रतिवाद किया 'हम लोगों के पास दवाइयाँ हैं और जन्त्र-मन्त्र। जल्दी ठीक कर लूँगी। अपने अपने डेरे पर जाओ।'

लोग हट गये। घावों को देखना चाहते थे परन्तु न देख पाये। सोचा दूर से ही देख लेंगे।

नायकिन ने एक ओर पोटा को लिटा दिया और दूसरी ओर पिल्ली को। फटे कटे पुराने कपड़ों की छाया ओर आड़ कर ली।

अटल पोटा के पास आ बैठा और लाखी पिल्ली के पास। नायकिन और अन्य नटों ने उन दोनों के रक्त को धोया-पोंछा। घावों का कहीं कोई निशान न था। दूर से देखने वाले आड़ और छाया के कारण अपना कुतूहल शान्त न कर सके।

एकान्त पाकर लाखी ने पिल्ली से स्नेह के स्वर में पूछा 'किसने मारा? चोटें कहाँ लगी हैं? कहाँ थीं तुम? कहाँ रह गई थीं?

पिल्ली जरा सी मुस्कराई। उत्तर दिया 'चोट पोटा को लगी है मुझको नहीं लगी है। उसका खून मेरे कपड़ों में मिल गया।

'पोटा को चोट कैसे लगी?

'एक पत्थर से फिसल पड़ा। पाँव में पेड़ का सूखा ठूँठ घुस गया। बस इतनी ही तो चोट है। लेकिन खून बहुत निकला है।

फिर तुर्कों के हाथ घायल हो जाने की कहानी! यह सब क्या है?

वैसे फाटक खुलते नहीं इसलिये मक्कर बनाना पड़ा।

लाखी हैरान सी हुई। पिल्ली ने हाथ के संकेत से बरज दिया।

लाखी ने पूछा 'तुम दोनों रह कहाँ गये थे?

'अरी रानी सब बतलाऊँगी। थोड़ी देर में बतलाये देती हूँ। जरा ठहर पकड़ो।

कोई और काम था नहीं। लाखी सुनने के लिये अधीर हो गई। पिल्ली स्वांग कर रही थी। उसने विषयान्तर किया।

बोली 'यहाँ कोई कष्ट तो नहीं है?

लाखी ने कहा 'खुली जगह ठंड के दिन। वैसे कोई बात नहीं। रास्ते में यहाँ घर तो नगर में ही है।

'यह बातचीत तो नहीं पूछी किसी ने ?

'पूछी थी। उन्होंने कह दिया गूजर हैं।

'और तुम्हारी बात ?

'मेरी किसी ने नहीं पूछी। पर कुछ लोगों को सन्देह हो गया। सो डर की कोई बात नहीं। यहाँ गूजर बहुत हैं।

'कैसे मालूम हुआ ? क्या तुमने पूछ-ताछ की थी ?

'नहीं। उनको एक सवार से बातचीत करते हुये मालूम पड़ा। मैंने सुन लिया।

तुम्हारी जात के भी होंगे लोग यहाँ ?

हो सकते हैं।

'चिन्ता मत करो। मैंने पक्का प्रबन्ध कर लिया है।

कैसा ?

बतलाऊँगी। अटल को यहाँ नहीं रहना है।

'न जाने क्या कह रही हो। खोलकर सब बात बतलाओ।

'किसी से कहोगी तो नहीं ?

'नहीं कहूँगी।

'कुँवर साहब से भी ?

'हाँ—कहो भी मैं तो सुनने को अकुला रही हूँ।

'तुम अगर जाहिर कर दोगी तो तुम्हीं को नुकसान होगा।

कैसा ? मैं किसी से नहीं कहूँगी।

'कह दोगी तो यह बात फैल जायगी कि तुम और कुँवर जी अलग अलग जाति के हो। पर से भाग निकले हो। ब्याह किया है इसलिये दंड के भागी हो। लड़ाई के दिन हैं। किलेदार और नगरपाल किसी अँधेरी कोठरी में डाल देंगे। फिर आगे की सब आशायें सूनी पड़ जायेंगी।

'कह दिया कि नहीं कहूँगी। वैसे ही डरवा रही हो।' उसी समय उसकी आँखों में मानसिंह और निन्नी का चित्र घूमा। अटल राजा के नातेदार हैं फिर भी हम लोगों के साथ अत्याचार किया जावेगा? राजा ने भी इसी तरह का बाहर जात ब्याह किया है। पर वह राजा है और हमलोग गरीब! राजा ने किया तो पाप नहीं हुआ हमने किया तो पाप बन गया! इस विकट पहाड़ी किले की किसी अन्धी कोठरी में डाले जायँगे। क्या पिल्ली सच कह रही है! जातपांत के नियम कठोर होते हैं सच कहती होगी। लाखी ने सोचा। मनमें फिर कुतूहल उठा। कहाँ रहे वे दोनों इस बीच में? कौनसा पक्का प्रबन्ध किया है जिसका अभी-अभी इसने संकेत किया था?

पिल्ली चुप थी। लाखी उसका मुँह निहार रही थी।

'जरा दम लेलूँ फिर बताऊँगी।' पिल्ली ने कहा और आँखें बन्द कर लीं।

[१५]

थोड़ी देर के बाद अटल भी निन्नी को देखने के लिए आया। शिष्टाचार बर्तने के उपरान्त वह शीघ्र ही लौट जाना चाहता था। निन्नी एक चादर को ओढ़े हुए बैठ गई। उसके चेहरे पर थकावट थी परन्तु पीड़ा का कोई चिह्न न था।

बोली 'मैं लाखी को सारी कहानी बतला चुकी हूँ। भैंसे मगर भीतर आ नहीं पाते। पीड़ा को गिरने से चोट लगी है मुझको कोई चोट नहीं आई है। किसी से कहना मत।

'मुझे पता चली है।' अटल ने कहा।

'सारी बात अभी कहाँ बतलाई है —लाखी बोली —कहूँगी भी बतलाऊँगी। यह बाहर कुछ कर-धर आई है, पर अभी बतलाया नहीं है।

अटल रुक गया। सुनने के लिये उत्सुक था।

निन्नी ने लाखी की ओर मुँह करके कहा 'गायकिन को किसी बहाने से चुपचाप बुला लाओ।

लाखी के पीठ फेरते ही निन्नी ने कंधे पर से चादर को नीचे खिसकाया और अटल पर आँख चलाई। अटल ने ग्लानि के मारे सिर नीचा कर लिया। लाखी की आँख में कपड़े के खिसकने की झाँई पड़ी और उसने गर्दन को जरा सा मोड़कर कनखियों देखा—सब देख लिया। चली गई।

निन्नी ने कपड़े को जहाँ का तहाँ कर लिया। मुस्कराकर बोली 'यहीं से चल देना चाहिये कुंवरजी। बहुत बड़ी आफ़त आने वाली है।

'जो तो दिखलाई ही पड़ रही है।

'नहीं जो दिखलाई नहीं पड़ रही है वह।

'कौन सी? कैसी?

'तुम हमेशा रूखे-रूखे ही बोलते हो।

नहीं तो। विपद-काल है न।

'अच्छा अच्छा। यहां से निकल चलें तब कभी बात करेंगी।

सुल्तान कूद आया है। हम लोग पता लगा आये हैं। बहुत बड़ी फौज साथ में है। हाथी वाले आदमी अनगिनती। आज नहीं तो कल नगर और किले पर चारों तरफ से चढ़ाई होगी और हम सब कतर डाले जायेंगे। इसी बीच में जातपात के विरुद्ध को उखाड़-पछाड़ हो गई तो न इधर के रहे न उधर के। यहां से निकल चलो।

लाखी नाटकिन को लेकर आ गई।

'कैसी की है बेटा?' उसने दुलार के साथ पूछा।

पिल्ली न अपने धन की कथा सुनाई और नगर बाहर हो जाने की योजना को बतलाया—'दक्षिण फाटक के पास बाजार से लगे हुए ऊँचे ऊँचे पेड़ चले गये हैं। इन्हीं पर होकर बाहर निकल चलना चाहिये। दक्षिण की तरफ पहरे चौकी नहीं है। रात में चलकर सबेरे तक साफ जगह पर पहुँच जायेंगे।

अटल ने पूछा, 'तुम्हारे इन जानवरों का अपने समाज का क्या होगा?

उसने उत्तर दिया 'अपने पास गहने और टके हैं बहुत से खरीद लेंगे। दो दिन के खाने भर के लिये अब ले लेंगे। बहुत है। प्राण तो बच जायेंगे। इस नगर में अपना क्या रक्खा है जिसके लिये अपने को बलि कर दें?

अटल के मुँह से निकला 'और यदि हम लोग न जायें तो?

नाटकिन अविलम्ब बोली 'तो हम लोग चले जायेंगे।

'तुमको यहां छोड़ जाने में दुख होगा। और कोई बात नहीं। किसी से कहना नहीं कुँवर जी नहीं तो हम दोनों को यहां के सिपाही मार डालेंगे।

अटल ने कहा 'नहीं हम नहीं कहेंगे। सोचता हूँ हम ही यहाँ क्यों पड़े रहें ? पर निकल कैसे जायेंगे सो समझ में नहीं आता। दूसरे लोग इतना जानते हैं कि यह कैसे जायगा ? उसका क्या यहीं छोड़ जाओगी ?'

'नहीं' नायकिन ने उत्तर दिया—'मेरे पास ऐसी जड़ी-बूटियाँ और मन्त्र हैं कि साँझ-साँझ तक उनको चंगा कर दूँगी। हमारे पास रस्से हैं। कोट के कँगूरों से एक छोर बाँधकर पास वाले किसी पेड़ पर दूसरे छोर का फन्दा डाल दिया जायगा और उसके सहारे उतर जायँगे। भीतर-बाहर कोई भी न लख पायगा। कोट के नीचे यदि बाहर घूम रहे होंगे तो पेड़ पर पहुँच जाने के कारण वे भी पकड़धकड़ नहीं कर पावेंगे। दूसरे ऊपर से इधर उधर की टटोल करके फिर उतर कर भाग बढ़ जायँगे। ये दोनों जगहों को और रास्ते को अच्छी तरह देख आये हैं।

अटल सोचने लगा।

एक क्षण बाद बोला 'बड़ी जोखिम का काम है। रात में होगा। सोचकर साँझ तक बतलाऊँगा।'

पिल्ली ने कहा 'तब तक जरूरी सामान की पोटलियाँ बाँध लो नायकिन जिसमें रात में गड़बड़ न करनी पड़े।'

अटल ने पूछा 'रात में कब चलना है ?'

पिल्ली ने उत्तर दिया 'सन्नाटे में आधीरात के लगभग। आज ठण्ड है नायकिन ईंधन कुछ ज्यादा इकट्ठा कर लेना। इतना कि एकदम बहुत उजेला होजाय और घण्टे-आध घण्टे में जलकर अंधेरा छा जाय। लोग सो जायगे चाँदनी डूब जायगी और हम लोग चुपचाप चल देंगे।'

'कहीं बीच में पहरे वाले आ जायँ तो ?' अटल बोला।

'पहरे वाले बुर्जों और मीनारों पर रहते हैं। देख तो रहे हैं। आजायेंगे तो कह देंगे कि हम लोग बाहर वालों की आहट लेने के लिये कोट पर गये थे। जब वे चले जायेंगे तब हम लोग खिसक देंगे।'

लाखसिंह और अटल वहाँ से चले आये। निन्नी ने लाखी को रोक लिया,—'थोड़ी देर यहीं बैठो। बातें करेंगी।

वह थम गई। चेहरे पर बहुत उदासी थी।

निन्नी बोली 'घबराओ मत और न मन को गिराओ। अच्छे दिन आते हैं।

लाखी का चेहरा तमतमा गया। 'आग लगे इस बात-चीत में। जानती नहीं थी मैं। उसने कहा।

'मान लो कुंवर जी हम लोगों के साथ न गये और तुमको यहीं रह जाना पड़ा, फिर या यहीं अहीर गूजरों की लड़ाई तब क्या करोगी?

'मर जाऊँगी और क्या करूँगी?—पाव वालों या तुर्कों के हाथों मारी जाने से तो अपनी छुरी से मर जाना अच्छा।

'राम! राम!! कैसी बात करती हो!!! ये दिन तुम्हारे मरने के हैं!!!! मर जावें तुम्हारे बैरी। जिओ मौजें करो और किसी बड़े राज की रानी बनो।'

'रानी बनना जिसके भाग में लिखा था सो बन गई।

'तुम्हारे भाग्य में और साफ लिखा है। ऐसी रानी बनोगी कि लाखपति वाले पैरों की धूल चाटते-चाटते निहोरे करेंगे।

लाखी के नथने फूल गये। श्वास प्रश्वास के वेगों के बीच में छाती उठने-गिरने लगी। गले की नसें उभर आईं। आँखों में आँसू आ गये।

निन्नी ने बड़े प्यार के स्वर में कहा 'कैसी चम्पा-चमेली सी हो मेरी लाखी! तुम्हारे रोने से मेरा कलेजा फटा जा रहा है।

लाखी के आँसू भरे नयनों के भीतर पुतलियों में से चिनगारियाँ सी छूकर वहीं विलीन हो गईं।

निन्नी कहती गई, 'यहाँ से भाग ही देना चाहिये आज ही रात में। न तो यहाँ बात छिपेगी और न जान बच पावेगी। हम लोगों को कसम बराई

जावेगी तो हमें भी सच खोलना पड़ेगा। फिर घात वाले पीछे डालेंगे। ऊपर तुर्क सिपाही चुप पड़े तो कुगति हो जावेगी। सुल्तान बड़ा अच्छा है पर जाते के समय वह हर एक सिपाही के साथ तो रहेगा नहीं।'

पिल्ली ने उसकी ओर देखा। कुछ क्षण चुप रही। लाखी धीरे-धीरे शान्त हो रही थी।

पिल्ली एकाएक बोली 'तुम्हारे रानी बनने में दो तीन दिन से अधिक की देर नहीं है।

लाखी ने आंसू पोंछे। उसने प्रश्नसूचक दृष्टि से पिल्ली की ओर देखा।

पिल्ली ने यथाशक्ति से कहा 'तुम इतनी सुन्दर सलोनी हो कि मांडू का सुल्तान तुमको अपनी गोद में बिठलाने के लिये पलक-पांवड़े बिछा देवेगा। वह तो तुम्हारे ऊपर प्यार बरसाने के लिये मानतायें मना रहा होगा।

लाखी के कानों में सनसनाहट छा गई। आंखें विस्फारित हो गईं। देह हिल गई। पिल्ली ने ठोका मार कर कहा। बोली 'मैं झूठ नहीं कह रही हूं। यही बात तो बतलानी थी जिसको अभी तक मैं अपने मनमें रक्खे हुये थी।

लाखी के बैठे हुये गले से निकला —क्या?

पिल्ली ने उमङ्ग के साथ कहा 'खबरदार तब तक किसी से न कहना जब तक कि काम पूरा न हो जाय। कह बैठा तो हमारा कुछ भी नहीं बिगड़ेगा। कुँवर भी तुमसे नाराज हो जावेंगे। जाति में यों ही न रह पाओगी। अपना तुमको चाहिये नहीं। निन्नी मौज के साथ ग्वालियर की रानी बनी रहे और तुम मारी-मारी फिरो!

लाखी ने अनुरोध किया 'पूरी बात कहो। अभी तो कुछ भी समझ में नहीं आया।

'पूरी ही सुनाती हूं' —पिल्ली बोली,—'पूरी सुनना। मैं और पोटा जब तुमसे बिछुड़े तो एक चौकी पर पकड़ लिये गये। चौकी वाले सुल्तान

के सामने ले गये। उनको हम लोगों ने सारी कथा सुनाई। तुम्हारा हाल सुनकर सुल्तान को बड़ी दया आई। जब तुम्हारे रूप का बखान सुना तो वह उछल पड़ा। बोला, मैं ऐसी रूप वाली को ब्याही से ब्याह लूँगा और अपनी रानी बनाकर रक्खूँगा। हम कह आये हैं कि दो तीन दिन में लिये आते हैं। रात को यहां से बाहर होते ही जंगल में सवारी के लिये हाथी मिलेगा और बात की बात में सुल्तान के सामने पहुँच जाओगी जहाँ सोने मोतियों के ढेर और मखमली पलंग तुम्हारी बाट जोह रहे हैं। हम लोगों को तो अब यहाँ रहना नहीं है। न भी आ पाय तो सुल्तान के सिपाही हमको नहीं सता पायेंगे। वैसे ही उनको बतलाया कि हम कौन हैं हमको छुयेंगे भी नहीं। तुम्हारी तुम जानो। सारी बात बतलादी। जल्दी से तै कर लो जो कुछ करना हो।

लाखी ने पीठ फेर ली और कुछ क्षण तक नाक और गले को साफ करती रही। जब उसने पिल्ली के प्रति मुँह फेरा आँखें लाल थीं और चेहरा फीका।

लाखी ने कहा 'उनका क्या होगा?—कुँवर जी का?

पिल्ली ने उत्तर दिया 'सुल्तान के दीवान बनेंगे और क्या होगा?'

लाखी ने चेहरा नीचा कर लिया। होठ हिल रहे थे और भौंहें फड़क रही थीं। पिल्ली ने इतना ही देख पाया। थोड़ी देर बाद जब सिर उठाया उसका चेहरा लाल था और आँखें झुकी हुईं।

इधर-उधर देखकर लाखी ने धीरे से कहा 'चलूँगी तुम्हारे साथ। और उनको भी ले चलूँगी। आज ही चल दो। एक बात पूछूं तो बतलाओगी?

'पूछो।

'वह तुमको चाहते हैं?

'ठीक नहीं कह सकती। शायद चाहते हैं।

'तो तुम उनके पास बनी रहना, उनको सुख पहुँचाना।

'मैं तो यहीं चाहती हूँ। उनसे इस समय की कोई बात अभी मत कहना। बाहर निकल चलने पर सब अपने आप खुल जायगा। यहाँ से रस्से के सहारे जैसे ही पेड़ पर पहुँचे मुँह की सीटी दी कि हाथी सवारी के लिये आ गये। उधर हमलोग सुल्तान के पास पहुँचेंगे इधर उसी पेड़ और रस्से के सहारे सुल्तान की सेना का एक बड़ा भाग नगर में घुस आवेगा। फिर सुन लेंगे कि सुल्तान नरवर का भी राजा हो गया और तुम मांडू और नरवर की महारानी।' पिल्ली का उत्साह जोर पर था।

लाखी के होठों के एक कोने में मुस्की सी। आधे क्षण में वह मुस्की उसकी ही मुस्कान में प्रकट हुई। S m Devi

लाखी ने बहुत धीरे से कहा—'मैं उनको चलने के लिये तैयार कर लूँगी। अभी भेद की कोई बात नहीं बतलाऊँगी। पक्की रही?'

'बिलकुल पक्की।' पिल्ली ने लाखी का हाथ ठोका।

लाखी ने गर्दन मोड़ी। गुनगुनाते हुए स्वर में बोली 'यदि सब बातें ठीक ठीक होती चली गईं तो नरवर का आधा राज तुमको।'

हृदय की हिलोर को बड़ी कठिनाई से दबाकर पिल्ली ने कहा 'हम गरीब नट राज का क्या करेंगे? भाग में राज कहाँ बदा है! पर हाँ, दो चार गाँव जागीर में मिल गये और कुँवर जी तो राज ही मिला समझेंगे हम सब।'

लाखी ने पीठ फेर ली। पिल्ली को लगा न केवल सुंदर और सलोनी है बरन भाग्यवाली भी—कहाँ वह निरी उतनी छोट!

बड़े चाव के साथ बोली 'जब यहाँ जाओ तब हाथी पर सवार होने के पहले ये सब गहने पहिनकर चमचमा अच्छी से अच्छी चूनरी ओढ़कर, नई दुलहिन सी बनकर।'

'अब आज सिंगार-पटार सब और बात मत करो।' लाखी ने पीठ फेरे हुये ही कहा।

[३६]

अटल अनिश्चय में था। लाखी निश्चय कर चुकी थी। सन्ध्या के उपरान्त अटल बटोरे हुए ईंधन का चुन-चुनकर ऊँचा ढेर करने लगे जैसे होली जलाने को हों। लाखी अटल को एक ओर हटा ले गई।

'अब सोच-साच का काम नहीं है।' लाखी ने कहा।

अटल बोला 'इधर कूदता हूँ तो खाखड़ी है उधर फाँदता हूँ तो कुआँ है। मांडू में पहुँचने पर आततायी के साथ क्या पीछा छोड़ देंगे ?'

'जो कुछ होना होगा देखा जायगा। चिन्ता मत करो। जब स्त्री कुएँ में कूदकर या चिता पर बैठकर प्राण देने का निश्चय कर लेती है, तब वह कोई आगा पीछा नहीं सोचती। तुम तो पुरुष हो। जो कुछ होने वाला है उसके लिये मत चिन्ता करो।'

'क्या होने वाला है ?'

'अब कुछ पाँच छः घंटे के भीतर हो जायगा। हाथ-पैर काँप गये तो हाथ में थामा हुआ रस्सा छूट जायगा।'

'नहीं हाथ पैर नहीं काँपेंगे। मैं डरपोक नहीं हूँ।'

'तो मनमें से डर को निकाल दो। अब जो कुछ होगा सब अच्छा ही होगा। आगे सामने जो कुछ भी आवे उसको खरी आँखों और कलेजा पक्का करके देखने में ही कुशल है।'

'रस्से को मैं मजबूती के साथ पकड़कर कोट से उतर जाऊँगा। फिर क्या होगा कुछ नहीं कह सकता। पर यह ठीक है कि यहाँ अधिक ठहरना उचित नहीं है। बात देर-सबेर उभरे बिना न रहेगी। लोगों को मालूम हो जायगा कि मैं राजा का कौन हूँ और तुम कौन हो। हँसी होगी और बुराई होगी न जाने क्या क्या न होगा। परदेश में निकल जाने पर फिर अपनी आफत न रहेगी।

'अब जो कुछ होना हो सामने आवेगा। चिन्ता मत करो। जब ओढ़नी ओढ़ी तो क्या करेगा कोई ?'

'ये नट चले जायें और हम दोनों यहीं बने रहें तो ?'

'इन लोगों ने विचार बदल दिया है कहते हैं कि वे बिना हम दोनों के यहाँ से नहीं टलेंगे। इस तरह बने रहने में अब सिवाय बुराई के और कुछ नहीं दिखलाई पड़ता।'

'हाँ हूँ, मैं जानती हूँ! तो अब हँसी-खुशी के साथ उन लोगों से बात-चीत करो। मैं रोटी बनाकर सामान बाँधूँगी।'

अटल नटों के पास चला गया।

कुछ रात गये नटों ने चुने हुये ईंधन में आग लगाई। हवा नहीं चल रही थी। धुयें का एक ऊँचा खंभासा आकाश की ओर गया। फिर आग बैठी उसकी लौ धुयें को चीर चीर कर आकाश को चूमने लगी। इतना उजाला हुआ कि मुहल्ले के मकानों के कगूरे गिन लिये जायें। बहुत से लोग तापने के लिये आ गये और ताप-ताप कर आँच के कारण पीछे हटने लगे। ईंधन सूखा और पतला था, इसलिये थोड़ी ही घड़ी का प्रकाश देकर एकाएक कम होने लगा। थोड़ी देर में हलकी-हलकी लपटें देती राख और ढेर के बीच में अङ्गारे रह गये। तापने वाली भीड़ धीरे-धीरे कम हो गई। नट, लाखी और अटल अपने बिस्तरों में जा लेटे। एक पहर रात बीते ईंधन के स्थान पर राख से ढकी हुई कुछ चिनगारियाँ ही रह गईं। लोग ऊँघने और सोने लगे। नट कर्म पाय रहा था।

आधी रात के पहले ही सन्नाटा छा गया। केवल गश्त लगाने वाले सिपाहियों की आवाजें नगर की सड़कों और कोट की बुर्जों मीनारों पर से सुनाई पड़ रही थीं। कोट ऊँची दीवारों का था और पहाड़ी की टकरियों पर। नरवर वालों का विश्वास था कि शत्रु फाटकों को तोड़कर ही प्रवेश कर सकता है दीवार को लाँघकर नहीं। दीवार के चारों ओर गहरी खाईं थी।

कुछ भट ताकते-झांकते उठे और एक नसेनी को कोट से जा टिकाया। नसेनी खेत वाले बांसों के मोल से बना ली गई थी। नसेनी के डण्डों का काम रस्सियों के बंधों से लिया गया था। भट मगना के बताये मुताबिक सामान ऊपर चढ़ा लाये फिर वह रस्से को ले गये। एक एक करके सब कोट पर पहुँच गए।

पोटा की खोह लम्बी हो गई — कभी भरी ही न थी। रस्से के एक सिरे को कोट के कंगूरे से बाँध लिया और दूसरे पर सरकफुंद का बड़ा फन्दा बनाया। निकटवर्ती ऊँचे पेड़ पर जो गहरी खन्दकी खाई के पार की ही पर था फेंका। उसको खींच कर देख लिया। पकड़ पक्की थी।

पहले कौन जावे इसका निर्णय तुरन्त हो गया।

नायकिन ने फुसफुस की,—'मैं जाती हूँ पहुँच जाने पर रस्से को हिलाऊंगी तब पोटा आवे।'

अटल ने पूछा 'दो दो नहीं जा सकते?'

लाखी ने कहा 'एक एक करके ही जाना चाहिये। रस्सा मोटा नहीं है।'

पिल्ली ने समर्थन किया 'ठीक है ठीक है। पोटा के पहुँच जाने पर लाखी जावे। फिर हम सब अन्त में कुँवर जी और मैं। बहुत हल्की हूँ मैं। इनको रस्सी का काम मालूम नहीं। अपने साथ लिवा जाऊंगी।'

'मैं तो जानती हूँ रस्सी का काम कैसे जाओगे आप',— लाखी दृढ़ता के साथ बोली —'पर रस्सी इतनी मजबूत नहीं है कि उस पर दो जा सकें। न होगा तो मैं और पिल्ली अन्त में काम को बाँट लेंगी।'

नायकिन चली गई। वे एकाग्रता के साथ उसकी क्रिया को देखते रहे। थोड़े से समय उपरान्त रस्सी उस ओर से हिलती हुई मालूम पड़ी।

पोटा गया। पेड़ पर पहुँच जाने के बाद रस्सी फिर हिली।

उनके उस पार पहुँच जाने पर पिल्ली बोली 'तुम जाओ लाखी अब।

'मैं नहीं तुम।' लाखी ने कहा।

वह बोली, 'अच्छा मैं ही जाती हूँ। वहाँ पहुँच कर जैसे ही रस्सी हिलाऊँ तुरन्त आ जाना फिर कुँवर जी।'

लाखी बोली 'चिन्ता न करो कुँवर जी की।' वाक्य के अन्तिम शब्द इतने धीरे से कहे गये थे कि पिल्ली ने नहीं सुन पाये।

पिल्ली ने स्मरण दिलाया 'आने की बात याद रखना। सब तैयार मिलेगा।' और चलने को हुई।

लाखी ने कहा 'नहीं भूलूँगी आली।' पिल्ली चल पड़ी।

लाखी आँख गड़ाकर देखने लगी। पिल्ली आधी-लम्बी जा रही थी।

लाखी ने तुरन्त छुरी निकाली।

अटल बिना कुछ सोचे ही निवारण के लिये हाथ बढ़ाता हुआ एक कदम आगे बढ़ा। 'क्या कर रही हो?' धीरे से उसके मुँह से प्रश्न छूटा।

लाखी ने दबे धीमे स्वर में डाँटा 'पीछे हटो।' और कँगूरे पर से झुककर उचककर, भरपूर बल के साथ रस्सी पर छुरी को छोड़ा। अटल ने तारों के धुँधले प्रकाश में छुरी की चमक भर देख पाई।

रस्सी धस्स से कट गई। दीवार के नीचे खाई में किसी के गिरने का धम्म से शब्द हुआ। एक तीव्र आह निकली। खाई पर के पेड़ से 'आह! हाय!!' की आवाजें आईं। पेड़ की डालियाँ खड़खड़ा उठीं। पेड़ की पीछे की झुरमुटों में भागने फिरने की आहटें आईं और एकदम बढ़ीं। खाई में थोड़ी सी छटपटाहट सुनाई पड़ी और फिर—पिल्ली समाप्त।

'यह क्या किया तुमने?' घबराये हुये स्वर में अटल बोला।

लाखी के मुँह से भर्राये हुये स्वर में निकला, 'पापिन ! चुड़ैल !! मुसलमान की गोद में बिठलाना चाहती थी !!! अब ले ले, नरवर का आधा राज !!!!'

'क्या कह रही हो ?' अटल ने घबराहट के साथ पूछा। पास की बुर्ज पर पहरे की गुमटियों से आगे वाली आवाजें पहुँचीं। पहरे वालों ने ललकारा और मशालें हाथ में लीं।

'चलो नीचे सब बतलाती हूँ। उधर चलो संसार में कमर कसकर और सिर उठाकर मिलावारे का सामना करो !' वह बोली।

वे दोनों मड़ैयी पर से नीचे उतर गये। इतने में मशालें लिये हुये पहरे वाले आ गये।

'क्या है ? क्या है ?' उन लोगों ने प्रश्न किया।

लाखी ने उत्तर दिया जैसे किले की रानी हो, 'कोट के नीचे एक बैरी फौज घाटा लेकर आ जाय और तुम्हें पता न लगे ! बाजे बजाओ और तैयार हो जाओ !! तुर्क हमला करने वाले हैं !!!'

पहरुओं ने मड़ैयी की तरफ देखा और नटों के उजड़े हुये डेरे को, जिसमें बकरे, गधे और कम्बल असबाबों की मूरती सी के कायदे फरमाते रहे थे।

लाखी ने कहा, 'भोर होते ही सब प्रकट कर दूँगी। अभी काम देखो।'

बाजे बज पड़े। दौड़ धूप हुई। सारा नरवर जाग गया। किले की सेना सावधान हो गई। नगर के योद्धा जूझ पड़ने के लिये तैयार हो गये।

लाखी और अटल को एक बुर्ज के भाग में स्थान दे दिया गया। वे ठण्ड के मारे ठिठुर गये थे।

लाखी ने थके हुए स्वर में कहा 'ये तीन फाटक खोलकर क्यों नहीं भग जाते ?

'तुम क्या जानो — अखाड़े में कहीं डाका मारा जा सकता है ? किले में बैठकर लड़ना अच्छा रहता है।

लाखी को यह बात नहीं जंची। परन्तु उसने विवाद नहीं किया। रात भर चहल-पहल मची रही। लाखी और अटल भी नहीं सोये।

अटल के मन में कुतूहल की बाढ़ सी आ गई थी उसने कहा 'मेरी समझ में नहीं आया कि यह सब क्या हुआ ? सुल्तान की मोदी में बिठलाने की बात क्या थी ?

भूल गये क्या राई में पेड़ के नीचे खलियान के पास किसके हाथ को अपने हाथ में पकड़ कर क्या कहा था ?

कभी नहीं भूल सकता।'

'उसी को भुलाने और मिटाने के लिये इस बुड्ढे और उस मूता ने यह सब जाल रचा था। तुम्हारी छाती में कटारें भोंककर पिस्सी आती और मुझको दास बनाकर सुल्तान के पैरों में डाल दिया जाता।' लाखी हिचकियों रोने लगी।

'ओह ! यह बात थी !!' अटल ने कहा।

शान्त होने पर लाखी ने पूरी कहानी सुनाई।

अन्त में बोली, 'इससे तो जाँतपाँत का अपमान बचा।

[१०]

प्रातःकाल के उपरान्त चहल-पहल और भी बढ़ गई। किले के नीचे नरवर नगर में और बाहर सुल्तान की छावनी में। किले में की लाश रस्सी के टुकड़े को जो कँगूरे से बँधा हुआ था और पिछली नगर वालों ने देखा। नट सुल्तान के जासूस थे और उसके दस्ते को किले के भीतर लाना चाहते थे कला का यही भाव उन्होंने जान पाया। नाटी के प्रति उनके मनमें आदर का भाव उत्पन्न हुआ। केवल कुछ स्त्रियों ने सोचा ही नहीं बल्कि कहा भी लाली है लाली।

सुल्तान की छावनी में चहल-पहल आक्रमण करने की तैयारी की थी। चन्देरी का मुबैदार फाटकों के तोड़ने का प्रयत्न करे और हिमायुद्दीन ग्वालियर की ओर प्रयाण। नट बेचर द्वार से छावनी में रो-धोप रहे थे।

सुल्तान खुश हुआ था।

मटक से कहा नटों ने सारी तरकीब चौपट करदी। बिलकुल गये हैं।

'जहाँपनाह उन लोगों को शक है कि किसी ने रस्सी काट दी।' मटक डरते-डरते बोला।

'बिलकुल गलत'—बियाद ने मार्जना की—'यह शाम को तैयार हो गई, सब बातें मान लीं मशालों की रोशनी बहुत देर बाद हुई, इस पर भी अड़ते हो कि किसी ने रस्सी काटदी! बहमक हो। उन नालायकों ने सड़ी रस्सी से काम लिया। कमबख्त कहीं के। मना दो छावनी में से उनको।

आज्ञा पालन के संकेत में मटक ने जमीन तक सिर नीचे झुका लिया।

'राव राजसिंह को हुक्म दो कि जोर-शोर के साथ शहर के दक्खिनी फाटक पर हमला करे। बाकी के सालारों को लड़ाई की तरकीब समझाये देता हूँ।' गियास ने कहा।

'जो हुक्म जहाँपनाह।' मटक बोला।

गियास ने आज्ञा दी—'मैं ग्वालियर की तरफ़ आज कूच नहीं करूँगा शायद यहीं मेरी ज़रूरत पड़ जाय। फ़ौज यहीं तैयार रहे।'

मटक आज्ञाओं को लेकर छावनी में चला गया। राजसिंह के साथी बहुत नहीं थे परन्तु उन सबों ने अपना एक अलग शिविर बना रक्खा था। जैसे ही मटक ने सुल्तान का आदेश सुनाया राजपूत जूझ जाने के लिये फड़क उठे।

भाट ने राजसिंह से कहा 'वीरसिंहदेव तोमर ने आपके पुरखों से नरवर को छीना था। अभी तो ही बरस हुए हैं, जैसे कल की बात हो। पुरखों के अपमान का बदला चुकाओ और नरवर को वापिस लो। नरवर कछवाहों का है, तोमरों का नहीं है।

'आज तोमरों के छक्के छुटा दूँगा' राजसिंह ने आश्वासन दिया।

भाट ने उत्तेजित किया 'या तो सिर को फाटक पर कटवाकर पुरखों में जा मिलिये या नरवर के किले पर अपना झण्डा फहराइये।

राजसिंह और उसके साथियों ने अमल—नशा—किया और सुल्तान की सेना के साथ हो गये।

नरवर के तीनों फाटकों पर एक साथ ही आक्रमण किया गया।

राजसिंह उत्तरीय फाटक पर था।

नगर के मकानों में जलती हुई मशालों के तीर छोड़े गये। कवच रक्षित हाथियों ने चिंघाड़-चिंघाड़ कर फाटकों पर सिर दे दे मारा। भीतर से तीरों जलती हुई मशालों और पत्थरों की वर्षा की गई।

हाथी घोड़े पैदल मरे और घायल हुये परन्तु एक भी फाटक न टूट सका और तीसरा पहर होने को आया।

सिन्ध उस पार उत्तर में भगरोली और पूर्व की ओर धूल के बादल उड़ते हुये दिखलाई पड़े।

चौकी वालों ने सुल्तान को रणक्षेत्र में समाचार दिया 'ग्वालियर से राजा मानसिंह एक बड़ी फौज लिये चला आ रहा है।'

सुल्तान ने घेरे को हटाकर पीछे चल पड़ने की आज्ञा दी। राजसिंह ने नहीं माना।

'आज या तो मैं अपना सिर दूंगा या नरवर को लूंगा।'

और वह फाटक पर धमाधूम लड़ता रहा। पागल होगया। परन्तु अभी सिर धड़ से अलग तो नहीं हुआ था। तीरों से तीर भनभना रहे थे और मशालों से मशालें लड़ रही थीं। राजसिंह का हाथी उसी दुर्गोन्माद में काम पड़ता था। लोहूलुहान हो जाने पर भी फाटक को टक्करें पर टक्करें दे रहा था।

सुल्तान ने फिर कहलवाया 'मानसिंह तोमर आगया है तुरन्त आकर उसको ललकारो और सामना करो।'

तब फाटक को जलती हुई आँखों देखता हुआ राजसिंह लौटा।

ग्वालियर की सेना सिन्ध पर आ गई और तीरों का युद्ध शुरू हो गया। राजसिंह मानसिंह के निकट पहुँचने के लिये पागल हो उठा था पर मानसिंह को न पा सका।

दोनों सेनायें उलझ गईं। मानसिंह की ताजी सेना की ठोकर को मांडू की सेना पी-पी जा रही थी।

नरवर वालों को मालूम हो गया कि उनका राजा आगया है और लड़ाई के पलड़े में विजय अपनी ओर झुकाई जा सकती है। फाटक खोल कर चुने हुये पांच हजार सवार नरवर से निकल पड़े और उन्होंने मांडू की सेना के पिछले बाजू पर प्रचण्ड वेग के साथ आक्रमण कर दिया। उत्तर और पूर्व से ग्वालियर की सेना दबाव पर दबाव डाल ही रही थी

सुल्तान ने देखा केवल दक्षिण-पूर्व के कोने से निकल जाने का मार्ग है। तब सबकर लड़ते लड़ते वह पीछे हटने लगा।

राजसिंह के मनकी मनमें ही रह गई। सुल्तान के साथ उसको भी लौटना पड़ा।

'फिर देखूंगा बहुत जल्दी देखूंगा' दांत मीचकर सुल्तान ने अपने आप कहा।

सूर्यास्त के पहले ही मांडू की सेना अपनी छावनी में काफ़ी सामान छोड़कर कोसों पीछे हट गई।

किले के मुख्य फाटक से मानसिंह और सेना का एक बड़ा भाग भीतर आ गया। काफ़ी सेना बाहर छोड़ दी गई, यदि मांडू की सेना लौट पड़े तो युद्ध में किसी प्रकार की असुविधा न हो।

निवास स्थान पर पहुंचते-पहुंचते मानसिंह को सन्ध्या हो गई।

घायलों की देखभाल,—सैन्य—शिविर की व्यवस्था बैरी की छावनी से पाये गए माल की लिस्टों और संभाल तथा आक्रमण से रक्षा की योजना संगठित करते-करते काफ़ी रात चली गई। तब निहालसिंह, मानसिंह के पास आया।

निहालसिंह थका हुआ था परन्तु उत्साह में कोई कमी नहीं आई थी।

आते ही बोला 'महाराज, नरवर नष्ट होने से बालबाल ही बचा है।'

'हां हमलोग ठीक समय पर आ गये। सम्भव है सुल्तान कल लौट पड़े। रात भर विश्राम किये लेते हैं सैनिक। कल फिर भिड़ जायेंगे। कोई चिन्ता नहीं।'

'नहीं महाराज मैं आज के युद्ध की बात नहीं कह रहा हूँ। नगर के भीतर आकर मालूम हुआ कि एक स्त्री ने अपनी योग्यता से नगर का महासंकट से कल रात बचाया।

'स्त्री थे ! कैसे ?'

'नगर में सुल्तान के भेजे हुये कुछ नट आ गये थे। उन्होंने कोट के कंगूरों से रस्सी बाँधकर मांडू की सेना को भीतर चढ़ाने का प्रयत्न किया। उस स्त्री ने नटों को मार गिराया और रस्सी को तलवार से काट दिया।'

'कौन है वह स्त्री ? कहाँ है ?'

'यहीं कहीं नगर में है। और पता लग जायगा।'

'कौन है वह ? उसने बहुत बड़ा काम किया है।'

लोगों ने बतलाया कि गूजर है। पति-पत्नी नरवरौली से आये हैं, यहां कहते हैं कि ग्वालियर के पहले वासी हैं।

'ओह ! अच्छा !! वे ही होंगे वे ही दोनों होंगे। जल्द बतलाव कहाँ हैं वे दोनों !'

'कौन महाराज ?'

'लाखारानी और अटलसिंह इतना साहस लाखों में ही हो सकता है।'

'परन्तु लाखी तो महाराज अहीर है।'

'तो क्या हुआ ? किस ठाकुर से कम है ? और होंगे ही ढूंढो उन दोनों को। मैं भेंट करूँगा।'

[१८]

लाखी और अटल गर्भ के खंड से हटकर एक निकटवर्ती मन्दिर के दालान में आ गये। उन पर जनता की श्रद्धा उमड़ पड़ी। गूजर की नारी तक कितनी दिलेर होती है। यह निष्ठा साधारण जन के मन में आ गई। दिन भर फाटकों पर धावे होते रहे। सैनिकों का विश्वास था कि फाटकों के तोड़ने वाले ने अभी जन्म नहीं लिया है—नगर निवासी और किले वाले भूखों मर कर ही आत्मसमर्पण कर सकते हैं। साधारण जनता के मन में उतनी आस्था नहीं थी। भाग्य में जो बदा होगा उसी फूटे पिसे आसरे में सन्तोष था।

जब उत्तरीय फाटक पर रायसिंह कछवाहा ने पागलों की तरह बार पर बार किये तब उसके साहस और शौर्य को देखकर नरवर रक्षकों का हृदय धुक-धुक कर उठता था। परन्तु मानसिंह की सेना के आ जाने से वे सुस्थिर हो गये और शत्रु की पराजय में संदेह न रहा।

फाटक के खुलते ही लाखी और अटल को मानसिंह के प्रवेश का हाल मालूम हो गया।

हर्ष को उदासी के साँचे में ढालने का प्रयत्न करते हुये लाखी बोली 'अब क्या होगा?'

अटल ने कहा 'होगा क्या? जो होना था वह हो चुका। नरवर को बचा लेने का पुण्य तुम्हें मिलना चाहिए। पर हम उनसे माँगने नहीं जायँगे और न बतलायेंगे कि हम लोग यहाँ हैं। बुलाया तो सामने जा खड़े होंगे बस।'

'राजा हम लोगों को चाहते होंगे। अब कोई बाधा भी नहीं रही—नट सब समाप्त हो चुके हैं।' लाखी बोली।

लाखी जानती थी कि बोधन ने कुटिलता के साथ कहा था कि अटल गूजर है और यह भी ऊँची जाति की है परन्तु जिनसे कहा था वे

छोटे छोटे से किसान मजदूर हैं बात उनसे आगे न गई होगी और न जा सकेगी।

जो बात उसके मन में उखड़-उखड़ पड़ रही थी पूछ डाली 'क्या उस पिल्ली पर तुम्हारा मन चला गया था ?'

अटल की गर्दन झटके के साथ ऊपर उठ गई और आँखें सिकुड़ गई।

'ऐसी बेसमझी की बात क्यों कही ?'

'अरे तो बुरा क्यों मान गये ? ऐसा तो होता ही रहता है। पुरुष तो चूक ही जाते हैं।'

'क्या बकती हो ? अब याद आया तुमने रात में कहा था। पिल्ली मेरी गोद में अंगारे बनकर आती। उस समय समझ में नहीं आया था। तुमने क्यों कहा ? मेरी सौगन्ध है बतलाओ।'

'यों ही सौगन्ध बात थी। क्या कोई स्त्री बिना गाँठ-गाँठ के अपनी छाती किसी पर पुरुष के सामने उघाड़ेगी ? मैंने कल देख लिया था।'

'वह स्त्री थी! घूरे पर मंडलाने वाली तितली को स्त्री कहा जाता है ? बहुत से मन्दिरों के द्वारों पर बदनाम स्त्रियों की जो बेहूदी मूर्तियाँ बनाकर खड़ी कर दी गई हैं वे क्या किसी देवता के हुकुम से गढ़ कर खड़ी की गई हैं ? मैं क्या कोई मक्खी हूँ जो मैले पर जा गिरूँगा ? मैं क्या—'

'अरे यों ही बरस पड़े। मैं कभी सोच भी नहीं सकती थी कि स्त्री इतनी निर्लज्ज ऐसी पुंश्चल हो सकती है ?'

'और मैं क्या कोई भूत हूँ या पलीत हूँ ?'

'अरे तो मुझको माफ करो कुँवर जी। भ्रम में पड़ गई। पर उसको मार दिया तो अच्छा किया न मैंने ?'

'अच्छा नहीं बहुत ही अच्छा किया। मुझको सब बातें मालूम हो जाती तो मैं दिन में ही उन सबों को मार डालता।'

'उसके साथ में मरने के लिये दिन नहीं बचा था रात ही बची थी। दिन में कुछ कर डालने से सब काम बिगड़ जाता। अच्छा तो तुमने क्षमा कर दिया न मुझ बेसमझ को ?

'बेसमझ तो नहीं हो—समझ तो तुममें मुझसे अधिक है। तो वचन दो कि ऐसी बात आग कभी नहीं कहोगी।

'कभी नहीं कहूँगी कभी नहीं कहूँगी। बस। या कुछ और ?

वे दोनों एक दूसरे से लिपट गये—और रोये। दिन चढ़ निस्तार के उपरान्त दोनों उसी दालान के एक कोने में आ बैठे।

'अब क्या होगा ? मनमें यह प्रश्न था।

पड़ोस की एक अधेड़ स्त्री मन्दिर में जल चढ़ाने के लिए आई। देवार्चन करने के उपरान्त उन दोनों से कुछ अन्तर पर आ बैठी। मुस्कान और घूँघट की सम्मान के साथ उसने कहा तुम्हीं हो न वह गूजर ठाकुर जिन्होंने रात में तुर्कों को कोट पर से मार भगाया ?

अटल ने उत्तर दिया वे गूजर ठाकुर हमीं लोग हैं तुर्क आ नहीं पाये थे आज को ही थे नटों ने उनको बुलाया था। नटों को मार भगाया तो वे भी भाग गये।'

'सुनते हैं इन्होंने बहुत से तुर्क मार दिये। नटों को मारा होगा कौन जाने। नट बेड़िये तुर्कों से कुछ कम थोड़े ही होते हैं। तलवार चलाई थी इन्होंने ?

'हाँ—थोड़ी।

'देखने में तो दुबली पतली है पर बड़ी विकट है। राजा इनाम देगा।

'देगा तो लेंगे।

'वाह ! वाह !! मांग न लो जाकर। घर बैठे थोड़े ही कोई जागीर लगाने आता है। कहाँ के रहने वाले हो ?'

'दूर के।

'यहाँ नातेदारी होगी ?'

'नहीं तो।'

'गूजर तो बहुत हैं यहाँ। अहीर भी हैं।'

'होंगे।'

'तुम्हारी जाति के अहीर तो यहाँ पड़ोस में ही रहते हैं।'

'किसकी जाति के ?'

उस स्त्री ने दाँत निकाल कर लाखी की ओर संकेत किया। लाखी ने उसको तिरछी कटारी दृष्टि से देखा। वह सहमी नहीं। अटल के मुँह से प्रश्न निकला 'तुम्हें कैसे मालूम ?'

उसने कहा 'हमें कैसे मालूम ! ऐसी बात कहीं छिपती है भैया !! अपना धरम क्यों छिपाते हो ? बस्ती भर में खबर है कि तुम गूजर हो और—'

'मैं अहीर हूँ' लाखी ने कड़े स्वर में कहा 'किसी अहीर के यहाँ या तुम्हारे यहाँ नातेदारी करने नहीं आये हैं हम यहाँ।'

स्त्री उठ खड़ी हुई। बोली 'राम ! राम !! मुझको क्या करना है। मैंने तो बस्ती की बात सुनाई। तुम्हें यह ठाकुर रखते हैं तो रखते रहें, हमको क्या पड़ी।'

'रखते नहीं हैं बाई 'ब्याहता है यह मेरी। भाँवर फेरे वाली ब्याहता।' अटल ने कहा।

स्त्री चलने को हुई। भिनभिनाई—'भगवान कैसा घोर कलजुग आ गया है। गूजर और अहीर का ब्याह !!'

घोड़े के टापों का शब्द सुनाई पड़ा। स्त्री रुक गई और वे दोनों आहट की दिशा में देखने लगे। एक क्षण उपरान्त आगे-आगे मानसिंह पीछे-पीछे निहालसिंह और कुछ सवार आ रहे थे। उनके पीछे नगर निवासियों की भीड़। उन दोनों पर निगाह पड़ते ही लाखी और अटल

उठ खड़े हुये। सिर नीचे कर लिये। सोचा मानसिंह बाहर आ रहे हैं एक क्षण में निकल जायेंगे।

मानसिंह मन्दिर के सामने आते ही घोड़े से नीचे कूद पड़ा। निहाल भी कूद पड़ा। सवारों ने दोनों के घोड़े थाम लिये। मानसिंह लाखी के सामने आकर खड़ा हो गया।

मुस्करा कर लाखी से बोला 'ऐसा छिपाया अपने को जैसे किसी की चोरी की हो।'

लाखी ने गर्दन नीची करली।

'नरवर को बचाने वाली तुम्हीं हो या कोई देवी यहाँ आगई थी ?'

लाखी ने ऊँची सांस को धीरे धीरे दबाया। मन्दिर के सामने भीड़ इकट्ठी हो गई।

'तुम कैसे थोड़ ही सिर उठाने की हो।'

लाखी ने नीचा सिर किये हुये ही आँखें ऊपर उठा कर नीची करलीं। कुछ गीली हो गई थीं।

मानसिंह ने अपने गले से सोने मोतियों का कण्ठा निकाला दोनों हाथों से पकड़ा और बोला 'सिर ऊँचा करो।'

लाखी ने धीरे धीरे सिर ऊँचा किया। होठ कांप रहे थे। आँखें आँसुओं से भर गई थीं। राजा ने उसके गले में हार डाल दिया। आँखों से आँसू बहकर गले में पड़े हुये हार के मोतियों पर ढलकने लगे। मुँह को हथेलियों से ढककर लाखी सिसकने लगी। अटल अपने मूछों हुए होठों पर जीभ फेर रहा था।

'लाखारानी घोड़े पर चढ़ना जानती हो ?'

लाखी ने कोई उत्तर नहीं दिया। नाहीं का सिर हिला दिया।

'हाथी पर बैठ कर ग्वालियर जाओगी।' कहकर मानसिंह अटल के सम्मुख हुआ।

हँसकर बोला 'श्रीमान कुँवरजी आपको यह सब क्या सूझा ? बिना किसी से कुछ कहे सुने ही चल दिये ! और यों ही भटकते फिरे !!

अटल कुछ उत्तर देने के लिये गले को सँभालने लगा और सूखे होठों को गीला करने में और भी प्रयत्नशील हुआ।

उस समय बोधन पुजारी का चित्र मानसिंह की आँखों के सामने फिर गया। लाखी की आँखों में तो था ही।

मानसिंह गम्भीर होगया। निहाल से कहा 'हाथी मँगवाओ।' कांपते हुये टूटे धीमे स्वर में लाखी ने प्रतिवाद किया 'ऐसे ही चली जाऊँगी।'

उसका प्रतिवाद नहीं सुना गया।

थोड़ी देर में हाथी आगया। चढ़ने के लिये महावत ने हाथी को बिठला दिया। सीढ़ी लगादी गई। लाखी नीचे नीचे इधर-उधर देखने लगी जैसे बगलें झांक रही हो।

राजा ने कहा 'वह नसैनी कहाँ है जिस पर होकर नट तुर्कों को नरवर के भीतर लाना चाहते थे ?'

लोगों ने बतलाया तोड़ फोड़ डाली गई है।

राजा बोला, 'बैठो लाखारानी हाथी पर और चलो मेरे डेरे पर। तुम भी बैठो कुँवरजी। नरवर को निश्चिन्त करके फिर ग्वालियर चलेंगे।'

लाखी ने अपने मैले-कुचैले मोटे कपड़ों को देखा। एक क्षण के लिये ध्यान उन रँग-बिरँगे कपड़ों की ओर गया जो उसने मसरौनी में कुछ समय के लिये पहिने थे। चढ़ने के लिये उसका पैर नहीं उठ पा रहा था।

मानसिंह ने हँस कर अटल से कहा 'उठाओ इनको और बिठलाओ हाथी पर। ब्याह किस दिन के लिये किया था ?'

अटल ने आई हुई हँसी को रोका। चलने के लिये लाखी को हाथ का हलका सा संकेत किया।

लाखी का चेहरा लाज के मारे लाल होगया। कांपते हुये होठों पर मुस्कान आई। एक आँख से मानसिंह को देखा—कृतज्ञता टपक गई उस चितवन में—और हाथी पर जा बैठी। झटक भी।

उपस्थित जनता ने मानसिंह का जय जयकार किया। वे सब मानसिंह के साथ उसके डेरे पर चले गये।

तमाशा देखने वाली स्त्रियों में से एक ने दूसरी से कहा

'अपना राजा है बहुत अच्छा। बड़ा रसिया है। है न?

'रसिया न होता तो उसको हाथी पर कैसे चढ़ा देता? समझ है उसकी। साले को भी हाथी पर चढ़ा दिया। अच्छा तो रहा।

'बाई! रूप-रूपय ने बिठला दिया हाथी पर। क्या सचमुच तुर्कों की सेना को रस्सों और उस मशीनी पर से झट उतार लावे नगर में?'

'भी तो लाखी ने बहादुरी। इतना तो कहना पड़ेगा।

'इतनी कि राजा घोड़े पर और वह छोकरी हाथी पर! पर हां रूप सुघराई है उसमें। तुमने देखा या नहीं, जब हाथी पर चढ़ने को जाने लगी तब कैसी आँख उठाई थी राजा पर?

'राजा उसको ग्वालियर ले जा कर महलों में डाल लेगा।

'राजा जो ठहरा चाहे जो करे। पर है अच्छा। ठीक समय पर आगया नहीं तो नरवर राख हो जाती। उसी ने बचाया।

हाथी पर चढ़ा अटल सोचता जाता था घिरे बैल कहाँ होंगे। गुमौते में चुपचाप खोज करवाई परन्तु पता नहीं चला।

मानसिंह कई दिन तक नरवर में रहा। जब मालूम हो गया कि गियासुद्दीन मांडू पहुँच गया तब ग्वालियर की ओर चला। ग्वालियर जाने के पहले उसने नरवर नगर के कोट बाहर जयस्तम्भ की शिला पर मांडू के सुल्तान की पराजय की बात खुदवाई। यह स्थान वही था जहां से मांडू की सेना के पैर उखड़े थे और हार कर पीछे हटी थी।

नरवर से ग्वालियर जाने के पहले मानसिंह आदेश दे गया —'नरवर का किला और नगर कुँवर अटलसिंह की जागीर में समझा जायगा। किलेदार सेनानायक सब वे ही रहेंगे प्रबन्ध भी वही रहेगा। कागजों में जागीर पर नाम कुँवर अटलसिंह का लिखा जायगा। वह मेरे साथ ग्वालियर में रहेंगे।

ग्वालियर पहुँचने पर लाखी को मृगनयनी से जो प्यार स्वागत और आह्लाद मिला उससे वह अपनी सब व्यथाओं को भूल गई। कला को अपने से मिलता-जुलता पाकर आश्चर्य तो कम हुआ कुतूहल अधिक हुई।

अटल से अकेले में कहा 'फिर कहीं वैसे न बौखला जाना जैसे कला को मेले में देखकर हो गये थे।

अटल हँस पड़ा,— मैं क्या मर्द हूँ जो तुम्हारे उसके अन्तर को न पहिचान पाऊँगा ?

लाखी की कुतूहल विलीन हो गई।

अटल ने अपने मनमें कुछ पहिचानें बनालीं और फूँक-फूँक कर पैर रखता हुआ सा चलने लगा।

कुछ दिनों यह सायुज्य मृगनयनी के विनोद का कारण रहा। इस विनोद में कला उन सब के निकटतर सम्पर्क में आ गई।

[१९]

माँडू पहुँचने के बाद ग़ियासुद्दीन ने नायकिन के वर्ग को अपनी सल्तनत से बाहर निकलवा दिया! मटक को कोड़ों से पिटवा दिया!! और अपने दरबार नवीस—दैनिकी या इतिहास लेखक—को आज्ञा लिखने की दी—सुल्तान ग़ियासुद्दीन खिलजी ने मानसिंह तोमर को नरवर के मैदान में हराया और उसे ग्वालियर की ओर खदेड़ कर खुद माँडू चला आया। किसी किसी मुन्शी ने लिखकर रख लिया कि सुल्तान ग़ियासुद्दीन नरवर को जीत नहीं सका और थककर लौट आया। नरवर के पराजित खम्भ में जो कुछ खुदवाया गया वह कुछ और था।

राजसिंह कछवाहा घायल होकर चन्देरी लौटा। स्वस्थ होने में उसको बहुत दिन लगे। बैर प्रतिशोध और नरवर के पुनः प्राप्त करने का हठ और भी पक्का हो गया। उसको मालूम होगया था कि कला और नायक बैजू ग्वालियर से नहीं लौटे। वह उनकी प्रतीक्षा में था।

मटक के शरीर ने कोड़ों की मार चुपचाप सहली। क्रोध के घटे जाने पर ग़ियासुद्दीन ने अपने हुजूर में उसके आने की खुलासी करदी और मटक फिर उसी हँसी खुशी के साथ ग़ियास के पास आने जाने लगा जैसे पहले आता जाता था। लुक-छिपकर वह ग़ियास के बेटे नसीरुद्दीन के पास भी हो आता था।

'आलमपनाह के लिए न मालूम कितनी परियाँ तरसती तड़पती हैं। समझ में नहीं आता कैसे यहाँ तक आ पावें।' मटक ने एक रात लम्बी आह भरके नसीरुद्दीन से कहा।

'भाई ख्वाजा इन मौलवियों के मारे तो बहुत परेशान हो गया हूँ। कमबख़्त दिन रात पीछे पड़े रहते हैं। मुश्किल से आज तुमको अकेले में बुला पाया।' नसीर बोला।

'मुल्ला मौलवी क़ाज़ी जहाँपनाह से भी बुरे हुये ये हैं।

'इन सबको मरवा दें तो अच्छा रहेगा।'

'आलमपनाह ने ठीक फ़रमाया मगर मुनासिब नहीं है। आम सिपाही तो इन्हीं लोगों का मुँह ताकते हैं।'

'फिर क्या हो? कैसे हो? अब्बाजान को पूरे तीस बरस हो गये हैं राज करते करते और इन मुल्लों की खुशामद करते करते।'

'जो कोई भी हिन्दुस्तान में सल्तनत कायम करना चाहे या कायम रखना चाहे उसको मुल्लों की दुआ अपने साथ रखनी होगी, मगर जहाँपनाह ने हमेशा मुल्लों को गालियाँ दीं।'

नसीर उखड़ पड़ा।

'गालियाँ तो मैं भी देना चाहता हूँ। मेरी जान साँसत में दबोच रक्खी है।'

'बिचारे मुल्लों का क्या कसूर है? किसी के हुक्म पर ही तो ये चलते हैं।'

'तो अब तो बरदाश्त की हद हो गई।'

मटक ने नीची गर्दन और भी नीची करली।

'आलमपनाह बन्दा ठहरा गुलाम क्या अर्ज़ कर सकता है। सुनते हैं घूरे के भी कभी न कभी दिन फिरते हैं।'

मटक ने नीचे ही नीचे कनखियों आँखें चलाईं। नसीर के तमतमाये चेहरे को देखा।

ज़मीन पर माथे को टेककर बोला 'आलमपनाह कभी कभी तकदीर से तदबीर बड़ी हो जाती है।'

नसीर तकिये से टिककर कुछ सोचने लगा। मटक माथा टेके हुये था।

नसीर बोला 'अच्छी तरह बैठ जाओ मटक। तुम अच्छे आदमी हो।'

मटक फिर ज्यों का त्यों बैठ गया।

नसीर ने कहा 'तक़दीर और तदबीर की बहस को मैंने भी पढ़ा है। मगर लिखी हुई बहसों से तो दिमाग़ थकने लगा।'

'बहस नहीं जहाँपनाह तवारीख़ देख लें। तदबीर की मिसालों पर मिसालें मिलेंगी। दिल्ली की बादशाहत की, गुजरात की सल्तनत की बहमनी ख़ानदान की।'

'मुझको उस्तादों ने यह सब कभी नहीं पढ़ाया। तुम एकाध सुनाओ।'

'आलमपनाह गुलाम तो ख़ादिम है और ज़बान कट कर गिर जाय अगर कोई ऐसी बात मुँह से निकल जाय।'

'तुम बेखटके कहो। मैं ग़ौर के साथ सुनूँगा।'

'आलमपनाह ने गुजरात के पहले सुल्तान मुज़फ़्फ़रशाह का हाल तो सुना ही होगा।'

'सुना है पढ़ा नहीं है। मुज़फ़्फ़रशाह को उसके पोते अहमदशाह ने ज़हर देकर ख़तम कर दिया था।'

'कुछ ऐसा ही गुलाम ने भी सुना है। और जनाबे मुहम्मद तुग़लक़ बादशाह दिल्ली का भी हाल आलमपनाह ने सुना होगा।'

'सुना है कुछ ऐसा ही उसने भी किया था।'

'तवारीख़ सही भी है आलमपनाह मगर झूठी भी हो सकती है।'

नसीर तकिया पर से सिर उठाकर भभककर बैठ गया।

'अगर तवारीख़ ग़लत हो सकती है तो मुल्लों ने मुझको जो कुछ पढ़ाया है वह सब दिमाग़ पच्ची ही रही।'

दोनों थोड़ी देर चुप रहे।

नसीर बोला 'परियों वाली बात जो तुमने सुनाई थी वे कहाँ हैं? कैसे आवें यहाँ तक?'

'आलमपनाह'—[illegible] ने बतलाया—'सोना-चाँदी और हुकूमत अख़्तियार हाथ में हो तो चाहे जितनी परियाँ हाथ जोड़कर सामने आ

पड़ी होंगी। यहाँ बहुत सी तो। एक से एक बढ़कर और मालवे की सल्तनत में बहुत जगह। बाहर भी हैं। सोना चांदी और जवाहिरात उनको बात की बात में हुजूर के क़ब्जा में ला सकते हैं।

'मेरी सलाह में शामिल होने को तैयार हो?'

'जान आलम गुलाम की बोटी-बोटी को अपना समझें।'

'देखो अगर भेद खुल गया तो तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कुत्तों को खिला दिए जायेंगे और मैं—मारा तो नहीं जाऊँगा मगर तकलीफ़ भुगतनी पड़ेगी। लेकिन जितनी भुगत रहा हूँ उससे शायद ही ज्यादा हो।'

'मेरा दिल जानता है जैसा कुछ बरदाश्त किया है जानआलम।'

मटक रोने लगा। नसीर ने शान्त किया।

'तुम्हारे दिन भी फिरने को हैं मटक। अब्बा जबसे नरवर को जीत कर आये हैं तब से जश्न पर जश्न मनाये जा रहे हैं। मैं भी जश्न करूँगा।'

'हाँ जानआलम जीत तो जरूर आये हैं मगर नरवर के शहर में दाखिल नहीं हो सके। तवारीख में वाक़या जरूर दर्ज कर लिया गया है।'

'असलियत क्या है?'

'असलियत तो हुजूर, मानसिंह के साथ रही और वाक़या अखबार नवीस के कागज़ों में आ गया है। यानी वह परी हाथ नहीं लगी।'

'मैं ही महरूम रक्खा जा रहा हूँ अकेला मैं ही दुनिया के आराम से। मैंने कसम खाई है कि जब मैं सुल्तान हो जाऊँगा तब—'

नसीर चुप रह गया। मटक उसकी तरफ़ नीची निगाहों ताकने लगा।

'एक पखवारे में कितने दिन होते हैं मटक?' नसीर ने पूछा।

अकचकाहट के साथ उसने उत्तर दिया 'जानआलम कभी चौदह कभी पन्द्रह।'

मेरे पखवारे में पन्द्रह दिन होंगे। एक-एक दिन के लिये एक एक हजार परियाँ। तब चैन लूँगा जब पूरी पन्द्रह हजार हो जायँगी। कसम खाती है मांडू को आलीशान परिस्तान बनाने की। क्या कहते हो ?

'जानआलम सब कुछ कर सकते हैं और करेंगे। मांडू का तख्त हिलने भर की देर है। सब आसान हो जायगा।

'तुम मेरी मदद करोगे न ?

'जानआलम से पहले ही गुजारिश कर चुका हूँ कि बोटी-बोटी हाजिर रहेगी।

मुट्ठी को कसकर नसीर ने कहा 'एक आदमी के लिये तीस बरस के राज का जमाना बहुत होता है। तख्त अब मुझको बुला रहा है और अब्बाजान को बहिश्त। मैंने तै कर लिया है।

मटरू ने अपने हर्ष को पी लिया।

बोला 'जानआलम होशियारी से काम लें। मुल्लों को नाराज न करें।

'हर्गिज नाराज नहीं करूँगा। वे भी घड़ियाँ गिन रहे होंगे। उनके मन की ही करता जाऊँगा और मौके को हाथ से न जाने दूँगा।

'मल्लू परेशान है हुजूर का साथ देंगे।

'मैं तुमको कभी-कभी सलाह के लिये बुला लिया करूँगा।

'जानआलम की खिदमत में जान हाजिर रहेगी मगर गुलाम को ठीक मौके पर ही बुलाया जाय तो मिहरबानी होगी।

'मौके की तलाश बगल में ही करूँगा।

'हथियार न चलाया जावे जानआलम।

'तुमने अभी-अभी कहा था कि गुजरात के मुजफ्फरशाह पर उसके बेटे ने हथियार नहीं चलाया था कुछ और चलाया था। वही बेहतर रहेगा। और फिर जैसे अहमदशाह ने अहमदाबाद बसाया इमारतें बनवाईं मैं भी कुछ कर-धर लूँगा और तवारीख में नाम करा लूँगा।

[४०]

लाखी और अटल को ग्वालियर के क़िले के भीतर कर्णमहल के—जिसको कर्ण-मन्दिर भी कहते थे—एक भाग में निवास स्थान दे दिया गया। मानसिंह ने एक नये महल का निर्माण प्रारम्भ कर दिया था परन्तु अभी भूमि के नीचे का केवल एक खण्ड कुछ आकार प्रकार पा सका था।

सुमनमोहिनी सोचती थी मृगनयनी भी रहेगी इस नये महल में और साथ में उसकी लाखारानी।

मृगनयनी संगीत सीखती है लिखना पढ़ना चित्रकारी भी न जाने क्या क्या सो क्यों? राजा उसके पास अधिक नहीं बैठते-उठते। तब अच्छा लगता है। परन्तु उस बीच में कहां रहते हैं, क्या करते हैं यह नहीं मालूम हो पाता है। मृगनयनी के अन्तःपुर में कम जाते हैं तो मेरे में और भी कम आते हैं। एक नहीं कई लड़ाइयां जीत चुके हैं इससे महल की शोभा कितनी बढ़ी है? जब आजाते हैं तब लगता है, मेरे सिवाय वह और किसी के नहीं। तभी तो चार छन्द सुना देती हूँ। न सुनाऊँ तो राजा किसी गाँव से एकाध सुन्दरी का संग्रह और कर लावें। क्या ठीक है इनका। ब्याह के बाद जब मैं आई तो कितना प्रेम बरसाते थे। परन्तु। अब तो इस उजड़ी गाँव वाली को लुभाना है। एक से दो हो गईं। तो क्या हुआ हम आठ हैं। नया महल इतना बड़ा और ऐसा बनवाना चाहते हैं कि हम सब उसमें रह सकें। कैसे निभाव होगा? मृगनयनी और लाखी की बकर बकर चलेगी। कहां तक सहूँगी? कितना बड़ा बनेगा यह महल आखिर? क्या मेरे अन्तःपुर से दूर रहेगा मृगनयनी का अन्तःपुर? कितना भी दूर रहे रहेगा तो आँखों और कानों के निकट ही। राजा से इसकी क्या बातें होती हैं? मेरी दूती मृगनयनी के पास ठहर नहीं सकती। समाचार देने वाला कोई तो होना चाहिये। इस लड़की-कला को—साईं-सईं तो कैसा रहेगा?

वह मृगनयनी की चेरी मा बूढ़ी नहीं है कलायें सिखलाती है मैं भी क्यों न सीखने लगूं ? और यदि राजा ने किसी और सिखाने वाली को मेरे लिये लगाया तो ? तो मैं कदापि नहीं मानने की। राजा को मेरा हठ रखना पड़ेगा। लाखी को भी सिखाने लगी है तब मैं क्या उससे भी गई बीती हूँ ? आगे वो आज राजा को देखूंगी। परन्तु वे आते भी तो कदाच ही है। कभी तो आयेंगे। नहीं आयेंगे तो मैं बुलवाऊंगी। कला मेरे निकट भी उतने ही समय तक रहेगी जितने समय तक वह मृगनयनी के पास रहती है। लाखी और वे साथ में सीखती है। परन्तु मैं तो उन के आवास में जाकर नहीं सीख सकती। कला मुझको सिखलाने के लिये अकेली ही आयगी। सुमनमोहिनी ने निश्चय किया।

राजा मानसिंह ने हर्ष के साथ स्वीकार कर लिया। कला सुमन मोहिनी को भी संगीत की शिक्षा देने लगी।

मानसिंह ने एक दिन प्रस्ताव किया बैजनाथ संगीत का आचार्य है। उससे सीखो।

मैं सीखूंगी पुरुष से संगीत ? क्या हो गया है महाराज आपको ? रानी मृगनयनी की और बात है गांव की ठहरीं। कुछ दिन पहले तक गांव और जंगल में सबके सामने निकलती थीं पर मेरे घराने की रीति यह नहीं रही है।

राजा के चिढ़ेंटी लगी परन्तु उसने उपेक्षा की।

बोला 'आपकी जैसी इच्छा हो। आप खूब परिश्रम करिये वीणाके तारों पर और अपने गले के स्वरों पर। कुछ समय के लिये कला ही काफ़ी है। फिर देखा जायगा। कई घण्टे नित्य परिश्रम करेंगी तो आप भी आप निकल जायेंगी।

सुमनमोहिनी ने चटकी काटी, 'कई घण्टे परिश्रम करूं आपको इधर आने की उतने समय तक चिन्ता न रहे ! आज कितने दिन उपरान्त पधारे है आप यहाँ !!

'महारानी जी, मैं आजकल व्यस्त रहता हूँ।'

'हाँ सो तो मैं जानती हूँ। महल जल्दी-जल्दी बन रहा है। दिन भर उसी की देख भाल रहती होगी?

महल नहीं उसका नाम मानमन्दिर होगा।

बहुत बड़ा बनेगा क्या?

'बहुत बड़ा बने या न बने बहुत सुन्दर अवश्य बनाना चाहता हूँ। आपको उसका मानचित्र दिखलाऊँगा तैयार हो रहा है।

'भूल गये क्या? आपने दिखलाया तो था। परन्तु वह ब्याह के पहले की बात थी। अब कोई नया बन रहा है?

हाँ उसमें बहुत परिवर्तन कर दिये हैं।

'क्यों न करें परिवर्तन? युग का ही परिवर्तन हो गया है। नाम बदल दीजिये उसका। उसका नाम रखिये मृगेन्द्र मन्दिर।

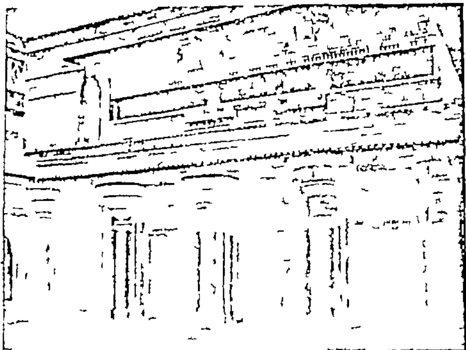
'या सुमनेन्द्र मन्दिर? मानसिंह हँस पड़ा।

सुमनमोहिनी ने आई हुई मुस्कान को होठों की सिकुड़न में समेट लिया।

कहा 'इसी उलटा-पुल्टी में बहुत समय लगा रहता है आपका! समझ गई मैं।

मानसिंह बोला केवल यही नहीं है महारानी जी। दिल्ली का सिकन्दर लोदी ग्वालियर पर फिर चढ़ाई करने वाला है। उसका सामना करने की तैयारी में अधिक समय लगा रहता है।

'ऊहूं! उसके बाप को हराया उसको भी हरा चुके हैं और हाल में मांडू के सुल्तान को ठोकपीट कर आये ही हैं। आपके लिये यह सहज है। अब तो महल बनाने में बस रहिए जैसा नई रानी कहें।



मान-मन्दिर (ग्वालियर) का भीतरी प्रांगण

[४१]

सरदी अपने यौवन पर थी। अस्ताचल की ओर जाने वाले सूर्य की किरणें लौस्लता पर। उन किरणों से गरमी पाने की वाञ्छा करने वाले को ठिठुरन और भी अधिक मिल रही थी। अपने महल की छत पर झरोखे के सहारे मृगनयनी खड़ी हो गई। साथ में लाखी। सूर्य के डूबने में अभी दो घड़ी का विलम्ब था। मृगनयनी की दृष्टि पश्चिमी पहाड़ियों के पीछे की किसी पहाड़ी किसी नदी और किसी गाँव की तरफ़ गई। राई में क्या होरहा होगा—यह सोच रही थी। फिर महल के उत्तरवर्ती बगीचे पर आँख जा पड़ी। केले के बड़े-बड़े पत्तों की गहरी हरियाली पर किरणें कलोलें सी कर रही थीं। उसको लगा पत्तों की बीणा सी बज रही है।

हुलास के साथ बोली 'चलो न लाखी बगीचे में घूम आवें। वहाँ पहाड़ियों के पीछे का कुछ दिखलाई पड़ेगा। उस कोने से देख लेते हैं कहीं महारानी या कोई और तो नहीं है वहाँ।'

'मैं देखे आती हूँ।' लाखी ने कहा और जाने लगी। मृगनयनी ने उसका हाथ पकड़ लिया।

निषेध किया 'जो काम मैं स्वयं कर सकती हूँ तुमसे नहीं कराया जायगा।'

'यह तो कोई बात नहीं पैर घिस थोड़े ही जायेंगे मेरे।'

'मेरे तो मन्द कुन्द पड़ जायेंगे।'

मृगनयनी लपक कर चली गई। देख लिया। बगीचे में कोई नहीं था।

वे दोनों बगीचे में चली गई और घूमने लगीं।

मृगनयनी ने राई के जंगल में विशाल वृक्ष देखे थे परन्तु केले के छोटे से पेड़ का गोल-मटोल सुडौल चिकना-तना और बड़े-बड़े गहरे

हरे झूमते पत्ते यहाँ कहाँ ? ये उसको सदा आकर्षक और विस्मयप्रद लगते थे। वह उनको अवसर पाते ही देखती और कभी न अघाती।

केले की कतारें उसकी सखी-सहेलियों सी लगीं। मुस्कराई, उल्लसित हुई मनों में लहर दौड़ी और मन चाहा कि पत्तों की हिलडुल की ताल में नाच उठूँ।

सूर्य धीरे-धीरे क्षितिज में समाने जा रहा था।

एक पहाड़ी की ओर इङ्गित करके मृगनयनी बोली 'यह होगा राई का पहाड़।'

'यह नहीं समझती। नदी दिखलाई पड़ती है ?'

'नहीं तो।'

'तो समझ लो होगा वह राई का पहाड़ और कहीं-कहीं ताल नदी होगी। जङ्गल में घने नाहर, सुअर, साँभर इत्यादि जानवर भी होंगे। पर जब तक वहाँ जाकर न देखलें तब तक कैसे मानलें ?'

'जी तो चाहता है अपने उन ठौरों को देखने का पर जब किसी योग्य हो जाऊँगी तभी जाऊँगी वहाँ। है न ठीक ? तभी तो तुम भी जाओगी ?'

'मैं तो कभी नहीं जाऊँगी। जब चली थी तब लौट कर भी नहीं देखा था।'

'अब कोई कुछ नहीं कहता।'

'मुँह से न कहें। उन लोगों की आँख तो कहेगी। धरा भी क्या है वहाँ ? नरवर की घाटियों में जंगली हाथियों और नाहरों के झुण्ड के झुण्ड हैं।'

'नरवर तुम्हारी जागीर है न, इसलिये।'

'जागीर तो मेरी किसी और—

निन्नी के भैया हैं।

वे दोनों हँस पड़ीं। दोनों के दांत मोती जैसे। हँसी जैसे शरदकालीन नदी की निर्मल धारा। आँखों में अल्हड़पन। पलकों की थिरकन जैसे किसी राग की सीधी लम्बी तान हो। धीमी धूम वाले कत्थई पल्लवों पर से मृगनयनी का ध्यान लाखी के दस्तकारी पर गई। रेशम के वस्त्र सोने और मोती के गहने। लाखी खिल रही थी।

कैसी भली सलोनी लगती है मेरी भाभी। भैया न जाने मन में कितनी कविता बनाते रहते होंगे।

लाखी ने चुटकी ली —कविता तो मानसिंह राजा बनाते होंगे जो कवि हैं। सच बतलाओ उन्होंने बनाई है न कविता? शायद बैजू से कभी बनवायें तुम्हारी सुघराई का गुणगान।

अरी हिट! मैंने जो गान सुने हैं उनमें ऐसा लगा कि राजा और रानियों पर खास-खासकर सब कुछ गढ़ा कर लिया गया है। इन गीतों को सुनकर कभी कभी मन नाचने को चाह उठता है। कला जानती है नाचना भी। उससे हम तुम दोनों नाचेंगी।

मीठपुरी। लाखी बोली और उसकी दृष्टि अपने पैरों पर गई। वह पैरों में चाँदी के गहने पहिने थी।

मृगनयनी के पैरों में सोने के गहने थे। वह रानी थी। पैरों में सोना रानियाँ ही पहिन सकती थीं या राजा जिसको वरदान स्वरूप अनुमति देते थे। नरवर का किला और नगर मानसिंह के लिए अटल को जागीर में मिला था। बदले में नरवर नगर की आय का एक अंश उनको दिया गया था। इसका आधार नहीं मिल सकती थी। इसलिए अटल के साथ रही। लाखी को पैर में सोना पहिनने का वरदान अभी इसलिए भी नहीं मिला था कि वह अहीर जाति की थी और सार्वजनिक मत का सम्पूर्ण अवहेलना भले ही वह अटल नहीं थी मानसिंह के बस की नहीं थी।

लाखी की दृष्टि मृगनयनी के पैरों के स्वर्णालंकार पर भी गई और फिर तुरन्त गले पर। उसको कुछ भी नहीं भाया। मृगनयनी गले में चाँदी की पतली हँसुली पहिने थी जिसको ब्याह के पहले एक दिन अटल मोल ले आया था।

मृगनयनी तुरन्त गम्भीर हो गई।

बोली मैं अपने नंगे पैर रहूँ कल से सोने के गहने नहीं पहिनूँगी। तुम चाँदी के पहिनो और मैं सोने के! यह नहीं हो सकता।

'पागल हो गई हो क्या?—उसने कहा—यह सोना किसी के पैरों में नहीं है राजा की रानी के पैरों में है।

'मैं महाराज से कहूँगी। उनको सोना प्रदान करना पड़ेगा।

'रानियों का जैसा बर्ताव तुमको इतना तो सिखाया गया, पर आया कुछ नहीं! बिरथा हठ कर रही हो। बड़ी महारानी और वे सात ठौ जो और हैं उनकी दीठ बराद पर पड़ जावेगी।

'मैं नहीं जानती थी कि महल में आठ पहले से हैं नहीं तो—

'यह बात तुम्हारे मुँह के लायक नहीं है मगर महारानी। अब कहा सो कहा आगे कभी मुँह से न निकले।

'नहीं कहूँगी कभी नहीं कहूँगी। यह सब होते हुवे भी महाराज का अटूट और पूरा प्रम है। परन्तु बड़ी महारानी! क्या तो नाम है और कैसा स्वभाव है!!

'अरे रा! जङ्गल में कच्चे करौंदी झरबेरी और बेर के काँटों के मध्य गुथवाने-खरौंचवाने हैं सो यह अभ्यास कभी काम आवेगा या नहीं?'

उपमा पर मृगनयनी हँस पड़ी।

बोली 'भैया का मन कविता करता हो या न करता हो पर तुमतो भौजी सचमुच कवि हो।

लाखी के मन में कुछ और पड़ा हुआ था

'तो देखो मेरी भली निन्नी मेरी महारानी मृगनयनी की मेरी नजर की तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ पैर पड़ती हूँ हा हा खाती हूँ—

मृगनयनी ने तुरन्त टोका —'चुप चुप।

'बात तो सुनो पूरी'—वह कहती गई,—'पैरों के चांदी-सोने के गहनों के बारे में कोई दन्दफन्द मत करना। इतना सब जो मान लिया गया है वही बहुत है। जल्दी मत करो। फिर कभी देखा जायगा।

मृगनयनी बोली 'मुझको बुरा लगता है, बहुत खटकता है। मैं नहीं कहूँगी तुमसे बिना पूछे नहीं कहूँगी परन्तु एक दिन तुम्हारे पैर में सोना देखना चाहती हूँ।

तुम्हारे गले में चांदी की हँसुली है क्यों है ?

'मैं अपनी राई को, अपने उन दिनों को जब स्वतन्त्र थी अपनी उस सांझ को जब भैया वहां से लौटकर इधर के आये, कभी नहीं भूल सकती। महाराज ने उतार डालने के लिये कहा पर मैंने नहीं माना।

'जो मेरे पैरों में जो चांदी है वह भी अनुचित नहीं है। वह इस बात की याद दिलाती है कि जातपांत के भूत के साथ बहुत अधिक छेड़छाड़ नहीं करनी चाहिये।

आचार्य विजयजंगम जातपांत के बिल्कुल विरुद्ध हैं। महाराज बतलाते थे। आचार्य को बहुत मानते हैं।

'यह सब ठीक है परन्तु विजय महाराज भी जातपांत को कुछ न कुछ तो मानते ही हैं। और, एक विजय महाराज के कहने के लिये न जाने और कितने विजय फन्द करेंगे।

चार-पांच लाठियों दूर एक पेड़ के पास जाकर खड़ी हो गई। मृगनयनी ने देख लिया। भाभी भी निकलीं।

लाखी से कहा, 'ओढ़ने के लिये मोटा कपड़ा इतनी दासियाँ लाई हैं! मुझको तुमको सर्दी लग रही होती तो क्या साथ न ले आ पातीं? या ठिठुरन लगी होती तो कमरे का ओट न पकड़ती। इनकी भीड़-भाड़को देखते ही मेरे तो रोम उठ आते हैं।'

लाखी बोली 'उनका काम है, क्या किया जाय?'

'मुझको तो विजय जी की बात अच्छी लगती है। वह कहते हैं सबको अपना अपना आवश्यक काम अपने हाथ से ही करना चाहिये। वह स्वयं ऐसा ही करते हैं। उनका कहना है कि इस देश को भिखमङ्गों और निकम्मों ने डुबोया है।'

'या इन विद्यार्थियों को यहीं खड़ी रहने दें?'

'खड़ी रहें किसने बुलाया था?'

'स्यात् कुछ बात कहने आई हों।'

'बात आती होगी कपड़े लाई हैं लादी भर। मुझको डूबते हुए सूर्य की आभा अच्छी लगती है, पश्चिम की पहाड़ी पर लाखी की खिड़की उसको देखती हूँ पीठ फेर कर। खड़ी रहें तब तक वे। मुझको नहीं ओढ़ने हैं कपड़े।'

एक दासी कुछ जोर के साथ खाँसी।

लाखी ने कहा 'अभी ऐसा योग तो तुमने साथ नहीं पाया है कि वे पीठ पर सवार रहें और तुम आनन्द के साथ डूबते सूर्य का दर्शन करती रहो।'

'हां बुलाये लेती हूँ भोजी रानी बोल जीते तुमसे।'

मृगनयनी ने दासियों को सङ्केत से बुला लिया।

उन्होंने कपड़े दिये। एक ने हाथ जोड़कर कहा 'एक पहर पीछे सभा भवन में आचार्य बैजू का गायन और आचार्य विजय का बीन्-वादन महाराज करवा रहे हैं। बड़ी महारानी और सब रानियों को भी निमन्त्रण है। आपको भी पधारना है।'

मृगनयनी बोली 'अच्छी बात है।'

दासियां नीचा सिर किये खड़ी रहीं।

'और कुछ?' मृगनयनी ने पूछा।

दासी ने उत्तर दिया 'ठिकुरान, बाहर वायु चल रहा है। भीतर खिड़की में कोयले जला दिये गये हैं। वहीं चलकर तापना होय।'

'सुन लिया। जाओ। सूर्यास्त के उपरान्त आऊँगी।' मृगनयनी ने कहा।

दासियां चली गईं। हंसी रोकने के लिये मृगनयनी ने होठ को दांत से दबाया और लाखी ने दूसरी ओर मुंह फेर कर अञ्चल मुँह पर रख लिया मानो ठंड से अपनी रक्षा कर रही हो।

दासियों के चले जाने पर वे दोनों खिलखिलाकर हँस पड़ीं। मृगनयनी बोली 'इनकी बोली कैसी भोली-भुती है! इनके भी सिखलाने वाले होंगे कहीं।' सूर्य की ओर देखने लगी।

लाखी ने सूर्य की ओर मुँह करके कहा 'मैं कहीं सीखी होती तो काम में दिखलाती।'

कुछ क्षण बाद लाखी ने खिन्नता प्रकट की—'मन नहीं लगता यहाँ में।'

'मेरा भी नहीं लगता। चलो। फिर कभी सही।'

[५२]

एक पहर रात जाने के पहले ही कर्ण मन्दिर के सभा भवन में गायन-वादन का आरम्भ होने वाला था। ऊपर के खंड की खिड़कियों के पीछे मृगनयनी और लाखी आ बैठीं। जगमगाती हुई वनभूषा में। मृगनयनी को लग रहा था जैसे उसके अभ्यास-व्यवहारों पर कोई आक्षेप प्रकट करने वाला हो और वह अपनी परिस्थिति का पक्ष समर्थन करने पर आरूढ़ हो, जैसे कोई उसके सौन्दर्य की स्तुति भी करने वाला हो और वह उस स्तुति को अपना सहज अधिकार समझकर एक मुस्कान द्वारा उपेक्षा की 'चोट' का उत्तर टालने वाली हो। चेहरे पर गुलाबी रंग नहीं था कुछ पीलापन था। लाखी मोद मग्न थी।

इन दोनों के आने के बाद सुमनमोहिनी और अन्य सात रानियाँ आईं। मृगनयनी ने रीति के अनुसार सुमनमोहिनी का पद-स्पर्श किया। उसके सिर पर आशीर्वाद का हाथ फेरते हुये बड़ी रानी ने आशिषों के साथ उसकी वेषभूषा को निरखा। लाखी को हँसमुखी दृष्टि से न चूकी। वे आठों एक ओर बैठ गईं। मृगनयनी और लाखी कुछ अन्तर पर। दासियों का ठठ इन सबके पीछे पड़ा था।

नीचे सभा भवन में मानसिंह एक थोड़े ऊँचे मञ्च पर था। उसके नीचे एक ओर निहालसिंह और दूसरी ओर अटल। सामने बैजू विजय कला और अन्य वादक इत्यादि।

बैजू ने प्रबन्ध की सामग्री शुरू की। विजय ने वीणा बजाई और कला ने तम्बूरे और अपने स्वर से साथ दिया। मानसिंह पहले ही आलाप और वीणा की झंकार पर मुग्ध होने लगा—उसने मुग्ध होने के लिये ही उस राग का चुनाव किया था।

गायन के आरम्भ होते ही सुमनमोहिनी की इच्छा कुछ बात करने की हुई। परन्तु अन्य रानियाँ संगीत के प्रारम्भिक उत्थान की मग्न

में भर रही थीं इसलिए बड़ी रानी कुछ समय तक मौन रही। फिर उससे न रहा गया।

पास बैठी हुई एक रानी से कहा 'इतने सोने और मणिमुक्ताओं से तृप्ति नहीं है नई दुलहिन को!'

छोटी रानियों ने कनखियों देखा, बरबस मुस्कराईं। बड़ी रानी से आँख मिलाकर डाह की हँसी हँसीं और नीचे सभाभवन में होने वाले संगीत के प्रति उन्मुख हो गईं।

मृगनयनी और लाखी ने नहीं देखा।

सुमनमोहिनी ने निकटवर्ती छोटी रानी के चुटकी काटी। वह जरा सी खिसकी।

बड़ी रानी बोली 'अरी यह गीत तो आधीरात तक चलता रहेगा। उधर देखो नई दुलहिन गले में चाँदी की पतली हँसोरिया किस चाव के साथ डाले है! मणिमुक्ताओं वाले हार उस हँसोरिया को निरन्तर हाथ जोड़े खिलखिला रहे हैं।'

छोटी रानी ने देखा। कुछ क्षण देखते रहने के उपरान्त चाँदी का वह गहना आँख की पकड़ में आ गया। मुँह दाबकर हँसी।

लाखी ने देखा मृगनयनी ने भी।

बड़ी रानी ने छोटी की हँसी को उत्तेजित किया 'हँसुली को बिचारी ओढ़े भी कैसे! जब मिट्टी के घड़ों में पानी भर कर नदी से सिर पर धर कर लाती होगी तब यह हँसुली गले में हिलती डोलती होगी, गाय भैंस दोहने के समय और मट्ठा मथने के समय हँसुली नाचती होगी, चसन पापने के समय गले से टसाती-भभाती होगी और खेती को रखाने के लिये मचान पर से जब लम्बी भारी भुजाओं से घुमा-घुमाकर चिड़ियों को भगाने के लिये 'हरिया! हरिया!!' कहती होगी तब हँसुली कभी ठोड़ी को और कभी गले की नसों को गीत के बोल सुनाती होगी!

बड़ी रानी अपनी कल्पना पर हँस पड़ी । छोटी रानी कपड़े की ओट भी अधिक मुंह पर रख-रखकर हँसने लगी । दूसरी रानियों को कुतूहल हुआ । बड़ी के परिहास को सुना मृगनयनी की ओर देखा और हँस पड़ीं ।

मृगनयनी और लाखी ने यह सब देखा बात का कोई भी अन्य सुनाई नहीं पड़ा ।

हमारे ऊपर फबती कसी जा रही है, हम दो ही इस हँसी का कारण इन दोनों ने तुरन्त समझ लिया । ठठोली का विषय मैं हूँ । जातपांत के बन्धन की उपेक्षा करके मैं ब्याही गई हूँ जिसी के ब्याह सम्बन्ध के कारण राजा के साले—मेरे पति—को जागीर मिली है पहले मूलों मरती थी और कराती थी अब चोला-चोली पहिनने को मिल गया है पहले फाड़े के कपड़े थे अब रेशमी वस्त्र हैं और पहले गाँव के गीत सुनती और भोंड़े रसिया गाती थी अब बैजू और विजय सरीखे आचार्यों का सङ्गीत सुनने को मिल रहा है ! पहले—और आगे लाखी नहीं सोच सकी । शरीर में दाह हुआ । कान तक जल उठी । मृगनयनी की ओर आँख फेरी । उसका चेहरा तमतमा गया था परन्तु वह नया मनन के दृश्य को खिड़की में से देखती जान पड़ी ।

मृगनयनी देखकर भी कुछ नहीं देख पा रही थी । मेरी खिल्ली की जा रही है ! मैंने ऐसा क्या किया है ? पूरा शिष्टाचार किया था फिर भी यह सब क्यों ? क्या मैं इनसे कम सुन्दर हूँ ? क्या मैंने कोई गहना दिखावटी तरह पर पहिन रखा है ? नहीं तो । क्या किसी वस्त्र की समेट लपेट में होकर मेरा कोई अंग भोंडेपन से झाँक रहा है ? मृगनयनी अपने पहिनाव का निरीक्षण किया । एक पैर थोड़ा सा खुला हुआ था जैसे किसी सरोवर के नीले जल पर एक बड़ा कमल खिला हो और उसपर ओस की बूँदें प्रातःकालीन रवि रश्मियों के साथ मन्द-मन्द झूम रही हों । मृगनयनी ने रत्नजटित स्वर्ण नूपुरों को ओढ़नी से ढक लिया । हँसी का कारण शायद ये हैं ! सौभाग्य चिह्नों को छोड़कर बाकी सबको उतार कर

रख छूंगी— फिर जब चाहूंगी पहिनूंगी तब पहिनूंगी और तब ये सब हँसेंगी नहीं। अपने को तुच्छ समझकर चुप रह जायगी। उसने निश्चय किया।

गले में पड़ी हुई चाँदी की हँसुली पर अचानक उँगली गई और झिझक आई। मेरी यह पतली हँसुली इनके सब आभूषणों की अपेक्षा अधिक मूल्यवान है। उस समय इसी को पहिन तो जब नाहर को एक तीर से मार गिराया जब अरने को सींग पकड़कर मोड़ने का प्रयास किया जब राजा ने पहिली बार देखा जब उन्होंने इसी हँसुली के ऊपर हीरे लाल का जड़ाऊ हार गले में डाला जब वह प्यार के साथ गले में बाहें डालकर मुझसे न जाने किस कविता में बोलने लगते हैं। सोचते ही ध्यान सभाभवन में मञ्च पर बैठे हुए प्रसन्न मानसिंह की ओर गया। अब उसको सब कुछ स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगा। यह है मेरे राजा मेरे!

मृगनयनी ने कनखियों उन रानियों को देखा। उनकी हँसी अभी समाप्त नहीं हुई थी।

मृगनयनी ने होंठ जरा से सिकोड़े और मनमें कहा 'ऊँह! रानी हुई तो क्या गँवारों से भी गई-बीती हैं! अरे!! मैं इनको गँवार क्यों कहूँ? गाँव की तो मैं हूँ। हँसे जाओ हँसे जाओ किसी दिन मैं तुमसे कहीं अधिक हँसूंगी। और अकेली नहीं हँसूंगी तुमको भी हँसाऊँगी। अपनी गाय का दूध अकेले अकेले नहीं पिऊँगी तुमको भी पिलाऊँगी। शायद ये मेरे ऊपर न हँस रही हों। संगीत की किसी बात पर हँस पड़ी हों। मैं तल्लीन होकर सुन रही थी मेरी समझ में कोई बारीक बात नहीं आई इनकी समझ में आ गई, आपस में कुछ चर्चा की और मुझको यहीं मूर्ति की जैसी देखकर हँस पड़ीं। ओह! यही हो सकता है। परन्तु मेरी ओर सैन कर-करके क्यों मुँह का इतना दाब दाबकर हँस रही थीं? ऊँह! ओछी हल्की हैं न।

सभाभवन में मानसिंह के कण्ठ से निकला सुनाई पड़ा 'वाह! वाह!! वाह!!! वाह!!!!

मृगनयनी ने देखा गायक बैजू बीणा-वादक विजय की ओर देख-देखकर मुस्करा रहा है उस मुस्कराहट में विजय का तीखापन और चिनौती है। विजयजङ्गम को भी देखा —उसके चेहरे पर क्षोभ और आँख में बैजू की विजय की प्रतिक्रिया और चिनौती के स्वीकार करने की दृढ़ता थी।

कला बैजू के इस विजय-प्रदर्शन पर प्रसन्न थी और विजय की मुस्कराहट को अपनी मुस्कान का सहयोग दे रही थी।

सङ्गीत के किस दावपेच पर यह हर्ष और क्षोभ हुआ ? मैं ध्यान दिये होती तो क्या समझ में वह दावपेच आ जाता ? क्या इसके पहले कोई एकाध ऐसा ही हो चुका है ? क्या ये रानियाँ उसी पर हँसी थीं ? परन्तु कोई वाह वाह तो नहीं हुई थी। और अब भी उस पहले ही प्रसङ्ग को लिये हुये हँस रही होंगी। ऊँह ! होगा। सङ्गीत के दावपेच सबके सब न समझ पाते तो मेरा नाम पलट दिया जाय। चाहे कितना भी समय क्यों न लग जाय। तब मैं देखूँगी कल्मी और ये रानियाँ कैसा करेंगी !

थोड़ी देर बाद बैजू की फिर जीत हुई। फिर बैजू के चेहरे पर विजय की मुस्कराहट और कला के होठों पर सहयोग की मुस्कान। विजयजङ्गम की आकृति फिर क्षोभमयी और मानसिंह की फिर वही 'वाह ! वाह !!'

मृगनयनी की समझ में नहीं आया। अन्य रानियाँ नहीं हँस रही थीं। लाखी की दृष्टि में प्रश्न का लक्षण था।

अब ये रानियाँ क्यों नहीं हँस रही हैं ? कदाचित उस समय में ही इनकी चर्चा और हँसी का प्रसङ्ग थी। कोई बात नहीं देखा जायगा।

इसी एक प्रबन्ध का गायन दो-ढाई घण्टे चलता रहा। मृगनयनी उकताने लगी परन्तु अपने को समझाने लगी, अवश्य इस गायन वादन में कोई विशेष बात है तब राजा इतने सजग और हर्षमग्न हैं। मैं भी ध्यान के साथ सुनती रहूँगी और किसी दिन इससे बढ़कर गाऊँ बजाऊँगी।

लाखी ऊँघने लगी थी। बड़ी रानी सो गई थी और अपनी पड़ोसिन के कन्धे पर सिर लटकाये हुई थी। पड़ोसिन रानी भी सोना

चाहती थी पर बड़ी रानी भार के कारण मन को मसोस कर संगीत की झनझनाहट को सुन रही थी और मुँद-मुँद जाने वाली आँखों को खोल-खोल दे रही थी। अन्य रानियाँ तकियों के सहारे खुर्राटों और धीमी सिसकारियों के बीच में स्वप्न लोक की सैर कर उठी थीं। दासियाँ बैठ गई थीं और सो गई थीं।

मृगनयनी ने लाखी के कन्धे को जरा हिलाकर और कुछ ऊँचे स्वर में जैसे अन्य रानियों को फटकार देना चाहती हो कहा 'अरी देखो कैसा अच्छा चल रहा है!'

लाखी उचट कर देखने-सुनने लगी।

मृगनयनी बोली 'कितना बारीक काम हो रहा है नीचे! बड़ी बड़ी सुन्दर तानें झड़ी सी लगाकर बरस रही हैं!! दोनों गायकों के बीच में संयोग वियोग का द्वन्द्व चल रहा है। जरा देखो भेड़ बकरियों की तरह मत सोओ।'

वाक्य का अन्तिम अंश उन रानियों की ओर आँख फेरते हुये मृगनयनी ने पूरा किया। लाखी को अच्छा लगा। वह हँसी।

'तुम बहुत जल्दी समझने लगी हो' लाखी ने कहा—'अभ्यास करते-करते मुझको भी कुछ न कुछ आ जायगा। कान को अच्छा लग रहा है। ध्यान के साथ सुन रही हूँ।'

बड़ी रानी की नींद नहीं उचटी परन्तु जिस रानी के कन्धे से टिकी हुई वह सो रही थी उसने इस वार्तालाप को सुन लिया और कुढ़ गई।

सभा भवन में बैजू का गायन और विजयजंगम का वादन एक घण्टे और चला। इस बीच में जीत हार के कुछ अवसर और आये। विजयजंगम खीज उठा। बीणा को नीचे रख दिया।

बोला 'अब मैं गाऊँगा। नायक बैजू बीणा बजावें।'

मानसिंह ने कहा 'अवश्य। अभी समय ही कितना हुआ है? बिहाग के गाने का समय तो अब आया है।'

'आचार्य बजूबूम गावें' —बैजू बोला —'परन्तु मान एक होड़ है।'

'क्या?' राजा ने पूछा।

बैजू ने उत्तर दिया 'मैंने इनको अभी अभी वीणा-वादन में कई बार चुकाया है। यदि इनके गाने के समय मैंने इनको अपनी वीणा के बजाने से दूर किया तो इनकी वीणा को छीन लूंगा। सङ्गीत ही छुड़ाकर रख दूँगा।'

'क्या बैजू पागल है?' मृगनयनी ने सोचा।

उस रानी ने अपना बोझ दूर करने के लिये बड़ी रानी को झटका दिया। बड़ी ने जोर के साथ पर फुफकारा। पैर का एक स्वर्णजटित आभूषण मृगनयनी की बैठक की दिशा में जा गिरा परन्तु किसी ने देखा नहीं।

छोटी रानी ने बड़ी से कहा 'महारानी जी देखिये बड़ा मल्ल-युद्ध होने वाला है।'

बड़ी रानी ने हड़बड़ाहट के साथ आँखें मलीं। सोचा मृगनयनी अपनी लम्बी पुष्ट गर्दन घुमाकर किसी को पीस डालने के लिये टूट पड़ी है। उत्सुकता के साथ उसकी ओर देखा। वह ध्यानपूर्वक सभा मण्डप की ओर देख रही थी।

बड़ी रानी ने निराश होकर छोटी से पूछा 'क्या बात है?' छोटी ने प्रसङ्ग को बतलाया।

बड़ी जंभाई लेकर बोली 'मैं थोड़ी देर के लिये सोई थी। अब जागती रहूँगी।'

छोटी ने सोचा 'थोड़ी देर के लिये सोई थी! दो घण्टे तो मेरे ही कन्धे तोड़ती रहीं!!'

सङ्गीत का पुनरारम्भ हुआ। एक घड़ी के उपरान्त ही बैजू को विश्वास हो गया कि विजयजङ्गम को अब हार मानना पड़ेगा। राजा ने भी समझ

गया। सोचा ऐसे दो बड़े कलाकारों का परस्पर छिरकटौअल बरकाया जाना चाहिये।

बोला 'थोड़ा ठहरिये।' विजयजङ्गम रुक गया। बैजू गाता रहा। कुछ क्षण उपरान्त पखावज बन्द हो गई। कला ने भी अपने सहयोग को स्थगित कर दिया। परन्तु बैजू आँखें मींचे गाता रहा।

मृगनयनी ने देख लिया था कि बड़ी रानी ऊब पड़ी हैं। उसको सुनाते हुये दासी से कहा 'वाह! क्या बात है!!' कैसा बजा है! और कैसी गायकी है!! कितना तन्मय होकर गा रहे हैं आचार्य!!! इनको अपने आसपास की बिलकुल ही सुधि नहीं। कला और कलाकार इनका महत् है।

'ओहो यह बड़ी चमत्कार है!' बड़ी रानी ने सोचा चेहरे की रेखाओं को बनाया बिगाड़ा परन्तु चुप रही।

राजा कुछ क्षण चुप रहने के बाद जरा ऊँचे स्वर में बोला 'वाह! वाह!! वाह!!! वाह!!!!

दासियाँ चौंक पड़ीं और सावधान हो गईं।

बैजू के चेहरे पर विजय की मुस्कराहट आई। और होठों पर कल्पना छोटा सा मधुराग छोड़कर आ गई। आँखें खोलकर विनोदी भरी दृष्टि से विजयजङ्गम को देखा। वह मुस्करा रहा था और वीणा नीचे रक्खी थी।

तो क्या वह वीणा को बजा नहीं रहा था?। कब बन्द कर दिया? और कला का तम्बूरा नीचे रक्खा था। उसने कब रख दिया? पखावज भी रुकी पड़ी है! कब रुक गई? विजय मुस्करा क्यों रहा है? क्या वह हारा नहीं? और मैं क्या गा रहा था? तो क्या कर रहा था?

बैजू ने गाना बन्द कर दिया।

मानसिंह ने उमङ्ग भरे स्वर में कहा 'आचार्य बैजनाथ धन्य हो! कितने तन्मय हो गये थे तुम अपने रस में!! हम सब भी तल्लीन हो गये।

उन्होंने तुम्हारे रस का पूरा स्वाद लेने के लिये अपनी वीणा दी रस की वर्षा में तम्बूरा और उन्होंने पखावज ! तुम सब डूब गये तुम्हारी रस धार में !! मैं तुमको नमस्कार करता हूं ।

बैजू अपनी कारण ढूंढने की चिन्ता में नहीं पड़ा ।

बोला 'महाराज आज मैं सब पा गया । जीवन का सब कुछ पा गया । कलावन्त को और चाहिए ही क्या ?

'परंतु हमको तो तुमसे अभी बहुत कुछ चाहिये है ।'

मेरे पास है ही क्या । जो कुछ है महाराज का है ।

'तुम अभी जिस ध्यान में मग्न थे उसमें से कुछ हम लोगों को भी दो ।

'हूं ! हूं !! हूं !!! सो कैसे ? और मैं तो गा रहा था, ध्यान तो सवेरे के समय करता हूं । अभी क्या मैं सो गया था ?'

'सोये तुम नहीं थे । हम लोगों के भीतर वाले को जगा रहे थे ।

बैजू कुछ गुनगुनाता हुआ झूमने लगा ।

एक क्षण बाद बोला 'आरम्भ करता हूं । साथ होने को बैठकर ही रहूँगा ।

विजयजंगम ने वीणा को उठा लिया, कला ने तम्बूरे को । पखावजी ने थाप दी ।

मानसिंह ने कहा 'मेरा एक अनुरोध है ।

सब स्थिर हो गये ।

मानसिंह ने अनुरोध सुनाया—'प्रबन्ध और छन्द की सामग्री को जो पसारा बहुत दिनों से मिलता आरहा है उसको थोड़ा सा समेट लिया जावे और काट छांटकर और भी अधिक सुन्दर बना लिया जावे तो कैसा रहे ?'

'सुन्दर तो है ।' विजयजंगम ने अपनी जानकारी प्रकट की ।

मानसिंह बोला 'हाँ है पसर कान्ही यह भी नया है। सुन्दर है परन्तु इसकी सुन्दरता को और भी अधिक बढ़ाने और निखारने की आवश्यकता है।

विजय ने कहा 'महाराज जो कुछ नाद-वाद पहले से चला आया है, वही दुर्लभ है उसमें घटा-बढ़ी अब कौन कर सकता है?

चिनौती के स्वर में दृढ़ता के साथ बैजू बोला 'हो सकता है, हुआ है और होगा। भगवान शंकर की दया से मैं करूँगा।

विजय को भगवान शंकर का नाम अच्छा लगा परन्तु बात बुरी लगी। खटकी।

देखा जायगा। विजय के मुँह से उपेक्षा के साथ निकला।

'हाँ हाँ ऐसा ऐसा करके दिखला दूँगा।

बैजू ने अपने हठ का समर्थन किया।

विजय ने सोचा बैजू पागल है।

राजा ने कहा 'समय व्यतीत हो गया है। इस विषय का गहरा चिंतन हम सबको करना होगा।

बैजू ने तुरन्त कामना प्रकट की —'मेरा और आचार्य विजय का मुकाबला तो इसी समय हो जाय।

अभी नहीं —राजा ने टाला,—फिर कभी।

होंठ भींचते हुये बैजू ने विजय पर दृष्टिपात किया। राजा ने सोचा उत्साह भड़क गया।

बोला 'तो मैं यह चाहता हूँ कि गायन की कोई नवीन मधुर और चमत्कारपूर्ण परिपाटी निकाली जाय।

उपेक्षा और प्रतिवाद में होंठ सिकोड़कर विजय ने सिर नीचा किया। कला मुस्कराई। जम्हाई आने को थी कि उसको छोटी सी अँगड़ाई में

परिवर्तित कर लिया। कन्धे हिल गये। निहालसिंह ने देखा और कला ने भी निहालसिंह की निरख को।

बैजू ने कहा 'मैं समझ गया। निकालूँगा परिपाटी। ऐसी कि जिसके द्वारा श्रृंगार मन को आरम्भ से अन्त तक अपनी कोमल पाँखों में पकड़ रहे और समय इतना ही लगे कि मन चाहता रहे कुछ और कुछ और भी होता।

कर चुके! धीरे से विजय के मुँह से निकला। कला ने बैजू के तमतमाये चेहरे को देखा। आँख मानसिंह पर से फिसलती हुई निहालसिंह पर जा अटकी। वह नीचे ही नीचे उसको कुछ अधिक चढ़ाकर देख रहा था। कला ने अणुक्षण के अवान्तर से फिर निहालसिंह को देखा। फिर दोनों की दृष्टि मिली।

बैजू के सटे हुये होठ फड़के और गरम निःश्वास के साथ धीरे से शब्द निकले 'किसी दिन तुम्हारी वीणा को न फोड़ा तो मेरा नाम नहीं।

राजा ने नहीं सुन पाया परन्तु विजय ने सुन लिया। राजा की इच्छा सभा विसर्जित करने की थी परन्तु कलावन्त अखाड़े को नहीं छोड़ना चाहते थे।

मानसिंह ने समस्या का समाधान निकाला,—कला का एक छोटा सा नृत्य हो जाय और उसके उपरान्त सभा विसर्जित हो।

कला ने बैजू के गाये हुये प्रबन्ध को सार्थक करने वाला नृत्य किया। बीच बीच में कला और निहालसिंह ने एक दूसरे को कई बार छिपे लुके देखा।

नृत्य के समय तक अन्य कई रानियाँ भी आ चुकी थीं।

उन सबको सुनाने के लिये मृगनयनी ने लाखी से कहा 'महाराज ठीक कहते हैं। बड़ी बात को थोड़े में कहना ही तो चतुराई है। बैजू का कहना सही है कि ऐसा हुआ है और आगे भी होगा। बड़ी चट्टान के

झोंके से नाहर को कुचलने की अपेक्षा छोटे मोटे तीर से सुला देना ज्यादा अच्छा। अभ्यास किया जाय तो सब हो सकता है।

बड़ी रानी ने हँसकर मुँह फेरा। दूसरी रानियों ने दोनों की ओर देखा। हँसने की चेष्टा की परन्तु हँसी छोटी मुस्कान का रूप लेकर ही रह गई। वे सब नृत्य को देखती रहीं।

मैं अब भी सीखूंगी मृगनयनी ने लाखी के कान में कहा।

उसने भी उसी तरह कान में फूंका — हां हां सब हो सकता है।

एक घड़ी पीछे नृत्य समाप्त हो गया और सभा विसर्जित।

आठों रानियां जाने को हुईं। मृगनयनी और लाखी ठिठकी रहीं। उन दोनों का नमस्कार लेकर वे सब चलीं गईं। उनकी दासियां भी साथ। ये दोनों अकेली रह गईं। मृगनयनी की निगाह सुमनमोहिनी के उस गहने पर गई जो उसके पैर से उतर कर गिर गया था और जिसको वह भूल गई थी। मृगनयनी ने उसको उठाकर परखा और जोर के साथ फेंक देने की इच्छा हुई। सभा-विसर्जन के उपरान्त मानसिंह की दृष्टि ऊपर खिड़की की ओर गई। दिखलाई तो वहां से कुछ नहीं पड़ता था परन्तु उसने नमस्कार किया और चला गया। था शिष्टाचार ही परन्तु मृगनयनी को वह बहुत कुछ लगा। उसने समझा कि अकेली मुझको ही राजा ने नमस्कार किया है। उस गहने को लिए हुए वह अपने कक्ष में चली गई। जब हाथ में गहने को देखा तो क्षुब्ध हुई। एक ऊपर के गहरे आले में फेंककर डाल दिया और पलङ्ग पर जा लेटी।

बड़ी रानी क्या है! एक विडम्बना है!! कदाचित् वह मेरा उपहास करने के लिये ही हँसी थी। और वे सातों अपना कोई निजत्व ही नहीं रखतीं। हर बात में उसकी अनुहार करती हैं! परन्तु महाराज मेरे और अकेले मेरी सम्पदा हैं। मैं उनकी बह मरे। कितने गहरे हैं। मैं भी ऐसी ही बनूंगी और इतना हँसूंगी इन आठों के ऊपर कि हा! नाहरों और अरनों की परवाह नहीं की तो ये किस खेत की मूली हैं!! कैसे

हरे भरे खेत थे और कैसा बड़ा और हरा जंगल !!! मचान, मालवा खेत और खलिहान। तोते मोर और नीलकण्ठ। यह आया वह गया। न वे पक्षी और न म मक्खी। मचान पर कैसी हिलोरें लेती हुई हवा आती थी और मैं कितना गाती थी। बैजू सरीखा ही गाने लगूंगी भरे उससे भी कुछ अधिक मिठास भरा तब लाखी भी कहेगी तुमने ठीक कहा था सब हो सकता है सब हो सकता है—वह सो गई।

[४१]

स्वर्ण-संचय की कामना, मारकाट की आकांक्षा, स्त्रियों के अपहरण की वासना, राज्य स्थापित करने के लोभ और किसी भी प्रकार अपने मज़हब के विस्तार के मोह को लेकर पठान और तुर्क आक्रमक भारत में घुसे थे। इन सब का एक सामूहिक नाम था उनका बहिश्त। इस बहिश्त की तलाश में ही बादशाह के पहले भारत में जगह जगह सल्तनतें क़ायम हुई—दिल्ली, मालवा, गुजरात, जौनपुर, गोलकुण्डा, बङ्गाल इत्यादि में। सल्तनतें क़ायम होने पर बाप ने बेटे को और बेटे ने बाप को, सल्तनत के तख़्त और मुकुट का मार्ग-कंटक समझ कर ज़हर के ज़रिये या किसी और सुगम उपाय से ख़तम किया। इस बहिश्त की प्राप्ति ने सुल्तानों को और उनके सरदारों तथा सिपाहियों को निर्बल और निकम्मा बना दिया। किन्तु यदि परलोक मय निराशा-वाद आपसी लड़ाइयों के कारण उतने दुबले न पड़ गये होते तो या तो वह स्वर्ग उनको मिलता ही नहीं और यदि मिल ही जाता तो धर्मराज उनको बहुत समय तक उसमें रहने न देते।

परन्तु उस बहिश्त को भी बहुत ज़्यादा मुफ़्तख़ोरी बरदाश्त न थी। मौलवी और मुल्ले लगातार चेतावनी देते रहते थे। मुल्ले-मौलवियों ने इस्लाम को जैसा और जितना समझा था उसके अनुसार वे अपने इन चेले-चाटों को जगाया, उकसाया और भड़काया करते थे। सुल्तान न सुनता तो सरदारों को, सरदार न सुनते तो सिपाहियों को ये मुल्ले मौलवी धर्म-युद्ध जिहाद के लिये भड़काया करते, षड्यन्त्रों में भाग लेते और जब तक कुछ कर न गुज़रते तब तक दम न मारते। परन्तु इस जिहाद का अनिवार्य परिणाम वही स्वर्ग हो हो जाता था जिसको पा पाकर सुल्तान, सरदार और सिपाही अनवरत गति से चले जाते थे। यही उनका सबसे बड़ा ज़ोर और सबसे बड़ी कमज़ोरी थी।

मालवा सल्तनत के मुल्लों ने ग़ियासुद्दीन के लड़के को अपना इत्मीनान और भविष्य की आशाओं का केन्द्र बनाया क्योंकि ग़ियासुद्दीन

अपने स्वर्ग की तलाश में इन मुल्लों-मौलवियों के बतलाये हुये स्वर्ग की परवाह नहीं करता था।

नरवर से लौटे हुये गियास को छः महीने हो गये। जाड़ा आये वसन्त ऋतु आई गई और अब गर्मियां समाप्त होकर बरसात लगने वाली थी परन्तु गियास न मरा न मरा।

नसीर ने मुल्लों की हिदायतों पर अमल किया —अक्सन मसाले जहरीले किस्म सभी तरह के अभ्यास किये—परन्तु चूक-चूक गया। उसके लिये भला इतना ही हुआ कि गियास को उसके किसी भी अभ्यास का पता न चला। मटक उसका सहयोगी था इसलिये शायद नसीर बार-बार बचा। फिर एक दिन घड़ी आ ही गई।

गियास को एक बंगालिन मटक की कोशिशों से नसीर के फेर में आ गई और काम बन गया। दो दिन से अचानक बादल और शीतल समीर। संध्या के उपरान्त का समय। महल के झरोखे से ठंडी हवा के झोंके आते और हलकी बूंदें भी। बंगालिन शाम से आई। मटक तख्त के नीचे बैठा था।

'सुल्तान सिकन्दर लोदी ने ग्वालियर पर चढ़ाई करने की जो ठानी है वह मेवाड़ के राणा के जरिये वहीं की वहीं ठप क्यों न कर दी जाय?' गियास ने चुसकी लेते हुये कहा।

नीची गर्दन को और भी नीची करके मटक बोला 'जहांपनाह। दो मुखी आपस में उलझ जायें तो इससे बेहतर और कुछ नहीं।'

'मैंने राणा रायमल जी को संदेशा भेज दिया है कि सिकन्दर ग्वालियर का बहाना करके असल में मेवाड़ की तरफ झपटता हुआ पहुँचेगा इसलिये वह उसको आगे बढ़कर रोक लें।'

—— लड़के राणा की भेद दें तो वह सिकन्दर को वहीं के वहीं

'तुम तो हो गये ! राणा अपने बच्चू से लड़ेंगे तुम्हारे बलवाय बच्चू से थोड़े ही लड़ेंगे। मैंने उनके एक मात को हुक्का दिया है यह उतरवा देना बात को ठीक घाट पर।

'जहाँपनाह यह बहुत सही रहा।

'और उधर सिकन्दर और राना पूछे कि इधर मैंने कालपी के रास्ते से ग्वालियर पर धावा बोल दिया। अबकी बार नरवर होकर नहीं जाऊँगा। मैं पहुँचूँगा ग्वालियर उत्तर की राह से और चन्देरी का सूबेदार आवेगा ग्वालियर पर दक्खिन से। क्या समझे ?

'सही फरमाया जहाँपनाह ने। उत्तर से जहाँपनाह और दक्खिन से चन्देरी का सूबेदार सरकार।

बस फिर बन गया काम। वे दोनों ग्वालियर में ही हैं जानते हो न ?

मल्क ने वाह-वाह के लिये आँख ऊँची करके नीची करली। उसने देखा गियास की पुतलियाँ कुछ अधिक फैल गई हैं।

कहा 'कौन जहाँपनाह ?

प्याले को खालकर यह बोला—सुराही में से प्याले को भरता रहा —पर्वे महमूद इतनी जल्दी भूल गया ! मृगनयनी और लाखी—ये दोनों। इनको अबकी बार मौत आयें बिना चैन नहीं देने का।

गियास की आँखें फैलकर कुछ और भारी हुई।

'आज मेरा हाथ इतना क्यों काँप रहा है ?

जहाँपनाह हवा में कुछ सर्दी है।

तो अब राजा रामसल या उसके लड़के सौंदा को सिकन्दर से प---स---म---ने में कितनी दे र-है ?

'बहुत थोड़ी सी जहाँपनाह।

'दोनों लड़ जावें -क म--ब दा।

ग़ियास के हाथ से प्याला छूट पड़ा। खवासिन किवाड़ की ओट में खड़ी हुई थी। जरा और ओझल हो गई। ग़ियास तकिये के सहारे पड़ गया। मटक खड़ा हो गया।

धीरे से बोला, 'जहाँपनाह।'

ग़ियास ने कोई जवाब नहीं दिया। मुँह से झाग आने लगे। मटक ने ताली बजाई। खवासिन तुरन्त आ गई।

मटक ने धीरे से कहा 'शाहज़ादे के पास इत्तिला भेजो कि जहाँपनाह की तबियत यकायक ख़राब हो गई है। किसी और को ख़बर न होने पावे।'

खवासिन चली गई। थोड़ी देर में ग़ियासुद्दीन छटपटाने लगा और नसीर के आने के पहले ही उसका प्राणान्त हो गया।

नसीर आते ही डरते-डरते ग़ियास की तरफ़ दृष्टि फेरी फिर मटक की तरफ़ देखा। मटक ने सिर और हाथ के हलके से संकेत द्वारा सब कुछ बतला दिया—मानो कह रहा हो योजना सफल हो गई, समाप्त हो गया।

काँपते हुये स्वर में नसीर बोला 'बाहर ख़बर यह फैलाई जाय कि सुल्तान सलामत बहुत बीमार हैं। असल बात किसी को न मालूम होने पावे।'

स्थिर कंठ से मटक ने कहा 'जहाँपनाह सुल्तान नसीरुद्दीन खिल्जतवार। सिवाय मुल्ले-मौलवियों के और किसी को नहीं मालूम होने पावेगा। हुज़ूर सुल्तान मरहूम के जानशीन हैं हुकूमत करें। दरबार का अख़बार नवीस इन्तक़ाल की बात को महीनों बाद दर्ज कर सकेगा।

'खवासिन कहाँ है?' नसीर ने पूछा।

खवासिन पीछे ही खड़ी थी इनाम के लोभ में आगे आ गई। नसीर ने तुरन्त तलवार निकालकर उसका सिर काट डाला। मटक अचेत होने को हुआ। नसीर ने तलवार म्यान में डाल ली।

बोला 'होशियार ख्वाजा मटरू ! होशियार !!'

मटरू सम्भला ।

गैन इस समझकर ख्वाजिन को इसलिए सलाम कर दिया कि कहीं इधर उधर बकती न फिरे। मगर राय उस गया कि सुल्तान अब ज़िन्दा नहीं हैं तो मटरू और तुमको कहना ही होगा कि इस बदकार औरत ने सुल्तान को किसी रंजिश की वजह से ज़हर दिया इसलिए मैंने इसको सज़ा दे दी। इसके मार दिये जाने से हमारा तुम्हारा दोनों का रास्ता साफ हो गया। महल में चर्चा इस औरत को सज़ा दिये जाने की इतनी तो प्रकट होगा। अब चुपचाप अपना-अपना काम देखेंगे। क्या समझे?

'सब समझ गया जहाँपनाह सब समझ गया?'

'अभी जहाँपनाह नहीं बल्कि सिर्फ आलमपनाह जैसा पहले कहता था।'

'हाँ आलमपनाह आलमपनाह।'

थोड़ी देर बाद कुछ ओहदेदारों और सरदारों को भी मालूम हो गया। इस के साथ सुल्तान की बीमारी का समाचार हाथोंहाथ फैलता गया। फिर दिल्ली में फैल गया। लाश तैल में रख दी गई। बखार के हाथ में हुकूमत आ गई। परन्तु ग्यासुद्दीन खिलजी के प्रयत्नों के फूल को कागज़ों में बहुत दिनों दर्ज नहीं किया।

नसीर अपनी प्रचण्ड भूख [वासना] की मद—कामवासना—की तृप्ति में पड़ गया। ख्वाजा मटरू और न जाने कितने सहायता के लिए फट पड़े।

[८८]

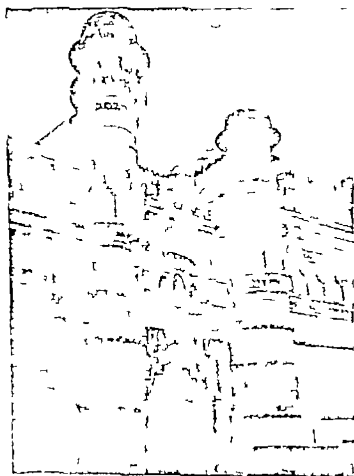
सिकन्दर लोदी मेवाड़ नरेश राणा रायमल के राजकुमार सांगा—संग्रामसिंह—की एक छोटी सी मुठभेड़ को छोड़कर ग्वालियर की ओर मुड़ आया। धौलपुर पर हमला किया और वहां के लिये अपनी विशाल सेना का एक भाग छोड़कर चम्बल को पार करके ग्वालियर की दिशा में उन्मुख हुआ। धौलपुर उस समय एक तोमर वंशी राजा के आधिपत्य में था जो राजा मानसिंह का सहायक था। परन्तु सिकन्दर मेवाड़ की ओर से धौलपुर पर इतनी तेजी के साथ यह दौड़ा था कि ग्वालियर से सहायता न आ सकी। आक्रमण की छोटी-छोटी टुकड़ियां आगे-आगे चलती थीं जो समाचार देने के साधनों को नष्ट करती जाती थीं। समाचार देने के साधन इतने धीमे और स्वल्प हो गये थे कि प्राय विलम्ब के साथ पहुंच पाते थे। ग्वालियर जो समाचार आया उसका सार यह था कि सिकन्दर लोदी धौलपुर पर एक छोटा सा वार करके मेवाड़ की दिशा में लौट गया है। सिकन्दर चम्बल की घाटियों और भरकों में होकर ग्वालियर पर आ रहा था।



मानसिंह अपने नये महल के नीचे भाग दो तल्ले बनवा चुका था। मृगनयनी की चाह के कारण वह नये महल को बहुत जल्दी बनवा रहा था। जानता था कि गूजरीमहल में अलग स्थान होने के कारण नयी रानी के साथ मृगनयनी और आठ रानियों की बढ़ती हुई कटुता अधिकाधिक होती चली जावेगी। नये महल के बन जाने के बाद उनके सम्पर्क कम हो जावेंगे और अधिक शान्ति स्थापित हो जावेगी।

ऊपर के खण्ड किस प्रकार के बनें यह बहुत थी।

विजय जङ्गम ने सुझाया 'नीलकण्ठ' शैली के बनवाइये। ऊपर के दोनों खण्डों में जन-जीवन की विविधतापूर्ण विपुल आसीनता छोटी-छोटी पहाड़ियों की प्रतिमारूप मढ़ियां बड़े पहाड़ों सरीखे ऊंचे शिखिर और ऊंचे शिखरों पर पहाड़ों के अनेक शृङ्गों के प्रतीक मन्दिर के चारों पार्श्व



मान-मन्दिर, ग्वालियर का गज-द्वार

त्रिमुखाकार इन कमल-मुकुलित शिखरों के शिखर पर भूप का योग मण्डप।

मार्तण्डसिंह स्पष्ट नहीं समझा।

विजय ने व्याख्या की "ऊपर के पहले खण्ड से दूसरे खण्ड को समोने के लिए पत्थर यहाँ से ही चारों शिल्पियों में विभाजन त्रिमुख बनते जायें जो ऊपर जाकर दो समानान्तर पंक्तियों का बनाव करें लिए जायेंगे। इसने प्रिय के मातुल जैन-मन्दिर में जैसा समन्वय पहाड़ शिखर भूम मण्डप महिमा आम के पेड़ की गन्ध गुम्बज और कमोल-माला का मयूरी तथा शिव के त्रिशूल का हुआ है वैसा ही बना पैमाना पर। अब इन सबके नव नाम उसका रखा जाय मान-मन्दिर।

यहाँ उत्तर के शिल्पियों की समझ में यह नहीं आवेगा क्योंकि इनकी परम्परा कुछ भिन्न है।

जैन-मन्दिर का इन्हीं लोगों के पूर्वजों ने ही बनाया था?

"यह सौ वर्ष से ऊपर हुआ जब ग्वालियर के राजा ने एक तमय राजकुमारी के साथ ब्याह किया। दक्षिण के कुछ शिल्पी उस राजकुमारी की प्रेरणा से आये। उनके और उत्तर के शिल्पियों के सहयोग से वह मन्दिर बना। जैन-मन्दिर का शिखर तैलप राजकुमारी की वाञ्छा का प्रतीक है और शिखर के गोल के मारा नव उत्तर की परम्परा का मानि है। अब वे कारीगर नहीं हैं।

हा जैन-मन्दिर शिखर के गात्र चक गया वह के सौन्दर्य और शिव के ऊँचे मध्य भग्ग विलास तथा नन्दी की महत्ता का समन्वय है।

टांक बहुत हैं। मानाम मन्दिर के चारों ओर गणेश और मयूर वाला कार्तिकेय की मूर्तियाँ भी हैं।

महाराज यह वैष्णवों का मध्याचार है।

'परन्तु मन्दिर तो उत्तर के वैष्णव और दक्षिण के शैवों ने मिल कर बनाया होगा।'

'आप भी क्या कुछ इसी प्रकार का मिश्रण अपने भवन के निर्माण में करेंगे?'

'मैं तो टाँकी के हथौड़े की कविता और संगीत के ताल और लय का मूर्त रूप देना चाहता हूँ इस भवन में। किन कलाओं और साधनों से हो यह आप सरीखे विद्वान बतलावें, मैं भी कुछ सोच रहा हूँ परन्तु निर्णय नहीं कर पाया हूँ।'

'शिल्पी और कारीगर बतलावेंगे यहाँ के?'

'शिल्पी और कारीगर निर्माण कला के अंग और उपकरण हैं। उसकी योजना, ध्यान-धारण परमानन्द और अनुभाव की कविता तथा कुंकुम-चंदन की कांकुरी देना हमारा आपका काम है।'

'सोचूँगा। आप क्या किसी काव्य को पत्थरों में साकार करने जा रहे हैं?'

'आप ही तो बतलाते रहते हैं कि जीवन को कल्याणमय और सुन्दर बनाने से ही मनुष्य भी अमर बन सकता है, मैं जीवन के उसी भाव को पत्थरों में उतार देना चाहता हूँ।'

'मैं महाराज गुरु वचन को ही तो दुहराता रहता हूँ। परन्तु गुरु-वचन में कामना—श्रम—पर अधिक बल दिया गया है। उसको भवन किस रूप में कैसे व्यक्त किया जायगा?'

'उसकी विशालता से जागरूक गर्व का गर्व प्रकट हो जावेगा।'

'उसकी विशालता देखने वालों को आतंकित न करेगी?'

'सौन्दर्य की विशालता सीधे लम्बे ताड़ वृक्ष की जैसी विशालता नहीं।'

हिम्मत वाले को जीवन में श्रम को गौरव का पद देने की प्रेरणा भी मिलेगी क्या उनके सान्निध्य से ?

'चाहता तो हूँ कि इस सब ओर आने जाने वाले लोग भी उनको देख देखकर आह्लादित हों, आने के लिये लालायित उठें और इस नगर में कर्मठ बनने की स्फूर्ति और शक्ति को पाकर जीवन को अपने श्रम से भर दें।'

सोचता किस प्रकार यह कल्पना पत्थरों की योजना द्वारा प्रकट हो सकेगी। यह तो सोच ही रहा हूँ।

[४५]

सांझ से ही बादल घिर आये। बिजली की कड़क तड़क हुई और गरगराहट के साथ पानी बरसने लगा। चन्द्रमा ऐसा छिपा कि घोर अमावस्या की रात प्रतीत होने लगी। मृगनयनी और मानसिंह गूजरीमहल के एक ऊपरी कक्ष की खिड़की के सामने मञ्च पर बैठे हुये थे। मानसिंह कुछ चिन्तित सा था। मृगनयनी हर्षमग्न और प्रफुल्ल।

मानसिंह ने कहा 'इस वर्ष बरसात नाम ही नहीं ले रही है बन्द होने का।'

'खेती पाती के बिगड़ जाने का डर लग रहा है क्या?' मृगनयनी हँसती हुई बोली।

उसके दाँतों में बिजली का कुछ साम्य देखकर मानसिंह की चिन्ता घट गई।

'राज्य के किसानों की खेती-पाती अपनी खेती-पाती के ही समान तो है। परन्तु इस समय चिन्ता भवन-निर्माण के काम में बाधा होने के कारण हुई।'

'जब राई गाँव में थी एक रात कुछ मैंने भी सोचा था।'

'तुमने अवश्य कोई कविता या तान सोची होगी मुझको बतलाओ क्या सोचा था।'

'न कविता थी और न तान। मैं उन दिनों जानती ही क्या थी पर सोचा अवश्य था कुछ।'

'बतलाओ न? मैं सुनने के लिये बहुत उत्सुक हूँ।'

मृगनयनी ने बड़ी-बड़ी आँखों मचकाते हुये देखा। मुस्कराई। बस चुप रही।

'तुम ऐसे नहीं बतलाओगी। कहो बुझाने का कोई उपचार? मुझको अनेक आते हैं।

मृगनयनी हँस पड़ी।

'वैसे ही बतलाये देती हूँ',—उसने कहा —'एक रात मेरे मन में चाह उठी थी कि चाँदनी में चमकती नदी की चमक को समेट कर अंचल में बाँधलूँ, वन की उँचती हुई बातों और पहाड़ की उस ऊँचाई का एक ही ठौर पर इकट्ठा कर लूँ बड़े-बड़े पेड़ों के बन्दनवार बनाऊँ और डालियों पत्तों के झरोखे सजाऊँ उन झरोखों में होकर मोतियों के हार सी पहिने तुम्हें नदी की लहरों को गीत सुनाऊँ और फिर एक ऐसा घर बनाऊँ जिसमें यह सब आ जाय। मैंने और लाखी ने मिलकर एक घरौंदा बनाने का प्रयत्न किया। वह आधी घड़ी में कुम्हल बनकर बिगड़ गया। आपने तो बहुत बना लिया है और बहुत बड़ा। एक दिन पूरा भी हो जावेगा।

'वह गीत कौन सा है जिसे नदी की लहरों को सुनाती थी?

अरे यों ही सा कुछ—भूल गई।

'बतलाओ जल्दी नहीं तो फिर हाँ'''।

गीत था बाग परी में पिया के बगाये।

मुझको सुनाओ।

सुनाया तो था पहले।

'आज फिर सुनाओ। उसने हठ किया।

मृगनयनी ने सुनाया। उसने गीत को इतना सुरीला पाया कि वह स्वयं आनन्द-विभोर हो गई। अपनी ही तानें उसको कभी पहले ऐसी मीठी नहीं लगी थीं।

मानसिंह बोला 'भवन-निर्माण के सम्बन्ध में इसी समय मुझको कुछ नई सूझें मिली हैं।

बादल फट गये और चाँदनी घूमी घूमी छिटक आई। पानी कुछ
रुके रुक गया था। प्रकाश में निकट की पर्वत-श्रेणी स्पष्ट दिख गई।
र के पहाड़ धूमिल ऊँघते होते थे।

मानसिंह ने कहा 'मदन की सौन्दर्य कालिमा और आस्था का
मन्दिर बनाऊँगा। कामना भावनाओं का सदन तुम्हारी चाह मनि
और अध्ययन का मत है। तुम्हारी कलाओं के अनुसार ऊँचे बड़े
कलशों के ऊपर मन का दमकती हुई लहरें नदी की उसमें ऐसी
दिया। उस मन्दिर को प्रथम अमावस्या आधी रात की चाँदनी में आकाश
जाकर कहूँगी—आप परी मैं दिया के समान।

'पत्थर चाँदनी कैसे?'

जैसे तुम्हारे गाँव के पेड़ पहाड़ खेत को ढँकती हुई बातें और
चाँदनी में चमकती नदी की लहरें बातें है।

मृगनयनी के मन में उठा मैं तुमसे उमर एक कला में आगे रहूँगी
तुम रानियों का आधा करेंगी और छीट भी कम करेगी! करने दो।
मैं काम बहुरे कर तुम्ही धनगुनी करती रहूँगा तब क्या करेगी वह?
परन्तु उसकी आँखें? और वह उत्साह! समझ हो जाता है। लाखों।
सुन्दर मन्दिर बनेगा वह और हम सब उसमें आगे बढ़कर रहेंगे।
न शोभा नहीं करेगा वह अपने आप चल जायगी। अरे! उसका
वह चमत्कार!! उसको एक आले में फेंककर न बिलकुल ही भूल गई!!!
क्यों भूल गई? इतने दिन क्यों भूली रही? अब उसको कौन ढूँढे।
उसको उठाना ही क्या था? हाथ में क्यों बना रहा? मैंने उसको
आले में क्यों डाल दिया? वह खो गया होगा मेरे या अपनी किसी दासी-
रिन ने चोरी की! ओह!! बहुत बुरा हुआ। उसका कहीं पता दूँ?
नहीं कभी नहीं। क्या वह उसी आले में पड़ा होगा? देखती हूँ यही
पड़ा हुआ। अभी खोटा हूँ भी।

'क्या सोच रही हो? मैंने ठीक कहा न कि पत्थर इसी प्रकार

मृगनयनी उठ खड़ी हुई। बोली 'मैं अभी आती हूँ।' मानसिंह प्रश्न नहीं करने पाया। वह लाखी के साथ चली गई। जिस थाले में उसने मृगनमोहिनी के गहने को फेंक डाला था वहीं मिल गया। वह उसको उठा लाई।

उसने कहा 'भूल से थाले में पड़ा रहा यह बड़ी महारानी का गहना।'

'मैं समझा नहीं। यह क्या है?' मानसिंह बोला।

मृगनयनी ने महीनों पहले की कहानी बतलाई।

'कैसे स्मरण हो आया?' मानसिंह ने पूछा।

'यों ही' उसने उत्तर दिया।

एक क्षण चुप रहकर मानसिंह ने कहा 'अब क्या करोगी?'

'आप रख लो। देना चाहती हूँ।'

'भारी भूल करोगी। अनर्थ हो जायगा।'

'अब तक स्मरण नहीं आया इसलिए कोई बात नहीं परन्तु यदि रखे रहूँगी तो चोर समझी जाऊँगी।'

'तो क्या तुम समझती हो कि वह उलाहना करेंगी?'

'कुछ भी हो मैं इसको नहीं रखूँगी।'

'न रखो तो कहीं फेंक दो परन्तु लौटाओ मत।'

'मेरे ऊपर छोड़ दीजिये चिन्ता मत करिये।'

'वह तुमको चोर कहेंगी।'

'मैं तो न कहूँगी अपने को चोर। वह कहेंगी तो सह लूँगी।'

'तुम जानो। मैंने सावधान कर दिया है।'

'जब पाथर इस प्रकार जायेंगे तो क्या हम कुछ भी न पा सकेंगे?'

[८६]

दूसरे दिन मानसिंह को समाचार मिल गया कि सिकन्दर लोदी अपनी विशाल सेना सहित पश्चिम-दक्षिण की दिशा से ग्वालियर पर आ रहा है। बरसात के कारण भवन निर्माण में बाधा पड़ ही चुकी थी सिकन्दर की चढ़ाई के समाचार ने उसको और भी विषण्ण कर दिया। संगीत चित्रकारी और निर्माण के काम को युद्ध के कारण न जाने कितने समय तक स्थगित किये रहना पड़ेगा यह उसको बहुत गड़ रहा था। लड़ाई के साधनों को प्रखर प्रबल और प्रचुर बनाने की अपेक्षा उसका ध्यान कलाओं के ह्रास पर अधिक जा रहा था।

नगर में खलबली मच गई। सम्पत्ति वाले लोग अपने सामान और बालबच्चों को लेकर किले में आ गये। किसान और मजदूर कुछ नगर-कोट के भीतर रह गये और कुछ भागकर पास और दूर के जंगल-पहाड़ों में छिपने लगे।

सिकन्दर इसके आठ-नौ वर्ष पहले एक करारा आक्रमण ग्वालियर पर कर चुका था। सिकन्दर के पहले उसका बाप बहलोल भी चढ़ाई कर चुका था। मानसिंह ने दोनों अवसरों पर आक्रमणों को विफल कर दिया था। नगर के बसने वाले लोग अबकी बार निराश थे।

'राजा नाच-गान में ज्यादा उलझ गया है। अब वह उतना सावधान नहीं रहा।' कुछ लोग कहते थे।

'दूसरों की शिकायत भी 'ठीक ठीक' कर जायेगा दिन दिन भर खोयेगा तब तुर्कों को पीछे हटाने का समय कब और कहाँ से निकालेगा?'

'ग्वालियर की सीमा को बिलकुल असावधान कर दिया! चौकियाँ सब ढीली हो गईं!!'

'रहने के लिये एक महल क्या कम था जो दूसरे के बनवाने में इतना डूब गया?'

अच्छे अनुभवी नहीं रहे अब ग्वालियर में !

तुर्कों का राज हो जायगा क्या अब ? वे गुलाम बनावेंगे।

'तोमर राजपूत अफ़ीम खाने लगे हैं।

'जब से यह नई रानी आई, तब से राजा का शौर्य लोप होगया। निहालसिंह शायद कुछ कर सकें।

'जब राजा ही ढीला है तब सामन्त क्या कर सकेंगे ?

अब जब सिर पर आ गई है, तब राजा कुछ न कुछ अवश्य करेगा।

'तुर्क जैसे पहले मुँह की खाकर लौट गये वैसे ही अब भी लौट जायेंगे।

'राजा को सजग कैसे किया जाय ?

किले के भीतर बढ़ती हुई भीड़ ने मानसिंह की यह भावना को उत्तेजित किया। किले में जहाँ तहाँ अस्त्र-शस्त्रों की व्यवस्था की, सैनिकों को सतर्क किया, गाम गाँवों से जितने लोग नगर में आ गये थे उनको घर घर जाकर आश्वस्त किया। सिकन्दर की सेना को दूर ही अटकाये रखने के लिये निकटवर्ती पहाड़ों और घाटियों में सैनिकों की टुकड़ियाँ लगाईं।

सन्ध्या समय मृगनयनी को तैयारी का सब समाचार आ मिला था। थक गया था तो भी उसके मन में शिथिलता नहीं थी।

'समय पड़ने पर मैं भी लडूँगी' मृगनयनी ने कहा।

'तुमको लड़ना पड़ा तो हम पुरुष काहे के लिये हैं ?

'और स्त्रियाँ काहे के लिये हैं ? क्या वे आनन्द और वासना का शृङ्गार मात्र हैं ?

नहीं जीवन की प्रेरणा प्रातःकाल की ऊषा जैसी सजग करने वाली।

'मैं कविता नहीं जानती परन्तु मैं पूछती हूँ कि क्या यही ऊषा दोपहर की प्रखर किरण नहीं बन जाती ? बड़ी रानियों ने एक समाचार भेजा

था कि यदि बुरी से बुरी घड़ी आगई तो हम सब जौहर करेंगी। क्या ऊंचा प्रबन्ध किया था, न बनकर आग में ऊपर न चढ़ कर, फिर नीचे धस जायगी?

'इन रानियों को यह संस्कार नहीं भेजना था।

महल के उत्तर पश्चिम में जो जौहरताल है उसमें यह सन्ताप निहित था। रानियों को ऐसे समय में बड़ी मार मारना क्योंकि उनको बाहों ने और कमान और तलवार को कभी माना तथा नहीं बनाया। पहले की रानियों ने नाच और विद्या को जितना प्यार किया उसके बराबर और भी तलवार के साथ भी करना चाहिये था। मानो रानियें बैरी को दिखे के निमित्त फिर दैविक मरा और बाकी का काम।

मन तो विचार है परन्तु मैं चाहता हूं कि जब दिन भर की लड़ाई से थककर तुम्हारे कक्ष में आऊं तब तुम्हारी मधुर-मधुर तान और मीठे स्वरों की ललित-तान को मानस भीतर भरकर फिर ज्यों का त्यों तगड़ा हो जाऊं।

'और हम रे बनाये तीरों की सनसनाहट क्या आपकी भुजाओं को काम पहुंचा देगी? आपका मदन बन कर खड़ा होगा होता तो क्या वह मानने के लिए ही आपका ग्वालियर देता या यह भी कहता कि मरे बाहर से लड़ो और भीतर बैठकर गढ़ा?

'जब आवश्यक तब यह भी सम्भव हैगा परन्तु बन नहीं पा रहा है। कोई न कोई विघ्न बीच में आ जाता है। चाहता हूं गूजरी की तरह किसी तरह इस काम को बिना विलम्ब के गढ़न की बनवा कर खड़ा करूं, बैजू के द्वारा संगीत में नया प्राण फूंक दूं, चित्रकारी, साहित्य इत्यादि को पूरी ऊंचाई पर पहुंचा दूं।'

'गूजरी की तरह किसी तरह से इस काम। कैसे करोगी? थोड़ा थोड़ी देकर टाल दीजिये।

'मैं भी सोच रहा हूं।

'क्या सचमुच आप यही सोच रहे हैं ?'

'क्यों ? राजनीति में साम दाम दण्ड भेद—चारों का यथा अवसर काम में लाना पड़ता है। सोचने में क्या बुराई है।'

'कलाओं की बहुत अर्चन पूजा न हो, क्या आपके ध्यान को राजनीति के दाम वाले पहलू पर अधिक नहीं बिठलाया है ? दण्ड की बात आप क्यों नहीं सोच रहे हैं ?'

'सभी पहलुओं को सोचना पड़ता है।'

मैं राजनीति को नहीं जानती। किसान की लड़की ठहरी। केवल इतना जानती हूँ कि मचान पर नाचते-गाते ज्वार बाजरे की बालों को देखा कि मन में लहर दौड़ी। चिड़ियों की चहक को सुना कि चमक छा गई और दिल के ताल पर थिरक पड़ी। जब आप भी मानों चिड़ियों की चहक, नदी की धार का कलकल, पहाड़ों की ऊंचाई और नदी-नालों की हरियाली और झरोखों की मिट्टी के घरौंदे में नहीं उतार पाया तब उस पर से ध्यान को हटाकर अपने काम में लग गई।

'परन्तु मिट्टी के घरौंदे, और सारे सरस पत्थरों के बजाय अधूरे भवन में तो बड़ा भारी अन्तर है।

'वीणा को बजाते-बजाते काम पड़ने पर यदि तुरन्त तलवार न उठ पाई, कोमल छन्द पर डोलते-डोलते संकट आने पर यदि तुरन्त ही उछलकर कम न कसी, नूपुर को नाचते-नाचते शत्रु के सामने आ खड़े होने पर यदि तुरन्त बदल कर विरोधी न दे पाई, जिन कानों में मीठे स्वरों की रस-धार बह-बहकर आ रही थी उन्हीं कानों में यदि रणबाजों और कड़खों की धुन न समा पाई तो ऐसी वीणा छन्द और नूपुर की तानों का काम ही क्या ?'

मृगनयनी उत्तेजित हो गई थी। मानसिंह को रोमाञ्च हो आया। उसको अपने अंक में भर लिया।

'छोड़िये मुझको —मृगनयनी ने कहा — क्षत्रिय के लिए इस समय जो उचित है उसी के करम में जुट जाइये। राजा की रक्षा की चिन्ता को दूर कर दीजिये—मैं उसकी रक्षा का प्रबन्ध करूँगी।

मानसिंह गद्गद् हो गया।

बोला 'सचमुच अब मुझको अपने भीतर बहुत कम प्रतीत हो रहा है। विलक्षण और प्रचण्ड। शत्रु को सोना चाँदी दे दिखाकर टाल देने की बात मैंने अपने मन से बिलकुल निकाल दी। सचमुच वह कैसा क्या जो कर्तव्य को नंगा करके और, और वह कर्तव्य भी क्या जो कला का मटू-मटू हो जाते हैं?

मृगनयनी ने मानसिंह के ऊँचे भरे वक्ष पर पड़ी हुई मणिमाला को उँगलियों में खिलाते हुये मुस्कान के साथ कहा 'अभी केवल कर्तव्य की बात का सोचिये।

'यही होगा यही होगा प्राणधन। पहले कर्तव्य कला की बात पीछे। मानसिंह के मुँह से दृढ़ता के साथ निकला।

[८१]

बड़ी रानी से मानसिंह का एक पुत्र था। नाम विक्रमादित्य। वह युवावस्था में पैर रखने वाला था। मानसिंह ने अपने हाथ से उसकी कमर में तलवार बाँध कर सिकन्दर का मुकाबला करने के लिये किले से बाहर भेज दिया। निहालसिंह को दूसरी दिशा से आक्रमण करने का आदेश दिया और समझाया 'मुझको आशा है सिकन्दर को लौटा दिया जायगा। जब वह लौट पड़े तब तुम धीमे बने उसके सामने जाना और [illegible] की चर्चा करना। बहुधा मालवा के सुल्तान का हाथ रोक करने के लिये ग्वालियर ही है। यदि सिकन्दर अपने किसी सरदार से लड़ाई में उलझे तो हम उसकी सहायता करेंगे। केवल बयाना अपवाद है। यदि बयाने से उसका युद्ध हुआ तो हम उसकी कोई सहायता न करेंगे।'

'कुछ ऐसे विचार की बात भी थी?' निहाल ने पूछा।

मानसिंह ने उत्तर दिया 'था। सब बिना पूछे कुछ न मत करना। फिर देखा जायगा।'

उसके सामने मृगनयनी की लिखी हुई पोथी का चित्र खिंच गया। निहाल चला आया। मानसिंह नगर और किले की रक्षा के लिये भीतर रह गया।

वह आदेश लेकर गूजरीमहल से बाहर हुआ ही था कि एक मोड़ पार करते ही एकान्त में कला मिल गई। कला मुसकराई। निहाल ठिठक गया। कला ठिठककर खड़ी हो गई जैसे राह न पा रही हो।

निहाल ने कहा 'बहुत दिनों से कुछ कहने का सोच रहा था।'

कला ने जरा सा कटाक्ष किया और बोली 'अवसर ही नहीं मिला। अब कह लीजिये।'

'क्या करती रहती हो?'

'पिचकारी और गायन वादन!'

'किसकी चित्रकारी ?

'किले के मन्दिरों की पौर की कोई बनवावें उसकी।

'चित्रकारी से बढ़कर तुम्हारा संगीत है।

'आपकी कृपा।

'उस रात तुम्हारा गायन और नृत्य न जाने मन में क्या क्या छोड़ गया।

'गाया तो नहीं था मैंने।

'नृत्य के साथ में तो गाया था।'

'मेरे नृत्य ने आपके मन में क्या छोड़ा था ?

'तुम्हारी मुस्कान, चितवन और गीत के अभिनय को जितने काल भी नहीं छोड़ा, सपनों में भी नहीं छोड़ा।

'तो अब आपसे भगवान फिर मिलायेंगे।

'तुमको एक बार हृदय से लगा लेता—यही साध है।

'मेरे दो एक प्रण हैं। जब तक वे पूरे नहीं होते देह को नहीं छूने दूँगी। यदि छुआ तो आत्मघात कर लूँगी।

'ऐसे वे कौन से प्रण हैं ?

'इस लड़ाई को आप निश्चय ही जीतकर आवेंगे।

'आशा तो है।

'जीतकर आने पर नरवर की जागीर आपको मिलनी चाहिये। हम सबने सुन लिया था कि नरवर को आपके पराक्रम ने ही जीता था। नरवर आपको मिलना चाहिये था।

'हाँ वीर। नरवर राजा के साले के हाथ में है।

'बिलकुल अकारण। आपको मिले नरवर मैं तो यह चाहती हूँ।

'लौटकर देखूँगा। लड़ूँगा विकट लड़ाई लड़ूँगा सिकन्दर को पिछेडूँगा महाराज प्रसन्न होंगे तब नरवर की जागीर में माँगूँगा।

'जैसे लड़ाई की बात आप कहते हैं वैसी मुझको तो अच्छी नहीं लगी। डर के मारे कलेजा धड़कने लगा है। राजकुमार और इतने सामन्त बाहर लड़ने के लिये जा रहे हैं। किले में अकेले महाराज रहेंगे। आप उनके साथ ही बने रहें तो बहुत अच्छा होगा।

'महाराज कहते थे कि नई महारानी भी किले के प्रबन्ध में उनके साथ रहेंगी।

'रानी ही तो हैं कितना कर पायेंगी?

'मेरे मन में बात उठी थी परन्तु मैंने अनुचित समझकर मुँह नहीं निकाली। तुम नई महारानी से कहकर मुझको रुकवा दो तो बड़ा अच्छा होगा। यदि मैं किसी प्रकार रुक जाऊँ तो आज रात को कहीं एकान्त में मिल सकोगी?

'मैं पहले ही कह चुकी हूँ कि आप मेरी देह का स्पर्श उस समय तक नहीं कर सकेंगे जब तक आपको नरवर की जागीर नहीं मिली।

'नरवर की न मिले, और कोई जागीर मिले तो?

'और कोई जागीर मिले तो उसको नरवर की जागीर से बदलवा लेना।

'नरवर से इतना मोह क्यों है?

'क्योंकि उसको आपने जीता था और मेरा घर चन्देरी नरवर के निकट बैठता है। बस यही मोह है।

'तुम कैसे अवसर पर मिलीं! मन नहीं चाहता है कि किले को छोड़ूँ। इच्छा है दिनरात सामने तुम रहो और तुमको देख-देखकर सब काम करता रहूँ।

'यह तो ब्याह हो जाने पर ही सम्भव होगा।

न हो ब्याह तो क्या ? हमारी तुम्हारी जाति भिन्न-भिन्न है।

मैं तो आचार्य विजयजंगम के सिद्धान्त को मानती हूं। आपका साथ तो और भी बहुत पहले से है क्या आप नहीं मानते ? उसको तो मानते हैं।

मैं भी मानूंगा।

तो अब किले में रहकर ही युद्ध में भाग लीजिये। मुझको कभी कभी दर्शन मिल जाया करेंगे।

तुम तो महारानी मृगनयनी से कहोगी नहीं ? कहोगी न ?

नहीं कहूंगी। उनको सन्देह हो जावेगा।

अच्छा तो मैं ही कुछ प्रयत्न करूंगा।

कला मार्ग छोड़कर चली गई। निहालसिंह ने प्रयत्न किया परन्तु मानसिंह ने अपनी योजना के किसी भी अंश में हेर-फेर नहीं की। निहालसिंह बाहर चला गया।

[४८]

सुमनमोहिनी ने कला से जो कुछ भी सीखा हो और न सीखा हो, कला उसके पास अकेले में उठने-बैठने ज्यादा लगी।

'तुमको मृगनयनी रानी बहुत अधिक चाहती है।' सुमनमोहिनी ने पूछा।

कला जानती थी कि मृगनयनी को बड़ी रानी रत्ती भर नहीं चाहती।

चापलूसी के साथ बोली 'मेरे ऊपर तो आप सभी की कृपा है, आपकी विशेष कर।'

'उसका प्यार लाखी पर, जो अब लाखारानी कहलाने लगी है अधिक है। क्या तुमको उतना ही चाहती है?' बड़ी रानी ने आँख नचा कर प्रश्न किया।

कला ने भोलेपन का नाट्य करते हुये कहा 'लाखारानी से बढ़कर तो मृगनयनी रानी किसी को भी नहीं चाहती।'

'तुम मुझको चाहती हो?'

'मैं तो महारानी जी आदर बहुत करती हूँ। सेविका के मुँह से उतनी बड़ी बात कैसे निकल सकती है?'

'मैं तुमको अपनी सखी बनाना चाहती हूँ इस ढङ्ग से बर्ताव करूँगी कि मृगनयनी को नहीं मालूम पड़ पायेगा।'

'आपकी इस कृपा को जन्म भर नहीं भूलूँगी।'

'अच्छा तुम जो स्त्रियों के भिन्न-भिन्न भावों के इतने चित्र बनाया करती हो, उनसे तुमको क्या मिल जायेगा।'

'कुछ नहीं महारानी जी, कुछ नहीं। मन्दिरों के ही बहुत से बनाये हैं।'

'उसके भी बनाये हैं? मृगनयनी के?'

'कई बनाये हैं। महाराज के भी बनाए हैं।'

और मेरे ?

'आपकी आज्ञा लेने की कामना बहुत बार मन में उठी परन्तु भय के मारे नहीं कह सकी।

'अब बनाना।

बहुत से बनाऊँगी।

'कुछ और भी करना जानती हो या केवल चित्रकारी और बाजा बजाना ?

कला रानी का मुंह ताकने लगी।

बड़ी रानी ने मृदु मुस्कान के साथ कहा मेरी आज्ञा का पालन करोगी ?

'सिर के बल। कला ने उत्साह के साथ उत्तर दिया।

गङ्गाजी की सौगन्ध खाकर कहोगी ? रानी ने धीमे स्वर में पूछा।

कला ने आश्वासन दिया और सौगन्ध खाई।

कला के मन ने अपने और शपथ के बीच में एक आड़ पहले ही खड़ी करली थी—वह सिवाय राजसिंह के और किसी के लिये शपथ का निर्वाह करने की अभ्यस्त न थी।

रानी ने इधर-उधर देखकर कहा काम बहुत टेढ़ा है चतुराई के साथ करो तो बहुत पुरस्कार दूंगी।

'करूँगी' कला दृढ़ता के स्वर में बोली।

मैं तुमको एक औषध दूँगी। उसको किसी प्रकार चुपचाप मृगनयनी को खिलाओ। डरो मत औषध से प्राणहानि नहीं होगी उसके खिलाने से मृगनयनी के कोई सन्तान नहीं हो सकेगी। रानी ने कहा।

कला बोली 'यह तो मैं कर लूँगी। दूसरी रानी को मालूम नहीं हो सकेगा।

सुमनमोहिनी ने एक सफेद चूर्ण कला को दिया। कला लेकर चली गई।

निस्सन्तान करने की औषध नहीं हो सकती यह। बहुत करके विष होगा। मृगनयनी को मार देने से कोई लाभ नहीं। यदि कहीं बात उघर गई तो व्यर्थ ही मारी जाऊँगी। मानसिंह को क्यों न किसी तरह खिलादूँ? यदि विष ही हुआ तो राजसिंह का काम बन जायगा और न हुआ तो कोई बात ही नहीं। परन्तु यदि यह प्राणनाशक विष है ही नहीं तो व्यर्थ के जंजाल में क्यों पड़ूँ? किले के विषों को तैयार कर लिया है राजसिंह के काम में आ सकते हैं। देर-सबेर ग्वालियर का घेरा पड़ने वाला है। अब ग्वालियर में और अधिक रुकना निरर्थक है। परंतु यदि यह औषध विष ही हुई तो मानसिंह को समाप्त क्यों न कर दूं? राजसिंह को वचन देकर आई थी। और यह विष न हुआ तो? कई बार प्रयत्न किया सफल न हो पाई। अब की बार? यदि किले के विषों से काम बन जावे तो अब इस प्रयोग के लिये और अधिक न ठहरूँ। मानसिंह वैसे भी मारा जावेगा। मैं क्यों यहाँ और अधिक टिकी रहूँ? निहालसिंह होता तो इस लम्बी पारख में अटकना देती। कौन जाने लौटेगा भी या नहीं। लोग और गढ़े के भीतर में भी पड़ गई तो अभी तक का किया कराया सब यों ही रह जायगा। कला सोच रही थी।

उसने एकान्त में जाकर सफेद चूर्ण फेंक दिया।

[४९]

अन्तर्वेद में लड़ाइयों पर लड़ाइयाँ मची रहती थीं। चम्बल के पश्चिमी उत्तरी किनारों का भी यही हाल था। जौनपुर की शर्की सल्तनत समाप्त हुई तो छोटे-छोटे जागीरदार और बहलोल के सुल्तान दिल्ली को युद्ध के लिये आवाहन देने लगे। बोधन पुजारी राई को छोड़ने का मुहूर्त न पा सका। सोचा था थोड़ी सी शान्ति स्थापित हो जाय तो अयोध्या या काशी पहुँच जाऊँ। इतने में सिकन्दर लोदी ने चम्बल के उत्तरी किनारों और घाटियों को आ घेरा। सिकन्दर के ग्वालियर की दिशा में बढ़ते ही राई और आस-पास के गाँव उजड़ गये। अनिच्छा होते हुये भी बोधन ग्वालियर नगर में आत्म रक्षा के लिये आ गया। राई के पड़ोस के पहाड़ों पठारों और कन्दराओं को उसने अरक्षित समझकर यही निश्चय किया। राजा मानसिंह को जैसे ही मालूम पड़ा कि बोधन ग्वालियर नगर में आ गया है उसको आदर के साथ किले के भीतर बुला लिया और शान्ति स्थापित होते ही राई में मन्दिर बनवाने के वचन को पूरा करने की बात कही। राई से ग्वालियर को नहर बनती चली आ रही थी इसलिये बोधन को विश्वास था कि मन्दिर भी बन जायगा। राजा अपना ही है, धर्म के मामलों में उतनी समझ नहीं रखता किसी दिन सुमार्ग पर ले आऊँगा कोई बात नहीं बोधन ने सोचा। किले में उसको एक साफ-सुथरा घर रहने को मिल गया। मृगनयनी का जीवन अब कैसा चलता होगा? रानी जैसा। ठीक भी है। और लाखी का? वह भी यहीं आ गई है। यह बुरा हुआ। देखा जायगा। संसार में न जाने कितने पापी भरे हुये हैं! किस-किस की चिन्ता की जाय? बोधन ने उपेक्षा की। यही वह विजयजङ्गम भी है जो राजा को नास्तिकता पर चढ़ाता रहता है। विजय से कभी भेंट की तो अबकी बार उसकी अकल ठिकाने लगा दूँगा।

बैजू को भी राजा ने किले में एक घर दे दिया। बैजू का युद्ध के समाचार से कोई सरोकार न था। उसके लिये युद्ध खटमल और मच्छर के

देश के समान था। कटा, सुलझाया और पीछा छुटा लिया। लड़ने वाले बात पर खेल जायेंगे और मानसिंह रक्षा के लिये कुछ उठा नहीं रक्खेगा इसलिये वह मुराद की मायकी में किसी मनोहर परिष्कार की धपकुन में लगा हुआ था। यदि मैंने किसी मीठी मञ्जुल परिपाटी को बना लिया तो मानो सब पुण्य बैकुण्ठ में पहुँच गये और मेरे लिए तो सुरपुरी के द्वार खुल ही रहेंगे! बैजू इस धुन में था।

रात का समय। बादल दिन में भी रहे थे। अब तो बलात् उमड़ आये और कड़कड़ाकर बरसने लगे। घर के एक आले में दीपक टिमटिमा रहा था। बैजू एक मोटी दरी पर बार-बार वीणा को उठा कर बजाता और रख देता। एक ओर पखावज रक्खी हुई थी। बीच बीच में उसपर गुनगुनाते हुये किसी ताल को बजाता। कला गोदी में तम्बूरे को साधे चुप बैठी थी। वह कुछ कहने के लिये उत्सुक थी।

'धा किट किट धा धा किट धा किट धा' बैजू के मुँह और पखावज से एक साथ निकला। फिर वह ठहर कर कुछ सोचने लगा। गुनगुना नहीं रहा था।

कला बोली 'अब समय आ गया है, महाराज।'

उसकी तरफ देखे बिना ही बैजू ने कहा 'अभी नहीं आया। अगर है।'

'धकिट धकिट धा धकिट धा किटधा' उसके मुँह से निकला और हाथ से ताल देने लगा। फिर कुछ क्षण चुप रहा। एकाएक दाँत भींचे और भृकुटियाँ कसीं।

बोला 'लोग कहते हैं गाना रोना सभी जानते हैं। मूर्ख कहीं के! अभाव न तो ठीक ढङ्ग से रो सकते हैं और न गा सकते हैं। गाने को तो शंकर ने और भी बहुत दुस्तर बना दिया है।'

'अब समय आ गया है।' कला ने दुहराया।

बैजू ने एक लम्बी रीती दृष्टि से उसकी ओर देखा। मुस्करा कर बोला 'वह आय! वह आया!! अब की बार पकड़ कर ही गूँधा।'

कला ने भयभीत दृष्टि से उधर देखा। वहाँ कहीं कोई न था। उसने चैन की साँस ली।

बैजू ने जोर के साथ सिर हिलाया और गुनगुनाने लगा। 'अच्छा' कहकर उसने वीणा उठा ली और आलाप करने लगा। कला तम्बूरा छोड़कर उसके स्वर का साथ देने लगी।

'ठहरजा!' बैजू चिल्लाया। कला ने तम्बूरे को एक ओर रख दिया और टकटकी लगाकर उसकी ओर देखने लगी। बैजू वीणा को नीचे रख कर आँखें मीचे हुये कुछ गुनगुनाने लगा साथ ही चुटकी और हाथ का हलका ताल देने लगा। किसी गीत को राग और ताल में बिठला रहे हैं कला ने सोचा।

एक घड़ी गुनगुनाने और ताल देने के उपरान्त बैजू किलक कर एकाएक खड़ा हो गया।

'अहाहा! आ हो हो!!' उसके मुँह से निकला और वह खिलखिला कर हँस पड़ा।

आज बावलेपन की मात्रा कुछ अधिक है कला ने विचार किया।

'अरिट बरिट की फिट अहा हा! हा!! अहाहा!!! हू!!! क्या बात है। जय शंकर भगवान की। जय नटराज की।' बैजू ने कहा और वीणा पर गाया—'आज खेलें होरी राजा मान खेलें होरी ...' उसके बाद उसने पखावज ली और गुनगुनाते हुये बजाने लगा। पखावज को रखकर फिर वीणा को हाथ में लेने ही वाला था कि कला अकुलाहट के साथ बोली 'गुरु जी महाराज अब समझ आरहा है।'

उसने हर्षमग्न होकर कहा 'आरहा है नहीं आगया है मूर्ख छोकरी! भूपाल से होरी की गायकी की रूपरेखा बनाली और ताल भी तैयार हो

गया। अगर ताल में बाई आजकी होती। मौत के बोल भी क्या लिये हैं। पानी एक बार हो राजा को अभी जाकर सुनाऊँ। पर अब कपरेला में रहूँ और मरूँ तब कहाँ। हाँ यही ठीक है। ठीक रहेगा न कला?

'हाँ महाराज बहुत ठीक रहेगा। मैं कुछ और कह रही थी।

'फिर कभी कह लेना मुझको अवकाश नहीं है अभी तो।

'अभी ही सुनाना पड़ेगा। बहुत महत्व की बात है।

'मुकर और हाथी से भी बढ़कर! फिर मुझे सोचना क्या आने दिनों में?

'महाराज को स्मरण होगा जब चन्देरी से हम लोग चले।

'हाँ चन्देरी से चले थे और अब ग्वालियर में हैं। क्या मैं बच्चा हूँ जो इतनी सी बात भी न जानूँगा?

'चन्देरी फिर लौटना होगा।

'काहे के लिये? चन्देरी के पत्थरों से सिर मारने के लिये?

'चन्देरी से चलते समय परराजा राजसिंह ने कुछ कहा था?

'हाँ कहा था कि ग्वालियर के मेले में सब बर्बरों-बर्बादों को परास्त करना और चन्देरी का नाम रखना तो होगया अब ग्वालियर के नाम को बढ़ाऊँगा।'

'उन्होंने कुछ और भी कहा था।

'क्या कहा था बतलाओ। मैं राव राजसिंह की बात को सम्मान देता आया हूँ।

'उन्होंने बहुत कुछ कहा था और यह भी कि जब ग्वालियर को कोई घेरने के लिये आवे तब उसके सैन्यबल आदि का सही पता लगाकर तुरन्त चन्देरी लौट पड़ना और बतलाना। किले के किस भेदे क्या लिये हैं।'

'कितने दिन बिन ? क्या करेंगे राव राजसिंह यह सब जानकर ?'

'ठीक समय पर नरवर पर चढ़ाई कर देंगे और अपनी बपौती को ले लेंगे । फिर नरवर आलमी वाले के हाथ पहुँच जावेंगे ।'

'और राजा मानसिंह जो भुलावे का इतना अच्छा समझता है और इतना अच्छा गा लेता है चुपचाप बैठा रहेगा ?'

'यह अपने रखने की बात नहीं है ।'

'अच्छा दो-चार दिन ठहर जाता । तब तक होरी की रूपरेखा में रसोने सुहावने रङ्ग भरे लेता हूँ । फिर पूरे साज-सिंगार के साथ इस होरी को राजा मानसिंह को सुनाऊँगा । उसके बाद राजा से पूछूँगा कि तुम चन्देरी जाओगे या यहीं अभी रहकर कुछ और सीखो-सिखलाओगे ।'

कला ने अपने को कोसा—किस घड़ी इस पागल के साथ चन्देरी से चली थी ! परन्तु इतना पागलपन इसको सदा नहीं रहा है । जब दिन में कुछ अधिक उपेत दिखलाई पड़ेंगे तब सावधान करेगी ।

[५०]

निहालसिंह और युवक विक्रमादित्य सिकन्दर की हरावल से आ मिले। सिकन्दर की हरावल राई के खेत की विस्तृत दूरी तक फैली हुई कछारों और जङ्गलों में नहीं घुस पाई थी।

उन दोनों के दलों ने हाथियों की सहायता से हरावल को मार भगाया। वे और भी आगे बढ़े परन्तु सिकन्दर ने सन्धि का सन्देसा भेजा। युद्ध रुक गया।

पानी बरस-बरस जाता था। भूमि ऊँची हरियाली और गहरे कीचड़ से भर गई थी। सिकन्दर के लिए एक-एक पग बढ़ना दूभर हो रहा था। उसी समय दिल्ली से समाचार आया कि कुछ सरदार पञ्जाब में बखेड़ा मचा रहे हैं और पूर्व में जौनपुर के निकट उसका भाई अब्बास सिर उठा रहा है। ग्वालियर की अपेक्षा दिल्ली को अधिक महत्त्वपूर्ण समझ कर सिकन्दर लौट पड़ा। सन्धि की चर्चा के लिये उसने उन दोनों तोमर नायकों को दिल्ली बुलाया। निहालसिंह ने विक्रमादित्य को ग्वालियर लौटा दिया। उसकी आकांक्षा थी कि यश और सन्धि की विजय का श्रेय अकेले उसको मिले। इसलिये ग्वालियर को समाचार भेजकर वह एक थोड़े से दल के साथ दिल्ली चला गया।

सिकन्दर को अपने पिता बहलोल की एक बात याद थी। जब वह लाहौर के प्रान्त का सूबेदार था तब दिल्ली का सिंहासन सूना हुआ। बहलोल महत्त्वाकांक्षाओं को लेकर दिल्ली की ओर चल पड़ा। दिल्ली के निकट उसको एक फ़क़ीर मिला।

फ़क़ीर ने बहलोल से कहा 'दिल्ली की बादशाहत चाहते हो ?'

बहलोल ने सोचा पगला क्या चाहे दो मांगें।

फ़क़ीर ने बतलाया, 'मैं बेच सकता हूँ दिल्ली की बादशाहत को। खरीदोगे मुझसे ? जो कोई भी खरीदना चाहे बेच दूँगा। जो कोई खरीदेगा वही तख्त पर आ बैठेगा।

बहलोल ने बादशाहत के दाम पूछे।

फ़कीर बोला 'दो हज़ार टट्टू। बस। ख़रीद लो और मौज करो।

बहलोल ने फ़कीर को दो हज़ार टट्टू दिये। इधर-उधर के बाग़ी सरदारों से लड़ाई लड़ी और दिल्ली के तख़्त पर जा बैठा।

सिकन्दर ने सोचा दिल्ली में फ़कीरों की कमी नहीं है अगर किसी असफल सरदार ने किसी लालची फ़कीर से बादशाहत कुछ ज़्यादा दामों पर ख़रीद ली तो सिपाही उसी से आ मिलेंगे और मैं कहीं का न रहूँगा। इसलिये वह अविलम्ब दिल्ली पहुँचा और बाग़ी सरदारों के मूलोच्छेदन में लग गया। ग्वालियर दूर था इसलिये उसकी अधिक चिन्ता न थी।

बाग़ी सरदारों को उसने बहुत शीघ्र नष्ट कर दिया। इसके बाद ग्वालियर के दूत निहालसिंह से पूछा 'तुमको अपने राजा की तरफ़ से सब बातों के तै करने का अख़्तियार है?

जी हाँ है उसने उत्तर दिया।

'तुम्हारे राजा पर हमारा अस्सी लाख टङ्का निकलता है।

कैसे?

'अस्सी लाख टके तो उसी वक़्त का निकलता है जब पहले बादशाह ने ग्वालियर पर चढ़ाई की। उसके बाद मैंने चढ़ाई की चार साल बीते। रक़म दुगनी हो गई। फिर अबकी बार वसूली के लिये मुझको ख़ुद आना पड़ा। इसका ख़र्च अलग है।

'पहली बार हमारे राजा के समय में जब बादशाह बहलोल ने चढ़ाई की तब वह हार कर लौटे। दूसरी बार जब आपने हमला किया तब आप भी हार कर वापिस आये। अबकी बार कौन जीता कौन हारा इसका निर्णय होने को अवश्य बाक़ी है।

'बेअदबी मत करो सरदार। हमारे कायदों में सब किस्म-मज़ा रखता है। याद रखो बादशाह अल्तमश ने ग्वालियर में क्या किया था?'

'मुझको याद नहीं है।'

'दो सौ साल के क़रीब हो गये मगर हमारी तवारीख़ में अभी मौजूद पाया जाता है। अल्तमश ने ग्वालियर को फ़तह किया। सिपाही सरदार, राजा–सब–मारे गये और राजपूतानियों ने जौहर किया। तुम्हारे किले के एक तालाब का नाम जौहर-तालाब इसीलिए है। भूल न जाना।'

'कैसे भूल सकते हैं? मगर अबकी बार—'

'हाँ अबकी बार ग्वालियर के किले के सारे तालाब जौहर-तालाब कहलायेंगे।'

'अब की बार मुल्तान की दिल्ली के तालाब और कुओं को जौहर का नाम मिलेगा।'

राजपूत भूल गया कि मानसिंह ने क्या कहने और किस तरह बर्तने का कहा था। सिकन्दर लोदी का खून उबल पड़ा।

'जानता है गँवार किससे बात कर रहा है किसके हुजूर में खड़ा है?'

'आपको भी जानना चाहिये कि आप किसी ऐरे-ग़ैरे से बात नहीं कर रहे हैं तोमर राजपूत से बात कर रहे हैं जिसके पुरखों ने इसी दिल्ली में लोहे की कील गाड़ी थी और जो फिर उससे भी बड़ी कील गाड़ने की दम रखता है। जिसके राजा ने कभी बैरी के सामने सिर नहीं झुकाया उसी का सामना आपको पड़ा है। दिल्ली की लाट के पुरखे ने दो हजार टनों में खरीद किया होगा क्योंकि उसके कुंदन हैं परन्तु ग्वालियर को समूचे हिन्दुस्तान की तोप सोने के बदले में भी नहीं मोल ले सकेगी।'

'चुप बदज़बान!'

'सन्धि की चर्चा के लिये आप ही ने बुलाया था मैं अपने आप नहीं आया।

'तो जाओ इसको और भेज दो ग्वालियर खबर कि मैं तोमरों का होश ठीक करने आता हूँ। कहला दो कि एक बार दिल्ली के किसी भी बादशाह ने किसी भी पुराने जमाने में जिस किसी जमीन को फतह किया वह उसके और उसके खानदानों की हमेशा के लिये हो गई।

दरबार के कुछ रक्षक निहालसिंह को पकड़ कर ले गये। बादशाह ने नहीं कहा था तो भी वे जानते थे कि अब इसका क्या करना है।

राजपूत ने अपनी गर्दन उस समय भी नहीं नवाई। जब धड़ से सिर अलग हो गया तब भी उस तोमर का धड़ एक क्षण के लिये सीधा खड़ा रहा। दर्शकों को आश्चर्य था इस तरह तो किसी को मरते नहीं देखा। लोग मारे जाने के पहले गिड़गिड़ाते-घिघियाते और रोते-चिल्लाते देखे गये हैं पर यह! यह तो जैसे मौत को दुलहिन समझ रहा हो!!

बादशाह को जब निहालसिंह के निधन की बात मालूम हुई, तब उसने राजा मानसिंह के पास खिलत और कुछ घोड़े भेज दिये मानो पूरा प्रायश्चित हो गया!

[५१]

बैजू ने गायन की अपनी परिपाटी को दो-तीन दिन के भीतर ठीक सँवार लिया। सिकन्दर को दिल्ली की दिशा में हटता हुआ सुनकर मानसिंह की व्यस्तता कुछ कम हो गई। परन्तु विश्वास नहीं था कि वह फिर न लौट पड़ेगा। कई दिन के उपरान्त बैजू ने उनको अपनी नई परिपाटी के सुनाने और उस पर तर्क-वितर्क करने का अवसर ढूँढ निकाला। उसी कक्ष में गायन-वादन का आयोजन हुआ। सभा-भवन में और सब थे केवल निहालसिंह वहाँ नहीं था। ऊपर के खण्ड में झिलमिलियों के सामने रानियाँ यथा स्थान आ बैठीं। अपने स्थान पर मृगनयनी और लाखी भी। बैजू ने बड़ी लगन के साथ अपनी नई परिपाटी को व्यक्त करना शुरू किया। विजय ने वीणा रख दी।

बैजू ने कहा 'बजाइये। बजाइये।'

विजय बोला 'बजाऊँगा नहीं सुनूँगा। उठान विलक्षण है। पहले कभी नहीं सुना।'

बैजू मानो बिना किसी प्रयास के गीत गया। स्वरों को मधुरता में घोल घोलकर गाने लगा। गीत में बोल थोड़े से ही थे—

मान होरी खेले री राजा मान होरी खेले री—
प्रेम प्रीति की गाँठ परी है जी मन भायो सो पैके री—
—री राजा मान होरी—

गीत की पूरी तानों को लयदान दो घड़ियाँ लगीं। गीत ऊँचे स्वरों में हुआ।

मानसिंह ने सुझाव दिया, बीच-बीच में नीचे के स्वरों पर भी थोड़ी देर ठहरा जाय तो रंग चढ़ेगा मानो रंग की पिचकारी को फिर से भरने के लिए कोई ठहर गया हो।

बैजू ने तुरन्त मान लिया और मानसिंह के सुझाव के अनुसार गा दिया।

समाप्ति पर बैजू बोला 'इस परिपाटी को होरी की धमार के नाम से विख्यात किया जायगा।'

'किस किस राग में गाई जावेगी?' विजय ने प्रश्न किया।

'किसी भी मधुर आकर्षक राग में।' बैजू ने उत्तर दिया। और उसने उन्हीं बोलों को कई रागों में गाकर सुना दिया।

मानसिंह ने उत्साह के साथ कहा 'आज से आचार्य बैजनाथ को नायक बैजनाथ का पद दिया गया।'

'नायक!' बोधन ने आश्चर्य प्रकट किया—'नायक तो इस युग में कोई भी नहीं हो सकता। नायक तो वह कहलाता है जो किसी नव राग का सर्जन करे।'

विजय ने विवाद उठाया—'आपकी बात में तो इस युग में नया कुछ भी नहीं हो सकता। आपको क्या संगीत पर भी अधिकार है जो बीच में ही बोल उठे?'

बोधन ने कहा 'संगीत एक शास्त्र है। गाना न जानने वाला भी सर्वमान्य सिद्धान्त की बात तो कह ही सकता है कि प्राचीन महर्षियों ने जो कुछ किया उसको अब न तो कोई बदल सकता है और न उसमें किसी नई बात को उत्पन्न कर सकता है।'

'आपके लिखना ता दी है।' बैजू ने टोका।

बोधन ने हठ किया 'ऐसे नहीं माना जा सकता। भारत भर के संगीताचार्य इकट्ठे हों, उनके सामने यह परिपाटी प्रस्तुत की जाय और वे सब कह दें कि आचार्य बैजनाथ पुराने महर्षियों के पार्वे निकल गये हैं तब माना जायगा।'

मानसिंह को अखर गया। बोला 'तुम तो पुजारी संगीत का एक अक्षर भी नहीं जानते।'

विजय ने व्यंग्य किया 'समय कुसमय कुतर्क तो कर सकते हैं।'

बोधन ने दृढ़ता के साथ कहा 'आपका किसी दिन मुझको निमन्त्रण है। धर्म और शास्त्रों के सम्बन्ध में आपने जितना भ्रम और असत्य फैला रक्खा है उतना कदाचित ही किसी ने फैलाया हो।'

'अभी विवाद बन्द रक्खो। किसी दिन अवसर और समय दूँगा। कर लेना चाहे जितना व्यायाम तर्क और विवाद का। गायक और आचार्य शीघ्र नाम से नायक बैजू कहलायेंगे।'

'शास्त्रों के किसी भी विषय पर राजा की आज्ञामात्र शिरोधार्य नहीं हो सकती' बोधन ने मनमें कहा और धीरे से बोला 'मैं तो नहीं कहूँगा।'

राजा ने सुन लिया। क्रोध के मारे काँप गया। परिस्थिति को तीखे कड़वेपन से बचाने के लिये उसने विजय से कहा 'आप वीणा पर निकालने का प्रयत्न करिये आचार्य।'

विजय प्रयत्न करने लगा। मानसिंह क्रोध के शमन के प्रयास में लग गया।

ऊपर के कक्ष में अन्य रानियाँ सदा की भाँति ऊँघ रही थीं। मृगनयनी और लाखी सजग थीं।

मृगनयनी ने जरा संयत स्वर में कहा 'मैं समझ गई गायन की इस रीति को। महाराज से कहूँगी कि इसको थोड़ा सा संक्षिप्त और करवा दें। दीर्घ काल तक आलाप रहने से मन बहुत थक जाता है, इसका आकर्षण चला जाता है और राग नष्ट हो जाता है।'

ऊँघती हुई रानियों की ओर आँख घुमाती हुई लाखी बोली 'और सुनने वाले ऊँघ ऊँघकर सोने लगते हैं।'

लाखी ने यह बात इतने ऊँचे स्वर में कही थी कि बड़ी रानी के कान में खटक पड़ गई। तन्द्रा टूट गई और वह जाग पड़ी। उसने उन दोनों

को कुछ अपने ऊपर सा हँसते हुये देख लिया। इतने ही परिहास ने बड़ी रानी का रोम-रोम जला दिया। वह अपने निकट ऊँघती हुई दासियों के जगाने का प्रयास करने लगी। उनको जाग पड़ने में देर नहीं लगी।

'तुमने को बाई थी कि हाथ को? देखती नहीं यहाँ एक से एक बढ़ कर जानकार बैठे हैं?' बड़ी रानी ने व्यङ्ग किया।

सुमने कासी ने अङ्गड़ाई की ओर हँस दी।

बड़ी रानी ने एक तीर और छोड़ा 'अपनी सोना चुरोगी तो पहने बराबर खोयेंगे। अबकी बार मिसल भी नहीं।'

यह तीर मृगनयनी के कलेजे में बिंध गया।

मैं क्या गहनों की चोर हूँ? क्या मैंने चोरी की थी? कुतूहलवश उस निकृष्ट गहने को हाथ में उठाया फिर वह हाथ में ही रह गया। जब निरख में आया मन में ग्लानि हुई और उसको झाड़े में फेंक दिया। फिर उसके विषय में बिलकुल भूल गई। क्या यह चोरी हुई? सुमनमोहिनी ने चोरी ही का आरोप किया है। क्या मैं चोर हूँ? हे भगवन! जब भूखों मरने की भी बारी कभी-कभी आई तब भी किसी की भीख पर आँख तक नहीं पसारी तो अब क्या उस तुच्छ गहने की चोरी करती? इसने कभी जाकी किसानी की होती तो जानती। कितनी नीच प्रकृति की है यह! महाराज ने ठीक कहा था इस गहने को लौटाना नहीं चाहिए था, किसी कुएँ में फेंक देना चाहिये था। क्यों? तब तो मैं अपनी ही आँखों में चोर बन जाती। छि! छि!! मैंने न तब खोटा किया था और न गहने को लौटाकर बुरा किया। पर अब और अधिक नहीं सुनूँगी।

उसी समय सभा-भवन में बाजन बन्द हो गया।

किसी ने सभा-भवन में समाचार दिया था — निहालसिंह को मार डाला गया! सिकन्दर लोदी ने शिवपुरी और मोड़ी जीते हैं परन्तु वह ग्वालियर पर फिर चढ़ाई करने वाला है।

सभा-भवन में सन्नाटा छा गया।

मानसिंह चमक उठा। भर्राये हुये स्वर में बोला 'युद्ध का अन्त कर रखा गया! चौगान जले पर नमक छिड़कने के समान है। इसका बदला लिया जायगा।'

ऊपर के कक्ष में मृगनयनी ने धीरे से कहा 'चलो लाखारानी, आगे यहाँ कभी नहीं आवेंगी।'

वे दोनों चली गईं। मृगनयनी सन्तुष्ट थी।

बैजू ने एकाएक प्रश्न किया 'क्या ग्वालियर का घेरा पड़ेगा?'

'नहीं पड़ पावेगा' मानसिंह ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया 'हमलोग सिकन्दर से चम्बल की घाटियों में लड़ेंगे।'

बैजू बोला, 'घेरा पड़ भी सकता है। ऐसी अवस्था में कला यहाँ नहीं रहेगी। वह चन्देरी जाना चाहती है।'

कला सकपका गई।

मानसिंह ने बिना किसी भाव के पूछा 'क्यों?'

बैजू ने भोलेपन के साथ बतलाया 'वह चन्देरी जाकर राव राजसिंह से कह देगी कि ग्वालियर घिर गया है आप आओ तो मदद पर लड़ाई करो और अपनी भतीजी को वापिस ले लो। बस।'

'क्या!'

'क्यों? इसमें अचरज की क्या बात है?'

'ओह! वह राव राजसिंह की कौन है?'

'कोई नहीं। पड़ोस में रहती थी।'

'अच्छा! ओह!!'

कला पसीने-पसीने में हो गई। मानसिंह उसको आँख गड़ाकर देखने लगा।

कला के काँपते हुये कण्ठ से निकला 'झूठ बिलकुल झूठ। मालिक यह पागल है।'

मानसिंह की समझ हलकी हो गई । नीचा सिर करके कुछ सोचने लगा ।

बैजू बोला 'किसने कहा मुझ से पागल ? इसने कहा ! इस छोकरी ने !! राव राजसिंह का इतना समर्थन है इसको !!!'

मानसिंह ने सिर उठाकर निश्छल स्वर में कला से धीरे-धीरे कहा 'तुम अपने घर जाओ । कल ही तुमको रक्षकों के साथ आराम की सवारी में भेज दिया जायगा । तुमको इतना द्रव्य दे दूँगा कि जीवन पर्यन्त सम्पन्न रहो । राव राजसिंह बड़ा शूरवीर है परन्तु शूरवीरता का उपयोग दुर्विनीत करता है । कह देना ।'

कला सिर झुकाए रही ।

बैजू बोला —जैसे किसी सपने से जाग पड़ा हो— 'यह मुझसे पागल कहती है ! इसने स्त्रियों की शिक्षा से इसने यह सीखा !! जा तब मुझे जानेगी । पागल तू और तेरी सात पीढ़ी !'

सभा विसर्जित हो गई ।

द्वार के समय में बड़ी रानी ने अपनी संगिनियों से आते-जाते कहा, 'अरी यह नीचे-नीचे देखने वाली बड़ी विकट निकली । समझ गई सब राजसिंह की यह कौन है ?'

'कौन है सो तो स्पष्ट ही है । है वही पतुरिया । अपने गुरु को पागल कहती थी ! भरी सभा में !!'

'कितनी बदजात है राम !!!'

'महल में पुरुषों के सामने इतना गुनकर गाने-नाचने वाली स्त्रियाँ दुष्ट हो ही जाती हैं । इन्हीं को देखो समझो ।'

'हूँ हूँ ।'

'कैसी बिदा न गई यहाँ से ! कितनी बकवादी हुई !!'

बड़ी रानी ने सोचा कला यहाँ से टली सो भी अच्छा ही हुआ ।

दूसरे दिन कला को मानसिंह ने सम्मानपूर्वक चन्देरी भेज दिया । वह किसी के लिए अपने साथ नहीं ले जा पाई ।

[५२]

निपट अँधेरी रात। सन्ध्या के उपरान्त ही ग्वालियर का बाजार बन्द हो गया। सड़कों पर चहल-पहल शान्त हो गई। घरों के भीतर कलरव था पर बाहर सुनसान सा। दो पहर रात गये ही अँधेरे में ऐसा लगता था जैसे आधी रात होने वाली हो। नगर के छोर पर एक झोपड़ा में दिया टिमटिमा रहा था जिसका तेल कम पड़ होने को था फिर बत्ती बड़ी बाती बड़ी टिमटिमाते-टिमटिमाते बुझ पड़ जाती। झोपड़ी के भीतर एक कोने में आग धधक रही थी। ठण्ड के मारे सिकुड़ी हुई, फटी मैली कुचैली कथरी में हड्डी सी बनी हुई एक स्त्री आग के पास पड़ी पड़ी कराह रही थी। कई बच्चे उसके निकट बैठे पड़े रो रहे थे और उतरती अवस्था का एक पुरुष दिये के टिमटिमाते हुये प्रकाश में सूप में रक्खे हुये अनाज को बीन रहा था।

एक लम्बा-तड़ंगा मनुष्य झोपड़ी की टटिया की बगल में आकर खड़ा हो गया। दाढ़ी उसकी इतनी घनी और लम्बी थी कि सीधी नाक और बड़ी आँखें ही दिखलाई पड़ती थीं। साफा बड़े साफे से इतना ढका हुआ था कि माथे के कुछ ऊपर का भाग मात्र दिखता था। कपड़े मोटे कई जगह सिवटे लग हुए। हाथ में बहुत मोटे पोले बाँस का डण्डा लिए था जूते फटे हुये पहिने था।

भीतर अनाज का सूप बीनने वाले पुरुष ने कराहती हुई स्त्री से कहा अनाज तो बीन लिया पर चक्की पर हाथ नहीं चलेगा। इतना थक गया हूँ कि कहते नहीं बनता। तुम थोड़ी हिम्मत बाँध कर पीस ला तो रोटी मैं बना दूँगा।

स्त्री बोली 'मुझ तो आज ऐसी ताप चढ़ी है कि उठकर बैठ भी नहीं सकती। पीसना मेरे बस का नहीं है।'

'भूखा हूँ और ये बच्चे बिलबिला रहे हैं। अब क्या होगा?

'भगवान से पूछो। मैं क्या बतलाऊँ।'

'तो भीख तो मैं सकता नहीं। ऐसे ही पेट भरूँगा? सवेरे मजूरी किसके सिरसे करूँगा?'

'न आओ एक युग। साधु-सन्यासी कैसे उपवास साध करते रहते हैं?'

'साधु-सन्यासियों को क्या कुछ मजूरी-किसानी करनी पड़ती है? उन्होंने अपना यह लोक बना लिया फिर लग गये दूसरे लोक के बनाने की चिंता में। यहाँ तो इसी लोक में नित-नई कसर लग जाती है। उठ बैठ। पैसा नहीं तो इन बच्चों का तो मुंह देख।'

'मुझको दे दो विष और देखते रहो बच्चों का मुंह।'

'मरी डायन उठती है या नहीं? अभागिन।'

'मार डालो मुझको। ताप भुना-भुनाकर मारेगी तुम वैसे ही गला घोंट दो। दुखों से पार तो पा जाऊँगी।'

बच्चे और अधिक रो पड़े। टटिया के पास से किसी के खाँसने का शब्द भीतर आया।

पुरुष चिल्लाया, 'कौन है रे?'

बाहर से उत्तर मिला, 'भैया मैं हूँ टटिया खोल दो परदेसी हूँ ठण्ड लग रही है ठिठुर गया हूँ पैर सूज गया थोड़ा सा तापकर और बैठ सुस्ताकर चला जाऊँगा।'

'राजा के दरवाजे पर क्यों नहीं चले जाते? वहाँ अलाव भी बल रहा होगा तापने के लिये।'

'भैया मुझे मालूम नहीं है। थोड़ी घड़ी तापकर और तुमसे बात करके चला जाऊँगा। मजूर मैं भी हूँ।'

'राम! अपनी आफत से पीछा नहीं छूटता तुम आये कहाँ से आ गये।'

'भैया, भैया।'

भीतर वाले ने खांसते खूंखते उठकर टटिया खोल दी। बाहर वाला भीतर आगया। उसके लम्बे-तड़ंगे शरीर और भारी भरकम लाठे को देखकर भीतर वाला डर गया। लम्बे-तड़ंगे ने टटिया के पास जूते खोल दिये और आग के पास आ बैठा। उसने कोठरी में नजर पसारी। एक कोने में खटिया, इधर उधर मिट्टी और काठ के बरतन, पीतल की एक थाली, एक लोटा और कुछ नहीं।

मजूर गिड़गिड़ाकर बोला, 'दाऊ, मेरी गांठ में कुछ नहीं है। गरीब हूं। किसी बड़े घर को ताक लो।'

'डरो मत। मैं चोर उचक्का नहीं हूं।'

'कौन हो? कहां से आये हो?'

'राई-मामदा गांव से आया हूं।'

'मामदा तो उजड़ गया है। राई में क्या करते हो?'

'मजूरी किसानी। गूजर हूं।'

'गूजर ठाकुर तो हमारी रानी भी हैं। उन्हीं के पास जारहे हो क्या?'

'नौकरी ढूंढने आया हूं। रास्ता भूल गया हूं। किले में कैसे जाऊं?'

'बतलाये देता हूं। चलो बाहर, वहीं से दिखलाये देता हूं।'

'कुछ खाने को है?'

'अभी तो कुछ नहीं है। हमारे लिये ही नहीं है। इससे अच्छा कि पीस दे सो यह बहुत बीमार है। मैं पीस नहीं पाऊंगा क्योंकि बहुत भूखा हूं।'

कराहते-कराहते स्त्री ने कहा, 'तो घर मूसलो अनाज को। सबके लिये थोड़ा-थोड़ा हो जायगा।'

आगन्तुक बोला, 'राजा के बासन से क्यों नहीं ले आते कुछ खाना-दाना?'

'अरे हट्ट ! स्त्री के कण्ठ से निकला।

मजूर ने तिरस्कार के स्वर में कहा 'वाह ! हम क्या भिखमंगे हैं ? सदावर्त पर तो कोढ़ी-अपाहज, साधु-बैरागी जाते हैं। हम तो मजूर हैं।

आगन्तुक ने दिये की जाती हुई रोशनी की तरफ देखकर प्रस्ताव किया, 'अच्छा तो हम पीसे देते हैं तुम्हारा अनाज। इसके बदले में तुम हमको भेद बतला देना बस। ठीक है न ?

उसने स्वीकार किया थोड़ा सा बना था भी देगा। सदावर्त या तो बन्द होगया होगा या बन्द होने वाला होगा। खा-पाकर वहीं एक कोने में लेट जावेगा।

अच्छा' —कहकर उसने ने चक्की पकड़ी और बिने हुये अनाज को पीसने लगा। स्त्री कुतूहल के साथ देखने लगी उधर की कराह कम हो गई। स्त्री को प्रतीत होगया कि आगन्तुक को चक्की पीसने का बिलकुल अभ्यास नहीं है क्योंकि वह बार-बार इस हाथ से उस हाथ को चक्की की खूंटी से बदल रहा था परन्तु चल रहा था हाथ उसका तेज। स्त्री धीरे से उठ बैठी।

बोली 'मैं ही पीसे देती हूँ। आगन्तुक ने सिर हिलाया।

चक्की पीसने में आगन्तुक को भारी भरकम मुड़ासा बहुत बाधा पहुँचा रहा था। उसने झटके के साथ मुड़ासे को सिर पर से हटाया और एक ओर रखकर वैसे ही तेजी के साथ चक्की को चलाया कि लम्बी दाढ़ी एक ओर से खिसक कर ठोढ़ी के नीचे लटक आई। जैसे ही उसने दाढ़ी के इस छोर को संभालने का प्रयत्न किया कि दूसरी ओर का छोर सटक कर हाथ में आगया।

मजदूर को पहिचानने में देर नहीं लगी अनेक बार उस चेहरे को देखा था। उछलकर खड़ा होगया।

चिल्लाकर बोला, 'अपने महाराज ! अपने महाराज !!

स्त्री की कसकराह बिलकुल बन्द हो गई। कुछ बच्चों का रोना रुक गया कुछ सिसकते रहे।

मानसिंह एक हाथ में चाकी लिये हँसते हुये बोला 'यह चाकी बड़ी अभागिन निकली। काम पूरा नहीं करने दिया।

मजदूर पैरों पर गिरने को हुआ। मानसिंह ने दृढ़ता के साथ वर्जित किया।

मजदूर ने हाथ जोड़े हुए कहा, 'महाराज मुझको क्षमा मिले। आपने यह क्या किया?

कुछ भी तो नहीं कर पाया। धिक्कार है मुझको जो मैं तो भरे पेट को खाऊँ और तुम भूखों-रोगों मरो! मैं महलों में रहूँ और तुम इस झोपड़ी में भूखे ठण्डों मरो!!

'हमारा भाग्य है महाराज।'

बिलकुल भ्रम की बात। हमारे भाग्य के आधार तुम्हीं सब जन हो। तुम्हारा भाग्य बुरा रहा तो हमारा तो पहले ही खोटा हो चुका।

स्त्री ने फटे वस्त्र का लम्बा घूँघट डाल लिया और पीठ देकर चक्की के पास जा बैठी।

मैं पीछे देता हूँ बाई।' मानसिंह ने अनुरोध किया।

स्त्री ने हाथ जोड़े और जुड़े हुये हाथों निषेध का संकेत किया।

दिया बुझने को आ रहा था।

मानसिंह ने कहा 'मैं अभी तेल भिजवाता हूँ और ज्वर की औषधि भी। मजूरों के लिये अच्छे मकान बनवाऊँगा औषधालय खोलूँगा और देखूँगा कोई भी मजूर भूखा न रहे।

स्त्री की ओर देखकर बोला 'मैं अन्न भिजवाये देता हूँ। बीमारी में पीसोगी बाई तो ढेर हो जाओगी।

धीरे से रुनी ने प्रतिवाद किया पर स्वर नहीं रहा।

पुरुष ने समर्थन किया 'मेरी सारी थकावट चली गई। मैं अभी पीछे चलता हूँ। गठरी फेंका। महाराज की आज्ञा मान।

रुनी नहीं उठी। मानसिंह जाने को हुआ।

पुरुष ने अनुरोध किया 'मैं मार्ग दिखाता हूँ महाराज।'

मानसिंह हँस पड़ा। बोला 'किले से आया हूँ स्वर्ग से नहीं आया हूँ। अपने ग्वालियर को ही न पहिचाना तो फिर किसको पहिचानूँगा?'

मजदूर हिल गया था। गद्गद स्वर में बोला, 'सुना था कि महाराज ब्राह्मणों, पण्डितों और सेठों के हैं आज जाना कि मजूरों-किसानों के भी हैं।

मानसिंह चला गया। एक घड़ी पीछे ही झोपड़ी के लिये दवा तेल आटा इत्यादि आ गये।

मानसिंह ने दूसरे ही दिन ग्वालियर के दरिद्र मजदूर-किसानों के लिये रहने योग्य घरों के बनाने की राज्य की ओर से व्यवस्था की। जगह-जगह औषधालय खुलवाने का प्रबन्ध किया।

[२१]

'एक बड़ा काम अभी करने को पड़ा है।' मृगनयनी ने भोलेपन के साथ मानसिंह को स्मरण दिलाया।

'किले की प्राचीर, मोतीझावर महल सामान कुयें इत्यादि सब ठीक हो गये हैं।' मानसिंह ने आश्वासन देते हुये कहा।

मृगनयनी ने प्रश्न-सूचक दृष्टि की।

मानसिंह बोला 'राई की नहर आधे से ऊपर बन चुकी है। घुमाव फिराव के साथ आगे आ रही है। नालों के खाली के ऊपर ढाँचे को बना बनाकर लाने के कारण ही विलम्ब हो रहा है। नहर को ढककर लाना इसलिये आवश्यक है कि कोई उसको काट-कूट न सके—सो तुम जानती ही हो।'

मृगनयनी ने धीमे-धीमे मुस्कराकर फिर उसकी ओर प्रश्न-सूचक दृष्टि की।

उसके कन्धे पकड़कर मानसिंह ने पूछा 'कौन सा है वह बड़ा काम तुम्हीं बतलाओ?'

'लाखी का ब्याह। ईश्वर के सामने उसका ब्याह भैया के साथ हो गया है परन्तु अभी समाज के सामने नहीं हुआ है।' उसने बतलाया।

मानसिंह ने उत्साह के साथ कहा, 'हो जावेगा।'

'कब?'

'जब कहो तब।'

'जैसे बुर्जों के बीच-बीच दरिद्रों के लिये निवासगृह बनवाये जा रहे हैं भोजनालय खोले जा रहे हैं वैसे ही एक काम यह सही। स्त्री तबतक अपने को दरिद्र समझती है जब तक उसके सम्बन्ध में समाज मान्यता न दे। इसी पखवारे में कोई मुहूर्त निकलवा लिया जावे।'

'अभी लो। मुहूर्त सोधने वालों की अपने यहाँ कोई कमी नहीं है।'

मानसिंह ने विजयजङ्गम से मुहूर्त का शोधन करवाया।

मृगनयनी ने बतलाया कि उसके कुल और गाँव का आचार्य पुरोहित बोधन है इसलिये ब्याह को वही पढ़े और भाँवर पड़वावे।

राजा ने अपनी शक्ति की सीमा को ध्यान किये बिना ही हामी भर दी। बोधन को बुलवाया। उन आठ रानियों ने जब सुना, तब उनके विनोद का ठिकाना न रहा।

'इतने दिनों क्या लाखारानी कुमारी ही बनी रही?'

'गड़े मुर्दे उखाड़ना इसी को कहते हैं।'

'महाराज को क्या अब और कोई काम नहीं रहा?'

'मृगनयनी जो कुछ न करवावे सो थोड़ा है।'

बोधन ने आते ही राजा के प्रस्ताव पर मौन साध लिया। राजा को अब भी अपनी समर्थता की सीमा नहीं दिखलाई दी।

दूसरी ओर देखते हुये बोला 'तुम्हारे मन्दिर का जीर्णोद्धार इसी अठवारे में करता हूँ।'

'आपकी कृपा हो। धर्म ही है महाराज का।'

'आपके रहने के लिये भी अच्छा सा गृह बनवा दूँगा।'

'मैं तो अयोध्या इत्यादि की तीर्थयात्रा के लिये अटका हूँ। बहुत दिनों से संकल्प है। न मालूम कब लौटूं लौट भी पाऊँ या नहीं। मेरे लिये महाराज कष्ट न उठावें।'

'अभी नहीं जाने दूंगा। इस धर्म-कार्य को पहले कर डालो।'

'महाराज क्षमा करें, यह धर्म-कार्य नहीं है। पहले ही निवेदन कर चुका हूँ।'

'तुम अटलसिंह के आचार्य पुरोहित हो। तुम्हें करना चाहिये। अच्छी बिदा मिलेगी।'

'महाराज एक दरिद्र परन्तु निर्लोभ ब्राह्मण से बात कर रहे हैं। धर्म बेचा नहीं जा सकता।

'क्या तुम यह नहीं सोचते कि कितने हिन्दू तुम लोगों के इस कट्टरपन के कारण धर्म और समाज से दूर जा पड़े हैं ?

'शरीर में फोड़ा या कोढ़ होने से फिर वह अङ्ग काम का नहीं रहता।'

'तुमको कभी फोड़ा या कोढ़ हुआ ?

कभी नहीं।

'होगा तो क्या करोगे ?'

अङ्ग को काट कर फेंक दूंगा।

'विवेक से काम लो शास्त्री।

'महाराज से मैं क्या निवेदन करूं ? इतना तो भी कहना पड़ेगा कि क्षत्रिय ब्राह्मण को उपदेश देने के लिये नहीं बनाये गए हैं धर्म और गो-ब्राह्मण की रक्षा के लिये बनाये गये हैं।

'बनाये गये हैं और फिर बनाये जा सकेंगे। जनक महावीर गौतम बुद्ध कौन थे ? राम कृष्ण अर्जुन इत्यादि कौन थे ? परन्तु शास्त्री मैं इस विवाद को अनुचित समझता हूँ। इस विवाद से परस्पर कलह फैलेगी। मैं आर्यावर्त को अपने पुरखों की भांति प्रबल बनाना चाहता हूँ। मेरी सहायता करो।

'महाराज आर्यावर्त वर्णाश्रम धर्म को स्थिर रखने से ही बच सकता है। अन्यथा नहीं।

'शास्त्री सोचो, इस प्रकार का कट्टर वर्णाश्रम हिन्दुओं की कितनी रक्षा कर सका है। रक्षा के लिये ज्ञान और तलवार दोनों अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं। ब्राह्मण ज्ञान का काम तो कर सके हैं और कर रहे हैं परन्तु तलवार का काम न तो ज्ञान के युग में उसने कर पाया है और न कभी कर पायेगी।

'महाराज के भी मुख से यह वाणी शोभा नहीं देती। इस प्रकार की व्यवस्था देना पंडितों का काम है।

'मैं यह नहीं कहता कि वर्णाश्रम को नष्ट कर दिया जाय परन्तु उसमें सुधार की आवश्यकता अवश्य है। इसको तो मानोगे न?

'मैं नहीं मानता। पंडितों से पूछिये।

'विजय जङ्गम भी पंडित है। उनसे शास्त्रार्थ करलो।

'इसी समय तैयार हूँ और अनन्त काल तक तैयार रहूँगा। विजय जिस शास्त्र या पुराण को खींच-खाँच कर अपने सिद्धान्तों की दुहाई देता है, वह प्राचीन नहीं है। लगभग तीन सौ वर्ष हुये हैं तब बना था। सो वह भी काशी या मथुरा में नहीं बना बल्कि द्रविड़ देश में।

और उसी द्रविड़ देश ने हम सब को भगवान शङ्कराचार्य और भगवान रामानुजाचार्य इत्यादि महात्मा दिये। तभी तो कहता हूँ तुम इतने पढ़े-लिखे होकर भी कभी-कभी विवेक शून्य हो जाते हो।

बोधन क्षोभ के मारे काँपने लगा। चुप खड़ा रहा।

'क्या कहते हो? मानसिंह ने ठसक के साथ पूछा।

कम्पित स्वर में बोधन ने उत्तर दिया 'महाराज ने वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध ठान ली है इसलिये मैं अब ग्वालियर में नहीं ठहरूँगा। अधर्म के समय और स्थान में नहीं रहूँगा।

क्रुद्ध स्वर में मानसिंह के मुँह से निकला 'तुम निरे मूर्ख हो।

'क्या महाराज का यही निर्णय और न्याय है?

'बिलकुल।

बोधन वहाँ से चला गया। अबकी बार जाते समय उसने आशीर्वाद का हाथ नहीं उठाया।

ग्वालियर को त्याग कर तीर्थ यात्रा को चल दिया।

मानसिंह ने लाखी और अटल का पाणिग्रहण संस्कार विजय जङ्गम से करवाया। अनेक ब्राह्मणों ने उत्सव में भाग लिया। कुछ ऐसे भी थे जो बीमारी—या बीमारी के बहाने—के कारण उत्सव में सम्मिलित नहीं हुये।

मृगनयनी सुखी थी। बोधन के चले जाने का मानसिंह को परिताप नहीं हुआ। विपत्ति के भाग पर किसी दिन ग्वालियर आवेगा मानसिंह को विश्वास था।

[५४]

लाखी और अटल के पाणिग्रहण संस्कार के उपरान्त उत्सवों की धूम मच गई। मानसिंह ने धूम-धूमकर उत्सव मनाये—जिसमें जनता जान जाय कि मैं जातपाँत के उतने सिकुड़े-जकड़े बन्धनों को नहीं मानता दूसरे, मृगनयनी आनन्दमग्न बनी रहे।

सामन्तों और सम्पत्ति वालों ने उन दोनों का निमन्त्रण किया और भेंटें दीं। मृगनयनी और मानसिंह ने भी निमन्त्रण दिया। बड़ी रानी ने हठ किया कि पहले मैं निमन्त्रण दूँगी पीछे मृगनयनी। मृगनयनी को मानना पड़ा।

अभी तक लाखी के हाथ का बनाया या परोसा हुआ भोजन उन आठ रानियों में से किसी ने नहीं खाया था यद्यपि उसको ग्वालियर के किले में आये हुये बहुत काफी समय हो चुका था। अवसर ही ऐसा कोई नहीं आया था क्योंकि सबके पटाके अलग-अलग थे।

ऊँची जाति का हिन्दू नहीं जिसके हाथ का छुआ दूसरी ऊँची जाति वाले खावें। मृगनयनी ने अपने मन में भोज का आयोजन इसीलिये किया था कि लाखी सबको अपने हाथ से परोसेगी फिर कोई उसके ब्याह-प्रसङ्ग पर उँगली न उठा सकेगा।

परन्तु बड़ी रानी ने पहले ही निमन्त्रण दे दिया।

और, इसके उपरान्त सही। मृगनयनी ने सोचा।

पुरुषों को अलग भोज कराया गया और परिपाटी के अनुसार स्त्रियों के भोज का प्रबन्ध हुआ। रानियों के लिये थाल लगकर आये। मृगनयनी के सामने भी थाल आ गया। लाखी इसी के पास बैठी थी। बड़ी रानी कुछ दूर। उसकी आँखों में एक तर्क उत्तेजना थी।

जब परोस हो चुकी बड़ी रानी ने आरम्भ करने का अनुरोध किया।

मृगनयनी ने मुस्कान के साथ मीठे स्वर में कहा, 'महारानी जी, अपने यहाँ रीति नई दुलहिन के हाथ से परोस कराने की है। महारानी थोड़ा सब को परोस दें न?'

बड़ी रानी हँसती हुई बोली, 'यह रीति रनवासों की नहीं है।'

'अर्थात् गाँवों की है।'

'जब आपने महारानी को रनवास का सम्मान दिया है तब थोड़ी सी गाँव की रीति को भी बर्त जाने दीजिये। हम सबको विश्वास हो जायगा कि यह सब मान की हो गई।'

'आपको है तो हमारी पहले है।'

'तो थोड़ा सा सबको परोस देंगी और थोड़ा सा आपको। और चाहे किसी को न परोसें।'

'आप इतना हठ क्यों कर रही हैं?'

'आपको प्रसन्न करने के लिये।'

'मुझको तो इससे कोई प्रसन्नता नहीं मिलेगी।'

'तो आप सब भोजन करें, मैं बैठी रहूँगी।'

'ऐसी अवस्था में हम में से कोई भी भोजन नहीं करेंगी।'

'अच्छा मैं थाली के शुभ भोजन को परोस देती हूँ। इसमें तो आपको कोई आक्षेप नहीं होगा?'

'हमको तो किसी में भी कोई आक्षेप नहीं करना है क्योंकि काँटों में से जीवन को गुज़ारना है न।'

मृगनयनी के आग सी लग गई। लाखी वस्त्रालंकारों से लदी हुई नीचा सिर किये बैठी थी।

मृगनयनी ने कहा, 'मैं नहीं जानती थी कि निमन्त्रण के बहाने अपमान किया जायेगा।'

बड़ी रानी की उत्तेजित आँखों में चंचलता आई। बोली 'आपका हठ हमारा अपमान कर रहा है।'

मृगनयनी उठ खड़ी हुई। लाखी से कहा 'चलो भाभी।'

लाखी नहीं उठी। उसने हाथ जोड़ कर संकेत में प्रार्थना की 'बैठ जाओ खाने भी दो।'

मृगनयनी ने दृढ़ता के साथ कहा 'नहीं यहाँ से चलो। यह अपने को बहुत ऊँचा समझती है।'

सुमनमोहिनी कुछ कहना चाहती थी परन्तु उसके होठ ऐसे चिपक गये थे कि मुँह से एक शब्द भी नहीं निकला।

वे दोनों वहाँ से अपने कक्ष में चली गईं।

सुमनमोहिनी ने दासी को आज्ञा दी 'इन दोनों थालों का भोजन बाहर फेंक दो।'

दासी ने मृगनयनी और लाखी के थाल उठा लिये और बाहर जाने को हुई।

सुमन ने दूसरी आज्ञा दी 'ये भोजन मेहतर को भी मत देना। कहीं दूर फेंक आना।'

दासी चली गई। उसने मेहतर को भोजन नहीं दिया। दूर ले जाकर कुत्तों को डाल दिया और चली आई।

जिन कुत्तों ने खाया वे दो दिन के भीतर मर गये। कुत्तों की मौत का ठीक-ठीक कारण किसी को मालूम नहीं होने पाया। जिनके कुत्ते थे उनको अवश्य विष का सन्देह हुआ। कानाफूसी हुई। चर्चा हुई। फैली और बढ़ी परन्तु साधारण जनता के बूते के आगे बहुत कम फूटी।

मृगनयनी और लाखी को इतना अविलम्ब ज्ञात हो गया कि बड़ी रानी ने उन दो थालों का भोजन फिकवा दिया। मृगनयनी को उस रात बड़ा मानसिक क्लेश रहा परन्तु वह यह नहीं जानती थी कि उस भोजन के खाने वाले उन कुत्तों की कैसी दुर्गति हुई।

[५५]

दूसरे दिन मानसिंह को मालूम हो गया। सुमनमोहिनी के साथ उसने वार्तालाप करना व्यर्थ समझा। डरता डरता सा मृगनयनी के कक्ष में गया। सोचता था होम करते हाथ जला।

मृगनयनी ने अपनी मानसिक पीड़ा पर अधिकार कर लिया था। मानसिंह को डरता सकुचता सा आता देखकर मृगनयनी विनोद मग्न हो गई।

बोली 'महाराज तो कुछ ऐसे दिखलाई पड़ रहे हैं जैसे सिंह की शिकार चूक कर आ रहे हों।

मानसिंह आश्वस्त हुआ। उसने मृगनयनी को बाहु में भर लिया। कुछ क्षण चुप रहकर कहा 'समझ में नहीं आता तुमको कैसे सान्त्वना दूँ।

'काहे की सान्त्वना? जो हो गया सो हो गया। मैंने निश्चय कर लिया है कि ऐसी बातों पर आगे कभी ध्यान नहीं दूँगी।

इस प्रकार के निश्चय को मानसिंह पहले भी सुन चुका था परन्तु वह जानता था कि अनवरत प्रयत्न का ही नाम जीवन है।

'तुम बड़ी हो अवश्य बहुत बड़ी हो। आई हुई कठिनाइयों को परास्त करके आगे आने वाली कठिनाइयों से लड़ने के लिये तैयार रहने में मन को आनन्द मिलता है—

मानसिंह को प्रवचन करने की वृत्ति में देखकर मृगनयनी ने उसकी ओर आँखें ऊँची कीं। होठों पर मुस्कान खिल गई और चेहरे पर बिखर गई।

टोक कर बोली मन को जो आनन्द मिलता है वह किस आनन्द के समान होता है?

'इन मुस्कानों को देखकर जो आनन्द मिलता है उसके समान।

'इतने निकट से ।'

'बड़ी कठिनाइयाँ भी तो निकट ही आती हैं जिनका सामना निकट ही करना पड़ता है। दूर की कठिनाइयाँ तो थोड़ा सा डर छोड़कर चली जाती हैं।'

'छोड़ दीजिये नहीं तो होठों को समेट कर मुँह लटका लूँगी।'

'तो मैं हँस पड़ूँगा। फिर ?'

'आप बहुत बुरे हैं।'

'और तुम बहुत अच्छी हो। बुरे भले की जोड़ी का तो नियम ही है।'

'नहीं आप बहुत अच्छे हैं। बड़े भले। अब दूर बैठकर बात करिये।'

'बात तो यों ही चल रही है।'

'अच्छा मैं एक बात पूछती हूँ।'

'एक नहीं दो। पूछो। जल्दी-जल्दी पूछो मैं धीरे-धीरे उत्तर दूँगा।'

'मैं पूछती हूँ जब मेरी अवस्था उतर जायगी और मैं ढीली ही जाऊँगी तब भी क्या आप इतना ही प्यार करेंगे ?'

'यह क्या कह रही हो ?'

'आपने दो बातें पूछने के लिये कहा था, दूसरी यह कि प्रेम को स्थायी कैसे बनाया जा सकता है ?'

मानसिंह की बाँहें ढीली पड़ गईं। आकृति गम्भीर हो गई। मृगनयनी उससे अलग होकर जरा दूर बैठ गई।

मानसिंह भी बैठ गया। मृगनयनी मुस्कराने लगी।

मानसिंह की गम्भीरता चली गई।

मानसिंह बोला 'तुम सचमुच बड़ी हो। मुझसे बड़ी और बहुत अच्छी।'

'वाह ! वाह !!'

'ठीक कहता हूँ।'

'कैसे ?'

मानसिंह उसके निकट आने को हुआ। मृगनयनी और अधिक मुस्कराई।

'और निकट आये तो मैं बहुत छोटी रह जाऊँगी।'

मानसिंह स्थिर हो गया।

'तुम संयम से प्रेम को अचल बनाती हो और मैं अपने विकार से उसको चंचल कर देता हूँ। संयम के आधार वाला प्रेम ही आगे भी टिके रहने की समर्थता रखता है।'

मृगनयनी ने गर्दन टेढ़ी की उँगली ठोड़ी पर फेरी और मुस्कान को बिखरा।

'मन में उपदेश ज्यादा भरा दिखता है आज !'

'अजी उपदेश देना पण्डितों और आचार्यों का काम है।'

उसी क्षण बोधन का चित्र उसकी आँखों के सामने घूम गया। चौपी बोरकी का था वह मानसिंह ने सोचा। मुस्कराया।

बोला 'तुम्हारी प्रत्येक मुस्कान भिन्न-भिन्न समय पर तरह-तरह का दिखलाई पड़ने वाला सलोनापन तुम्हारी छवि का हर एक अंग ऐसा मूर्त कर देना चाहता हूँ इतना साकार कि जीवन के अन्त तक उसमें प्रेम का अचल प्रतिबिम्ब बना रह कर दिखलाई पड़ता रहे। अभी-अभी मेरी समझ में आ गया कि यह कैसे सम्भव होगा। जिस भवन को बनवा रहा हूँ उसका नाम मृगन्न-मन्दिर रहे ?

मृगनयनी ने हँस कर टोका—'प्रारम्भ के कौर में ही मक्खी गिर पड़ी। मेरी बड़ी का नाम रखिये—सुमन मन्दिर।'

'नहीं यह नाम नहीं रक्खा जायगा। तुम मेरे मन की रानी हो हम दोनों इस भवन के एक खण्ड में पालनकर्त्ता विष्णु भगवान का पूजन-ध्यान करेंगे इसलिये यह भवन मन्दिर कहलावेगा तुम मेरी मानिनी हो, मैं तुम्हारा मान इसलिये इस का नाम होगा मान-मन्दिर। तुमको मालूम है तुम्हारी कौनसी छवि मुझको बार-बार लुभाती है?

मैं क्या जानूं? आप न जाने क्या क्या करते रहते हैं।

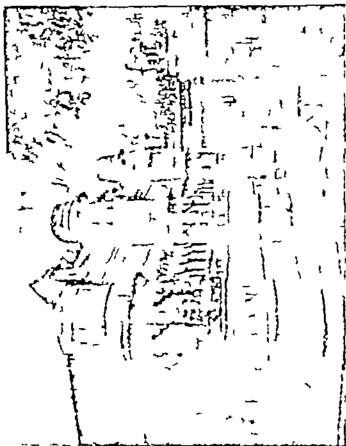
जिस समय नीचर पहने की बड़ी मुकुट बांधे हरे-हरे पत्तों के लता-वितान वाले मण्डप के नीचे तुम उस आंगन में आई - वह छवि। मान-मन्दिर का द्वार उस घड़ी की छवि को मूर्त करेगा।

मानसिंह एक क्षण चुप रहा। मृगनयनी ने गर्दन की एक हलकी सी मुरकी ली और एक आंख की चितवन को जरा सा ऊंचा किया। मुस्कराती हुई बोली 'और क्या?

वह कहता गया 'ऐसे बड़े और छोटे द्वार बनाऊँगा जिनमें होकर आने वाला प्रकाश तुम्हारी हँसी और मुस्कानों को व्यक्त करे। तुम्हारे केश-कुन्तल कपोलों की दोनों ओर छूट-छूट जाते वामी लटें उन द्वारों की कमलधारी कमानों में उतर आयेंगी। तुम्हारी मुस्कानों के पीछे जो मोती से चमक जाते हैं वे बेलबूटेदार झिलमिरियों की आभा द्वारा व्यक्त हो जायेंगे। ऊपर के खण्ड के आंगन में निकली हुई गोखें बारजें और उनकी पतली सुहावनी कड़ियां तुम्हारी चितवन और भौंहों को प्रकट करती रहेंगी। उन सबके ऊपर के कंगूरे और कलश तुम्हारे—

मृगनयनी ने हँसते हुये टोका और आगे नहीं सुनना चाहती।

'अच्छा अच्छा सुनो', मानसिंह ने कहा 'बाहर की विशालता और भीतर का सौन्दर्य हमारी-तुम्हारी उपासना और विष्णु की आराधना को मूर्त करेगी।



'हाँ यह कही ठिकाने की बात।

'तुमको उद्यान का कौनसा वृक्ष सबसे अधिक मोहक लगता है?'

'केला। उसके हरे भरे डोलते हुये बड़े-बड़े पत्ते हाथियों के कान से भी बड़े बहुत अच्छे लगते हैं।'

'ये पत्ते अपने स्वाभाविक रङ्ग में मान-मन्दिर के ऊपरी खण्ड के बाहरी भाग पर बराबर टाँक दिये जायेंगे। जान पड़े कि किसी उद्यान के भीतर मन्दिर है। और पत्थर की जालियों में अपने जङ्गलों के हाथी सिंह, नाहर अन्य पशु और तालाब के बगुले हंस सारस इत्यादि पक्षियों को बनवा दूँगा। विष्णु की मूर्ति है न वे? कैसा रहेगा?'

'बहुत अच्छा। सुना है किसी कलाकार ने चन्देरी के निकटवर्ती देवगढ़ में विष्णु की प्रतिमा को ऐसी मुस्कान दी है कि देखने वालों के विकारों को शान्त करके भक्ति के साथ ध्यान को एकाग्र कर देती है। क्या कभी उस मूर्ति के दर्शन कर सकूँगी?'

मानसिंह ने झटका सा खाया। आधे क्षण के लिये भौंह सिकुड़ गई। सांस लेकर बोला, 'बहुत दिन हुए तुर्कों ने उस मूर्ति को खण्डित कर दिया पर मूर्ति की अनन्त आशीर्वादमयी मुस्कान को कभी कोई नहीं मिटा पाया। देवगढ़ मालवा के सुल्तान के अधीन है। यदि तुर्कों की बस्ती को मिटाने में कभी संघर्ष हुआ और देवगढ़ को ग्वालियर के भीतर कर लिया तो दर्शन कर लेना।'

'अपने यहाँ के कलाकार कारीगर नहीं ला सकते उस मुस्कान को यहाँ? अपने हृदय की गाँठों में बाँधकर?'

'कदाचित ला सकें। कलाकार के भीतर पूरी उपासना आस्था श्रद्धा और भक्ति योग के द्वारा आ जाय तभी वह उस प्रकार मुस्कान को छेनी हथौड़े के द्वारा पत्थर में उभाड़ कर पिरो सकता है। प्रयत्न करूँगा। मान-मन्दिर के भीतर ऐसी ही विष्णु की मूर्ति को पधरवाऊँगा जिसके

दर्शकों से हमारे शिल्प की मुस्कानें प्रसन्नता के साथ इतनी बनी रहें कि तुम उनको अपने आसपास भी बांट सकें।

कविता कर उठे न आप मन !

कई बार कह चुका हूँ कि साकार कविता तो तुम हो जो इस प्रकार के भाव को मेरे भीतर सदा बनाती रहती हो।

साकार कविता तो नायक बैजू है।

अब लोग उसको बैजू बावरा भी कहने लगे हैं। कविता बावली ही होती है जैसी तुम।

मृगनयनी हँस पड़ी।

बोली, मैं बावली हूँ ! और यह जो तानों मुस्कानों फूल-पेड़-पत्तों, हाथियों-लहरों सूरज की किरणों और चन्द्रमा की चांदनी को पत्थरों में उतार देना चाहते हैं वह कौन है ?

मानसिंह भी खिलखिलाकर हँस पड़ा।

कुछ समय उपरान्त उसने कहा 'नायक बैजू आजकल बड़ी साधना कर रहे हैं। परोसा हुआ भोजन एक ओर रक्खा रहता है पानी तक पीना भूल जाते हैं। किसी राग के बनाने या किसी परिपाटी या नई तानों के सृजन में दिन रात एक करे जा रहे हैं। कोई रोकटोक करता है तो बीणा लेकर उसको पीट डालने को झपट पड़ते हैं चिन्ता नहीं जाने फिर उनकी उस प्यारी वीणा का तुम्बा ही क्यों न फूट जाय ! वह अपने आलापों और तानों से मुस्कराते हुये विष्णु का प्रसाद और सबको बाटेंगे।'

जब इसी तरह की साधना शिल्पी कलावन्त करें, तब विष्णु की मूर्ति में इस प्रकार की मुस्कान टांकी-हथौड़े के द्वारा उतार पायेंगे। ठीक है न?

बिलकुल बिलकुल ही ठीक है। मानसिंह ने उठकर मृगनयनी को अंक में फिर भर लिया।

'यह नहीं होना चाहिये ! कैसी अच्छी बातें करते-करते आप क्या कर उठे ।' मृगनयनी ने हँसते हुये कहा ।

मानसिंह फिर मगन हो बैठा ।

बोला 'विष्णु के इस सुन्दर मान-मन्दिर में हम दोनों पुजारी बनकर रहेंगे । हम ही दोनों ।'

और सुमनमोहिनी और वे सातों कहाँ रहेंगी ? मृगनयनी के अन्तर्मन के नीचे से सहसा किसी ने पूछा । वहीं किसी ने उत्तर दे लिया बनी रहें । सब सह लूँगी सब सहती रहूँगी । सुख-दुख की संगिनी लाखी भी तो साथ रहेगी । लाखी को बड़ी रानी अछूत समझती है ! और मुझ को भी !! मेरे और लाखी के थाल का भोजन मेहतर तक को नहीं दिया गया !!! इतनी गई बीती समझी गई हम दोनों !!!! कितना अपमान !!!!! परन्तु मैंने और लाखी ने उस अपमान को पी जाने का निश्चय कर लिया है । महाराज कितना प्यार करते हैं ! वह अपमान इस प्यार के सामने बिलकुल तुच्छ है । परन्तु यदि नित्य-नित्य होता रहा तो रसी के दमन-शमन में उलझा रहना पड़ेगा और न कलाओं में कोरी रह जाऊँगी । मृगनयनी सोच रही थी ।

मानसिंह ने हँसकर कहा 'क्या सोच रही हो महारानी जी ? राई के बघुआ पहाड़ मौसम के लताविताम वाले मन्दर के मोर बोले बासी दुलहन की छवि को ? या बैजू की किसी तान को ?'

'नहीं तो'—धीरे से मृगनयनी बोली —'अपनी नदी अपने गाँव की नदी के सुन्दर जल की याद करने लगी थी ।'

'थोड़ी सी बावली हो न । कहा था न कि नहर के ग्वालियर आने में थोड़ा सा ही समय और लगेगा ।'

'यहाँ किले के ऊपर, आपके मन्दिर तक कैसे चढ़ेगी वह नहर ?'

'हाँ ऊपर तक तो नहीं आ सकती है । परन्तु उत्तर-पूर्व के कोने वाली टप तक तो आ ही सकती है ।'

यहाँ तक ले आइये और एक महल यहाँ भी बन जाय। बन सकता है न?

जिस समस्या को मिटाने के लिये मानसिंह मृगनयनी के पास आया था मानो उसका हल मृगनयनी के ही मुँह से मिल गया।

उत्साह के साथ बोला 'बहुत अच्छा! बहुत अच्छा!! मैं सोचता था मान-मन्दिर के निर्माण के बाद क्या करूँगा सो तुमने खूब बतलाया!!! यहाँ मन्दिर बनकर खड़ा हुआ जाता है यहीं बनेगा महल। उसका नाम होगा गूजरी रानी का महल।

उस पर भी अपने नाम की छाप दीजिये।

'एक हठ तुम्हारा मान लिया। एक मेरा भी मानो। उसका नाम गूजरी रानी का महल ही होगा।

उसमें भी न ही सब बातें उतारी जायेंगी क्या?

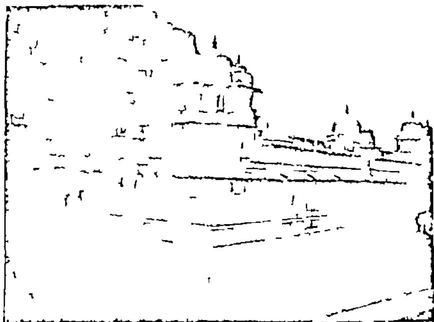
'नहीं मिलता ऐसी जैसी तुम्हारी छवि की समय-समय पर मिलता दिखलाई पड़ती है। तुम्हारे आभूषणों जैसी।

'मैं कितने आभूषण अपनी देह पर लादती हूँ?

'नहीं छिपाई पर आभूषण और आभूषणों के भीतर छिपाई। कल्पना के पीछे जो विचार है उसको लगन के साथ मूर्त करने का प्रयत्न करूँगा। जितना भी सफल हो जाऊँ अपने को कृतकृत्य समझूँगा।

'देवगढ़ के किन्नर-मन्दिर को फिर अपने हाथ में लाना चाहिये और उसको फिर से ज्यों का त्यों बनवा देना चाहिये। इस काम को आप कब करेंगे?

इस प्रश्न की ध्वनि ने मानसिंह की कला-कल्पना और ओज की ललित-मधुरता को धक्का दिया जैसे किसी ने मान-मन्दिर और गूजरी महल के निर्माण को एकाएक रोक दिया हो जैसे बैजू बावरे से किसी मोटी तान को बीचे-बीचे एकाएक वीणा को पटक कर तोड़ डाला हो।



रानी मृगनयनी का महल—गूजरी महल

बोला 'समय आने पर उसको भी करूँगा।'

मृगनयनी ने कहा 'कला और कर्तव्यपालन के बीच में तौल का बनाये रखना तो आप जानते ही हैं मैं क्या कहूँ। कला से कभी कभी मन उचट जाता है तो चाहती हूँ बाहर जा मचान पर बाण का सन्धान करूँ। देखना चाहती हूँ भूल तो नहीं गई।'

मानसिंह का उत्साह पर्याप्त मात्रा में नहीं आया —'किसी दिन इसकी भी योजना कर दूँगा। राई के जङ्गल पास ही तो हैं।'

'अबकी बार नरवर के जङ्गलों में चलिये। वहाँ हाथियों के झुण्ड दिखलाई पड़ेंगे। उनके साथ अठोले भी जैसे कूदते-फुदकते बच्चे। वहीं से चन्देरी और देवगढ़ को अधीन करने की योजना बनाइये।'

नरवर कला और राजसिंह मानसिंह की कल्पना में झूल गये। राजसिंह नरवर को अपनी बपौती समझता है! चन्देरी और देवगढ़ सहज ही हाथ नहीं लगने के। फिर भवन-निर्माण और कला-सृजन के कार्य को अधूरा छोड़कर कैसे उतने बड़े काम को एकाएक आरम्भ किया जा सकता है? पहले अपने निकटवर्ती लोगों को भली भाँति संगठित कर लूँ। निहालसिंह का अन्त कैसे बुरे समय पर हुआ! कितना अच्छा दल नायक था वह!! ओफ़!!'

मानसिंह ने अपने भाव को छिपाकर कहा 'बहुत शीघ्र प्रबन्ध करूँगा। गूजरी-महल के काम को आरम्भ करूँ और मान-मन्दिर के निर्माण की गति को बढ़ाऊँ फिर शीघ्र उस काम को भी हाथ में लूँगा। तब तक शिकार के लिये राई का और अपने यहीं आसपास जङ्गल उपयुक्त रहेगा।'

[२१]

कला अम्बेरी पहुंच गई। उसने अपनी विफलता का कारण बैजू को बतलाया। बैजू पर का रोष राजसिंह के भीतर कला के प्रति असंतोष में पलटने को हुआ। क्षुब्ध हो गया।

बोला, 'मैं नहीं जानता था कि बैजू इतना बड़ा गधा है। वह बावरा बावरा यहाँ कुछ भी नहीं था। ग्वालियर के पानी ने उसको निकम्मा कर दिया।

'होरी-ध्रुपद की परिपाटी को मांजने में लगे हैं वह आजकल और प्रकार प्रकार की टोड़ी बनाने की धुन में। गूजरी टोड़ी मंगल गूजरी इत्यादि। उसको और कुछ भी नहीं सूझ रहा है।

'भाड़ में गई टोड़ी। वह ग्वालियर में रह गया सो अच्छा ही हुआ। किसी काम का नहीं निकला। खेद है कि तुम भी कुछ न कर सकीं।

कला ने जो कुछ प्रयत्न किया था बतलाया।

फिर बोली 'आपने यह कहा था कि जब ग्वालियर गिर जाने को हो तब तुरन्त समाचार देना सो ग्वालियर गिरते गिरते रह गया परन्तु फिर गिरेगा तब आप नरवर पर चढ़ाई कर देना।

'मैंने क्या केवल यही कहा था? इतनी बात तो औरों के ही सामने कही होगी अकेले में भी तो कुछ कहा था।

'ठीक ठीक याद नहीं। परन्तु मैंने नई रानी और पुरानी रानियों में काफ़ी फूट डलवा दी और अधिक कुछ नहीं हो सका। किले के चित्र बनाये थे पर वे हाथ से निकल गये। बतलाया है आपको।

'तुमने नाचने-गाने में ज्यादा ध्यान लगाया इसलिये तुम्हारा निश्चय विफल गया। खैर और कोई बात नहीं। दिल्ली का बादशाह एक न एक दिन ग्वालियर पर चढ़ाई करेगा और मानसिंह को मारेगा। तुमसे नहीं मार पाया तो कैसे मरेगा। इधर हमारा यह सुल्तान इतना निकम्मा है

ऐसा निकम्मा कि कुछ करता-धरता ही नहीं। नहीं तो मन चाहता है कि नरवर के फाटकों पर फिर अपने हाथी को जा ठेलूं। पर यह सुल्तान! बहुत ही धन्न है। ग्यारह हजार सुन्दरियों को तो अपने हरम में दाखिल कर चुका है।

'क्या! ग्यारह हजार!!

'हां। और उसका प्रण है कि पूरी पन्द्रह हजार से महलों को भरके ही दम लूंगा!

'पुरुषों का कुछ ठीक नहीं। एक पर से उनका मन उचटकर कितनी जल्दी अनेक पर फिसल जाता है।'

'नहीं कक्का सब पुरुषों के लिये यह बात लागू नहीं है। मेरे साथ अन्याय मत करो।

'आपने मेरे साथ कौनसा बड़ा न्याय किया?

'मैं महल में बैजू पर खीझ गया था। कुछ बातें यों ही मुंह से निकल गईं। आप मुझको इधर-उधर नहीं जाने देता। सुल्तान से बहुत डर लगता है।

'क्यों?

'मुझको मालूम नहीं। सुल्तान ने सुन्दरियों की ढूंढ-खोज के लिये एक महकमा खोला है। मालवे भर में उसके आदमी नये-नये रूपों की पकड़-धकड़ के लिये घूमते हैं। यहां भी आये थे और कुछ को ले गये।

'राजपूत वहां का मौन है?

'जहां राजपूत बहुत हैं वहां इस महकमे वाले नहीं जाते। जहां थोड़े हैं वहीं उपद्रव करते हैं।

'राजपूत इकट्ठे क्यों नहीं हो जाते?

'खड़ी हो जाते । तुरन्त राजसिंह के सामने मानसिंह का चित्र घूम गया । ग्वालियर तोमरों की सेना उनका विक्रम । उसी समय नरवर की कपोली आँखों के सामने आ खड़ी हुई और पुरखों का बदला । तोमर और हम कैसे एक ही जगह खान पान, सम्मान और रहन-सहन कर सकते हैं ?

कला आँखों के सामने खड़ी थी ।

बोला 'तुम्हारे नाम की भी ढूँढ़-खोज यहाँ हुई थी ।

कला सकपका गई । 'ऐं ! उसके मुँह से निकला ।

पूछा 'अब क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? मेरा तो और कोई कहीं नहीं है ।

राजपूत की बाँह फड़क गई ।

उसने कहा 'मैं तो हूँ । तुम्हारे ऊपर आँच आने के पहले मेरे तन के टुकड़े-टुकड़े हो जायँगे ।'

'आप अकेले क्या कर लेंगे ?'

'बहुत कुछ । हम थोड़े में ही नरवर के किले को कँपा दिया था । सुल्तान ढीला पड़ गया नहीं तो नरवर की ईंट से ईंट बजा देता ।'

'पर आप सदा तो घर पर रहते नहीं ।

मैं तुमको किसी विश्वास के स्थान में रख दूँगा । इसके सिवाय अपना सूबेदार बेरखाँ मेरा मित्र है । वह कपटी नहीं है । मेरे साथ छल नहीं करेगा । फिर काम पड़ जाने पर आनी के ऊपर मर जाने के लिये मेरी देह तो है ही ।

कला ने सोचा मानसिंह कितना बड़ा है ।

[८३]

बाद निकल गए। बसन्त आया और आया। नसीरुद्दीन ने माँडू में बारह हजार स्त्रियाँ इकट्ठी कर लीं परन्तु अभी उसके प्रण के पूरे होने में तीन हजार की कसर थी। नटक के ऊपर उसने गियासुद्दीन से भी बढ़कर कृपा बरसाई। खजाने में कोई कमी नहीं थी क्योंकि मालवे का किसान समय पर अपना लगान चुकाता रहता था। इमारतें खड़ी करने का विचार उसने त्याग दिया था जिनपर खर्च होता। मेवाड़ दिल्ली के बादशाह से लड़ता रहता था। गुजरात का महमूद बघर्रा कभी चांपानेर कभी अहमदनगर कभी सौराष्ट्र के राजपूतों की लड़ाइयों में कई बरस से बीधा हुआ था। यद्यपि उसने माँडू के सुल्तान को कम से कम एक बार कुचल डालने की सौगन्ध खा रखी थी परन्तु वह अवकाश नहीं पा रहा था। नसीरुद्दीन जानता था लेकिन उसको विश्वास था कि कष्ट अभी बहुत दूर है। इसलिये बाप को मारकर अब माँडू में उस बड़े भारी परिस्तान को स्थापित करने की धुन में लगा हुआ था। जहाँ उसने किसी सुन्दर युवती की खबर पाई कि तुरन्त पकड़वाये। अनेक लोगों का यही धन्धा होगया था। मालवा के राजपूत अपने होंठ काट काट कर रह जाते थे किन्तु एक नहीं हो पा रहे थे। मेदिनीराय का जन्म हो चुका था परन्तु उसने मालवा के राजपूतों को अभी अपनी गांठ में नहीं बांध पाया था। इस आंधी के उठने की बात नसीर को मालूम भी होती तो वह पूरी उपेक्षा करता। और इस प्रकार की आंधी जब उस काल में उत्तर भारत में उठती थी तब वह भी किसी की अपेक्षा नहीं करती थी। आंधी के बीच में मेवाड़ तन ही रहा था। रामानन्दाचार्य चैतन्य महाप्रभु कबीर इत्यादि ने भक्तिमार्ग की अदमनीय शक्ति को उत्पन्न कर ही लिया था।

नसीरुद्दीन अपनी इन्द्रपुरी के निर्माण में सिर के बल लगा हुआ था।

एक दिन उसने माँडू की बड़ी झील कर्पूरसागर में अपनी अप्सराओं को उतार कर जल-विहार करने की ठानी।

मन्डू ने भी कहा, 'वाह ! क्या कहना है जहाँपनाह दुनिया के किसी भी पर्दे पर ऐसा कभी नहीं हुआ होगा।'

जल-विहार के विस्तृत क्षेत्र में कनातों की बाड़ें लगादी गईं। एक ओर लहराने वाली झील की नीली जलराशि दूसरी ओर कनातों के भीतर रङ्ग-बिरङ्गे बारीक वस्त्रों और झिलमिलाते अलंकारों से सजी हुई ये अप्सरायें, टिड्डीदल की तरह उमड़ रही थीं। अन्तर इनमें और टिड्डियों में इतना ही कि टिड्डियाँ एक ही रङ्ग की होती हैं। बरसात की तितलियों जैसी परन्तु बरसात में एक ही स्थान पर इतनी तितलियाँ इकट्ठी नहीं दिखलाई पड़तीं। सब हँसती-मुस्कराती बातें कर रही थीं। सब अपने वस्त्रों को लहरा-फहरा रही थीं सब अपने यौवन का प्रदर्शन कर रही थीं। परिणाम-स्वरूप इतना शोरगुल बढ़ा कि नसीरुद्दीन को उसके ठण्डे करने का एक ही उपाय सूझा। उसने सोचा इस शोरगुल को बढ़े तो इन्द्र भी बन्द नहीं कर सकता।

इसलिये उसने गायन और नृत्य आरम्भ कराया। उस सङ्गीत के रसास्वादन के लिये बगल में सब प्रसाधन थे ही—सुराही प्याले मटक इत्यादि इत्यादि।

अप्सराओं का कलाप निखार थोड़ी देर के लिये धीमा पड़ गया। नसीर का सन्तोष नहीं हुआ।

संगीत को बन्द करके बोला 'पानी में कूद पड़ो और आपस में धूमा-धपक्का खेलो। मैं भी पानी में उतरूँगा पर मजा को जरा देखने के बाद।'

आदेश—शाहजादी ने इस फ़रमान को अविलम्ब जारी कर दिया। जो युवतियाँ तैरना जानती थीं वे कपड़ों को उतार लँगोटा कसकर पानी में कूद पड़ीं। जो तैरना नहीं जानती थीं वे घाट पर बैठे बैठे पानी में पैरों से कलोलें करती हुईं, तमाशा देखने लगीं। नसीरुद्दीन कभी इस समूह और कभी उस समूह को बढ़ावा देने लगा।

कुछ स्त्रियां तैरती-खेलती हुई झील में काफ़ी दूर निकल गईं। थक गईं, डूबने को हुईं और सहायता के लिये चिल्लाने लगीं। पास के समूह की कुछ उनको बचाने के लिए लपकीं। थकी हुई स्त्रियां उनसे चिपट कर अपने और उनके भी प्राणों को संकट में डालने की परिस्थिति में आगईं।

नसीरुद्दीन चिल्लाया—'इनको बचाओ! इनको बचाओ!!'

अनेक कण्ठों से ये ही शब्द निकले।

नसीर हाथ-पैर चलाने लगा, उछला-कूदा लेकिन पानी में नहीं उतरा। महल\ने उससे भी अधिक उछल-कूद की परन्तु और कुछ नहीं।

कनात के पीछे गुजरात के बहुत से नौकर खड़े थे। उनमें से कई एक तैराक थे। कनात को चीरकर दौड़ पड़े। पानी में कूदे और डूबतियों को बचाकर किनारे ले आये। वे स्त्रियां अचेत हो गई थीं किन्तु मरणासन्न नहीं थीं। उनका उपचार होने लगा। जिन पुरुषों ने रक्षा की थी वे निगाहें नीची किये हुये थे। चाहते थे कि सुल्तान की दृष्टि उनपर पड़ जाय और पुरस्कार प्राप्त करें।

सुल्तान की दृष्टि उनपर पड़ी। उसने तुरन्त उन लोगों को अपने निकट बुलाया। नीची आँखें किये वे उसके पास आये।

'तुम्हारा नाम?'

उन लोगों ने अलग अपने नाम बतलाये।

'तुम कनात के भीतर कैसे घुस आये?'

उन लोगों की घिग्घी बँध गई।

'किसने बुलाया था? किसके हुक्म से आये? बतलाओ! बतलाओ।'

उन्होंने मानव की पुकार सुनी थी। मनुष्य का शरीर पाया था। इसलिये घुस आये थे।

परन्तु उनमें से एक ही बात आयी 'महाराज ने हुक्म दिया था कि इनको बचाओ।'

'कमबख्तो ! तुमको हुक्म दिया था !! वह कड़का।

फिर कोई और क्यों नहीं कूद पड़ा ? उनके मन में उठा आतंक और भय के मारे कुछ न कह सके। थरथराने लगे।

नसीर ने आज्ञा दी 'इनका यह सिर धड़ से जुदा करदो जिसकी आँखों से यह सब देखा और हाथ भी काट दो।

खवासियों ने उन लोगों को कैद कर लिया। कनात के बाहर ले जा कर उनको मार दिया गया। सुल्तान की आज्ञा का अक्षरशः पालन होगया।

घटे बके से नसीर बोला 'ख्वाजा मटक सब मज़ा किरकिरा हो गया। कोई और मज़ा सोचो।

ख्वाजा मटक के होश कूच कर चुके थे।

नसीरुद्दीन ने कई खेल-खिलवाड़ सोचे और छांटे। जिनमें सहम बड़ी थी। परन्तु उन्हें सुल्तान को प्रसन्न करना था। कई खेल हुये। नीली झील ने वह सब देखा और अपनी अनवरत लहरों के भीतर रख लिया।

[५८]

सिकन्दर लोदी को ग्वालियर काँटे की तरह खटकता था। उसने अनेक बार आक्रमण किये परन्तु वह कभी सफल नहीं हुआ। सिकन्दर के भाई जलाल ने जौनपुर-बङ्गाल की ओर बगावत का झण्डा ऊँचा किया—अर्थात अपनी अलग सल्तनत कायम करने का प्रयास किया सिकन्दर जबर गया तो वह अन्तर्वेद की ओर खिसक आया। सिकन्दर जौनपुर को नष्ट कर चुका था। जौनपुर का सुल्तान हुसेनशाह जिसके नाम पर सङ्गीत का हुसैनी कान्हड़ा बना और विख्यात हुआ और जिसने जौनपुर को सुन्दर इमारतों से सजाया बङ्गाल की ओर भटक रहा था। सिकन्दर अन्तर्वेद में आने के लिये लखनऊ में ठहर गया। लखनऊ छोटा सा ही नगर था परन्तु उसका क्षेत्र बड़ा और बहुत उपजाऊ था। दिल्ली की आधीनता में जौनपुर के साथ लखनऊ का क्षेत्र भी आ गया।

लखनऊ में ठहरने के समय सिकन्दर के पास बहुत से अह्ल-मौलवी जमा हुये। सिकन्दर इनका बहुत पक्षपाती था। वह उनके राजनैतिक महत्व को जानता था।

इन मुल्लों ने अपने बड़प्पन को प्रकट करने के लिये ऐलान करवाया "यदि किसी हिन्दू में हिम्मत हो तो आकर धर्म के मामलों पर हमारे साथ बहस करे।"

और तो किसी ने इस चिनौती को स्वीकार करना न उपयोगिता नहीं देखी बोधन ने स्वीकार कर लिया। वह लगभग तीन वर्ष तीर्थ यात्रा करने के बाद अयोध्या से मथुरा वृन्दावन की ओर आ रहा था। शाही लश्कर का तमाशा देखने की लालसा के साथ बहस करने की भावना जाग पड़ी। शास्त्रार्थ करने के लिये तो वह उधार ही खाये बैठा रहता था। मौलवियों की मजलिस में जा पहुँचा।

मोटी धोती कनीदार मोटी पँचरंगी, घुटा सिर लम्बी चोटी पर मोटे कपड़े की छोटी सी पगड़ी। सब मक मठोर। नङ्गे पैर। कण्ठ-कारी

बड़ा हाथ में कुछ नहीं। सिपाही उसको देखकर हँसे। मुल्लों ने बोईं तालियाँ और मुट्ठियाँ कसीं।

थोड़ी देर में सभा भर गई। सिकन्दर आकर ऊँचे तख्त पर बैठ गया। बहस शुरू हो गई।

'खुदा एक है या कई है?'

'एक। केवल एक वही सब में रम रहा है।'

'हमारे यहाँ के सूफी भी यही कहते हैं पर वे गलती पर हैं। हम कहते हैं कि खुदा सबसे अलग है। तुम इसका उल्टा साबित करो।'

'परमात्मा सब में है और सबसे अलग भी। हमारे शास्त्र और ऋषि कहते हैं। यहाँ तक कि कवि भी कहते हैं। सब सीधा है और सब उल्टा।'

'कुछ तो माना तुमने। खुदा के पास पहुँचने का एक ही रास्ता है सिर्फ एक? या कई?'

'जितने मनुष्य हैं उतने ही रास्ते हैं। पर पहुँचते हैं सब एक ही ठौर पर।'

'यानी पेड़ों पत्थरों और जानवरों की भी पूजा करके?'

'उनकी या इनमें से किसी को भी अपने भीतर की पूरी श्रद्धा और भक्ति के फूलों में सौंपकर चले तो जरूर उस तक पहुँचने का सुभीता मिल जायगा।'

'यानी मूर्ति की पूजा करके भी?'

'हाँ।'

'पत्थर के टुकड़ों की?'

'वे पत्थर के टुकड़े नहीं हैं। मनुष्य की भावना के चिह्न हैं।'

'तुम्हारे योगी खुदा को निराकार ब्रह्म कहते हैं। फिर उस यकीन और इस पत्थर पूजा में कोई फर्क है या नहीं?'

है और नहीं भी। मानने और जानने वाले की जानकारी और पंडित के दर्जे पर निर्भर है।

'बेवकूफी और अक्ल के बीच में कोई फर्क है या नहीं ?'

'बहुत। बेवकूफी अक्ल का एक दर्जा है और अक्ल बेवकूफी का दूसरा दर्जा।'

'क्या बकता है ?' सिकन्दर चिल्लाया।

बोधन ने उत्तर दिया 'मैंने ठीक ही तो कहा जहाँपनाह।'

'बहस करने आया है या आलिमों की बेइज्जती करने ?' सिकन्दर चिड़चिड़ाया।

ब्राह्मण निर्भय रहा। निष्कम्प स्वर में बोला 'बहस करने आया हूँ सत्य की खोज करने और सच्ची बात बतलाने के लिये। मेरी बात अच्छी न लगी हो तो कहिए यहाँ से चला जाऊँ ?'

परन्तु न तो उसके मन में यहाँ से भाग जाने की इच्छा थी और न मौलवी चाहते थे कि वह मूँछें तान के सिर उठाकर चला जावे। सत्य की खोज किसी का उद्देश्य न था। दोनों एक दूसरे को पराजित करने की प्रेरणा से दीप्त हो रहे थे। बोधन के भीतर निर्भयता थी अक्खड़ता की पीठ पर बल।

इधर-उधर खड़े हुए मुसलमान सिपाही उस ब्राह्मण को पहले तो पागल समझे, फिर उसकी हिम्मत को देखकर उनके मानव हृदय ने उनसे कहा 'बहादुर है सिपाही है बिचारा कहीं [illegible] न जाय।'

एक मौलवी बोला 'कैसे जाओगे बिरहमन ? हार मान जाओ और इस्लाम को कबूल करो तब यहाँ से जा सकोगे!'

'मेरा धर्म किस धर्म से कम है जो मैं अपने को छोड़कर दूसरे का रास्ता पकड़ूँ ?' बोधन ने निर्भयता के साथ कहा।

'यह कुफ़्र है ! यह कुफ़्र है !! मौलवी चीख पड़े ।

'कहाँ के रहने वाले हो ? सिकन्दर ने प्रश्न किया ।

उसने उत्तर दिया —'ग्वालियर का ।

'ग्वालियर का ! मानो मानसिंह का जासूस !!

'मानसिंह का जासूस नहीं हूँ । मानसिंह से तो लड़कर निकला हूँ कई बरस हो गये ।

'ग़लत ! झूठ !!

बहस बन्द हो गई । सवाल था बोधन का अब क्या किया जाय ।

सुल्तान ने मौलवियों को आदेश दिया इसकी तकदीर का फ़ैसला आप लोगों के सिपुर्द किया जाता है । तै करिये ।

बोधन की समझ में अब आया कि क्या होने वाला है । उसको अपने भीतर एक अकुलाहट दिखलाई दी जैसे उसने अपने जीवन में पहले कभी अनुभव नहीं की थी ।

मौलवियों को फ़ैसला देने में देर नहीं लगी । थोड़ी देर वे परस्पर बात करते रहे जिसको बोधन नहीं समझा ।

मौलवियों ने फ़ैसला दिया इसलाम क़बूल करो वरना सिर काट कर फेंक दिया जायगा ।'

स्पष्ट, निष्कम्प स्वर में बोधन ने निर्णय के सामने सिर झुकाया—अपना धर्म नहीं छोड़ूँगा । सिर काट कर फेंक दो क्योंकि वह मेरा नहीं । मैं वह सिर हूँ ही नहीं ।

'अब भी सूफ़ियों की सी बक ! सिकन्दर के मुँह से निकला । बोधन संगमरमर की मूर्ति की तरह अचल खड़ा रहा । उसने छाती पर हाथ बाँध लिये थे ।

मुसलमान सिपाहियों के मन में उमड़ा 'या अल्लाह यह क्या हो रहा है ! इस ग़रीब को क्यों यों ही मारा जा रहा है ?

परन्तु सिकन्दर और मुल्लों के राज्य में सिपाही केवल थे और न अपनी करनी को जानते थे।

बोधन जल्लादों को सौंप दिया गया।

मरने के समय वह फिर स्थिर था शान्त था शंकित और निर्भय। वह सब में रम रहा है मेरे और जल्लाद के भीतर वही है, जल्लाद की तलवार और मेरे सिर में भी वही है। सब में वही है। सब बराबर हैं। माटी और पत्थर में वही है! दोनों में वही है? फिर मैंने उन दोनों के बीच में भेद क्यों किया? पर वह तो वर्णाश्रम की बात थी। जो कुछ भी हो अब किसी के लिये मनमें कोई बुराई नहीं। सिकन्दर के लिए नहीं मौलवियों के लिए नहीं किसी के लिये नहीं।

जल्लाद उसकी शान्त-गम्भीर मुद्रा को देखकर एक क्षण के लिये विचलित हुआ।

बोधन ने कहा क्यों विलम्ब कर रहे हो? चलाओ।

जल्लाद का हाथ निर्बल पड़ा और एक क्षण के लिये तलवार काँप गई।

बोधन को अपने भीतर कुछ और जगमगाहट दिखलाई पड़ी।

'चलाओ, बोधन ने कर्कशता के साथ जल्लाद को दुहरा दी।

तलवार उसकी गर्दन पर चली और वह अपने वाञ्छित लोक में पहुँच गया।

सिकन्दर और मौलवियों को बोधन के प्राणान्त की सूचना दे दी गई।

मुसलमान सैनिकों को उस निरीह ब्राह्मण का कतल नहीं सुहाया। कुछ सरसराहट हुई। सिकन्दर और मौलवियों में परामर्श हुआ।

फिर उनने जो कुछ किया उससे इतिहास के पन्ने सदा के लिये कलुषित हो गये।

मूदमार के ग्रन्थों को सिपाहियों में बाँटा और उनकी मरमराहट को कुंठित कर दिया।

परन्तु मूर्तियों और मन्दिरों के तोड़ने फोड़ने में जो बाढ़ उत्तर भारत में कहीं फूट पाई थी वह एक बोधन के वध ने फूंक दी। मस्तवोंद और मस्तवोंद की दोनों दिशाओं के लोगों की छातियाँ मानो औम्पार की बन गई।

सिकन्दर और सिकन्दर के मुल्लों सरदारों ने सोचा, अब हुआ दिल्ली की सल्तनत का पाया मजबूत। उन्होंने नहीं देख पाया कि पाये काँप गये। दिल्ली की सल्तनत को प्रचण्ड बनाने में दो बड़ी बड़ी बाधायें और थीं—एक ग्वालियर दूसरा मेवाड़। मेवाड़ कुछ दूर पड़ता था परन्तु ग्वालियर तो आँखों का काँटा था। दिल्ली से ग्वालियर आक्रमण करने के लिये आना बहुत समय ले जाता था इसलिये आगरे को बसाने बढ़ाने और उसको एक बड़ी छावनी का रूप देने का सिकन्दर ने संकल्प किया। वह आगरे को दूसरी राजधानी का रूप देने पर तुला पड़ा। यहाँ से ग्वालियर को सहज ही नष्ट कर दिया जायगा और मेवाड़ का दमन भी कर दिया जायगा सिकन्दर ने सोचा।

[४६]

ग्वालियर किले की पहाड़ी का उत्तर-पूर्व वाला छोर नीचे की ओर कुछ बढ़ गया है। चार वर्ष में उसके ऊपर मृगनयनी का गूजरी महल बन गया। ऊपर के कोट से इस के कोट का भी सम्बन्ध जोड़ दिया गया। नीचे वाले कोट के नीचे से राई गांव वाली सांक नदी की लाई हुई नहर गूजरी महल के नीचे वाले खण्डों में आ गई और उसके पानी के निकास का भी प्रबन्ध हो गया। गूजरी महल लगभग ढाई सौ हाथ लम्बा और सवा सौ हाथ चौड़ा। दो खण्ड ऊपर, दो खण्ड नीचे। नीचे के खण्ड के बीचों बीच साफ नदी की नहर के जल के लिये हौज और चारों ओर दोमंजली दालानें। ऊपर के खण्डों के बीच में विस्तृत आंगन चारों ओर सुरम्य अटारियां और छतें। बाहर और भीतर से मृगनयनी के रूप-स्वरूप का प्रतिबिम्ब—अत्यन्त सीधा, सलोना और छबीला। कहीं के द्वार किवाड़ मण्डप के लता-वितान और बन्दनवारों के तोरण। पूरे भवन में वैसी मानों मणियां और लाल जैसे कोई और सुन्दर आभूषण वह पहिनती थी। पूरा भवन चारु से अलंकारों में सलोना हुआ हुआ मानो ये अलंकारों से पूरा भवन सजाया हुआ।

मृगनयनी दो पुत्रों की माता हो गई थी। एक का नाम राजसिंह दूसरे का नाम मानसिंह—नामी उसको लाज में राजे और बाले कहती थी। गूजरी महल ऐसा लगता था मानों कोई अत्यन्त सुन्दर माता अपनी गोदी में दो होनहार सिंह-शावकों को लिये शान्ति के साथ बैठी हो। गूजरी महल के ऊपर किले की पहाड़ी की ऊंची गाढ़ी दीवार और उसके दक्षिणी कोने पर मानमन्दिर। अब यह पूरा बन कर तैयार होने वाला ही था। लगता था जैसे वह दीवार मानसिंह का लम्बा चौड़ा हो जैसे मानमन्दिर का मानसिंह वज्र-मुष्टि में उस खाड़े को लिए हुये अपनी प्रजा की रक्षा के लिये खड़ा हो।

वैसे मान-मन्दिर भी तैयार हो गया था केवल ऊपर के कमरों के बाहरी पत्थरों के कुछ भागों में केले के पत्तों के उभार नहीं बिठलाए जा सके थे। एक दिन आया जब यह काम भी पूरा हो गया।

गृह प्रवेश के लिये होली के उत्सव की रंग-पंचमी का मुहूर्त रक्खा गया। होली के उत्सव में जनता वैसे ही मस्त थी रंग-पंचमी के दिन तो मस्ती में डूबने उतराने ही लगी। मानमन्दिर और गूजरी महल के साथ जनता के मन का अपनापा स्थापित था।

गृह प्रवेश का मुहूर्त आने को हुआ।

सैनिकों ने केसरिया साफे बांधे जो मानसिंह का सुवर्णध्वजा ऊँचे केसरिया झण्डे से होड़ सी लगा रहे थे नगर की स्त्रियाँ रंग-बिरंगेपन में फूट पड़ीं। नायक बैजू ने नये कपड़े पहिनते बरसते पुराने पहिन लिए पगड़ी जरूर नई जगमगाती हुई, वीणा को पोंछ, मांजा, फूलों से सजाया और सरस्वती का पूजन किया। मानसिंह मृगनयनी को गूजरी महल से मानमन्दिर में ले आया। नीचे से मानमन्दिर ऐसा लगता था जैसे गगन वहीं धरती-कुञ्ज में विष्णु ने मुस्कान के साथ वरदहस्त पसार दिया हो। केले के पत्तों के यथावत रंग और चित्रण ने पत्थर की जालियों में हाथी नाहर और अन्य पशुओं के बेखटके विहार ने मृगनयनी को यही कल्पना दी। भीतर पहुँचकर ऊपर के खण्ड के पहले आंगन में पश्चिम की ओर विष्णु का मन्दिर उसकी चारों ओर पत्थर में सूक्ष्म अनुपात की विविध प्रकार की जालियाँ। आंगन की दूसरी ओर विशाल पुस्तकालय और तीसरी ओर सभा भवन जिसमें गायन-वादन इत्यादि होता था। विष्णु मन्दिर के सामने दूसरा कक्ष था जिसकी बनावट साज-सिंगार पहले से कुछ भिन्न थी परन्तु उतनी ही सुन्दरता में डूबा हुआ।

मृगनयनी ने कहा 'बहुत ललित और सुन्दर है। आपकी कल्पना में जो कविता रही है वह मानमन्दिर में अपने पूरे वैभव और शृङ्गार के साथ आ बैठी।

'मेरी कविता नहीं तुम्हारी कविता। और कारीगरों के ध्यान की कविता। मेरे स्वर कारीगरों को जो सूझ नहीं दे सके उसको तुम्हारे देखे हुए मेरे भाव ने उसको दिया। कारीगरों ने योग साधा उनके ध्यान में वह भाव मूर्त हुआ और टाँकी हथौड़े ने तुम्हारी कविता और मेरे भाव को पत्थरों में उतार कर बसा दिया।

मृगनयनी को अपनी उस कल्पना की याद आ गई। रात का समय मचान पर खेत की रखवाली के लिए बैठी हुई चाँदनी में निकट बहने वाली नदी की लहरों की चमक और मचान की बाँसों की काँपती झूम दूर ऊँचे पहाड़ हरे भरे विशाल वृक्षों के पुञ्ज और जङ्गल में स्वच्छन्द घूमने वाले पशु। उसने सोचा यह सब साकार हो गया और ऊपर के कलश ऐसे लगते हैं जैसे पहाड़ के लम्बे समतल पटपरे पर गुम्मट बाँधे हुये अचार और खिरनी के पेड़ हों। मृगनयनी आनन्दमग्न हो गई। मानसिंह ने देखा उसके चेहरे पर यौवन का लावण्य और आशा का सौन्दर्य एक दूसरे से होड़ सी लगा-लगाकर परस्पर घुल रहे हैं।

'आज तुमको नायक बैजू की नई परिपाटी का बहुत अच्छा गायन वादन सुनने को मिलेगा।' मानसिंह ने कहा।

वह उत्साह के साथ बोली 'और इसके उपरान्त मैं भी अपने यहाँ आपको कुछ सुनाऊँगी और ताण्डवनृत्य सिखलाऊँगी। मैंने तैयार कर लिया है।

'अवश्य अवश्य तुम जो कुछ भी न कर डालो वह थोड़ा है।

अच्छा! अब धन्य लगे बनाने!

'तो तुम मान कर जाओ मैं मनाने लगूँगा।

'यहाँ चलिये मेरे यहाँ फिर देखूँगी आपको कितना मनाते हैं। आज रंगपञ्चमी है सँभलकर आना।

अच्छा तो वहीं देखें कौन किसको छकाता है।

मानको हरा दूँगी।

'उस हार में भी मेरी ही जीत रहेगी।

'वाह! वाह!! चित्त भी मेरा और पट्ट भी मेरा!!!

वे दोनों हँस पड़े। मान मन्दिर का ऊपरी खंड जहाँ वे दोनों खड़े थे मानो उस हँसी में अपनी हँसी मिला रहा था।

नीचे के खण्ड में चहल-पहल होने लगी।

मुहूर्त आगया अब चलो मानसिंह ने कहा।

वे दोनों अपने अपने स्थान पर जा पहुँचे। विष्णु-मन्दिर में पूजन हुआ और उसके बाद गायन-वादन।

राज-भवन के ऊपरी खण्ड में स्त्रियों के बैठने के लिये जालीदार स्थान था। वहाँ आठों रानियाँ मृगनयनी लाखी और नगर के कुछ बड़े लोगों की स्त्रियाँ बैठ गईं। लाखी मृगनयनी के निकट बैठी थी। वहीं नगर वासियों की कुछ स्त्रियां।

नायक बैजू ने होरी गाई।

साजनी मान न करिये होरी के दिनन में।
कौन तिहारो बान..........
बाउ दिना को सोच चाहिक बैठी हो
मोहे जान। साजनी मान न करिये।

नायक बैजू ने अपने गाने में मधुरता और कारीगरी के मेल की पराकाष्ठा कर दी। विजय जंगम थोड़ी ही देर उसका साथ कर पाया। गले का साथ बाजा नहीं कर सकता कह कर उसने हर्ष के साथ अपनी हार को स्वीकार किया और बैजू का साथ देने के लिये तम्बूरे को बजाता रहा।

दिन होने के कारण ऊपर के खण्ड में कोई रानी नहीं ऊंघी या सोई परन्तु रसास्वादन के साथ साथ बीच बीच में उनकी बात-चीत का

क्रम नहीं टूटा। जब सभा भवन में गायन चल रहा था बड़ी रानी ने एक दासी के द्वारा दोनों के पास में दो बड़े बड़े पान भेजे एक मृगनयनी के लिये दूसरा लाखी के लिये।

पान के सामने पहुँचते ही एक पुरवासिनी ने दूसरी से आँखें मिलाईं नीचे की ओर फिर मृगनयनी की तरफ कीं। इनमें अनायास ही व्यंग प्रकट हो गया। मृगनयनी ने देख लिया। थाल में से पान को उठाया मस्तक से लगाया और गांठ में बांध लिया। लाखी ने गायन की ओर से ध्यान को हटाकर पान को उठाया मस्तक झुका कर प्रणाम किया और मुँह में डालने को हुई ही थी कि मृगनयनी ने उसका हाथ दबा दिया। बोली 'आदर के साथ गांठ में बांधलो।

आँख के संकेत से लाखी ने पूछा। आँख के ही संकेत की भाषा में मृगनयनी ने समझा दिया कि इसमें कुछ है खाओ मत।

बोली 'सम्मान का पान है बड़े भागों मिला है गांठ में बांधलो। लाखी ने बांध लिया। दासी सिर नवाये चली गई।

लाखी और मृगनयनी का ध्यान संगीत पर से उचट गया। लाखी जानने के लिये आतुर हो उठी। मृगनयनी की उत्सुकता शान्ति के आवरे में ढकी थी। वह उन पुरवासिनियों से कुछ पूछने के अवसर की खोज में लग गई। लाखी को उसने धैर्य धरे रहने का संकेत किया। जब बैजू का गायन 'वाहवाहों' के बीच में थमा मृगनयनी ने आँख चुराकर गुणमोहिनी की ओर देखा। वह खिन्न उदास और चंचल सी थी।

उपयुक्त अवसर पाकर मृगनयनी ने पुरवासिन से धीरे से पूछा 'क्या बात थी? पान खाने से क्यों रोक दिया था?

'कहाँ रोका था? रोका तो नहीं था, महारानी जी। पुरवासिन ने कहा परन्तु आँखें उसकी कुछ कहने के लिये उतावली सी हो रही थीं।

'आँखों से बर्जा था। बतलाओ न। मैं तुम्हारे ऊपर किसी प्रकार की भी आँच नहीं आने दूंगी वचन देती हूँ।

'बड़े लोगों की बातों को कौन कहे महारानी जी।

'बेखटके कहो। मैं विनती करती हूँ। कोई नहीं जान पावेगा।

'इन पानों में विष का संदेह है।

'क्यों? कैसे?

'बड़ी महारानी जी का आप पर कोप है।

'सो तो है पर आपको सन्देह क्यों हुआ?

'आप उनके महल में नहीं आती-जाती वह आपके में नहीं आती-जाती बस्ती भर जानती है।

'इतना ही या और कुछ?

'आपको नहीं मालूम? बस्ती भर जानती है।

क्या?

'यह कि उन्होंने एक बार विष दिया था परन्तु आपने भोजन नहीं किया। कुत्तों ने खाया सो वे तड़प-तड़पकर मर गये।

'कब की बात है? बहुत दिन हो गये। याद नहीं पड़ती।

'जब लाखारानी का ब्याह हुआ और उन्होंने भोज दिया।

'अच्छा! ठीक है!!

मैं हाथ जोड़ती हूँ महारानी जी किसी को मालूम न होने पावे। नहीं तो हमारा घर भर आफत में पड़ जावेगा।

विश्वास रक्खो। आपको यह बात कब मालूम हुई?

'कई बरस हो गये तभी मालूम हो गई थी। बस्ती भर में फैल गई थी। आपसे किसी ने नहीं कहा!

लाखी ने भी इन बातों का अधिकांश सुन लिया।

गायन की समाप्ति पर समागम में एक विवाद उठ खड़ा हुआ।

विजय ने अनुरोध किया था कि तराना गाया जाय।

बैजू बोला 'तराने में गले को नचाने के सिवाय और है ही क्या ?'

विजय ने बतलाया 'जैसा आपकी नई परिपाटी में बहुत कुछ है वैसा ही इसमें भी बहुत कुछ है। गोपाल नायक और अमीर खुसरो ने मिल कर इस परिपाटी को चलाया था।'

गोपाल नायक के सिवाय बैजू और किसी को मान्यता नहीं देता था। गोपाल को दो सौ वर्ष हो चुके थे इसलिये उसके नाम पर पुरातनता की छाप थी। गुनगुनाने लगा।

थोड़ी देर बाद बैजू ने कहा 'मैंने तराना भी सीखा था परन्तु गाता नहीं हूँ।

विजय ने हठ किया। मानसिंह ने संकेत से समर्थन।

'अभी तो नहीं गाऊँगा चाहे कोई भी मुझ का क्यों न हो जाय' बैजू बोला और उठ खड़ा हुआ।

मानसिंह हँस पड़ा। मनाते हुये से कहा 'बैठिये बैठिये। मो सिर वाला नहीं रावण दस सिर वाला था।

बैजू बैठ गया। गम्भीरता के साथ बोला 'रावण का जन्म नहीं हो सकता। रामचन्द्र ने अपने निज के बाण से मारकर उसको तार दिया था।

सभा को विसर्जित करते हुये मानसिंह ने कहा — आपको और आचार्य विजयजङ्गम को गूजरी महल में चलना है।

सभा विसर्जित हो गई। ऊपर के खण्ड से स्त्रियाँ भी चलने लगीं।

मृगनयनी ने बड़ी रानी के सामने आकर कहा 'आप मेरे घर पधारेंगी ?

'मेरा सिर दुख रहा है। नहीं आ सकूँगी। जब से यहाँ गान आये तब से दुखन लगा है।

इसी डर से मैंने नहीं खाया। आप उस घर में पधारें तो पान वहीं खिलाऊँगी उनको भी नहीं जिनको मैंने गांठ में बांध लिया है।

सुमनमोहिनी की दृष्टि एक क्षण के लिये ऊपर उठ कर नीची हो गई।

'मैं अब जाऊँगी' कह कर वह चली गई।

नगर की वे स्त्रियाँ कनखियों देखती हुई जा रही थीं। बात कहीं उधर तो नहीं गई उनको शंका थी उपेक्षा की दृष्टि के साथ मृगनयनी ने आश्वासन दिया। गूजरी महल जाकर उसने पानों को खोला। उसमें कुछ था। परन्तु वह घटना को दबाना चाहती थी इसलिये पान फेंक दिये। राजा से नहीं कहूँगी उसने निश्चय किया।

[६]

गूजरी महल के उत्तरीय भाग के पश्चिमी पक्ष में एक खासा बड़ा सभा भवन बनाया गया था। उसके सिरे पर एक छोटा सा मंच रक्खा हुआ था। मञ्च पर नटराज की सोने की मूर्ति। इसको विजय जङ्गम की देख-रेख में बनाया गया था।

नटराज की मूर्ति एक विकसित कमल पर खड़ी थी। गोलाकार कमल की पंखड़ियों से उठती हुई ज्वाला का एक मण्डल बनाया गया था। इस मण्डल से मूर्ति की दोनों ओर लौ निकलती हुई रखी गई थी। मूर्ति चतुर्भुजी थी। एक दायें हाथ में डमरू दूसरा दायां हाथ वरदमुद्रा में। डमरू वाले हाथ को उस ओर वाली ज्वाला की लौ छू रही थी। एक बायें हाथ में अग्नि दूसरा कमर के पार्श्व में पड़े हुये एक बौने की ओर संकेत करती मुद्रा। आग वाले हाथ को दूसरे पार्श्व की लौ छू रही थी। कमर में मणियों की करधोनी। कन्धे पर जनेऊ। एक कान में पुरुषों का जैसा कुण्डल दूसरे में स्त्रियों की जैसी बाली। जैसे कण्ठ में मुण्डमाला एक सर्प पावन झूमती-झूलती हुई। एक जटा में बाईं ओर कुंडलियां मारे हुये नाग छोटा सा मुण्ड और गङ्गा का प्रतिबिम्ब और ऊपर बीच का चन्द्रमा। शरीर के बायें भाग पर व्याघ्रचर्म।

मानसिंह विजय और बैजू ने मूर्ति को प्रणाम किया। मानसिंह फाटक वाले द्वार में गया। सभा भवन और उस कक्ष के बीच पत्थर की जाली ही थी।

मृगनयनी नटराज शिव के वेश में थी और लाखी वीणा लिये हुये सरस्वती के वेश में। मृगनयनी शिव वेष में होते हुये भी अपने सब अङ्गों को भली-भांति ढके हुये थी।

मानसिंह ने कहा सभा भवन में चलो। पहिले ताण्डव नृत्य होगा फिर उसका गायनवादन।

'उनके सामने नहीं होगा ताण्डव नृत्य।

'ये तो तुम्हारे गुरुजन हैं। एक से गायनवादन सीखा, दूसरे से शास्त्र।

'सिवाय आपके और किसी पुरुष के सामने न मैं नृत्य करूँगी और न लाखी।

'तुम पर्दा नहीं करतीं फिर यह क्या ?

'पर्दा न करने का यह प्रयोजन थोड़े ही है जो आप कह रहे हैं।

'अच्छा तो उनका गायन सुनने के लिये तो वहाँ चलो।

'गायन भी हम दोनों यहीं से सुनेंगी।

मानसिंह चला गया। मृगनयनी के उस आचरण से वे दोनों संतुष्ट हुये बैजू विशेष कर।

गायनवादन के उपरान्त वे दोनों चले गये। तब मृगनयनी और लाखी सभा भवन आईं।

मृगनयनी ने शिव ताण्डव स्तोत्र को गाया और लाखी ने वीणा पर बजाया। फिर मृगनयनी ने ताण्डव नृत्य किया।

जैसे सूखे काठ में अग्नि विद्यमान है उसी प्रकार शिव-शक्ति जड़ और चेतन में निहित है। शिव अपने ताण्डव नृत्य से शक्ति को जड़ और चेतन में स्पन्दित और स्फुरित करते हैं। जीवन और आकार प्रकार में शिव की नृत्य-लीला प्रकट होती है। विश्व की समूची क्रिया को अनादि शिव का ताण्डव व्यक्त करता है। चार हाथ चारों दिशाओं में अखिल व्यापकता डमरू नाद और शब्द जिससे विश्व का विकास बना वरदहस्त रक्षा अग्नि विश्वव्यापी शक्ति चौथा हाथ नृत्य के लिये उठे हुये चरण के प्रति उठे हुये हाथ के शरण-दान को प्रकट करने वाले। अर्धचंद्र नापते हुये ध्यान-केन्द्र को और नाग धारण की स्थिति को बतलाने वाले। छन्द के साथ सम्बन्ध इसी तांडव

द्वारा सम्भव। शिव के हिमालय से आने वाली गङ्गा भारत को समृद्धि और श्रद्धा देने वाली। एक कान का कुण्डल और दूसरे कान की बाली पुरुष और शक्ति की द्योतक। कमर की मणि मेखला जागी हुई शक्तियों को कमर के नीचे न जाने देने और ऊपर की ही ओर प्रवाहित कर देने के लिये—ऊर्ध्वरेता बनाने के लिये—कटिबन्ध। कमल चिन्ह का खोपा शिव की अनन्त पावनता का प्रतीक। कमल के चारों ओर का प्रभा-मण्डल शिव के विश्वव्याप्त ओज का प्रतिबिम्ब। मुण्ड षड्द्वार के दमन का द्योतक।

मृगनयनी ने ताण्डव की इस सात्विकता को अपने नृत्य द्वारा श्रद्धा के साथ मूर्त किया। नृत्य के अन्तिम भाग की अवस्था में जब मृगनयनी स्थिर हो गई तब मानसिंह के मन में हिलोरें आ गई। अत्यन्त मनोहर—मन को बहुत ऊँचे स्तर पर ले जाने वाला बहुत ही मोहक—हृदय में गाढ़ी श्रद्धा उत्पन्न करने वाला विलक्षण सुन्दर—वासना को न उकसा कर दृढ़ता को देने वाला। मानसिंह को मृगनयनी के सौन्दर्य में इतना वैभव प्रतीत हुआ जितना उसको प्रथम मिलन की घड़ी में भी अनुभव नहीं हुआ था।

मानसिंह को लगा स्त्री का गौरव सौन्दर्य-महत्व स्थिरता में है जैसे उस नदी का जो बरसात के मटमैले तेज प्रवाह के बाद शरद में नीले जल वाली मन्थरगति-गामिनी हो जाती है—दूर से बिल्कुल स्थिर और शान्त बहुत निकट से प्रगति वाली।

मानसिंह ने आह्लाद के साथ कहा 'बड़ी रानी यदि आज यहाँ आतीं तो गाँठ में बाँध कर यहाँ से कुछ ले जातीं।'

'मन्दिर से न भी गाँठ में कुछ बाँधकर लाई थीं' मृगनयनी के मुँह से निकल गया। उसने तुरन्त अपना दमन किया।

'क्या?' मानसिंह ने पूछा। लाखी मृगनयनी का मुँह ताकने लगी।

मृगनयनी के होठों पर मुसकान आ गई—जैसे शिव ताण्डव के समय मुस्करा गये हों।

बोली 'विष्णु की मुस्कान का प्रसाद संगीत के मिठास का आनन्द।'

मानसिंह को सन्देह हुआ।

उसने प्रश्न किया 'लाखी रानी क्यों नहीं आई?'

मृगनयनी ने उत्तर दिया 'अपना-अपना मन। आप अन्तःपुर की सब चिन्ताओं को छोड़कर अब बाहर की बातों पर ध्यान दीजिये।'

आह भर कर मानसिंह ने कहा 'केवल एक मन्दिर राई में और बनवाना है। बोधन को वचन दिया था। बोधन की प्रेतात्मा को शान्ति मिलेगी।'

वे दोनों जरा चौंकीं।

उनके प्रश्न करने के पहले ही मानसिंह ने बतलाया 'बोधन को सिकन्दर लोदी ने लखनऊ में मरवा डाला।'

मानसिंह ने बोधन के वध की जितनी और जैसी कथा सुनी थी सुना दी।

'समाचार कब आया?' मृगनयनी ने उदासी के साथ पूछा।

लाखी दूसरी ओर देखने लगी।

'अभी-अभी' मानसिंह ने उत्तर दिया।

'दुष्ट बादशाह को क्या मिल गया होगा एक दीन ब्राह्मण के मार डालने से?' मृगनयनी धीरे से बोली।

फुसफुसाते स्वर में लाखी ने कहा 'दीन तो नहीं था वह। बड़ा बातूनी और बहुत हठी।'

मृगनयनी की शान्त-दृष्टि में भर्त्सना कौंध गई, लाखी ने नहीं देखा।

मानसिंह बोला 'बिहारसिंह मर गया बोधन को मार डाला अन्तर्वेद के मन्दिरों और मूर्तियों को ध्वस्त किया सिकन्दर ने। देखूंगा।'
मानसिंह ने सिकन्दर के अन्य अत्याचार नहीं सुनाये।

फाटक बाहर कुछ दूरी पर हल्ला सुनाई पड़ा। मानसिंह सुनने गा।

'रंगपंचमी का हुल्लड़ जान पड़ता है।' उसने कहा।

'इतना!' मृगनयनी ने आश्चर्य प्रकट किया।

मानसिंह ने द्वारपाल को दौड़ाया। उसने लौटकर बतलाया सैनिकों भाँग पी कर स्वाँग बनाया है उसी का हुल्लड़ है।

वे दोनों ऊपर के खण्ड के झरोखे में गये। वहाँ से उस हुल्लड़ को खने लगे। भिन्न भिन्न प्रकार के बीभत्स रूपों में सैनिक बौखला रहे थे। कुछ गधों पर सवार थे। एक सवार हाथ में फूटा तुम्बा पर फटे बाँस की डाड़ी को बाँधे हुये विजय की वीणा का स्वाँग कर रहा था। दूसरा जू के गायन का। कुछ मुछाड़िये सैनिक स्त्रियों के विकृत वेष में थे।

मृगनयनी यह कहकर लाखी के साथ हट आई 'कितने भद्दे हैं ये लोग!'

मानसिंह कुछ क्षण देखता रहा। हुल्लड़ वाले संगीत की बहस का व्यङ्ग करते हुये एक दूसरे के ऊपर फूटी वीणा और टूटे तम्बूरे की मार बरसाने लगे। पहले केवल छल-खिलवाड़ रहा फिर असली मारपीट हो पड़ी। स्त्री वेषधारी पुरुषों ने भी मारपीट में भाग लिया। कुछ और दौड़ पड़े। जो इस बवाल में देर नहीं लगी और सच्ची गुत्थमगुत्था हो पड़ी। सैनिक अपने-अपने हथियारों के लिये चिल्लाने और चिनौती देने लगे।

मानसिंह वहाँ से उतर कर फाटक पर आया। द्वारपालक परेशानी में थे किंकर्तव्यविमूढ़।

मानसिंह हुल्लड़ के पास पहुँचा। उसने चिल्लाकर निवारण किया। सैनिक भङ्ग पिये थे परन्तु राजा के आतंक ने उनको बरबस किया और वे वहाँ से अपने ठौर-ठियों पर चले गये। मानसिंह प्रबन्ध करके लौ-

आया। गूजरी महल के पहले फाटक के बाईं ओर निकटवर्ती हिंडोला फाटक पर कुछ सैनिकों में ताव था। उनको शान्त करके वह मृगनयनी के पास आ गया।

बोला तुम्हारे ताण्डवनृत्य ने बोधन के वध की विफलता को दबाया और लक्षित भाव व्यक्त किये। पर इस हुल्लड़ ने मन को ग्लानि से भर दिया है।

'होली के ये चार पाँच दिन लोगों को मतवाला कर देते हैं।' मृगनयनी ने कहा।

'इतना मतवाला! मान मन्दिर की विशालता और सुन्दरता का इनके मन पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा!! नायक बैजू और आचार्य विजय की नकल उतारी इन अभागों ने!!! और वह भी किले के भीतर और तुम्हारे महल के निकट!!!!' मानसिंह ने अपनी खीझ प्रकट की।

मृगनयनी कुछ क्षण सोचती रही।

बोली 'ऐसे लोगों के मन पर कला का आदर धीरे धीरे ही बैठता है।

'नगर में जगह जगह लोग नायक बैजू की परिपाटी सीखने लगे हैं। उनमें कला की समझ आने लगी है कला का आदर करते हैं। पर ये मेरे इतने निकट रहते हुए भी उजड्ड और भद्दे ही बने रहे!'

ये लोग सीखें भी तो कुछ नहीं है।

मेरा विचार है यहां संगीत का विद्यापीठ स्थापित करूं। नायक बैजू की परम्परा को देश भर के लिये बना दूं। ये लोग भी सीखेंगे और सुधरेंगे।

'यह अच्छा विचार है। संगीत विद्यापीठ को स्थापित करिये।

'तुमने चतुर मुस्कान वाले विष्णु भगवान की जिस प्रकार की मूर्ति का सुझाव दिया था वह मान-मन्दिर में प्रतिष्ठित होगई है। उसी प्रकार

एक मूर्ति और छोटे से सुन्दर मन्दिर का निर्माण राई के लिये कराऊँगा। मैंने बोधन को वचन दिया था।

'यह भी बहुत अच्छा विचार है। इसे भी पूरा करिये। और भी कहीं मन्दिर बनवाइयेगा? संगीत के विद्यापीठ?

मानसिंह को मृगनयनी के स्वर में व्यंग्य की झलक सी मालूम पड़ी। उसने कौतूहल के साथ टकटकी लगाई। मृगनयनी मुस्कराई। आँखों में धीरता और स्थिरता थी मुस्कान में वैभव की परछाईं।

'आपकी ललित कलायें ग्वालियर के नाम को अमर कर देंगी। इसी लिये पूछा।

'तुम्हारे मन में जो कुछ हो कहो तुमको मेरी सौगन्ध है।

'अपनी सौगन्ध कभी मत रखाया करिये। मैं तो आपकी दासी हूँ क्या कहूँ।

'दासी नहीं हो देवी हो। मेरे हृदय की आधीश्वरी। बतलाओ, मैं कुछ भ्रम में पड़ गया हूँ।

मैंने ताण्डव नृत्य की योजना जान बूझकर की थी। कुछ प्रयोजन था।'

क्या? मैं जानना चाहता हूँ। तुमको जैसा आज पाया वैसा कभी नहीं देखा था।

आप पाण्डव वंश के हैं—अर्जुन की सन्तान। क्या मुझको स्मरण दिलाने की आवश्यकता है?

इसको कोई भी तोमर नहीं भूल सकता है और न इस बात को कि मेरी रानी मृगनयनी कृष्ण के वंशजों से सम्बन्ध रखती है।

मैं कुछ भी हूँ आपकी हूँ जो अर्जुन और भीष्म के थे। आर्यावर्त की रक्षा के लिये अब आप क्या करना चाहते हैं? क्या इस तरह के झमेलों

सैनिकों के हाथों उसकी रक्षा होगी जिनके विनोद का रूप वह है जिस को अभी अभी देख आई हूं ?

मृगनयनी की आंखों में तेज था परन्तु भर्त्सना नहीं था।

मैं इन सैनिकों को कड़ा दण्ड दूंगा —मानसिंह ने आवेश के साथ कहा —'इस महल के फाटक पर ! और ऐसे समय !

मृगनयनी को अपने गांव के किसानों की होली की याद आ गई।

'दण्ड देने से कुछ नहीं होगा महाराज। उनको सदा चौकस बनाये रखने का प्रयत्न किया जाना चाहिये। इधर कलाओं की वृद्धि हुई है उधर बाण विद्या और युद्ध-विद्या का अभ्यास कम हो गया है। अपने सैनिक किसान-घरों से आये हैं। हमारी कला उनके विवेक में नहीं बैठी इसलिये अपनी वाली पहिचानी को ले उठे और हमारी कला की खिल्ली भी उड़ाने लगे। इन कलाओं को अधिक समय देंगे तो वे अवसर पाते ही अपनी वासनाओं पर उतर उतर आवेंगे।

इस व्याख्या से मानसिंह का अन्तर्मन सहमत नहीं हुआ। वह सोचने लगा।

मृगनयनी ने कहा मैंने महाभारत में पढ़ा है कि देश की रक्षा शस्त्र द्वारा हो जाने पर ही शास्त्र का चिन्तन हो सकता है। मेरा यही प्रयोजन है और कुछ नहीं।

बिलकुल ठीक कह रही हो मैं मानता हूं। और अब यही करूंगा। इसी ओर ध्यान दूंगा। केवल राई में एक मन्दिर बनवाने की साध है सो वह भी होता रहेगा और वह भी और केवल एक संगीत-विद्यापीठ की स्थापना ग्वालियर में। इसका मुहूर्त हो गया है। मैं घोषणा करके यहां आया हूं।

अच्छा है। परन्तु महाराज कला कर्त्तव्य को सजग किये रहे, भावना विवेक को सम्बल दिये रहे, मनोरथ और धारणा एक दूसरे का हाथ पकड़े रहें। मुझको कुछ और नहीं कहना है।

'यही करूँगा। मैं प्रण करता हूँ। सुना है कि सिकन्दर आगरे में अपनी छावनी डालकर ग्वालियर पर प्रचण्डता के साथ आक्रमण करने की बात ठान चुका है। मैं सेना को ठीक करने का अब लगातार प्रयत्न करूँगा।

मैंने कुछ अनुचित कहा हो तो क्षमा चाहती हूँ।

'कुछ भी अनुचित नहीं कहा। कभी भी मुझमें कोई त्रुटि देखो तो बिना संकोच के कह डाला करो।

मृगनयनी खिलकर मुस्कराई।

बोली, 'नृत्य आपको कैसा लगा?

मानसिंह प्रफुल्लित हो गया।

'कुछ कहते नहीं बनता। आचार्य विजयजङ्गम ने जितना सिखलाया होगा उससे कहीं अधिक करके दिखला दिया। कितना सजीव और सुंदर था वह! फिर भी कभी देखूँगा—परन्तु बतलाये हुये कर्तव्य का कुछ पालन करके। यह परिपाटी दक्षिण की है। उत्तर में भी कभी रही होगी। या यहाँ से आई होगी जैसे जैन-मन्दिर के शिखर की कला यहाँ दक्षिण से आई परन्तु अब तो कदाचित ही कोई यहाँ उसको जानता हो। जो कुछ है वह भी विनाश की ओर जा रहा है। मैं उसको ऊपर उठाना चाहता हूँ।

मानसिंह के भीतर ललित कलाओं का अनुष्ठान फिर जाग पड़ा।

बोला 'तुमने चित्रकारी में भी बहुत कुशलता पा ली है। थोड़े से बरसों में ही इतना सब सीख लिया! विलक्षण हो!! सिखाने वालों के भी कान निकल गईं!!!

मानसिंह की कल्पना में कला का चित्र आया और तिरोहित हो गया।

मृगनयनी लज्जा के साथ मुस्कराई।

मानसिंह को अपने पुराने दिनों की स्मृति आ गई। उसको लगा मृगनयनी का शारीरिक सौन्दर्य भीतर के सौन्दर्य के साथ साथ बढ़ता ही गया है।

मृगनयनी ने कहा 'चलिये अपनी चित्रशाला में ले चलूं। वहीं आपके ऊपर रङ्ग के कुछ छींटे भी डाल दूंगी।

मैं चाहता भी यही हूँ। मैं तुमको क्या कोरा छोड़ दूंगा?' मानसिंह बोला और हँसता हुआ उसके साथ हो लिया।

मृगनयनी की चित्रशाला को वह अनेकबार देख चुका था। अवतारों के देवताओं के चित्रों के साथ मानसिंह के विविध स्थितियों के चित्र थे। कौमुदी महोत्सव और वसन्तोत्सव के भी। एक ओर राग-रागनियों के भी चित्र थे। एक चित्र अधूरा था। उसका प्रारम्भ उसी दिन किया गया था। रेखायें तैयार थीं रङ्ग नहीं भरे गये थे। मानसिंह ने बारीकी के साथ देखा। चित्र दो भागों में विभक्त था। एक भाग में वस्त्राभूषणों से सजी हुई एक सुन्दरी मञ्च पर बैठी है एक पञ्चाङ्ग लिये है। दूसरी स्वर मण्डल का वाद्य तीसरी वीणा पर उँगलियाँ फेर रही है। चौथी नाच रही है पांचवी गा रही है। एक स्त्री रंग राग और सुगन्धित द्रव्य लिये मञ्च पर बैठी हुई सुन्दरी के पास सेवा के लिये खड़ी है। सारा दृश्य जैसे किसी रानी का दरबार हो। चित्र के दूसरे भाग में थोड़ी दूर, पृष्ठ भूमि में जङ्गल और पहाड़ है। उसमें कुछ उपद्रव पशु छिपे लुके से जान पड़ते हैं। रानी के दरबार के द्वार के बाहर एक योद्धा प्रतिरक्षण की मुद्रा में खड़ा हुआ है—उसका एक पैर रानी के दरबार में जाने के लिये उठ चुका है मुँह जङ्गल में छिपे पशुओं की दिशा में है और आँखें उस दरबार की ओर फिरी हुई हैं। उसके तरकस में तीर नहीं है, कमर में बंधी तलवार म्यान से आधी बाहर है।

मानसिंह ने सोचा 'क्या इस योद्धा की आकृति मेरी जैसी बनाई गई है? और क्या मञ्च पर बैठी हुई सुन्दरी की छवि मृगनयनी से मिलती है?' कुछ क्षण की बारीक निरख के बाद उसको विश्वास हो गया कि कोई भी आकृति पहिचाने हुये व्यक्तियों से नहीं मिलती। फिर भी चित्र का प्रयोजन स्पष्ट था।

पूछा 'रङ्ग कब भरे जायेंगे इस चित्र में? बहुत सुन्दर बन पड़ा है।

'किस दिशा से चित्र में रंगों का भरना प्रारम्भ करूँ ? पहले इस गूजर की ओर से या नृत्यशाला की ओर से ?' मृगनयनी ने कटाक्ष के साथ मुसकराते हुए प्रश्न किया।

मानसिंह हँस पड़ा।

बोला, 'दोनों में एक साथ रङ्ग भरो।'

'एक साथ !' मृगनयनी ने हँसकर कहा।

'तो जैसा जो चाहे। तुम अपने इस चित्र की बात को मेरे मन में पहले ही बिठला चुकी हो'—हँसते हुये बोला—'चित्र तुमने विलक्षण बनाया है। चित्र के किस भाग को पहले रंग की कूची दोगी इसको तुम्हें ही तै करना पड़ेगा। अभी तो रस-सम्बन्धी का अपना रंग बरस जाय।'

मृगनयनी ने मुस्कान के साथ बड़ी-बड़ी आँखों के पलक उठाये और गिराये। मानसिंह के ऊपर उसने रंग डाला और मानसिंह ने उस पर।

उसको अंक में भरकर मानसिंह ने कहा 'तुम सचमुच मेरी रानी हो।'

थोड़ी देर के बाद मानसिंह मानमन्दिर को लौट आया।

अभी सूर्यास्त नहीं हुआ था। मानमन्दिर के पत्थरों का रंग संध्या के लोल प्रकाश से होड़ सी लगा रहा था। कटली पत्थरों का धारदार उभार और वहाँ रंग मोहक था। जैसे जैसे निकट पहुँचता गया उसके चमत्कारपूर्ण विपुल वैभव और सौष्ठव के रस में मस्त होता गया। द्वार पर पहुँचकर अपनी कल्पना और शिल्पी के कौशल पर उसको अभिमान हुआ। उसी समय मृगनयनी के चित्रशाला के उस अधूरे चित्र की बात याद आई। कला का अनुशीलन और कर्तव्य का पालन साथ साथ चल सकते हैं। मैं सेना को भी बढ़ाऊँगा और ललित कलाओं की भी उन्नति करता रहूँगा। नायक बैजू न आज होरी को कितने लिहाज के साथ गाया था ! कितना महान कलाकार है वह !! मृगनयनी का ताण्डव नृत्य भी कितना सुन्दर, कैसा अनोखा था !!! मृगनयनी के अधूरे चित्र की दोनों खण्डों में एक साथ ही रंग भरे जा सकते हैं उसने सोचा।

[६१]

ग्वालियर के किले में सास-बहू के मन्दिर के पास पूर्व की ओर किले की दीवार के एक कोने पर एक छोटा सा दो-मन्जिला पक्का मकान था।

बैजू इसी में अकेला रहता था। रसोइया राज्य की ओर से खाना पकाने के लिये नियुक्त था। इसलिये बेफिक्री के साथ वह संगीत के अभ्यास में चिपटा रहता था।

बसन्त ऋतु आने को थी परन्तु प्रातःकालीन समीर की सुगन्धि और ठण्डक को उसने अभी नहीं बटोरा था।

गायक बैजू मानसिंह और मृगनयनी के सुझाये हुये टोड़ी राग के एक अंग को गले के स्वर और बीणा के तारों पर साध और माँज रहा था। निकटवर्ती मन्दिर में भी बीणा के ऊपर कोई उंगलियों के झटके दे रहा था। वह अटल था। ग्वालियर नगर में अनेक गृहस्थ गाने और बीणा बजाने के शौकीन हो गये थे। जिनको बीणा का साध दुरूह जान पड़ा उन्होंने सितार को पकड़ लिया। अमीर खुसरू ने दो सौ वर्ष पहले बीणा को सितार का रूप दे दिया था। ग्वालियर में सितार का चलन उसकी सुगमता के कारण हो गया था।

परन्तु अटल ने सितार को ग्रहण न करके बीणा पर ही हाथ फेरने का निश्चय किया। बीणा उसकी साधारण और छोटी सी ही थी। गुरु से नाम मात्र की शिक्षा पाकर उसने इधर-उधर घूमे हुये और अपने गीतों को बीणा पर निकालने के अभ्यास में दिन रात एक कर दिये।

उसको लगा मुझको बहुत आ गया। वह बैजू को अपने हाथ की कारीगरी से परिचित करना चाहता था। बैजू को अपने घर बुलाना दुष्कर था। उसके घर पर बीणा ले जाकर बात बात में मुफ्तचन्द बनना उसको अच्छा नहीं लगा। सास बहू के मन्दिर निकट ही थे—बहू वाला

छोटा मन्दिर विशेषकर निकट—इसलिये इसी मन्दिर के बाहरी भाग में बाजे को लेकर जा बैठा। कोई विघ्नप्रद बात न थी। घरों में चबूतरों और चौराहों पर, मन्दिरों में और पेड़ों के नीचे बहुधा हो उठा था। जहाँ तक प्रातःकालीन स्नान सन्ध्यावन्दन के लिये जो लोग नगर बाहर कुओं बावड़ी या तालाब पर जाते थे वे भी अपनी वीणा या सितार को कन्धे पर बाँध के जाते थे। और अवसर मिलते ही 'ओमतनोम' में लग जाते थे।

पटल बड़े चाव के साथ वीणा के ऊपर एक तराने को निकाल रहा था। उसको आशा थी कि वैसे ही बैजू का ध्यान इस ओर बटा कि उसने भीतर बुलाया और खूब घुटेगी दो कलाकारों के बीच में—एक गुरु और दूसरा मान्य शिष्य होने लायक तो जरूर ही।

बैजू मकान के ऊपरी खण्ड की खिड़की के पास अपने काम में मग्न डूबा हुआ था। यह तान यह तान यह गमक यह गमक। यकायक बैजू के गले से ऐसी तानें बनकर निकलीं कि वह हर्ष की कल्लोलों में थिरक गया। फिर उसने वीणा के ऊपर उन्हीं तानों के उतारने का प्रयास किया। कई बार सफल हुआ। वीणा को एक तरफ रखकर झरोखे से मान-मन्दिर की एक कोर को देखने लगा। कँगूरों के बीच पत्थरों में बनी हुई बन्दनवारों की उमेठों और मुरकी हुई बेलों के बीच में चौकोर झिंझरिया और मुँह उठाये हुये हाथी पर छिटकी हुई रवि रश्मियों पर आँख जम गई। एकाध क्षण पीछे पत्थरों की जालियों में बने पुष्पों और बेलों पर जा अटकी।

'अरे! यह मन्दिर भी टोड़ी की इसी तान को ले रहा है! वीणा पर तान और गमक अब यों निकल आवेगी।' वह उल्लास के साथ बोला।

ध्यान कर उसने वीणा को उठाया, गले से लगाया और उसके कई चूमे लिये। इस आलिङ्गन चुम्बन में वीणा की एक खूँटी ढीली पड़

गई और तार का तनाव कम हो गया। बैजू को नहीं मालूम पड़ा। जैसे ही बजाने के लिये तार पर उँगली चलाई, वीणा बसुरी बोली।

बैजू ने खिसिया कर कहा 'क्या करती है ? तुरन्त समझ में आ गया कि खूंटी का अपराध है। हँस पड़ा।

'ओ हो ! मानमन्दिर की तुमने भी झाँकी ली और ढीली पड़ गई ! ठीक करे देता हूँ।

अटल के कान में भी आवाज पड़ी। उसने अपने बाजे को और भी ऊँचे स्वरों बजाया।

बैजू जब खूंटी को उमेठकर तारों को मिला रहा था तब अटल के बाजे की झङ्कार उसके कान में पड़ी। अपनी वीणा को गोद में रखकर बैजू ध्यान के साथ उस मन्दिर से आने वाली ध्वनि को सुनने लगा। कुछ क्षण सुनने पर एक हाथ में वीणा को लिये हुये खिड़की पर आया। वहाँ से अटल दिखलाई पड़ता था।

बैजू का चेहरा विकृत हो गया।

झपट कर चिल्लाया 'अबे ओ ! अरे ओ बेसुरे बेताले !! बन्द कर इस कनफोड़ को !!!

अटल ने खड़े होकर उसको प्रणाम किया। बैजू ने जैसे देखा ही न हो।

बोला 'क्यों पीछे पड़ा है राग-रागनियों की हत्या के ! बन्द कर इस पाप को नहीं तो रौरव नरक में जायगा !!

'आपसे संगीत के विषय में कुछ बात करना चाहता हूँ। सीखना चाहता हूँ। तराने को बजा रहा था। अटल ने कहा।

बैजू बरस पड़ा 'अबे तराने के बच्चे जाता है यहाँ से या फेंकूँ ढेले तेरे ऊपर और फोड़ूँ तेरा सिर !

'मैं कुँवर अटलसिंह हूँ। आपने पहिचाना नहीं!' अटल ने बतलाया।

बैजू बोला 'भाग! भाग!! भाग!!! बड़ा आया कहीं का सिंह सिंह!!!!'

अटल क्षुब्ध होकर मन्दिर के पीछे चला गया। बैजू अपनी अटारी में।

अटल ने चाहा वीणा को बहू या खास किसी के भी मन्दिर के पत्थरों से दे मारूँ और टुकड़े-टुकड़े करके चल दूँ। वह वीणा को बगल में दबा कर वहाँ से चल दिया।

[९२]

मानसिंह के साथ मृगनयनी कई बार राई के जंगलों में शिकार के लिये हो आई थी पर सबकी बार मन में विशेष उल्लास प्रतीत हुआ।

लाखी के साथ वह उस स्थान पर बड़े चाव के साथ गई जहाँ कई बरस पहले उसने और लाखी ने दो सवारों को मार गिराया था और दो को भगा दिया था। उसी झाड़ी का कहीं पता न लगा जिसमें यह घटना घटी थी। परन्तु पहाड़ी की मोड़ वही थी जिसके पीछे से चार सवार आये थे सड़क भी वही था।

मृगनयनी ने सोचा यदि फिर वैसा ही अवसर आ जावे तो सामना कर लूँगी? तब छोटी सी थी अब बड़ी हो गई हूँ। हाथ पैर में बल भी पहले से अधिक ही है पर क्या साहस भी उतना ही स्फुरणमय है? क्या उतनी ही मन वाली हूँ? इसमें कुछ कसर मालूम हुई। क्या कलाओं के अनुशीलन ने सन्तुलन कुछ अधिक दे दिया है? अब क्या मैं किन्तु-परन्तु कर सकूँगी? क्या उतनी भाग-दौड़ कर सकूँगी? क्या मरे हुये सूअर को कन्धों पर लाद कर ले जा सकूँगी? इसको साबित न कर सकूँ।

लाखी ने अपने भीतर कोई कसर नहीं पाई। परन्तु ऐसा अवसर कभी आने ही क्यों लगा, उसने सोचा।

फिर वे दोनों उस स्थान पर भी गईं जहाँ मानसिंह से प्रथम मिलन हुआ था। मैंने कितनी बेवकूफ बात की थी! क्या वे सब बातें मैंने ही कही थीं? किसान की लड़की ने! किसान की लड़की राजा से क्या इस तरह बोल सकती है? पर मैं उस समय जानती भी तो नहीं थी कि राजा कितना बड़ा होता है। और यदि मैं यह जानती कि राजा की आठ रानियाँ पहले से हैं तो क्या मैं प्रेम की बात को मान लेती? और यह मालूम होता कि सुमनमोहनी कौन और कैसी है तो निश्चय ही नाहीं कर देती। पर अब क्या? सुमनमोहनी और उन सात के होते हुये भी राजा का मैंने पूरा प्रेम पाया और पाये रहूँगी!

शिकार खेलने के उपरान्त राजा उन सबके साथ बोधन पुजारी के स्थान पर गया। बरगद के पेड़ के नीचे डेरा था। टूटे हुये मन्दिर की जगह एक नया सुन्दर मन्दिर बन गया था परन्तु गाँव में भक्तों की संख्या अधिक नहीं बढ़ी थी। नया पुजारी गाँव के किसानों की उपज में से देवता के लिये बीसवें और अपने लिये तीसवें भाग से अधिक ले लेता था। गाँव वालों को अखरता था परन्तु वे धर्म-भावना के कारण कुछ नहीं कह सकते थे।

मृगनयनी ने सोचा इस नये सुन्दर मन्दिर को भी यदि किसी दिन किसी ने आकर तोड़ दिया तो क्या फिर एक और नया मन्दिर बनाया जायेगा? कब तक यह क्रम जारी रहेगा। इनके भक्तों की बाहों में जब तक बल नहीं आया तब तक यही क्रम रहेगा। किसान जब तक प्रबल नहीं हुये तब तक बराबर यही होता रहता है। किसान कैसे प्रबल बनें? कलाओं की शिक्षा से? ऊँह! उससे इनकी बाहों को कितना बल मिलेगा? पेट भर नाज को मिले दूध मट्ठा भी छकने और कुछ इनके पास बचता भी रहे। तब कलायें इनके बाहुबल को स्थिरता दे सकेंगी? यह सब कैसे हो? राजा सेना को पुष्ट करेंगे तो इस काम के करने के लिये कहूँगी।

मृगनयनी ने गाँव में जाने की इच्छा प्रकट की खास तौर से उस स्थान को देखने की जहाँ उसने मानसिंह को गाँव में आते हुये पहले-पहल देखा था और जहाँ मानसिंह की आरती उतारी थी।

वे दोनों सवारी में उस स्थान पर गये। अटल घोड़े पर था।

उस स्थान को देखकर मृगनयनी के मन में झाँकी सी फिर गई। वहाँ बहुत से नरनारी उसी प्रकार खड़े हुये थे। उसी तरह की आरती। थालियों में फूल नहीं थे। नये पुजारी ने फूल के पेड़ नहीं लगा पाये थे। मृगनयनी उस दिन ऐसी ही पाँत में खड़ी हुई थी।

मानसिंह उसके पास आया।

बोला 'यही है वह स्थान जहाँ तुमको और लालारानी को पहले-पहल देखा था।'

लाखी उन नारियों के चेहरे पहिचानने में लगी हुई थी। कुछ पहिचान में आ गये कुछ नए थे। इन्हीं के दुराग्रह और पक्षपात का मैं शिकार होकर यहाँ से गई थी। कितने सीधे और विनीत विनम्र दिख रहे हैं इस घड़ी! मेरे और अटल के साथ कितनी दुष्टता की थी इन्होंने!!

मृगनयनी ने मानसिंह से कहा, 'मैंने अपने देवता पर यहीं फूल चढ़ाया था।'

वह बोला 'और देवता ने उस फूल को अपनी पगड़ी में खोंस लिया था।'

'फिर क्या किया उस फूल का?'

'सामने तो है।'

'बड़े वैसे हो आप।'

'यहीं पगड़ी में ही खोंसा हुआ है परन्तु उसको कोई देख नहीं सकता।'

'न जानें क्या क्या कह उठते हैं अब नहीं बोलूँगी।'

थोड़ी दूर मृगनयनी का घर था। वह गिर-गिरा गया था। अटल उसको देखकर लौटा।

राजा को प्रसन्न पा कर बोला 'घर तो गिर ही गया है। था भी उसमें क्या। परन्तु जन्मभूमि है।'

लाखी ने धीरे से मृगनयनी से कहा 'क्या कहना इनकी जन्मभूमि का।'

मानसिंह ने अटल से कहा 'उसमें जो कुछ था अब पक्के के रूप में खड़ा कर दो कुँवर जी।'

अटल को अचरज हुआ। बड़ी कहाँ बनेगी गढ़ी यहाँ पर महाराज ?

मानसिंह ने उत्साहित किया —देखो तो पहले। क्या यहाँ कोई भी स्थान नहीं जहाँ गढ़ी बन सके ?

अटल ने नदी के दोनों किनारों की तरफ आँख दौड़ाई और पीछे ऊँचे पहाड़ पर जा ठहराई।

है तो महाराज यह पहाड़ की चोटी है परन्तु ऊँची बहुत है। फिर यहाँ पानी की कमी कितनी न बनी रहेगी ? अटल बोला।

मानसिंह ने कहा, 'पहले यहाँ गढ़ी थी तालाब था। गढ़ी ध्वस्त हो गई और तालाब पुर गया। तालाब को खुदवाये देता हूँ और गढ़ी को बनवाये देता हूँ। ग्वालियर की रक्षा के लिये इस पहाड़ी की चोटी पर एक अच्छी गढ़ी का बनवाना बहुत आवश्यक है। अचम्भे की बात है कि आज तक मेरे ध्यान में यह सूझ क्यों नहीं आई यद्यपि जानता इस स्थान को बहुत पहले से हूँ।

मृगनयनी की कल्पना में उसकी चित्रशाला का अधूरा चित्र घूम गया। रेखा-चित्र के अछूते भाग में रंग का भरना शुरू हो गया है। उसने प्रसन्नता के साथ सोचा।

राजा ने गाँव भर के सामने अटल से कहा 'मैं तुमको यह गाँव और आसपास की भूमि जागीर में कुल-सम्मान के लिये लगाता हूँ। गढ़ी शीघ्र बनेगी। राज्य की रक्षा और प्रजा का पालन चित्त देकर करना।

आनन्द के मारे अटल झूम गया। अब बैजू या कोई भी मेरा तिरस्कार नहीं कर सकेगा उसके अन्तर्मन में उठा और हर्ष में विलीन हो गया।

मृगनयनी ने सोचा क्या गाँव के किसान इनके जागीरदार बन जाने से सुखी हो जायँगे ? हमारे उन खेतों को कौन जोतेगा जिनकी मैं रखवाली किया करती थी ? आजकल कौन जोतता होगा ? [illegible]

व्यर्थ है। फिर भी पूछूं। फिर लाभ क्या? छोटे-छोटे से थोड़े से खेत थे। पूछने का अर्थ कहीं यह न हो जाय कि जिनके पास अभी हैं उनसे छीन लिये जावें। जाने भी दूं।

लाखी से बोली 'अब तो तुम अपनी गढ़ी में जाकर रहोगी रायरानी जी।'

उसने चिहुँक कर उत्तर दिया 'मैं तो अपने गूजरी महल में रहूँगी महारानी जी।'

मृगनयनी हँस पड़ी।

'जीजी तुमको यहाँ एक दिन आकर रहना ही पड़ेगा।'

'ननदजी मैं तुम्हारी इस बात को नहीं मानूँगी' लड़ पड़ूँगी। मृगनयनी के स्वर की नकल करते हुये लाखी ने व्यङ्ग किया। वह प्रसन्न थी।

[५३]

ग्वालियर पर आक्रमण करने और अबकी बार उसको धूल में मिला देने के इरादे से सुल्तान सिकन्दर ने आगरे में बड़ी भारी सेना तैयार की। लगभग एक लाख सवार दो लाख पैदल सिपाही दो लाख गुलाम और एक हजार हाथी। अरबी और फ़ारसी की शिक्षा के लिये उसने एक बहुत बड़ा मदरसा स्थापित किया था। सरकारी मकतबों के साथ इस मदरसे के मौलवियों को भी लेने का संकल्प किया। कूच करने में अभी विलम्ब था। उसके जासूसों ने समाचार दिया कि गुजरात का महमूद बघर्रा मालवा की ओर आ रहा है। गुजरात और मालवा के सुल्तानों के युद्ध का परिणाम देखकर ही वह ग्वालियर पर आक्रमण करना चाहता था। लोदी और लड़ाकू सरदार उसको शीघ्र हमला करने के लिये उकसा रहे थे। कूच के मुहूर्त का निश्चय करने के लिये। एक पहर रात गये आगरे में दरबार हो रहा था। ऋतु सुहावनी थी। लड़ाई के लिये चल पड़ने की धुन का मनमें ज्वार उठ रहा था। सिकन्दर का जासूसी विभाग बहुत सुसंगठित था। उसने समाचार दिया था कि राजा मानसिंह तोमर ने संगीत विद्यापीठ को स्थापित करके नायक बैजू के हाथ में जो एक पागल है दे दिया है और अब इमारतों के काम को थोड़ा सा ही चलाता हुआ बड़े पैमाने पर सेना को तैयार करने में जुट पड़ा है।

'जहाँपनाह चढ़ बैठने का यही मौका है। बरसात के लिये तीन-चार महीने हैं। कूच करने में देर नहीं लगनी चाहिए।' एक सरदार ने अनुरोध किया।

प्रधान मुल्ला ने पहले ग्वाल-मन्दिर को साफ़ कर देने की बात चलाई।

सिकन्दर बोला 'महमूद बघर्रा मांडू को खतम करके चन्देरी नरवर होता हुआ ग्वालियर आ सकता है। मैं चाहता हूँ कि ग्वालियर को खतम करके नरवर चन्देरी होता हुआ मांडू को फिर दिल्ली की बादशाहत में

मिलाऊँ और फिर गुजरात को। बघर्रा और नसीरुद्दीन की फ़ौजें मालव में इकट्ठी हुईं उस वक्त कूच करना मुनासिब होगा।

एक सरदार ने समर्थन किया — मुमकिन है बघर्रा मालवा में आते आते राजपूताने की तरफ़ रुख फेर दे और नसीरुद्दीन से लड़ाई न हो, इसलिये देख लेना अच्छा होगा। इन्तज़ार की सलाह ठीक है।'

सेनानायकों और मुल्लाओं का बहुमत तुरन्त चढ़ाई कर देने के पक्ष में था। आगरा में इतनी बड़ी सेना को पड़े-पड़े खिलाते-खिलाते खज़ाना भी कम होता जा रहा था।

सिकन्दर ने मान लिया। उसी समय बड़ी ज़ोर की गड़गड़ाहट का शब्द हुआ और दीवान आम की छत, दीवारें खम्भे फ़र्श तख़्त मसनद तकिये काँपने लगे। लगता था जैसे प्रलय की घड़ी आ गई हो। मुल्लों से मुल्लों के सरदारों से सरदारों के सिर टकरा गये। तख़्त के ऊपर बादशाह औंधे मुँह गिर पड़ा और पंखा झलने वाला गुलाम उसके ऊपर। मौलवियों और सिकन्दर की आँखों के सामने बोधन के मारे जाने का चित्र फिर गया।

'या अल्लाह! रहम!! रहम!!!' उन लोगों के मुँह से चीख निकली। शमादान लौट गये। अँधेरा छा गया। मानो परमात्मा ने उनकी पुकार को सुनने से इनकार कर दिया हो। लोग इधर-उधर लुढ़कने लगे।

बड़ा प्रचण्ड भूकम्प आया था।

× × × ×

उस समय के कुछ पहले माण्डू से दूर महमूद बघर्रा बेतहाशा पड़ाव पर पड़ाव डालता हुआ निश्चित स्थान पर रैन-बसेरे के लिये रुक गया। तने हुये तम्बू में जा बैठा। पलङ्ग की एक बाजू ढाई सेर पके हुये चावल और दूसरी ओर भी सोने के थालों में रखे हुये ढाई सेर। रात में नींद

खुली और भूख लगी—भूख के कारण बाम पहल में कोई दाह भी नहीं था। रोज का दस्तूर जो ठहरा—सा विचार क्या करता? क्या प्रातःकाल की प्रतीक्षा करता? तब तक गरीब आँतों का क्या होता? क्या न बन जाता उन पर? इस करवट आँख खुली तो ढाई सेर चावलों भरा थाल हाज़िर, उस करवट आँख खुली तो उतनी ही तौल के चावलों का दूसरा थाल। आख़िर एक ही तरफ पाँच सेर चावलों के रखने में तुक क्या? इस करवट से उस करवट धीरे-धीरे का उतना कष्ट उठाया ही क्यों जाय? उस करवट आँख खुली हाथ बढ़ाया और ढाई सेर चावल साफ़। फिर तीन चार बार कष्ट के बाद दूसरी करवट आँख खुली हाथ बढ़ाया और दूसरा ढाई सेर गायब। सबेरे सेर भर घी सेर भर शहद और ढेर भी रूपों का कलेवा भूखा शान्ति के लिए मौजूद। उसमें कोई मीनमेख हो नहीं।

पहले पहर की गहरी नींद सोया ही था कि पलंग हिल गया जैसे आँतों में बवंडर आ गया हो। बघर्रा चित तो पड़ा था। पलंग की मचक हिलडुल ने करवट दे दी। आँख खुल गई। बघर्रा ने पास रक्खे हुए पीछे वाले थाल के चावलों पर हाथ बढ़ाया। थोड़ा खिसका। बघर्रा ने और हाथ बढ़ाया। वह और भी खिसका। बघर्रा ने झुंझला कर एक को बहुत लम्बा किया और दूसरे से आँखें मींडीं। परन्तु चावल हाथ न लगा। धम्म से थाल नीचे आ गिरा। धम्म से पलंग ऊपर पाया। उस बगल भी यही हुआ। बघर्रा इतना पड़ा कि उस ओर का थाल और थाली नीचे न गिरकर धम्म से उसकी चौड़ी पीठ पर आ पड़ा। बघर्रा पलंग से नीचे। पलंग उसके ऊपर। नीचे गिरे हुए चावलों का तकिया बना हुआ चावलों ने उसकी मूँछों पर सफ़ेद खिजाब का काम किया। पलंग के ऊपर गिरे हुए चावलों में से कुछ ने मुँह पर और कुछ ने छाती पर बहार जमाई।

' बघर्रा चिल्लाया—'ओह! जिन्नों ने मार डाला!! कमबख्तों ने सब नीचे गिरा दिया!!! बचाओ बचाओ!!!!

सारी छावनी में बड़ी लौट-पौट मची हुई थी। हाथी थानों पर से सांकलें तोड़ कर चिंघाड़ रहे थे घोड़े हिन हिना रहे थे और आदमी गुड़क-मुड़क कर हाय-तोबा मचा रहे थे।

पहाड़ों से पत्थर टूट-टूटकर खड़खड़ाते हुये लुढ़क रहे थे। पेड़ जड़ों से उखड़ उखड़कर धराटे के साथ गिर रहे थे। नदियों और सरोवरों के पानी में खलबली मच गई।

भूकम्प अपने प्रचण्ड वेग पर था।

× × ×

उसी रात माँडू का सुल्तान नसीरुद्दीन अपनी बेगमों की मर्दुमशुमारी की ठान चुका था। अभी पूरे पन्द्रह हजार की गिनती में लगभग छः हजार की कसर थी। बहीखाता रोज गिनती का लेखा जोखा किया जाता था इसलिये सही संख्या ज्ञात थी। संख्या के सम्बन्ध में उसको कोई खटका नहीं था परन्तु उसको समाचार मिला था कि हरम में बहुत से लौंडे भी स्त्रियों के वेश में दाखिल हो गये हैं। उसको सन्देह था कि ये युवक कुछ बेगमों की काम वासना को तृप्त करने के लिए आ घुसे हैं। सन्देह निवारण और दण्ड विधान के लिये मर्दुमशुमारी की जरूरत पड़ गई।

कई अंग रक्षिकायें अपने अपने जिम्मे का बहीखाता खोले सुल्तान के साथ चल रहीं थीं। मर्दुमशुमारी में सहायता करने वाली अनेक स्त्रियां प्रज्वलित मशालों को फहराती हुई सुल्तान के साथ थीं। मर्दुमशुमारी का काम थोड़ा और साधारण नहीं था। स्त्री वेषधारी युवक सहज ही हाथ आने वाले नहीं थे। जैसे जैसे बहीखाता का पढ़ना अनुसन्धान और छानबीन चलता वे इधर-उधर खिसकते जाते। अन्त में उनका पकड़ा जाना निश्चित था क्योंकि महल के चारों ओर सेना का कड़ा पहरा था। नसीर थोड़ी देर बाद थककर ठहर गया। पैरों के थकने का सवाल ही नहीं था दासियां कन्धों पर उसके तख्त को लादे चल रही

दीं, परन्तु पानी चमरा गई थीं। तख्त नीचे रख दिया गया। नसीर अमर तवियों में समा गया।

यह सब गड़बड़ ज्यों घूम का पर्जन-तर्जन हुआ। तुरन्त मांडू का किला भी एक ऊँचे तीर्थ पर्वत पर है पर पर काँप उठा। नसीर के अमर तकिये लौटे, तख्त पलटा और वह मुँह के बल नीचे जा रहा। चिल्लाया — बचाओ! मुझको बचाओ!! अब किसी को नहीं सताऊँगा!!! जिन पकड़े लिये जा रहे हैं कोई बचाओ!!!!

मशालें हाथों से छूट गईं और सुड़क-सुड़क कर कुमकुमों की तरह चमकने बुझने लगीं। गद्दीवाले नीचे गिर गये। उनके पद्य सुनते थम्ब हिले धड़-धड़ाम गये। कुछ के ऊपर मशालें गिरीं और उनकी होली सी जल उठी। दासियां बेगमों पर और बेगमें दासियों पर लड़खड़ा-लड़खड़ा कर गिरने लगीं। निकटवर्ती महल डगमगाने लगे मानो कह रहे हों अब चले और तब चले। बेगमों के रंगीन कीमती कपड़े चिरा लेने को हुए और उनमें से अनेक सिर के बल गिरीं। सेना के सिपाही क़यामत का धक्का समझ सिर पर पैर रखकर इधर उधर भागे। स्त्री वेश धारी युवकों को प्रतीति हुई कि हम चले तो चले हमारे साथ हमारी प्रेयसियां भी चलीं और अत्याचारी नसीर भी गया! भागते गिरते पड़ते उनको बाहर निकल जाने का मार्ग थोड़ा बहुत सूझा—मानो उन्हीं के भाग्य से यह भूकंप हुआ हो।

× × ×

मानसिंह मानमन्दिर से गूजरी महल को जा रहा था। चन्द्रमा के धुँधले प्रकाश में मानमन्दिर ऐसा प्रतीत हुआ जैसे ध्यान-मग्न हो। थोड़ी देर खड़ा-खड़ा देखता रहा फिर चल दिया। मृगनयनी के पास पहुँचकर उसने कहा 'मानमन्दिर मुझको अभी अभी ऐसा लगा जैसे ध्यानमग्न हो'

मृगनयनी बोली 'कभी वह हँसता हुआ जान पड़ता है कभी गाता हुआ और कभी ध्यान-मग्न। किसी दिन उसको रणभेरी का भी काम करते हुए देखेंगे आप।

उसी समय गड़गड़ाहट सुनाई पड़ी। दोनों सुनने लगे। गूजरी महल काँपने लगा। वन्दनवार वाले द्वार झूमने लगे। ऊपर की छोटी बड़ी पहाड़ी के ऊपर सीधी दीवारें भूसा सी झरने लगीं। वे दोनों एक दूसरे के अङ्क में पड़ गये लिपट गये और झकोरे खाने लगे।

प्रलय आ रही है। मानसिंह के मुंह से निकला—इसके पहले यदि कुछ और कर लिया होता।

वे दोनों एक दूसरे से उलझे हुये गिर पड़े। मानसिंह की आँखें मिच गईं। मृगनयनी की खुली थीं। दृष्टि स्थिर। होठ सटे हुये। मुट्ठियाँ कसी हुईं।

'कोई बात नहीं। भगवान की मुस्कान का ध्यान करिये। शिव के ताण्डव का। धैर्य और शान्ति के साथ मेरे प्राणनाथ अन्त के अनन्त के सामने डट जाइये।

विजयजंगम ने दिन में सात घन्टे काम किया था जैसा कि उसका नियम था। अब अपने लम्बे केशों में तेल डालकर चाँदी के जनेऊ में बँधे शिवलिंग को हाथ में लेकर प्रार्थना कर रहा था—सूत का जनेऊ उसके सम्प्रदाय में निषिद्ध था। उसी समय गर्जन-तर्जन हुआ। उसने आँखें खोल दीं। घर की दीवारें काँप उठीं। वह अपने आसन पर घूमते-घूमते लुढ़क गया।

बोला 'शिव का डमरू बजा है। ताण्डव का आरम्भ है। कलियुग का दुराचार अत्याचार तुमको असह्य हो उठा है भगवन्। शरण में लो। तुम्हारे लोक में अभी पहुँचता हूँ।

जीवन भर उसने कायक—काम पेट भरने के लिये परिश्रम किया था। उसका विश्वास था शुद्ध शरीरों से काम करने वाले सब शैव-वीर शैव कैलाश पर्वत पर अनायास पहुँच जायेंगे।

× × ×

नायक बैजू ने झटपट थोड़ा सा खा-पीकर तम्बूरे को हाथ में लिया और एक नये राग को ध्रुवपद में बिठलाने का प्रयत्न करने लगा। तानों के बीच में गर्जन-तर्जन की हुंकार उसको ऐसी लगी जैसे किसी ने पखा-वज पर जोर की थापें दी हों परन्तु उस गर्जन-तर्जन का मेल बैजू के गायन की ताल में न बैठा।

चिल्ला पड़ा—'क्या करता है बे ?'

आँखें खोलीं तो वहाँ कोई नहीं। दीवार की खूँटी से टँगी बीणा काँप कर खड़खड़ा उठी।

बोला, 'सरस्वती माता कहीं बेसुरा हो गया होऊँ तो क्षमा करना।' बीणा खड़खड़ा कर झपाटे के साथ नीचे गिर पड़ी और वह स्वयं तम्बूरा सहित एक ओर लटक गया।

'कौन है रे तम्बूरा मत फोड़ हाय मेरा !'

× × ×

सेठ साहूकारों और सम्पत्ति वालों ने अपनी धन-सम्पदा के लिये हाय हाय मचाई किसान मजदूर अपने बच्चों को चिपटे पड़े मगन मन से हंसने लगे। बहुतेरों की कच्ची मढ़ैयाँ ऊपर से टूटकर आ पड़ीं। रोने किलबिलाने लगे।

यह विकट भूकम्प असाधारण प्रभाव छोड़ गया—रहा थोड़ी देर ही परन्तु धरा को उखाड़-पछाड़ गया। भूकम्प के शान्त होने पर लोगों को विदित हुआ कि भूचाल आया था।

सिकन्दर लोदी के दीवान खास में लोग पछाड़ें खा-खाकर उठे बैठ, घमासान रोदन किये गये और तै हुआ कि ग्वालियर पर कुछ दिनों आक्रमण नहीं किया जायगा।

मांडू में नसीरुद्दीन ने बदहोशी से होश में आकर बकवास की, उसकी गिरी-पड़ी परियों ने माथे टटोले और कपड़े सँभाले जब तक सिपाही

इकट्ठे हों, तब तक सभी वेषधारी जोकरे मार्ग को स्वच्छ पाकर नौ दो ग्यारह हो गये । परियों की धुमार का काम कुछ दिनों के लिये स्थगित हो गया ।

गुजरात का सुल्तान महमूद बघर्रा मुश्किल से चावलों पीछे और पलंग से नीचा छूटा सका । जब झाड़-पोंछकर उठा तो लम्बी दाढ़ी और मूछों को बेहाल पाया । कमबख्त भूचाल ने भारी खराब किया तो किया दाढ़ी मूछ पर भी कहर बरसा दिया ! सवेरे के कलेवे की प्रतीक्षा में और खावनी को यथाविधि स्थित करने में उसने अपलक रात बिताई । आगे बढ़ना मनहूस समझ कर गुजरात को लौट गया ।

मानसिंह ने देखा सब ज्यों का त्यों है । जब आँखें खुलीं तो मृगनयनी को स्थिर बैठा पाया ।

'यह सब क्या था ?' मानसिंह ने पूछा ।

मृगनयनी ने उत्तर दिया, 'भूकम्प । हम सबको कर्तव्य का स्मरण दिलाने आया था ।

विजयजंगम ने देखा कैलाश पर्वत पर नहीं पहुँच पाये । कामद—अम—को और भी लगन के साथ अपने जीवन की घड़ियाँ दूँगा अन्त में कैलाश की प्राप्ति अवश्यम्भावी है । उसने निश्चय किया ।

बैजू ने कहा 'माता सरस्वती तुमने अपराध क्षमा कर दिया है । कर दिया न ? कभी सुर से बेसुरा या बेताल होगया हूँगा आगे कभी ऐसा न होगा कान पकड़ता हूँ । ग्वालियर में इतने बेसुरे और बेताल बढ़ गये हैं कि ठिकाना नहीं । हो न हो यह उन्हीं के पापों का फल था ।

कुछ पक्के मकान टूट गये थे कुछ दरारें खा गये थे । उनकी थोड़े ही समय में मरम्मत होगई । गिरे हुये कच्चे मकानों की मरम्मत में ज्यादा दिन लग गये । दरिद्र किसान मजदूरों की झोपड़ियाँ ऐसी गिर गई थीं कि उनकी मरम्मत हो ही नहीं सकती थी । मजबूरी से जब-जब उनको

अवकाश मिला तब तब उन्होंने थोड़ा थोड़ा करके मसाला इकट्ठा किया और काफी समय में रहने लायक झोंपड़ियाँ बना लाईं ।

मानसिंह ने राई की पहाड़ी पर गढ़ी का बनवाना प्रारम्भ कर दिया, परन्तु वह काम उतनी शीघ्रता के साथ नहीं होरहा था जितनी तत्परता के साथ उसकी कला-सेवा चल रही थी । मृगनयनी की चित्रशाला का वह चित्र अभी अधूरा था ।

[६४]

ग्वालियर भर में समाचार फैल गया कि एक महात्मा रामेश्वर से पैदल चलकर ग्वालियर आये हैं केवल लंगोटी लगाते हैं, नीम के पत्तों पर गुजर करते हैं और ध्यान में मग्न रहते हैं, ग्वालियर से दो तीन कोस उत्तर की ओर मोती झील पर ठहरे हैं। लंगोटी और नंगे पाँव ! फिर रामेश्वर से ग्वालियर !! उस पर ध्यान !!! जनता पर आतंक छा गया और वह आत्मसमर्पण तथा वर प्राप्ति के लिये उमड़ पड़ी।

मोती झील को मानसिंह ने तैयार करवाया था। काम पूरा हो चुका था। उससे नहर निकाल कर वह आसपास की भूमि की सिंचाई का आयोजन कर रहा था। भूकम्प के कारण झील कई जगह नष्ट हो गई थी। मानसिंह ने मरम्मत ही नहीं करवाई बल्कि कुछ महीनों के भीतर झील के बाँधों को और भी ऊँचा और चौड़ा कर दिया। महात्मा इस झील के किनारे आकर ठहरे थे। राजा से मिलना चाहते थे — या जैसा कि मानसिंह के दूत ने कहा महात्मा दर्शन देना चाहते हैं। परन्तु दर्शन देने के लिये राजा को मोती झील पर स्वयं जाना चाहिये। विजयजंगम को भी मालूम हो गया।

राजा महात्मा के पास जाना चाहता था। छः सौ-सात सौ कोस की दूरी से महात्मा दर्शन देने के निमित्त पधारे हैं, हम क्या दो तीन कोस भी चल कर न जायँ उनके दर्शन करने ?

विजय ने निवारण किया 'ढोंगी और महात्मा इस तरह मारे-मारे नहीं फिरते। जिनको आतंक जमाने की पड़ती है वे ही करते हैं ऐसा।'

'तपस्वी हैं, मिल लेने में क्या बुराई है ?'

'इस प्रकार की तपस्या करने वाले जोगी का केवल एक उद्देश्य होता है। परलोक की प्राप्ति चाहे हो या न हो वे लोग इस लोक को अपनी इस तपस्या के आतंक से मुट्ठी में दबा लेना चाहते हैं। आपने कई वर्ष हुये

मैंने और एक वैष्णव के विवाद पर कुछ इसी तरह की बात कही थी। स्मरण है आपको?'

'हाँ कुछ धुंधला सा स्मरण है। बोधन पुजारी ने उस दिन सबसे पहले गूजरी रानी की बाण-विद्या का राई से आकर समाचार दिया था। पुराणों में अनेक स्थलों पर पढ़ा है कि योगी राजाओं के पास उपदेश देने के लिये गये और राजाओं ने उनका आदर सत्कार किया।

'इस युग की बात सामने लीजिये। इस युग की सोचिये। अपनी जनता पर इसका प्रभाव पड़ेगा? मेले और हाटें लग उठेंगी। तुर्कों से युद्ध होने वाला है जनता और सैनिकों का ध्यान अपने कार्य को छोड़कर उसके ढोंग की तरफ लग देगा।'

'ढोंग हो और न भी हो अभी नहीं जाता हूँ। सोचूँगा।

मानसिंह दो दिन तक नहीं गया। उसको समाचार मिला कि योगी ने अनशन कर लिया है—'जब तक राजा आकर मुझसे नहीं मिलेगा, तब तक नीम की पत्तियाँ भी नहीं खाऊँगा।

मानसिंह अस्थिर हो गया।

विजय ने कहा 'महाराज वह मर जायगा तो एक मूर्ख पागल कम हो जायगा।

'बैजू को भी लोग पागल कहते हैं पर क्या कोई चाहता होगा कि बैजू मर जावे?

'बैजू विद्या का पागल है यह योगी कहलाने वाला मूर्ख अहंकार का पागल है।

'मैं उसको अनशन करके नहीं मरने दूँगा। उसके इस प्रकार देह का अन्त करने से जनता के ऊपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा।

मानसिंह नहीं माना। योगी से मिलने गया।

योगी दुबले पतले शरीर का था। लम्बी पतली बाहें। देह से जवान और आंखों से सौ बरस का। आंखें चमकती हुईं। मानसिंह ने सोचा योगाभ्यास के कारण सोने जैसा तप गया।

मानसिंह ने प्रणाम किया। उसने वरदहस्त उठाया। योगी ने कहा 'इतना घमण्ड है तुमको!'

मानसिंह का स्वाभिमानी क्षत्रियत्व जागा परन्तु क्षमाओं की विनय ने उसको नियन्त्रित कर दिया। बोला घमण्ड के कारण नहीं युद्ध की तैयारी में फंसा रहने के कारण नहीं आ पाया।

'उसी के सम्बन्ध में कुछ बतलाना चाहता हूँ।'

'आज्ञा हो। पालन करने की चेष्टा।'

'कितने सैनिक तैयार हो गये हैं?'

'पचास सहस्र यहां पच्चीस सहस्र नरवर में। चम्बल नदी की चौकियों पर एक-एक दो दो सहस्र तैयार हैं।'

'चौकियों की बात जाने दे। और बढ़ा सकेगा?'

'कठिनाई के साथ परन्तु प्रयत्न करूंगा।'

'ग्वालियर के किले को ठीक अवस्था में कर लिया है?'

'ठीक अवस्था में है।'

'सुरङ्गों को ठीक रखना कदाचित् आवश्यकता पड़ जावे।'

'साफ़ सुथरी है।'

'कितनी है?'

'एक।'

'कहां को गई है?'

'नजूल पहाड़ को, परन्तु महाराज पुरखों की आन है कि सुरङ्ग का हाल सिवाय अपने पुत्रों और सेनापति के किसी को भी न बतलाया जाय इसलिये और आगे कुछ नहीं कह सकता।'

'कोई बात नहीं कोई बात नहीं। युद्ध की तैयारी की अपेक्षा भजन और पूजा में अधिक मन लगा रह और अपने सैनिकों को भी लगा। इसी से कल्याण होगा। जा अब मुझको मत घेर। ध्यान लगाऊँगा।'

मानसिंह चला आया। वह योगी की कटीली देह और अनोखे नेत्रों से प्रभावित हुआ था। विजय जानने को उत्सुक हुआ। दूसरे दिन बात चीत हो सकी।

मानसिंह ने उसको सब बात बतलाई। उसने कहा 'कोई विशेष महत्व की बात नहीं हुई। मुझको उसकी जगमगाती हुई देह और दमकती हुई आँख बहुत अच्छी लगी।'

'कोई महत्व की बात नहीं हुई! आप कहते क्या हैं!! सेना और किले का सारा भेद ले लिया उसने!!!'

'सब किसी पर शंका उठाने का तुम्हारा स्वभाव ही है।'

'अब भी आपको उस तपस्वी के ढोंग पर सन्देह है! युद्ध के काम में आपको और सैनिकों को जो भजन-पूजन में ही दूब जाने का उपदेश दे वह कैसा भी कोई हो मुझको तो नहीं जँचता। एक बार दिखवाइये तो सबको, है भी योगी ठौर पर या नहीं!'

राजा ने खोज करवाई। योगी का पिछली संध्या से ही कोई पता न था।

'महाराज!'—जरा तीव्र स्वर में विजय ने मानसिंह से कहा 'मुझको तो वह शत्रु का जासूस मालूम पड़ता है। सेना और सुरङ्ग का भेद ले गया। सेना की कितनी थाह लेने का उसका भेद नहीं है परन्तु सुरङ्ग का भेद हाथ से निकल गया, यह बहुत बुरा हुआ। अब किले को अन्न से भर लीजिये। सुरङ्ग अरक्षित हो गई है। लम्बे घेरे पर न तो सुरङ्ग से अन्न इत्यादि प्राप्त हो सकेगा और न कोई सहायता। उलटे वहां होकर शत्रु के किले में घुस पड़ने की सम्भावना हो गई है।

मानसिंह को बहुत परिताप हुआ। मृगनयनी के उद्बोधन का स्मरण हुआ—क्या कलाओं के परिशीलन ने मेरे मन की चौकसी को ढीला कर दिया है? कलाओं का इसमें क्या दोष? बहुत करके वह कोई योगी ही था। उसका एक स्थान को छोड़ कर दूसरे पर चल देना शंका का कारण नहीं होना चाहिये। भजन-पूजन में लगे रहने का उसका उपदेश स्वाभाविक ही था। योगी और किस बात का उपदेश करता? विजय का सन्देह भ्रम पर आधारित है। परन्तु यह ठीक है कि मुझको सेना का सङ्गठन तत्परता के साथ करना चाहिये और उस सुरङ्ग को बन्द कर देना चाहिये। फिर बाढ़ समय पर रक्षा का साधन? रक्षा का साधन भगवान का भरोसा और भुजाओं का बल है। सुरङ्ग को बन्द कर दूँगा।

मानसिंह ने अविलम्ब सुरङ्ग को बन्द कर दिया। तत्परता के साथ युद्ध की तैयारी पर पिल पड़ा। राई की गढ़ी तैयार हो गई। अन्य गढ़ों और बुर्जियों की भी उसने मरम्मत करा ली।

अकस्मात् और एक दिन उसको समाचार मिला कि सिकन्दर लोदी ने विशाल सेना के साथ चम्बल को पार कर लिया।

[५२]

सिकन्दर ने अपनी सेना के तीन खण्ड किये। एक को नरवर की दिशा में भेजा और दो खण्डों को भिन्न भिन्न दिशाओं से ग्वालियर पर। राई के पास से आने वाले खण्ड के साथ वह स्वयं था। नरवर की ओर जाने वाली सेना का पता मानसिंह को नहीं लगा। उसने समझा ग्वालियर पर ही तीन तरफ से चढ़ाई हो रही है।

मुकाबिला करने की योजना शीघ्र बन गई। उत्तरी सिरे को मानसिंह खदेड़ता हुआ बीच वाले खण्ड को जा दबोचेगा। दक्खिनी सिरे को मानसिंह का एक नायक इसी तरह दबावेगा और बीच वाले को अन्त रोक कर पीछे हटावेगा। बीच वाली तोमर सेना के सहारे के लिये राई की गढ़ी अटल के अधिकार में। तैयार होते ही वह उसको मिल गई थी।

राई की गढ़ी में अटल के साथ लाखी को जाना था। लाखी मृगनयनी से विदा लेने आई। वह गढ़ी में एक बार रह आई थी।

'चाहती थी यहीं बनी रहूँ।' लाखी ने कहा। उसके मन में कुछ खटका।

मृगनयनी बोली 'मैं भी यही चाहती हूँ। भैया से कहे देती हूँ। राई की गढ़ी कुछ बड़ी नहीं है। हम दोनों यहाँ किले की रक्षा के लिये एक साथ रहेंगी।'

'वह कहते थे कि उन्हें बाहर-बाहर लड़ना पड़ेगा मैं गढ़ी की देखभाल और सहायता के लिये भीतर रहूँ।'

'अकेली वहाँ क्या करोगी?'

'अकेली तो नहीं हूँगी। कुछ और सरदारों को भी रहना होगा। पहली लड़ाई के समय गाँव के नरनारी जंगलों में भाग कर बहुत कष्ट झेलते रहे—मैंने तुमसे ही क्या क्या नहीं सुना था—अब की बार वे सब गढ़ी में आ जावेंगे।

'और तो कोई बात नहीं कहीं घिर न जाओ गढ़ी में।

'घिर तो कहीं भी सकते हैं।

'यहां संभावना कम है। पर मसल में मोह साथ में रहने का है। सोचती हूं मैया के पास तुम्हारा रहना उस छोटी सी गढ़ी में अधिक उपयोगी होगा।

'मैं भी यही सोचती हूं पर न जाने मन क्यों कैसा हो रहा है। अच्छा अब तुम अपनी उसी मुस्कान के साथ बिदा दो जिसके साथ पहले राई-गढ़ी को भेजा था।

मृगनयनी के होठों पर मुस्कान आगई और आँखों में जल। लाखी की आँखों से तो बड़े बड़े आंसू टपक पड़े। दोनों एक दूसरे से लिपट गई।

मृगनयनी अपने को संयत करके बोली 'कोई संकट आता दिखलाई पड़े तो तुरन्त समाचार भेजना मैं यहां से सहायता भेजूंगी।

'यदि समाचार भेजने का सुभीता न हुआ तो? लाखी ने पूछा।

'तो कोई ऐसा संकेत करना जो यहां तक दिख जाय। मृगनयनी ने उत्तर दिया।

लाखी ने ऐसे संकेत को सोचा। उसको नरवर का स्मरण हो आया। नटों ने उस रात एक बड़ी होली जलाई थी। लाखी ने नरवर से आकर बतलाया था फिर भुलाया।

मृगनयनी ने कहा 'मुझको आशा है कि शत्रु को सबकी बार भी उसी प्रकार पीछे हटा दिया जायगा जैसे पहले कई बार हटा चुके हैं।

लाखी चली गई। चलते समय उसने मुड़कर एक आंसू और ढल-काया था।

योजना के अनुसार मार्नासह भी किले से बाहर लड़ने के लिए चला गया।

मृगनयनी ने दूसरे दिन अपनी चित्रशाला के उस अधूरे चित्र के कर्तव्य-दिशा वाले अंश में कुछ और रंग भरे। परन्तु चित्र अब भी अधूरा था।

[९९]

मरैना के निकट माधवपुर के ऊँचे नीचे मैदानों में पहली टक्कर सिकन्दर के हरावली लश्कर से मानसिंह के दल की पहले हुई। मानसिंह का हाथी-दल सिकन्दर की सेना के हाथी-दल के सामने नहीं था परन्तु लड़ते-लड़ते इन दोनों दलों की मुठभेड़ हो गई। मानसिंह घोड़े पर था। उसको हाथी की अपेक्षा अपने घोड़े पर अधिक विश्वास था।

दोनों पक्षों के हाथी-समूह बिखर कर लड़ने लगे। परन्तु हाथी से हाथी टकराते कम थे, चीखते चिंघाड़ते अधिक थे। हाथियों के हौदों पर से दोनों दल तीरों की वर्षा कर रहे थे। मोटा भारी कवच झिलमटोप और तन बचाये हुये थे इसलिये एक दूसरे को बहुत कम हानि पहुँचा सके। करारी लड़ाई पैदलों और सवारों की हुई।

मानसिंह ने देखा दिल्ली की सेना के एक अङ्ग में विचित्र आकार प्रकार के सिपाही बहादुर लड़ रहे हैं। रङ्ग तांबिया माथ सकरे आँखें छोटी नाक चिपटी-चिपटापन मानो नाक तक आ रहा हो—मुँह चौड़ा जैसे बिना हँसी के हँस रहे हों। गाल चमड़े की सुराहियों जैसे फूले हुये और गाल की हड्डी उठी हुई, सिर कन्धों पर सटा हुआ मानो गर्दन हो ही नहीं। ठाढ़ी के ऊपर बाल बहुत थोड़े। उसने इनका वर्णन कहीं पढ़ा था—हूण हैं आज कल के मुगल यशोधर्मन ने कभी पहले इनके पुरखों को ठोका था आज मैं देखता हूँ। मानसिंह ने तुरन्त तोमरों के घुड़सवार दल को इन पर टूट पड़ने की आज्ञा दी।

तोमर टूट पड़े। मुगल पैदलों की सहायता के लिये तुर्क-सवार आये परन्तु तोमरों का प्रथम प्रहार ही पड़ चुका था। मुगल सैनिक पास पर गोल कर लड़ने लगे पर तोमर सवार आँधी की तरह टूट पड़े। तुर्क सवार उन पैदलों की रक्षा करने नहीं आ पाये थे कि तोमर सवारों ने उनको लथपथ किया डाला। तुर्क सवारों से मानसिंह का दल 'हर, हर महादेव!' की पुकार लगाता हुआ जा भिड़ा। तुर्क सवारों ने कड़ बिना

किया तोमर सवार जिन्होंने मुक्त पैदलों की पाँतों को तोड़ा था दूसरी ओर से उन पर झपट पड़े। थोड़ी ही देर में तुर्क सवारों को पीछ हटना पड़ा। उनके साथ ही दिल्ली की सेना के अन्य पैदल सिपाही पीछे हटे। फिर दिल्ली की सेना लड़ते-लड़ते पीछे हटती ही गई। दिल्ली के हाथी समूह ने जब अपनी सेना के एक बड़े पंख को पीछे हटते देखा तो वह भी लौट पड़ा। संध्या तक यही होता रहा—दिल्ली की सेना का यह बाजू हटता हुआ बीच वाले खण्ड से आ मिला और डट गया। मानसिंह ने अपनी सेना को बटोरा और एक सुरक्षित स्थान पर रात के लिये पड़ाव डाल लिया।

प्रातःकाल फिर युद्ध आरम्भ हुआ। अब दिल्ली की सेना बहुत सावधानी के साथ बढ़ रही थी क्योंकि पहले दिन उसकी काफ़ी हानि हो चुकी थी। सेना का संचालन सिकन्दर लोदी कर रहा था।

मानसिंह के पक्ष का सम्पर्क बीच वाली टुकड़ी से हो गया जिसका नायक अटल था। पीछे पठारें और जङ्गल रक्षा के लिये थे और उनके पीछे राई की गढ़ी। बायें हाथ की तरफ तोमरों का एक दल नरवर की ओर भेजी गई दिल्ली की सेना से टक्कर लेने की फ़िकर में था परन्तु यह टक्कर नहीं हुई। सिकन्दर ने रात में ही उस टुकड़ी के पास आदेश भेज दिया था कि लौट कर मानसिंह की पूरी सेना पर पीछे से धावा मारे।

दोपहर तक लड़ाई साधारण गति के साथ चलती रही। तीसरे पहर उसमें अचानक तेजी आ गई। मानसिंह के बायें बाजू से कतराकर नरवर वाले वाली टुकड़ी ने पीछे से धावा किया। वह पठारों और जङ्गलों में होकर आ गई थी।

मानसिंह ने अटल और अन्य सरदारों से कहा तुम लोग केन्द्र को सँभाले रहना। केन्द्र को छोड़कर तुर्क आगे न बढ़ने पावें मैं निबटता हूँ इन लोगों से।

अटल और दूसरे सामन्त उत्साह के साथ केन्द्र को थामकर लड़ने लगे। मानसिंह पैदलों और घुड़सवारों को लेकर पीछे से आने वालों पर झपट पड़ा। हाथियों के दल को उसने इनके पीछे भेजने की आज्ञा दी।

मानसिंह के लिये बाजू की लड़ाई कठिन पड़ रही थी तो दिल्ली की सेना के लिये और भी अधिक कठोर। दिल्ली की सेना को धीरे धीरे पीछे हटना पड़ा। संध्या तक मानसिंह ने उस सेना को बिलकुल हटा दिया परन्तु वह हटकर फिर सिकन्दर के खण्ड के सम्पर्क में आ गई। मानसिंह का हाथी-दल इसका पीछा न कर सका।

इस खण्ड को एक नये कोण से आता हुआ देखकर अटल का केन्द्रीय दल हिल गया। सिकन्दर ने जोर का आक्रमण किया। नये कोण से आने वाले दल ने भी धक्का पहुँचाया। मानसिंह के केन्द्र को उत्तर की ओर हटना पड़ा। सिकन्दर सावधानी के साथ रुका और बढ़कर रुक गया। रात में मानसिंह अटल वाले दल के साथ सम्पर्क स्थापित न कर पाया। सवेरा होते ही लड़ाई फिर शुरू होगई। अटल के दल को थोड़ा और हटना पड़ा। अब उसके लिये सिवाय ग्वालियर या राई जाने के और कुछ नहीं सूझ रहा था। राई की गढ़ी निकट थी। वहां से मानसिंह का सम्पर्क हाथ लग सकता था इसलिये रात होते ही वह अपने दल के साथ राई की गढ़ी में आगया और वहां से लड़ने की योजना बनाली।

दिन में मानसिंह को दक्षिण की दिशा से सिकन्दर की एक बड़ी टुकड़ी से सामना करना पड़ा। यह टुकड़ी अर्द्ध गोलाकार सा बनाकर लड़ रही थी। एक सिरे पर लम्बी होकर अटल के दल से और दूसरे सिरे पर मानसिंह के दल से भिड़ रही थी। मानसिंह का केन्द्र पीछे था बचा था इसलिये सिकन्दर ने अपने अर्द्ध गोलाकार में से एक टुकड़ा का लम्बा तीर सा बनाया। मानसिंह ने सिकन्दर की यह चाल परख ली और उसने दो बाजुओं में अपनी सेना को बांटकर दोनों पक्षों को पीछे हटाने का प्रयास किया। परन्तु सिकन्दर का वह तीर राई की दिशा में बाजू की तरफ बढ़ते

घसकर फैल चुका था। रात हो जाने के कारण मानसिंह इसको पीछे न हटा सका।

तीन दिन के युद्ध में सिकन्दर की बहुत हानि हुई, परन्तु चौथे दिन उत्तर की दिशा में उसको कुछ आशा दिखलाई पड़ गई और उसने एक दल चक्कर काटकर ग्वालियर के निकटवर्ती क्षेत्र को अधिकार में करने के लिये भेजा। मानसिंह को मालूम होगया। उसको ग्वालियर के दक्षिण पश्चिम पनिहार गाँव की ओर से सिकन्दर के इस उत्तरी बाजू और ग्वालियर के बीच में आना पड़ा। उसे जान पड़ा कहीं ऐसा न हो कि ग्वालियर घिर जाय और हमको बाहर से लड़ना पड़े। मानसिंह के इस तरफ मुड़ते ही सिकन्दर ने अटल की टुकड़ी को राई गढ़ी में घेर लिया। गढ़ी ऊँची पहाड़ी की चोटी पर थी। उसके दोनों ओर गहरी खोहें थीं। पूर्व की ओर, गाँव और सांक नदी की तरफ बड़ी ऊँचाई थी। दक्षिण, उत्तर और पूर्व इस प्रकार सुरक्षित थे परन्तु पश्चिम की दिशा में गढ़ी के नीचे भूमि बहुत नीची न थी। उसने वहीं दृढ़ता के साथ सामना करने का निश्चय किया।

मानसिंह को अटल का कोई समाचार नहीं मिला। उसको विश्वास था कि पूरी टुकड़ी राई-गढ़ी में होगी परन्तु ग्वालियर की पूरी रक्षा का उपाय किये बिना वह राई गढ़ी की ओर नहीं जा सकता था। तो भी उसने सिकन्दर की उत्तर वाली टुकड़ी पर प्रबल वेग के साथ धावा मारा। सिकन्दर की उस टुकड़ी को हानि के साथ पीछे हटना पड़ा। सिकन्दर राई गढ़ी के घेरे के लिये अपने एक दल को छोड़कर आगे बढ़ा। मानसिंह ने उसकी उत्तर वाली टुकड़ी को पीछे हटाया ही था कि सिकन्दर का प्रधान दल दक्षिण की दिशा से उसकी टक्कर में आ गया।

मानसिंह ने वेग के साथ सामना किया। सिकन्दर का आक्रमण भी विकट तेज़ी के साथ हुआ था। सिकन्दर ने ग्वालियर के किले और ग्वालियर के निकटवर्ती पर्वतों को घेरने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु वह बार बार विफल हुआ। समुद्र की बड़ी और भारी लहरों की तरह उसके

सवार तोमरों पर टूटते और जैसे समुद्र की लहरें पहाड़ से टकरा टकरा कर पीछे लौट लौट जाती हैं ऐसे ही उनको हट-हट जाना पड़ा।

रात होने पर मानसिंह ने देखा कि ग्वालियर के क़िले में पहुँचकर वहां से युद्ध का संचालन करना ज्यादा अच्छा होगा इसलिये वह क़िले में ससैन्य चला गया। सिकन्दर ने ग्वालियर और मानसिंह की बिखरी हुई फ़ौज को सवेरे तक घेर लेने की योजना बनाई थी परन्तु भोर होते ही उसने देखा कि सेना और पूरे सामान के साथ मानसिंह क़िले के भीतर चला गया है। उसको अपने कई पुराने अनुभवों का स्मरण था। इसी प्रकार मानसिंह को सिकन्दर के पिता बहलोल ने उन्नीस बीस वर्ष पहले घेरकर हराने का प्रयास किया था और इसी तरह कई बार उसने स्वयं प्रयत्न किया था परन्तु प्रत्येक प्रयत्न पराजय में परिणत हुआ। वह उन अनुभवों को दुहराना नहीं चाहता था।

क़िले में घुसने के लिये या क़िले पर चढ़ जाने के लिये कोई भी साधन असम्भव था। पिछले बीस वर्षों में जो जो कोशिशें की गई थीं वे सब असफल हुई थीं। ढाई सौ हाथ की खड़ी डांग के क़िले ने आक्रमणकारियों के हज़ारों सिपाहियों के प्राण इन प्रयत्नों में ले लिये थे।

उसने अपने प्रधान जासूस को बुलाया।

'कहां है वह सुरङ्ग?' सिकन्दर ने पूछा।

दुबले पतले शरीर के जासूस ने—उसके चेहरे या सिर पर लम्बे बाल नहीं थे—कहा 'जहांपनाह यहां के इन्हीं जङ्गलों पहाड़ों में कहीं है। मानसिंह से सिर्फ़ इतना ही निकाल पाया था। कल दिन में तलाश कर ली जावेगी।'

दिन निकलने पर मानसिंह और सिकन्दर की सेनाओं की कोई मुठभेड़ नहीं हुई। सिकन्दर ने चारों तरफ़ से ग्वालियर को घेर लिया परन्तु दोनों पक्षों के सैनिक थकावट के मारे चूर हो रहे थे, इसलिये विश्राम

करते रहे। जासूसों ने सुरङ्ग का पता लगा लिया और सिकन्दर को जगह दिखलादी परन्तु वह बन्द थी।

'इसको खोला जा सकता है'—सिकन्दर ने कहा,—'फिर दिन और रात में ग्वालियर पर हमला ऊपर और नीचे दोनों तरफ़ से किया जाय।'

सुरङ्ग को खोलने का प्रयत्न किया गया कुछ दूर तक ढोके पत्थर मिले उनको निकाल लिया गया परन्तु उसके बाद ठोस चुनाई मिली जो टस से नहीं हिलाई जा सकती थी। सिकन्दर को निराश होकर लौटना पड़ा। रात में विजयी का शिविर सतर्कता के साथ विश्राम-मग्न होगया। सबेरे कोई नई तरकीब निकालूंगा सिकन्दर सोच रहा था। आधी रात के लगभग सिकन्दर के शिविर की सतर्कता कुछ शिथिल पड़ गई। चोर का हल्ला हुआ। विश्राम मग्न सैनिक जाग पड़े। फड़फड़ाकर उठ बैठे, और हथियार पकड़ कर इधर उधर फैल गये। धुंधले प्रकाश में तीर आ आकर बरस रहे थे। बहुत से सिपाहियों के मारे जाने के बाद सिकन्दर की सेना ग्वालियर की सेना के निकट आ पाई। तलवार का युद्ध होते होते फिर कई ओर से सिकन्दर की सेना पर तीरों की बौछारों पर बौछारें आने लगीं। सेना को कुछ पीछे हटना पड़ा। जब तक तितर बितर सैनिकों को इकट्ठा करके व्यवस्था स्थापित की जावे तब तक लड़ाई के लिये वहां कोई रहा ही नहीं। रात के तीसरे पहर सिकन्दर ने देखा मानसिंह का कोई दस्ता किसी न किसी सुरङ्ग से होकर आया और कुछ हानि पहुँचाकर लौट गया जरूर कहीं कुछ सुरंगें और हैं। जिनका पता जासूसों को नहीं लगा था। पता दिन में लगाया जावेगा उसने संकल्प किया।

[३]

दिन भर छापामार होती रही परन्तु सुरङ्ग का पता नहीं चला। सिकन्दर ने सोचा राई गढ़ी को ही समाप्त करदें तो कुछ तो सन्तोष मिल जायगा।

ग्वालियर के घेरे को थोड़ा सा और आगे बढ़ाकर उसने राई गढ़ी पर ध्यान को केन्द्रित किया। अगर कोई सुरङ्ग है तो घेरे के बाहर होगा। इसलिये अब रात में छापे का डर नहीं रहेगा उसने कल्पना की।

राई गढ़ी पर हमले पर हमले किये गये परन्तु सफल नहीं हुये। गढ़ी की बुर्जों पर बड़े बड़े पत्थरों के ढेर थे जो ऊपर से लुढ़काये जाकर आक्रमणकारियों को चकनाचूर कर देते थे। तीरों की बौछार अलग हो रही थी।

उस रात सिकन्दर की सेना पर कोई छापा नहीं पड़ा। दूसरे दिन सुरङ्ग की खोज की गई कोई पता नहीं लगा। राई गढ़ी पर फिर आक्रमण किये गये परन्तु संध्या होने पर फिर वही विफलता हाथ लगी।

आधीरात के उपरान्त उसकी छावनी पर फिर छापा पड़ा। अबकी बार का वेग तीव्र था। परन्तु सिकन्दर भी उसका सामना करने के लिये सावधान तैयार था। छापामार प्रचण्डता के साथ लड़ते-लड़ते पीछे हट रहे थे। सिकन्दर और सब छापामारों को किसी तरह भी पकड़ना चाहता था। उसके बहुत सिपाही हताहत हुये। और होते होते छापामार एक घाटी में दल को छोड़कर कहीं गायब हो गये। इस घाटी से बाहर किसी भाँति भी उबार नहीं कर सके और उनका विनाश हो जाना पड़ा। लड़ते लड़ते उस टोली में दल में केवल एक बचा बाकी सब लड़ते लड़ते मारे गये। जो बचा था वह भी बेतरह घायल था। सिकन्दर ने उसकी मरहमपट्टी करवाई परन्तु वह मरणासन्न होचुका था।

सिकन्दर ने उससे पूछताछ। पूछा तुम लोग किधर से आते थे ?

घायल ने किले की ओर संकेत किया ।

सिकन्दर को प्रोत्साहन मिला । दूसरा प्रश्न किया 'किसी सुरंग में होकर आये थे ?'

आहत ने हामी भरी ।

सिकन्दर को और प्रोत्साहन मिला । पुचकार और बहुरी की ।

'कहाँ खुली है वह सुरंग मेरे जवान ?

आहत ने टूटे स्वरों में बतलाया 'बायें हाथ पर जो बावड़ी है उसमें होकर ।

सिकन्दर प्रसन्न हो गया । तुरन्त कुछ सिपाहियों को खोज करने के लिए भेजा । सिपाही लौटकर नहीं आ पाये थे कि घायल का प्राणान्त हो गया ।

सिपाहियों ने लौटकर बतलाया कि बायें या दायें हाथ की किसी भी बावड़ी में सुरंग का कोई चिह्न नाम नहीं है ।

सिकन्दर ने मृत योद्धा की तरफ आँख फेरी । उसके चेहरे पर फीकी मुस्कान थी । मर चुका था इसलिये उससे अब और कुछ पाने की आशा न थी । सिकन्दर स्वयं बावड़ी में सुरंग के संदेह की जाँच के लिये गया । वास्तव में वहाँ कहीं भी सुरंग का निशान नहीं था । लौट आया ।

सहसा मृत सिपाही के चेहरे पर निगाह गई । उसकी मुस्कान मानो चिढ़ा रही हो ।

सिकन्दर बोला 'इसने धोखा दिया । कमबख्त मरते मरते तक झूठ बोलते हैं ।'

ग्वालियर के घेरे के पहरे-चौकियों का चौकस प्रबन्ध करके उसने रात वहीं पर भयंकर हमला बुलवाया ।

हमले करते करते रात होने को आई पर अन्त में वही ढाक के तीन पात । कुछ रात बीते गढ़ी के पास बात शान्त हो गई ।

लाखी ने लकड़ियों का एक बड़ा ढेर लगवा कर आग लगवा दी। दो घड़ी में ज्वाला पवन से बातें करने लगी। हू हू करके लौ ऊँचे और ज्यादा ऊँचे जाने लगी।

ग्वालियर में इसका प्रकाश दिखलाई पड़ा। मानसिंह ने उसको देखा मृगनयनी ने भी। दोनों उसके अर्थ को जानते थे। दो घड़ी पीछे वह प्रकाश कम हो गया। इसी समय मानसिंह की भेंट मृगनयनी से हुई।

'महाराज राई गढ़ी अटलसिंह और लाखी संकट में हैं।' मृगनयनी ने कहा।

मानसिंह चुप था।

'इतना तो मालूम पड़ गया कि दोनों राई गढ़ी में हैं। उनके संकट का निवारण कल करूँगा। रात के चौथे पहर ऐसा प्रचण्ड आक्रमण करूँगा तुर्कों पर कि वे बच गये तो कभी नहीं भूलेंगे।

'परन्तु आप अपने को संकट में बहुत न डालना।

'ह! ह!! ह!!! संकट में घुसने के समय उसके आगे और बड़े रूप का भी ध्यान रखना पड़ता है क्या!

अब चित्रशाला के उन अधूरे चित्र में अधिक रंग भरने का समय आ गया है।

'मुझको एक रात के लिये मोह हो गया था आगे नहीं होगा नाथ'। मैं बाहर साथ में न रह सकूँगी इसी का पछतावा है।'

'सिकन्दर किले के बहुत निकट घेरे को समेटता आ रहा है यदि व्यूह को तोड़कर उसकी सेना को नष्ट कर सका तब तो ठीक ही है, यदि ऐसा न हुआ तो घेरा अवश्य निकट आवेगा फिर करना तुम मनचाहा नट्य वेश।

राई गढ़ी से दिखलाई पड़ने वाला प्रकाश बिलकुल मन्द पड़ गया। आभा का एक बिखरा हुआ सा धब्बा मात्र क्षितिज पर रह गया था। मानसिंह अपनी योजना के सम्बन्ध में लगा।

राई गढ़ी के आस-पास घेरा डाले हुये सैनिकों को यह ऊँचा तीव्र प्रकाश देखकर कुछ घबराहट हुई, जान पड़ता है राजपूतनियों ने जौहर किया है और राजपूत हम लोगों पर अब टूटने वाले ही हैं। लौ के शांत हो जाने पर जब कहीं से कोई बाधा नहीं हुआ और कान लगाने पर भी गढ़ी में कोई चहल-पहल नहीं सुनाई पड़ी तब जी में जी आया। फिर इतनी आग जलाने का मतलब? ठण्ड इतनी है नहीं कि तापने के लिये आग का इतना बड़ा झण्डा फहराया गया हो! कुछ बात जरूर है। सरदारों ने सलाह की।

कुछ मनचले रात में ही गढ़ी पर चढ़ जाने और भीतर जाकर गढ़ी का फाटक खोलकर, बाहर वालों को भीतर करके गढ़ी के घेरे को अवि-लम्ब समाप्त करने पर तुल गये। उन्होंने रस्सियों और नसैनियों का प्रबन्ध किया और गढ़ी पर चढ़ जाने की योजना में लग गये। भीतर आग के शान्त हो जाने पर लाखी ने अटल को बुला कर कहा 'ग्वालियर में विदित हो गया होगा कि हम लोग संकट में हैं।'

'वहाँ भी घेरा पड़ा होगा। देखें कब क्या होता है। महाराज शायद कब कुछ कर सकें।'

'आज रात ही में कुछ होगा।'

'दोनों पक्ष लड़ते-लड़ते थक गये हैं रात में कुछ नहीं हो सकता।'

'आज की रात जागने की है।'

'मेरी आँखें तो टूटी पड़ रही हैं।'

'तुम सो जाओ। मैं जागूँगी।'

गाँव के कुछ किसान जो शरण के लिये गढ़ी में आ गये थे अटल के पास आये। उन्होंने प्रणाम नहीं किया—नियम हो गया था कि जितनी बार जागीरदार या गढ़पति के सामने कोई जाय चाहे वह सैनिक हो या न हो प्रणाम करे।

[illegible] के पास है। पास किसी ओर से चौकी का काम लेता भया हम गांव लोटेंगे।

भैया! रावसाहब भी नहीं करा!!

अटल कभी नहीं भूला कि इन्हीं लोगों की मूरखता के कारण उसको अपने दिनों उन नटों के साथ भटकते फिरना पड़ा था।

अटल कर बोला, इस तरह हमारे पास धावा आता है! [illegible] तक का सऊर नहीं!!

किसान नहीं समझे। सकपका गए।

उनका मुखिया बोला, जो जैसी कहो करेंगे। बहुत थक गए हैं।

अटल ने आज्ञा दी—'अपने काम पर। [illegible] लिये तो हम [illegible]'

किसानों को विश्वास था कि अपनी जागीर की रक्षा के लिए लड़ रहा है। बाहर से घुड़सवार चल गये। लाखी को मालूम हुआ था कि इसे [illegible] पर उनकी चौकी है जहाँ से [illegible] के ऊपर चढ़ जाने की संभावना कम है।

उनके चले जाने पर लाखी ने मन में कहा, [illegible] सा आया। मैं [illegible] के लिए जाती रहूँगी।

वह [illegible] थोड़ा सा [illegible] फिर [illegible] देखा और सो जाना।

[illegible] और [illegible] गया। लाखी ने तीरों भरा तरकश उठाया कमर में तलवार बाँधी कन्धों और छाती पर [illegible] और कसी।

अभी [illegible] पर [illegible] हुआ [illegible] पाया। [illegible] पहुँची जहाँ उन किसानों की चौकी थी। किसान [illegible] रहे थे [illegible] थे।

उसने उनसे धीरे से कहा 'तुम मोल पर जाकर सो जाओ। मैं थोड़ी देर यहाँ ठहर कर पहरे को बदल दूँगी।'

किसान चौंक पड़े। पहरा देने का झूठा हठ करने लगे।

लाखी दृढ़ थी। उसने दुलार के साथ उनको विदा कर दिया।

किसान चले गये दोनों ही अपने गांव के हैं पर कहाँ लाखी और कहाँ वह।

गढ़ी में इस ठिये के नीचे एक बड़ा पेड़ था जिसकी गुम्मट और शाखें ऊपर तक आई थीं। इसकी छाया में वे किसान पहरा देते देते सो उठते थे। लाखी उत्सुकता के साथ बैठ गई। उसकी आँखों में नींद या ऊँघ का लेश मात्र भी न था।

थोड़ी देर बैठी रह कर वह खड़ी हो गई। कंगूरों के झरोखों में होकर नीचे की ओर देखा। अटूट अन्धकार। निविड़ वन का कोई भी पेड़ नहीं दिखलाई पड़ रहा था। ऊपर तारे छिटके हुये थे। दूर की पहाड़ियाँ लम्बी तानें सोतीसी जान पड़ती थीं। टेढ़ी तिरछी बहती हुई सांक नदी की पतली रेखा चक्कर भाँवरी मार रही थी। दूरी पर डेरा डालने वालों के डेरे की आग सुलग-सुलग कर राई गढ़ी के संकट को बता-जता दे रही थी। वैसे राई की डांग में नाहर इत्यादि जङ्गली जानवर रात में प्रायः बोला करते थे परन्तु आक्रमणकारियोंकी दौड़ारोंकी के मारे वे बहुत दूर खिसक गये थे। सिवाय झींगुरों की चीं चीं के और कुछ नहीं सुनाई पड़ता था। सुनसान को छेदती हुई कभी कभी गढ़ी के भीतर 'जागते रहो! जागते रहो!!' की पुकारें भर सुनाई पड़ जाती थीं।

लाखी को उन शून्य-भेदी पुकारों से ऊपर कंगूरों के नीचे सघन अन्धकार के पेट में कुछ सर-सराहट सुनाई पड़ी। दिखलाई तो कुछ पड़ नहीं रहा था कान लगाकर सुनने लगी। थोड़े से शब्द निकलता रहा। लाखी ने अनुमान लगाया जङ्गल का कोई पशु होगा। दीवार से टिककर बैठ गई। नरवर की वह रात उसको याद आई। ऐसी ही रात थी।

इससे भी अधिक ऊँची दीवार। नटों की बस्ती के पाटों के बीच में हम दोनों। थोड़ी सी भी चूकती कि सब समाप्त हो जाता। अब तो बहुत सुरक्षित हूँ।

नीचे फिर खरखराहट हुई। लाखी खड़ी हो गई। ध्यान लगाकर सुना। कुछ नहीं सुनाई पड़ा। लाखी को विश्वास हो गया जङ्गल का कोई जानवर छिपते-लुकते पानी पीने के लिए नदी की ओर जा रहा है। खरखराहट बढ़ी। लाखी का विश्वास और भी पुष्ट हुआ। फिर देर तक खरखराहट नहीं सुनाई पड़ी।

लाखी ने कल्पना की ग्वालियर में क्या हो रहा होगा। अटल को देख लिया होगा उन सबों ने। कल राजा सहायता के लिये आवेंगे राई गढ़ी का उद्धार होगा और मैं फिर अपनी निन्नी से जा मिलूँगी। लाखी कई रात की जागी थी। नींद आ गई। दीवार के सहारे सिर लटक गया उसके तेग कमान का तकिया सा बन गया। स्वप्न हुआ जैसे अटल नटों का झुण्ड पहाड़ की झाड़ी के पीछे से खड़खड़ाता-भड़भड़ाता हुआ भागा चला आ रहा हो और वह एक हाथ में कमान और दूसरे में तीर लिए हुए निशाना बाँधने की धुन में हो डोरी पर तीर चढ़ाया और डोरी खिंचती न हो। घबरा कर उसने आँख खोली और मीड़ी। कमान पर हाथ डाला और तरकश को टटोला सब जहाँ के तहाँ थे। अटल तो वहाँ नहीं थे परन्तु बगल में थोड़ी दूर धम्म का शब्द सुनाई पड़ा। अरे! थोड़ी तो कुछ लोग कँगूरों पर से प्राचीर पर उतरते दिखलाई पड़े। ये कौन हैं? उसके मन में प्रश्न उठा। क्या ये अपने हैं? इतने में कँगूरों पर एक सिर और दिखलाई पड़ा। वह आकाश की ओर ऊँचा हुआ। किसी ने दीवार के छेद पर पैर रक्खा और धम्म से नीचे उतर आया। फिर वह कँगूरों के अन्तराल में से बाहर की तरफ झाँका और धीरे से किसी ऐसी भाषा में बोला जिसको वह नहीं समझ सकी। ये अपने नहीं हैं तुर्क हैं उसको कोई सन्देह नहीं रहा। दूर की बुर्ज से सुनाई पड़ा 'जागते रहो!

लाखी ने पास का पटाफर आक्रमणकारियों की गिनती करनी चाही। वह पेड़ की छाया के भीतर थ पथरीली बन घाटी को चीर के गोलों की दूर झुरमुट को पीछे करती हुई गुप-चुप कर रहे थे। उनमें से एक दीवार से चिपटा बाहर से भीतर वालों को भीतर उतारने में सहायता कर रहा था।

लाखी ने अपना कर्तव्य एक क्षण मन के भीतर निश्चित कर लिया।

बहुत हौले से कमान और तरकस को कन्धे पर से उतारा। धीरे से मुड़ी। एक बाण प्रत्यंचा पर चढ़ाया और प्राचीर पर एक नये निकले हुये सिर का निशाना बाँधकर छोड़ दिया। इधर तीर छूटा उधर चीख निकली और धमाधम्म सरसराकर पीछे के पीछे हो धम्म शब्द के साथ कुछ और चढ़ने वालों को अपने साथ लेता हुआ गहरे खाबरे में नीचे खड़ी हुई भीड़ को कुचलता हुआ समाप्त हो गया। वहाँ हल्ला-गुल्ला हुआ और वहाँ खड़ी हुई उस झुरमुट में खलबली मच गई। फिर लाखी की कमान से चार तीर सनसना कर छूटे और उस झुरमुट पर टूटे। कुछ गये जिन्होंने आह-कराह पैदा की, कुछ पानी के तवों से टकरा कर टूट गये। उस झुरमुट ने भी समझ लिया कि तीर कहाँ से आ रहे हैं। वहाँ से भी लाखी पर तीरों की बौछार हुई। कुछ सनसनाते हुये निकल गये। कुछ तवों से टकरा कर झनझना गये। एक उसके कन्धे के नीचे से पसलियों के जोड़ के भीतर आ लगा। परन्तु लाखी ने तीर कमान को नहीं छोड़ा।

वह झुरमुट बिखर गई थी। लाखी को दो एक लड़े असगुन पड़े दिखलाई दे। जा सके थे उन पर लाखी ने अन्तिम तीर छोड़े। उन्होंने दीवार के कंगूरे पर चढ़ने की कोशिश की परन्तु रस्सी या नसेनी का पता न लगने के कारण फिर नीचे आ रहे।

लाखी खड़ी हो गई। उसने तलवार निकाली। खाँसी आ गई और लाखी के साथ मुँह से रक्त की फुहार छूट पड़ी।

'इसको मार कर मरूँगी' उसने निश्चय किया। फिर धाँसी फिर वही पुकार। मुट्ठी में तलवार ढीली पड़ गई। लाखी ने सोचा हमला कर देना चाहिये। चिल्लाई। मुँह से और कुछ न निकला। फिर चिल्लाई और दीवार से सटकर खड़ी हो गई। 'जागत रहो!' की पुकार सब के कानों ने उसकी पुकार को सुन लिया। मशालें लेकर दौड़ पड़े।

आक्रमणकारियों में से एक तलवार लेकर लाखी की ओर झपटा। ऊपर आती हुई विपत्ति की उत्तेजना ने उसको बल दिया। तलवार वाली मुट्ठी कस गई। आक्रमणकारी ने जैसे ही उस पर वार किया वह खम्भे से सट गई। सिर पर आई हुई तलवार का पूरी मार आक्रमणकारी के हाथ के निकट खम्भे में धँसकर [illegible] पहुँच गई। वह चीत्कार करके करवट के बल आ गिरा। मशाल वाले आ गये।

उन्होंने देखा लाखी बहुत घायल है। आक्रमणकारी [illegible] दिन रहा है और कुछ दूर पर कदमों का ढेर सा लग रहा है। कुछ मरे हुए शव पड़े। मशाल की रोशनी में उन्होंने कंगूरों से लटके हुये कुछ रस्सों को देखा। पहले इन रस्सों को तुरन्त काट दिया फिर लाखी के पास आये।

लाखी के मुँह से कराह के साथ निकला 'मेरे स्वामी का स्वामी को बुलाओ।'

'वहीं लिये चलते हैं।' एक ने तुरन्त कहा।

वह बोली 'नहीं यहीं बुला लाओ। समय मत खोओ।'

उनमें से कुछ दौड़कर अटल को लिवा लाये और अटल लाखी से मिला।

अटल ने देखा लाखी के मुँह से [illegible] रहा है [illegible] और [illegible] रही है। वह उससे लिपटने को हुआ। लाखी ने [illegible] नहीं [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

अटल अपने डेरे पर चला आया। वहाँ से चिता का प्रकाश दिखलाई पड़ता था। क्या इस प्रकाश को किसी ने भी देखा होगा? उसके मन में प्रश्न उठा। गले में कुछ अटकने को हुआ। उसने तुरन्त दबोच लिया। प्रकाश की ओर से मुँह को फेरकर उसने अपने दलपतियों को आज्ञा दी 'एक पहर रात रहे फाटक खोलकर तुर्कों पर टूट पड़ना है।

जिनको अपने प्राण प्यारे हों वे जा सोवें जिनको तोमर, भदौरिया और गूजर नाम प्यारा हो केसरिया बाने पहिन लें। यदि शत्रु की पांतों को चीर-फाड़कर निकल गये तो फिर ग्वालियर में।

[१८]

रात के सन्नाटे का केवल पहरे वालों की तालियाँ हिलोर रही थीं। ग्वालियर किले के पश्चिमवर्ती धरमत नामक फाटक की टेढ़ो-मेढ़ो सिढ़ी राह से मानसिंह के पैदल सैनिक उतर और गूजरी महल के पास वाले पूर्वीय फाटक से सवार और हाथी। दो दिशाओं से सिकन्दर की फैली हुई फौज पर प्रचण्ड आक्रमण हुआ।

सिकन्दर इस तरह के आक्रमण के लिये तैयार न था। उसका ख्याल था कि किसी अज्ञात सुरंग में से कुछ छापा-मार ही उपद्रव करते रहेंगे। जो युद्ध हुआ उसकी सिकन्दर को आशङ्का न थी।

एक ओर से मानसिंह के हाथियों ने रौंदना कुचलना शुरू कर दिया दूसरी ओर से सवारों ने तलवार बरसाई; तीसरी ओर से पैदलों ने तीरों का प्रलय रोप दिया।

सिकन्दर की पूरी सेना कांप गई, हिल गई और हटती हुई सहम गई। वह बार-बार जमकर युद्ध करने पर तुलती और बार-बार उसको पीछे हटना पड़ता। मैदान में युद्ध हुआ घाटियों-पहाड़ों पर हुआ परन्तु सिकन्दर की सेना के पैर न टट सके। सिकन्दर की कुछ सेना ग्वालियर के दक्षिण की ओर हटी कुछ राई की दिशा में और उसका एक अंश हाथियों से घिर गया जो लड़ते-लड़ते सबेरे के पहले ही नष्ट हो गया। इधर से उधर मानसिंह उत्साह के साथ युद्ध का संचालन कर रहा था। आज्ञाकारी और तत्काल पालन करने वाले और समाचार लाने वाले दूत मानसिंह की रक्षा के साथ काम कर रहे थे। प्रातःकाल के लिये अभी कुछ देर थी।

सिकन्दर के पास राई की ओर से कुछ घुड़सवार दौड़े आये। उन्होंने बतलाया कि राई का घेरा डालने वाली फ़ौज पर कोई नया दुश्मन चढ़ आया है और बेतरह लड़ रहा है। सिकन्दर को वास्तविक स्थिति का पता नहीं लगा।

राई का फाटक रात के तीसरे पहर के लगभग खुल गया था। केसरिया बाना पहिने राजपूत तोमर सशोरिये बजर गज—सिकन्दर की सेना पर सघन पांतों में टूट पड़े। घेरा छिन्न भिन्न हो गया। परन्तु घेरे वालों का एक अङ्ग उस समय सचेत था जब गाली न सीढ़ी और रस्सी के सहारे चढ़ने वालों का मुकाबिला किया। इस अङ्ग ने धक्के के दल का तोड़ लिया। घमासान युद्ध होने लगा। सिकन्दर को समाचार देने के लिये द्रुत सवार दौड़े गये। इसमें न किसी को भ्रम नहीं था कि धक्का का दम कहां से था लगा।

धक्का दम दम से बढ़ाया जा रहा था पर अंधकार के कारण ठीक नहीं जाना जाता था कौन और कहां तलवार की बिजली की तरह चमक रहा था। जहां जिसका जहां स्थान खाली हो जाता था। उसके साथी भी इस हठधर्मी के साथ लड़ रहे थे। वे सब आगे बढ़ते बढ़ते घेरे वालों को पीछे ठेलते जा रहे थे। राई के इन सम्मुख वालों को मृत्यु सुलभ ही नहीं असाध्य भी लग रही थी।

प्रातःकाल की पौ फटी। उसकी रेखायें लाल नहीं हो पाई थीं कि एक तीर धक्का की छाती में घुसकर अटक गया। धक्का गिर पड़ा। थक तो गया ही था इसलिये घाव से बहुत कम खून बह पाया। एक कल्पना झिलमिलाई—मैं स्वर्ग चलूंगा उसी के साथ जो यहां चली गई है और मैं जा रहा हूं।

युद्ध समाप्त हो गया परन्तु राई के राजपूत सिपाही अभी बाकी थे। वे मरने के साथ मौत को ढूंढ रहे थे परन्तु नहीं मिल रही थी। पठानों का मरण देख कर दो और भी ताव खा गए। लड़ाई होती रही।

सूर्योदय होते ही सिकन्दर को हरकारों ने खबर दी कि नरवर की दिशा से मानसिंह की घुड़सवार सेना आ रही है। नरवर में सिकन्दर के थानेदार की सूचना पहले ही पहुंच गई थी इसलिये दस हजार सवारों का एक दस्ता राजसिंह की सहायता के लिए आ रहा था।

चक्की के पाटों के बीच में पिसना सिकन्दर ने पसन्द नहीं किया। शान्ति के साथ विचार करके उसने राई के जङ्गलों-पहाड़ों में चले जाने का निश्चय किया।

जब राई पर पहुँचा उसने देखा कि लड़ाई समाप्त हो गई है उसके बहुत से सैनिक और अनेक राजपूत हताहत पड़े हैं—मानो सारी दुश्मनी को भूल कर एक जगह आ सोये हों।

हताहतों का प्रबन्ध करके सिकन्दर राई की गैल और पठार के पीछे जा ठहरा। ग्वालियर और राई दोनों बच गये। सिकन्दर ने निश्चय किया अन्तर्वेद से और अधिक सेना को बुलाकर उसके दो भाग करेगा· एक ग्वालियर को घेरे रहे और दूसरा नरवर पर हमला करे, जिसमें एक दूसरे की मदद न कर सकें।

मानसिंह ने सूर्योदय के उपरान्त ग्वालियर के घेरे को समाप्त पाया। उसको राई की चिन्ता थी। ग्वालियर का प्रबन्ध करके राई गया। तब तक सिकन्दर ससैन्य हटकर बहुत दूर निकल चुका था।

अटल और उसके साथियों को केसरिया बानों में लिपटा हुआ रण खेत में पड़ा पाया। उसका माथा ठनका। इन्होंने ऐसा क्यों किया? जौहर की आवश्यकता क्यों पड़ी? मैं आ ही रहा था ध्वज के संकेत को देख लिया था। वे एक दिन और ठहरे रहते क्यों इतने उतावले हो गये? बड़ी सूनी आग पड़ रही है धूम इसमें नहीं दिखलाई पड़ता। देखूँ क्या बात है।

मानसिंह ने गढ़ी का पता लगा लिया फाटक खुले थे। उनमें थोड़े से किसान जन थे। भीतर गया। लाखी के कार्य और मरण का समाचार मिला। उस स्थान पर जहाँ चिता अब भी गरम थी गया। चिता के समीप ही लाखी के गहने ज्यों के त्यों रक्खे हुये थे। उनमें मोतियों की वह माला भी थी जिसको शिकार में उसने गले में पहिनाया था। मानसिंह ने आह के साथ उन गहनों को बँधवा कर एक अङ्गरक्षक के सुपुर्द किया। राई गढ़ी की रक्षा का प्रबन्ध करके ग्वालियर लौट आया।

मृगनयनी ने लाखी के कार्य और मरण का वृत्तान्त और अपने भाई के शौर्य का संक्षिप्त वर्णन जब सुना तब उसने छाती को वज्र की तरह कड़ा किया। हिचकियाँ गले के भीतर लहरों को थपेड़ों की तरह आई परन्तु आंख न बह सकी।

मानसिंह ने लाखी के गहने सामने रख दिये।

बोला, इसमें मोतियों की वह माला भी है जिसे उस दिन शिकार में पहिनाया था।

अब मृगनयनी रो पड़ी। चुपचाप रोती रही। देर में अपने को संयत कर पाया।

कहा, 'मोतियों की माला को उस चित्र के ऊपर टांगूंगी।

मानसिंह उसको सान्त्वना देकर व्यवस्था करने के लिए चला गया। मालवे की सेना को लौटा दिया गया। वह सिकन्दर का सामना करने के प्रयत्नों में और भी अधिक तत्पर हो गया। दूतों ने उसको समाचार दिया कि सिकन्दर बचकर आगरा की ओर लौटता चला जा रहा है। अपनी व्यवस्था को दृढ़ करने के उद्देश्य से उसने सिकन्दर का पीछा करना उचित नहीं समझा।

०

[९९]

सिकन्दर की सहायक सेना इटावे में थी। यमुना चम्बल पार करके उसकी चम्बल की घाटियों पर आ मिली। सिकन्दर ने तुरन्त कूच किया। विशाल सेना के दो बड़े-बड़े भाग किये। एक नरवर की ओर गया यह स्वयं उसका नायक था। दूसरा ग्वालियर पर आया। मानसिंह परिचित कारणों के कारण किले के बाहर बहुत दिनों युद्ध नहीं कर सकता था इसलिये उसने छापा मारों के कई दल दिल्ली की सेना को निरन्तर सताते रहने के लिये छोड़ दिये और वह किले से युद्ध जारी रखने की योजना में लग गया।

सिकन्दर ने नरवर को जा घेरा। नरवर वाले अपने किले को अजेय समझते थे। था भी। मांडू का कोई डर सिकन्दर को नहीं था। चन्देरी को जब चाहे तब दबा सकता था। उसको मालूम हो गया था कि मांडू के सुल्तान का शासन शिथिल पड़ गया है और राजपूतों के समूहों तथा तुर्क-पठानों के समूहों में द्वन्द्व चलता रहता है। नरवर को जीत लिया तो चन्देरी सहज ही मानो मालवा पैरों तले आ जायेगा और ग्वालियर का भी दमन कर लूँगा उसकी धारणा थी।

सिकन्दर की सहायता के लिये राजसिंह भी आ गया। उसकी नजर में नरवर की बपौती के सामने और कुछ नहीं दिखता था। उत्तेजना देने के लिये उसका भाट निरन्तर साथ रहता ही था। उस समय तुर्क-पठानों की राजनीति को प्रेरणा मुल्लों-मौलवियों से मिलती थी और अधिकांश राजपूतों को भाटों से।

राजपूत इस उक्ति के भाट के कायल थे—
पावकै बचावै बचो काज अजपाल हूँ तें
गाढ़िन बचीस बन्द कौन की चाकर तें।

सिकन्दर और राजसिंह ने नरवर पर हमले पर हमले किये, परन्तु नरवर के मोरचे टस से मस न हुये। नरवर वाले आशा करते थे कि पहले

को आशा ग्वालियर से सहायता एक न एक दिन आ जायगी परन्तु उनको क्या मालूम था कि ग्वालियर के चारों ओर घेरा पड़ा हुआ है।

नरवर के घेरे को बारहवां महीना लग गया। सिकन्दर दांत किच किचाकर नरवर के विनाश पर डटा हुआ था। उसको विश्वास था कि हथियारों से नरवर को न जीत सका तो भूखों मारकर तो जीत ही लूँगा।

और ऐसा ही हुआ।

नरवर के भीतर खाद्य सामग्री बिलकुल चुक गई। कुछ दिन पेड़ों की छाल और पत्तों से काम चलाया। फिर अकाल हो गया।

लड़ने वाले मकरध्वज ताल पर एकत्र हुये। पानी पिया। नये जमाने के मकरध्वज का स्मरण किया और नित्य उदय और अस्त होने वाले सूर्य को नमस्कार किया। अपने मन्दिरों की ओर आंख फेरी और भौंहें तानीं।

फिर ऐसी परिस्थिति में जो कुछ होता आया था हुआ—चितायें चुनी गईं स्त्रियों ने प्राणाहुति की। लड़ने वाले किले का फाटक खोलकर तलवारें लिये हुये शत्रुओं की तलवारों पर टूट पड़े। सिकन्दर को विजय मिल गई। परन्तु उसके तारीख नवीस को भी यह लिख लिखना पड़ा कि नरवर ने आत्मसमर्पण भूखों मर कर ही किया।

सिकन्दर को विजय तो मिल गई परन्तु क्रोध बढ़ गया। राजसिंह से कहा "मैं नरवर का नक्शा जब बिलकुल बदल दूँगा तब आपको जागीर में दूँगा। चलना हो तो मेरे साथ भीतर चलो और हथौड़ों का काम देखो, वरना अब दुहाई कर चलता।

राजसिंह उसके साथ किले में नहीं गया। वह समझ गया और भाग्य भी समझ गया, इसलिये उत्तेजित नहीं कर सका।

सिकन्दर किले के भीतर गया। किले के चारों कोनों का चक्कर काटकर निरीक्षण किया। छोटे से छोटे और विशाल मन्दिर थे प्रचुर संख्या में जैन मन्दिर। जैन मूर्तियां शान्त रस की अवतार, शान्ति

का प्रदर्शन करने वाली। परन्तु सिकन्दर सुल्तान शिव की तेजस्विता और वेतवोर्चन्दूरों की शान्ति-सरलता से उसको वास्ता ही क्या था?

सिकन्दर ने नरवर में छः महीने रहकर मन्दिरों और मूर्तियों का ऐसा चकनाचूर किया कि कोई कह ही नहीं सकता था कि नरवर में कभी कोई मन्दिर या मूर्ति थी। सौन्दर्य और शान्ति के प्रतीकों का यह सारा विध्वंस उसने अपनी निगरानी में कराया था। मानसिंह और ग्वालियर को न मिटा पाया तो उनके प्रिय प्रतीकों को तो चूर कर दिया! उसने अपनी कोपाग्नि को इस तरह बुझाने के प्रयत्न किये।

परन्तु उसने व्योपार करने वाले सेठ साहूकारों को नहीं सताया। उनके व्योपार की उसको जरूरत थी और सेठ साहूकारों को उसके टकों की। किसानों का सताना किसी को भी बैसा था। उनकी खोज-संभाल को ही। अपने में सम्पूर्ण परन्तु एक दूसरे से अलग!

छः महीने के बाद उसने राजसिंह को बुलाया और किला तथा नरवर की जागीर उसे देकर ग्वालियर की ओर चल दिया। परन्तु दिल्ली में से निकले उसको डेढ़ साल से ऊपर हो गया था। कोप को नरवर में ठण्डा कर ही आया था ग्वालियर को जीत लेने की आशा थी नहीं इसलिये ग्वालियर से अपनी सेना को समेट कर दिल्ली चला गया।

राजसिंह ने नरवर को प्राप्त करने के बाद कला को भी बुला लिया। किले के एक भाग में उसके पुराने और नए सैनिक आ बसे थे। बाकी उजाड़ पड़ा था। ढाई कोस के घेरे वाला इतना बड़ा किला! कितनी ऊँचाई पर!! कितनी शताब्दियों बाद आज फिर से अपने घर आया!!! राजसिंह ने अपनी इस बड़ी सम्पदा को घुमा-घुमा कर दिखलाया।

उत्तरवर्ती पहला खण्ड डोलाबाड़ा नाम से प्रख्यात था। राजसिंह ने बतलाया 'ढोला हमारे पुरखे थे इस फाटक से कूद कर उनको भागना पड़ा था। वह दूल्हा भी कहलाते थे। आज उनकी जगह मैं दूल्हा बन कर तुम्हारे साथ हूँ।'

देखो इस फाटक के पास के कँगूरे, नीचे झुके हुये हैं। जब राजा नल ने इस स्थान को छोड़ा तब शोक के मारे ये कँगूरे झुक गये थे।

और देखो यह राजा नल का मण्डप है और यह उनके बैठने की चटाई। राजा नल हमारे बहुत पुराने पुरखा होते हैं।

क्या राजा नल इतने दरिद्र थे कि मोटे मोटे तख्त और इस मटियल चटाई पर बैठा करते थे? कला ने सोचा। जब वे दोनों किले के उस भाग में पहुँचे जिसमें दूर दूर तक मूर्तियों के टुकड़े और चूरे पड़े थे तब कला चौंकी।

उसने पूछा 'यह क्या?'

राजसिंह ने सिकन्दर के विनाश कार्य का संक्षेप में वर्णन किया।

उसको लगा जैसे खण्डित मूर्तियाँ खुद आप बोल उठी हों और कह रही हों तुमने हमको क्यों नहीं बचाया? कला की आँखों में आँसू आ गये। गद्गद् स्वर में बोली 'यह सब नाश क्यों होने दिया? कैसे होने दिया'

राजसिंह सकपका गया। एक क्षण में सँभलकर उसने कहा

मैं नहीं था यहाँ उन दिनों इसमें मेरा हाथ नहीं रहा।

'तो आपने रोका क्यों नहीं?'

'मैं अकेला कर ही क्या सकता था? दूसरा मैं मानता था इसे देखता। पर जो हुआ सो हो गया। मैं यहाँ बरस में मन्दिर नया बनवा दूँगा।

मैं यहाँ कभी नहीं आऊँगी। मैं नहीं जानती थी कि क्या नहीं मानता था। नष्ट हो जाने पर भी इन मूर्ति खण्डों में शान्ति है—बिखरी हुई शान्ति। कला भ्रष्ट भी हो जाय यानी खण्डित भी हो जाय तो भी उसमें बड़प्पन का कुछ अंश तो रहता ही है। कला भावुक हो गई। उसकी आँखें भर गईं।

[७]

मृगनयनी की अवस्था ढल रही थी परन्तु सौन्दर्य बढ़ रहा था। ऊपर का लावण्य स्थिर हो गया और भीतर का बढ़ता हुआ सौन्दर्य आँखों में आ गया।

ललित कलाओं पर उसको अधिकार प्राप्त हो गया था फिर भी उसने अभ्यास निरन्तर रक्खा। बैजू ने मृगपद की एक नई परिपाटी तैयार करके मांग ली थी। इसके मांजने में उसको मानसिंह से सहायता मिली परन्तु मृगनयनी से उसकी भी अपेक्षा अधिक। मृगपद इसके पहले भी कई नामों से जाना जाता परन्तु उसके चार अङ्ग—स्थायी अन्तरा सञ्चारी और आभोग—इन तीनों के सहयोग से ही बने और निखरे। कई राग मृगनयनी के सुझाव प्रेरणा और सहकारिता से बैजू ने बनाये जैसे गूजरी मालगूजरी, बहुलगूजरी और मंगलगूजरी।

विजय कहा करता था—काम ही सब कुछ है। काम करना ही मानव का धर्म है। काम करते-करते ही मनुष्य स्वर्ग-लोक की भी प्राप्ति कर सकता है।

मानसिंह बतलाया करता था—मनुष्य अकेला अकेले काम करके सन्तोष और हर्ष को तो प्राप्त कर सकता है परन्तु काम से आनन्द तभी हाथ लग सकता है, जब उसको दूसरों के सहयोग से किया जाय।

सिकन्दर या किसी भी आक्रमण की बला टल गई थी परन्तु वह जानता था कि यह बला फिर कभी सिर पर आ सकती है, इसलिये वह सेना के सँभालने-सुधारने में बहुत व्यस्त रहने लगा। कुछ समय निकाल कर वह गूजरी महल में भी आया करता था।

बैसाख-जेठ की ऋतु थी। वे दोनों गूजरीमहल की छत पर थे। धूल में लिपटी हुई-सी चांदनी छिटकी हुई थी। मानसिंह ने आग्रह किया कुछ गाओ। तम्बूरा पास रक्खा हुआ था।

'क्या गाऊँ ?' मृगनयनी ने शान्त स्वर में पूछा।

'अपना कोई ध्रुवपद। मुझको बहुत अच्छा लगता है। नायक बैजू की वाणी में भी उतना मिठास नहीं मिलता जितना तुम्हारे गले में।'

'नायक नायक ही हैं। मैं तो उनकी शिष्य भर हूँ।'

'शिष्य तो उनके बहुत से होंगे हैं जो इस नई परिपाटी को देश भर में फैलायेंगे। परन्तु तुम तुम्हीं हो।'

'मैं ध्रुवपद नहीं सुनाना चाहती कुछ और गाऊँगी।'

'जो मन को भावे गाओ मैं तो सुनना चाहता हूँ।'

मृगनयनी तम्बूरा उठाकर गाने लगी—

मोरी तोहि लाज मुकुट वारे मोरी तोहि
चन्दा सूरज तोरी सेवा करत हैं
विनति करत भी सब हारे। मोरी तोहि—

मृगनयनी ने दुहरा-दुहरा कर इसी पद को बड़े रस के साथ गाया। गायन की समाप्ति पर वे दोनों आकाश की ओर देखने लगे। चन्दा और तारे आँखों में काँपते से जान पड़े।

एक सेविका ने सूचना दी नायक बैजू आये हैं।

बैजू को बिठलवा लिया गया। वे दोनों आँगन में आकर उनसे मिले।

बैजू की शिकायत थी,—'अब आप गायन की ओर कम ध्यान देने लगे हैं। अधिक दीजिये।'

मृगनयनी बोली 'मैं तो देती हूँ। इनको सेना राजनीति इत्यादि के सँभालने में लगा रहने दीजिये। आपके संगीत विद्यापीठ को पूरी सहायता मिल ही रही है। और कोई आवश्यकता है ?'

बैजू ने आवश्यकता बतलाई,—'राजा को संगीत का गहरा ज्ञान है। जब सामने होते हैं तब अनेक नई-नई सूझें निकलती हैं। राजा सामने रहना चाहिए।'

'दुश्मन फिर सिर पर आ सकता है, इसलिए उसका सामना करने
तैयारी में सदा लगे रहना अधिक आवश्यक है। मानसिंह ने कहा।
बैजू खिल्ला पड़ा—'आप कहते क्या हैं। सब दुश्मन मर गये।
सरस्वती की कृपा से अब कोई नया उत्पन्न नहीं होगा। आवेगा भी तो
फिर वैसे ही मार कर लौट जावेगा।
हठ मत करिये नायक जी' मृगनयनी विनय के स्वर में बोली।
'तो मेरा मन नहीं लगेगा। बैजू ने कहा।
एक क्षण बाद मृगनयनी ने प्रश्न किया 'आचार्य विजयजंगम कहते
हैं कि आपने जो नये राग बना लिए सो बना लिये अब नहीं बना सकते
क्या यह बात ठीक है?
विजयजंगम क्या जानें। वह तो ऐसा कहते ही रहते हैं।
'और किसी किसी की कल्पना है कि गूजरी टोड़ी राग को आपने
बनाया है उसका कुछ रूप ऐसा गुजरात में पहले से है।
'कौन मूर्ख कहता है? आपने एक दिन टोड़ी राग गाते हुये मन
जान एक तान समाई मैंने उसको मनमें रख लिया और उसका विस्तार
करके गूजरी टोड़ी बनाकर खड़ी कर दी। मूर्ख लोग क्या जानें।
तो अब नये राग कैसे बनेंगे? आपका मन कुछ हार गया क्या
है न?
'नहीं तो। जब अकेले में सरस्वती जी की आराधना करता हूँ तब
नई नई बातें झूमनी-सी उमगती चली आती हैं। मन कभी नहीं
हारेगा।
मृगनयनी ने मानसिंह की ओर एक सूक्ष्म दृष्टि डाली। बैजू ने लक्ष
नहीं किया। वह कुछ गुनगुना उठा था।
मानसिंह ने मुस्करा कर कहा 'तो जब तक मैं तलवार द्वारा दुर्गा
की आराधना करता हूँ आप नये-नये रागों के सृजन द्वारा सरस्वती की
करिये।
बैजू हँस पड़ा। बोला 'हाँ हाँ ठीक है। ऐसा ही होगा।

[७१]

नरवर के विनाश को हुये कई बरस हो गये थे। चन्देरी भी मालवा से कटकर नरवर के अधीन आ गई था परन्तु अमीरखोज को लगता था जैसे कुछ दिन ही हुये हों और जैसे वहाँ कुछ हुआ ही न हो।

क्योंकि, उसका मन पूरा हो चला था। परियों के बहीखाते में पूरे पन्द्रह हजार की गिनती दर्ज हो चुकी थी।

उतरते बैसाख के महीने में उसको फिर जलविहार की सूझी। सन्ध्या के पहले कालियादह झील पर कनातों से घिरे हुये रङ्ग-बिरङ्ग बितानों के नीचे फिर परिस्तान का जमघट बना। इसकी बार हमेशा से बढ़कर रङ्ग-बिरङ्गे वस्त्र आभूषण नई-नई विधायें नये ढङ्ग-ढङ्ग का आयोजन। अलमस्ती धूप पर कर बितानों के बीच बजने लगी। रङ्गीन गुड़ियों की चटपटक हिलोरें लाने लगीं।

ख्वाजा मटरूक पास था। अमीर ने आदेश दिया पानी में उसका सब आराम का लाभ हो। उसके बाद नाच-गाना।

जो हुक्म।

'अच्छा जरा ठहरो। पहले थोड़ा नाच हो जाय फिर जलावगाहन।

जो हुक्म जहाँपनाह।

मैं भी सुख गुलगपाड़े के रंग में शरीक होऊँगा। उसको अपनी हुई कामुकता ने प्रेरणा दी।

जो हुक्म ख्वाजा मटरू के मुँह से निकला।

बड़ चावों के साथ नाच-गान हुआ। लगा कि पर्दानशीनी की चर्चा गई हवा। नाच-गान की समाप्ति हुई। होश अमीर तकिये के सहारे पड़कर सो गया। पर्दानशीनी के उसके आकार प्रकार उसके चमत्कार में था कुछ परिधान कोई भी अपरिचिता उतना देर तक दिखलाई नहीं दे सकती थी।

घरियाल जलविहार के लिये उत्कण्ठित था। परन्तु सुल्तान को मनावे कौन? किसमें इतनी हिम्मत? मटरू ने आग्रह किया। उसको भी साहस नहीं हुआ।

मटरू ने एक बनचरी के कान में कुछ कहा। वह कुछ दूर जाकर चिल्लाई—साँप! साँप!! साँप!!!

कई कण्ठों से यही ध्वनि बेभाव निकली।

नसीर भी भागकर चिल्ला पड़ा,—'साँप! साँप!! साँप!!! कहाँ है? कहाँ है?

मटरू ने दौड़ कर अर्ज़ की 'जहाँपनाह, मारा गया।

नसीर ने आदेश दिया, 'दूर फेंक दो उसको! मगर महल में मत फेंकना। कनात के बाहर फेंक दो। पहरे वाले उसको कहीं गाड़ देंगे।

फेंक दिया, जहाँपनाह। मटरू ने सान्त्वना दी।

नसीर ने चैन की साँस लेकर कहा 'अब ये जहाँ-तहाँ साँप फिरें सबको परवाना छूट कर दूँगा। अच्छा अब यह जल हो।

घरियाँ पानी में कूद पड़ी। नसीर भी उधर गया। शोर होने लगा। हाथे-होले तैरते पानी दूर जाने लगी। परन्तु बहुत दूर नहीं। नसीर कुछ दूर निकल गया।

थोड़ी ही देर खेलने के बाद नसीर थक गया। दम फूल गई। हाथ पैर काँपने लगा। मटरू ने किनारे पर ले बैठा। सोचा सुल्तान खिलवाड़ कर रहा है।

सुल्तान के हाथ-पैर ढीले पड़ गये। चिल्लाया 'बचाओ!' कनात के बाहर सिपाहियों ने सुन लिया, परन्तु उनकी हिम्मत नहीं पड़ी। कौन अपना सिर और हाथ कटवावे उन्होंने सोचा।

सुल्तान फिर चिल्लाया 'बचाओ!!

दासियों को भी पुराना अनुभव याद आ गया। इनको बचाने में कहीं हम ही न डूब जावें। कोई भी उसकी तरफ़ नहीं बढ़ी। सब सोचती थीं कोई न कोई आकर बचा लेगा।

मटक इधर-उधर दौड़ धूप कर रहा था और चिल्ला रहा था।

कमबख्तो! बचाओ!! उसका सारा प्रयास प्रदर्शन मात्र था। वह चाहता था सुल्तान देखले स्वामी कितना तत्पर है!

बचाने को कोई नहीं पहुँचा। सुल्तान डूब मे पानी के नीचे चला गया।

एक हायतोबा और चिल्ल-पुकार मची। दासियाँ पानी में से निकल निकलकर कपड़े पहिनने-सँभालने में लग गईं। बाहर शोर बढ़ गया।

उस सारे शोर के ऊपर ये शब्द गूँज रहे थे—सुल्तान डूब गये! सुल्तान डूब गये!!

पहरेवालों का धीरज और डर समाप्त हो गया। कनात को काटकर भीतर घुस पड़े। स्त्रियाँ इधर-उधर चिल्लाती भागती फिर रही थीं एक दूसरी से टकरा-टकरा जा रही थीं। सिपाहियों ने मटक को पकड़ लिया।

नसीर के लड़के के पास समाचार पहुँचा। वह तुरन्त आया। पहला काम जो उसने किया वह था मटक का वध। फिर उसने व्यवस्था की।

दूसरा काम जो उसने किया वह था परिस्तान का तितर-बितर करना।

तीसरा काम जो उसने किया वह था मेदिनीराय को बुलाकर राजपूतों द्वारा उपद्रवी सरदारों का दमन और मालवा का शासन। इससे मौलवियों को बुरा लगा परन्तु उसने परवाह नहीं की। नसीर का लड़का महमूद खिलजी द्वितीय के नाम से प्रख्यात हुआ।

[७२]

मेवाड़ के सिंहासन को राणा साँगा ने पाया। महमूद बघर्रा दो वर्ष पीछे इस कमीने भोजन व्यसन और रक्तपात को करते करते मर गया। दक्षिण में कृष्णदेवराय ने विजयनगर को समृद्ध किया। सिकन्दर लोदी को उसके भाई जलाल ने परेशान किया। लड़ाई स्वाभाविक ही थी। लड़ाई हुई। जलाल हारा और भाग कर सिकन्दर के विरुद्ध मानसिंह के पास सहायता के लिये ग्वालियर आया। मानसिंह अपने सैनिकों का इस तरह की लड़ाई में व्यर्थ व्यय नहीं करना चाहता था इसलिये जलाल अपने अनेक साथियों को ग्वालियर में ही छोड़ कर गोंडवाने की तरफ भाग गया। वहाँ पकड़ा गया और आगरा भेज दिया गया। सिकन्दर ने वही किया जो ऐसी परिस्थिति में बहुधा होता आया था—अर्थात् सिकन्दर ने उसका प्राणवध करा दिया।

जलाल अपने जिन अनेक साथियों को ग्वालियर में छोड़ गया था वे अपने को अनाथ पा रहे थे। दिल्ली जा नहीं सकते थे क्योंकि सिकन्दर उनका कतल करवाये बिना न मानता। कहीं अन्यत्र उनके लिये ठिकाना न था।

मानसिंह ने उनको शरण प्रदान की। आश्वासन दिया मेरा झगड़ा सुल्तानों और सुल्तानी शासन से है न कि मुसलमानों से। काम करो, आनन्द से रहो और हिन्दुओं के समान ही मर्यादा पाते हुये इज्जत के साथ जीवन को बिताओ।

सिकन्दर को ग्वालियर की हार कभी नहीं भूली। उसने अबकी बार बहुत बड़ी तैयारी की। निश्चय किया—ग्वालियर की वही दुर्गति करेगा जो नरवर की की थी। इस तैयारी की फिकर में बरस भर भी गया।

मानसिंह ललित कलाओं के विकास और सैन्य संगठन के उपक्रम में लगा हुआ था। उसको केवल एक चिन्ता थी—बड़ी रानी से पुत्र

विक्रमादित्य था। मृगनयनी से दो पुत्र राजसिंह और बालसिंह—राज और बाले—राज्य कौन करेगा, एक या तीनों? अथवा राज्य के तीन या दो बराबर-बराबर भाग कर दिये जावें? तीन या दो भाग कर देने से फिर ग्वालियर कितने समय तक आगरा दिल्ली के सामने टिक सकेगा? यह समस्या उसको चिन्तित किये रहती थी। इस चिन्ता में व्याघात उस समय और आ पड़ता था जब सुमनमोहिनी इस समस्या के सुलझाने का हठ करने लगती थी। वह सोचता था बड़ी रानी को भय है कि मैं कहीं अचानक मर न जाऊँ तो मझली रानी उपद्रव करती रहेगी क्योंकि उसको राज्य का अभिमान, मान्यता और अपनी प्रजा दिये हुये था। मेरे मरने की सोचती है यह! मेरे मरने की!! यह कड़वापन उसको बहुत अखर अखर जाता था।

एक दिन सुमनमोहिनी ने इस प्रसङ्ग को अनिश्चय के कुहासे में से निकाल कर निस्संशयता के स्पष्ट प्रकाश में ले आने का दृढ़ संकल्प किया।

अवसर पाते ही उसने मानसिंह से कहा, 'मांडू का सुलतान फिर चढ़ आने की तैयारी कर रहा है।'

'समाचार आ गया है। वह मर गया।'

'वह मर गया तो दूसरा आवेगा।'

'सामना करेंगे। जीवन है ही इसके लिये।'

'आपकी सारी उमर अथक परिश्रम करते करते हो गई है। अब तो कुछ विश्राम मिलना चाहिये। भजन-पूजन को भी कुछ अधिक समय।'

'काम करने वाला मरने से कुछ पहले पहले ही बूढ़ा होता है। मैं तो किसी बात में भी शिथिल नहीं पड़ा हूँ और भजन-पूजन भी करता रहता हूँ।'

'इन कुमारों से भी कुछ काम लीजिये नहीं तो निकम्मे पड़ जावेंगे।'

'सिखला रहा हूँ।'

'यदि नरवर का क़िला किसी कुमार के हाथ में होता तो यों ही न निकल जाता। क्या फिर हाथ आ सकेगा?

'प्रयत्न कर रहा हूँ।

'यदि हाथ में आ जाय तो किसी कुमार को सौंप देंगे?'

'ये दोनों तो छोटे छोटे ही हैं। बड़े कुमार विक्रमादित्य को भेज दूंगा यदि नरवर हाथ लग गया तो।

'छोटों को क्यों नहीं? क्या वे दोनों इतने प्यारे हैं कि ग्वालियर में रहें और विक्रम नरवर में रहे?

'सबको कहते हैं—सूत न कपास कोरी से लट्ठमलट्ठा!

'गूजरी महल में सूत और कपास सभी कुछ है! साफ़ क्यों नहीं कह देते कि राजसिंह या बालसिंह में से किसी को ग्वालियर का राज्य दिया जायगा और विक्रम को नरवर या ऐसे ही कहीं का जङ्गल और पहाड़ की जागीर?

'अभी तो मैं हूँ और बहुत दिन जिऊँगा।

'भगवान करें आप सहस्र वर्ष जियें और राज्य करें मैं कल ही मर जाऊँ और आपके दस हजार ब्याह और हों।

बड़ी रानी के गले में हिचकी आ गई और मानसिंह को हँसी। बड़ी रानी की हिचकी बन्द हो गई, आँसुओं में से सिसकारियां छूट पड़ीं।

बोलीं 'आपको स्पष्ट कर देना चाहिये। जिसको राज्य देना हो अभी से कह दीजिये।

'जो योग्य होगा, वही राज्य करेगा। अभी से दिन को सोने की रटन ही क्या है? विक्रम मुझको कितना प्यारा है उसको यह जानता है। आप नहीं जानतीं।

'इतना आपको जितना मैं जानती हूँ उतना विक्रम नहीं जानता।

'और आप यह भी नहीं जानतीं कि उन दोनों में परस्पर कितना स्नेह है!'

'हाँ माँ! इन सब बातों को गूजरी रानी अधिक अच्छा जानती हैं। क्या ग्वालियर के तीन टुकड़े किये जायेंगे?'

मानसिंह ने शांत मुस्कान के साथ उत्तर दिया 'आज तो टुकड़े हो नहीं रहे हैं।'

उस शांत मुस्कान के नीचे मानसिंह के हृदय में बहुत घुटन थी।

[७३]

कुछ दिन पीछे मृगनयनी ने मानसिंह से कहा 'चलिए चित्रशाला के उस चित्र को दिखलाऊँ।'

उत्कण्ठा के साथ मानसिंह ने पूछा 'हो गया पूरा ?'

उसने उत्तर दिया 'पूरा तो नहीं हुआ थोड़ी सी कसर है। पर कुछ आगे बढ़ गया है।'

मानसिंह उसके साथ चित्रशाला में गया। उस चित्र के कला वाले अङ्ग में कुछ रंग और भर दिये गये थे। दूसरा अङ्ग काफ़ी भर दिया गया था परन्तु उसमें थोड़ी सी कसर और थी।

कला वाले अङ्ग के ऊपर लिखा था 'कला' और दूसरे अङ्ग के ऊपर लिखा था 'कर्तव्य'। इसको मानसिंह ने पहले लिखा नहीं देखा था। 'कर्तव्य' वाले अंश के ऊपर एक खूँटी से लाखी वाली मोतियों की माला टँगी हुई थी। खिड़कियों के प्रकाश में झिलमिला रही थी।

मृगनयनी ने मानसिंह के हाथ में एक पत्र दिया। मानसिंह ने पढ़ा। उसमें लिखा था—राजसिंह और बालसिंह राई या जागीर के अधिकारी नहीं होंगे। वे अपने बड़े भाई की आज्ञा का पालन करते हुये केवल अपने कर्तव्य का निर्वाह करेंगे। इस लेख की एक प्रतिलिपि महारानी—सुमनमोहिनी के पास आज ही भेज दी गई है।

पत्र को पढ़ कर राजा ने आश्चर्य के साथ मृगनयनी की ओर देखा।

उसके चेहरे पर मुस्कान थी।

मृगनयनी के केश-कलाप में कुछ रजत रेखाओं की लहरें प्रकट हो चुकी थीं लगता था जैसे सोना चमकी की रेखायें स्वास्थ्य के स्मितों में चमचमा रही हों।

शरीर का सौन्दर्य आत्मा के सलोनेपन को और भी अधिक पा चुका था।

उसको स्मरण हो आया—रूपी का गौरव सौन्दर्य महत्व स्थिरता में है जैसा उस नदी का जो बरसात के मन्मंसे तेज प्रवाह के बाद शरद में नीचे जल वाली मन्थर गति-गामिनी हो जाती है—दूर से बिलकुल स्थिर बहुत पास से प्रगतिशालिनी।

मानसिंह की आँखें सजल हो गईं।

'यह तुमने क्या किया?' मानसिंह के काँपते हुए होंठों से धीरे से निकला।

चित्र के 'कर्तव्य वाले' पक्ष की ओर उँगली उठाता हुई वह बोली 'यह।'

मृगनयनी की मुस्कान और खिली। मानसिंह की आँखें और सजल हुईं।

मानसिंह के मुँह से और भी धीरे से एक वाक्य निकला 'अब तो चित्र का यह अंग पूरा हो जाना चाहिये। उसको अधूरा क्यों छोड़ा जा रहा है?'

मृगनयनी ने कहा 'संकल्प और भावना जीवन-तखड़ी के दो पलड़े हैं। जिसको अधिक भार से लाद दीजिये वही नीचे चला जायगा। संकल्प कर्तव्य है और भावना कला। दोनों के समान समन्वय की आवश्यकता है। न तो अभी कला का अंग पूरा हुआ है और न कर्तव्य का। तखड़ी के दोनों पलड़े झुके हुये हैं न इस चित्र में?'

मृगनयनी की दृष्टि राजा के मुक्ता-हार पर गई। आँखें थोड़ी सी मचमचा आईं।

मानसिंह ने भी देखा।

और भी दबे स्वर में बोला 'कर्तव्य वाले अंग में अब कौन सी कसर रह गई है देवी?'

मोतियों की माला और अपूर्ण चित्र पर दृष्टि घुमाते हुई मृगनयनी ने कर्तव्य वाले अंग पर उँगली रखकर कहा 'प्रजा के सुख की देख की

मानसिंह ने मृगनयनी को छाती से लगा लिया। मृगनयनी ने उसके कन्धे पर अपना सिर टिका दिया। उसकी बड़ी आँखें मानसिंह की मुकी हुई बरौनियों से उलझ गईं और दोनों के अश्रुबिन्दु एक दूसरे से आ मिले।

मानसिंह के कांपते हुये होठों से धीमे धीमे शब्द निकले—

'कला और कर्तव्य का समन्वय इस कसर को किसी दिन अवश्य पूरा करेगा।

फिर इन दोनों की दृष्टि मोती-माला की ओर गई।

वह दमक रही थी।

(समाप्त)